नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला-२२

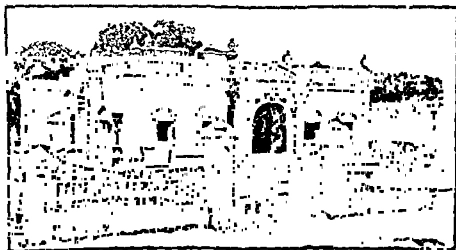
तुलसी-ग्रंथावली

पहला खंड

संपादक

रामचंद्र शुक्ल भगवानदीन

व्रजरत्नदास



गोस्वामी तुलसीदास की त्रिशत जयंती के

अवसर पर

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

१९८०

पहला संस्करण १०००] [मूल्य ३)

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा
श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी में मुद्रित । ८२४-२३

यह तुलसी-ग्रंथावली

अलवर-नरेश

श्रीमान् महाराजाधिराज राजराजेश्वर भारतधर्मप्रभाकर
वीरेंद्रशिरोमणि सवाई

श्रीमहाराज जयसिंह जू देव बहादुर

जी. सी. आई. ई., के. सी. एस. आई.

को

उनकी हिंदी के प्रति उदारता, सहानुभूति तथा
सहायता के उपलक्ष में

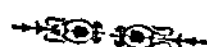
काशी-नागरीप्रचारिणीसभा द्वारा

सादर समर्पित है।



गोस्वामी तुलसीदास

कांडों की सूची।





रामचरितमानस



प्रथम सोपान

(बाल कांड)

श्लोकाः

वर्णानामर्थसङ्घानां रसानां छंदसामपि ।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ ॥१॥
भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम् ॥२॥
वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शङ्कररूपिणम् ।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते ॥३॥
सीतारामगुणग्रामपुण्यारण्यविहारिणौ ।
वन्दे विशुद्धविज्ञानौ कवीश्वरकपीश्वरौ ॥४॥

वर्णों के, अर्थ समूहों के, रसों के, छंदों के और मंगलों के करनेवाली वाणी (सरस्वती) और विनायक (गणेश) की वंदना करता हूँ ॥ १ ॥

श्रद्धा और विश्वास के रूप भवानी और शंकर की वंदना करता हूँ जिनके बिना सिद्ध लोग अपने अंतःकरण में स्थित परमेश्वर को नहीं देखते हैं ॥ २ ॥

ज्ञानमय, शंकर-स्वरूप गुरु की मैं सदा वंदना करता हूँ जिनके (शंकर) आश्रित होकर टेढ़े चंद्रमा की भी सर्वत्र वंदना की जाती है। (गुरु के पक्ष में तुलसीदास ऐसे कुटिल जन भी साधु हो जाते हैं) ॥ ३ ॥

सीताराम के गुणसमूह-रूप पुण्य वन में विहार करनेवाले विशुद्ध विज्ञान-वाले कवीश्वर (वाल्मीकि) और कपीश्वर (हनुमान) की मैं वंदना करता हूँ ॥४॥

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम्।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम्॥५॥

यन्मायावशवर्त्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवासुरा-
यत्सत्त्वादमृषेव भाति सकलं रज्जौ यथाऽहेर्भ्रमः।
यत्पादप्लवमेकमेव हि भवाम्भोधेस्तितीर्षावतां
वन्देऽहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम्॥६॥

नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्-
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि।
स्वान्तः सुखाय तुलसीरघुनाथगाथा-
भाषानिबन्धमतिमञ्जुलमातनोति॥७॥

सो०—जो * सुमिरत सिधि होइ गननायक करि-बर-बदन।
करौ अनुग्रह सोइ बुद्धिरासि सुभ-गुन-सदन॥१॥
मूक होइ बाचाल पंगु चढ़इ गिरिबर गहन।
जासु कृपा सो दयाल द्रवौ सकल-कलि-मल-दहन॥२॥
नील-सरोरुह-स्याम तरुन-अरुन-बारिज-नयन।
करौ सो मम उर धाम सदा छीर-सागर-सयन॥३॥

उत्पत्ति, रक्षा और संहार करनेवाली और क्लेश हरनेवाली तथा संपूर्ण मंगल करनेवाली राम की प्रिया सीता को मैं नमस्कार करता हूँ॥ ५॥

जिसकी माया के वश में सारा संसार, ब्रह्मा आदि देवता तथा असुर हैं, जिसकी सत्ता से रस्सी में साँप के भ्रम की भाँति सब कुछ सत्य सा प्रतीत होता है, जिसका चरण भवसागर को तरने की इच्छा करनेवालों के लिए एकमात्र नौका है, उस अशेष-कारण-पर रामनाम-धारी विष्णु की मैं वंदना करता हूँ॥ ६॥

अनेक पुराण और वेद शास्त्र-सम्मत रामायण में कहा हुआ और कुछ अन्य स्थानों से भी ली हुई रघुनाथ की गाथा को तुलसीदास अपने अंतःकरण के सुख के लिए अति सुंदर भाषा-निबंध में फैलाते हैं॥ ७॥

* पाठा०—जेहि।

कुंद-इंदु-सम देह उमारमन करुनाअयन।
जाहि दीन पर नेह करौ कृपा मर्दन मयन ॥४॥
बंदौं गुरु-पद-कंज कृपासिंधु नररूप हरि।
महा-मोह-तम-पुंज जासु बचन रवि-कर-निकर ॥५॥

चौ०-बंदौं गुरु-पद-पदुम-परागा। सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।
अमिअ-मूरि-मय चूरनु चारू। समन सकल-भव-रुज-परिवारू।
सुकृत संभुतन विमल बिभूती। मंजुल—मंगल—मोद—प्रसूती।
जन-मन-मंजु-मुकुर - मल - हरनी। किए तिलकु गुन-गन-बस-करनी।
श्रीगुरु - पद-नख-मनि -गन- जोती। सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती।
दलन मोहतम सो सुप्रकासू। बड़े भाग उर आवइ जासू।
उघरहिं बिमल बिलोचन ही के। मिटहिं दोष दुख भवरजनी के।
सूझहिं रामचरित मनिमानिक। गुपुत प्रगट जहँ जो जेहि खानिक।

दो०—जथा सुअंजन अंजि दृग साधक सिद्ध सुजान।
कौतुक देखहिं सैल बन भूतल भूरि निधान ॥६॥

चौ०-गुरु-पद-रज मृदु-मंजुल-अंजन। नयन अमिअ दृग-दोष-बिभंजन
तेहि करि बिमल बिवेक बिलोचन। बरनौं रामचरित भवमोचन।
बंदौं प्रथम मही - सुर - चरना। मोहजनित संसय सब हरना।
सुजनसमाज सकल-गुन-खानी। करौं प्रनाम सप्रेम सुबानी।
साधुचरित सुभ सरिस कपासू*। निरस बिसद गुनमय फल जासू।
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा। बंदनीय जेहि जग जसु पावा।
मुद - मंगल - मय संत - समाजू। जो जग जंगम तीरथराजू।
रामभगति जहँ सुरसरि - धारा। सरसइ ब्रह्मबिचार प्रचारा।
बिधि-निषेध-मय कलि-मल-हरनी। करमकथा रबिनंदिनि बरनी।
हरि-हर-कथा बिराजति बेनी। सुनत सकल-मुद-मंगल-देनी।

---

* काशि०—साधु सरिस सुभ चरित कपासू। अयो०—साधु चरित सुभ चरित कपासू।

बटु बिस्वासु अचल निज धर्मा। तीरथराज समाज सुकर्मा
सबहि सुलभ सब दिन सब देसा। सेवत सादर समन कलेसा
अकथ अलौकिक तीरथराऊ। देइ सद्य फल प्रगट प्रभाऊ

दो०—सुनि समुझहिं जन मुदितमन मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत तनु साधुसमाजु प्रयाग ॥७॥

चौ०-मज्जनफल पेखिय ततकाला। काक होहिं पिक बकउ मराला
सुनि आचरज करै जनि कोई। सत-संगति-महिमा नहिं गोई।
बालमीकि, नारद, घटजोनी। निज निज मुखनि कही निज होनी।
जलचर, थलचर, नभचर नाना। जे जड़ चेतन जीव जहाना।
मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहि जतन जहाँ जेहि पाई।
सो जानब सत-संग-प्रभाऊ। लोकहु बेद न आन उपाऊ।
बिनु सतसंग बिवेकु न होई। रामकृपा बिनु सुलभ न सोई।
सतसंगति मुद - मंगल - मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला।
सठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परस कुधातु सोहाई।
बिधिबस सुजन कुसंगति परहीं। फनि-मनि-सम निज गुन अनुसरहीं।
बिधि-हरि-हर-कबि-कोबिद-बानी। कहत साधुमहिमा सकुचानी।
सो मो सन कहि जात न कैसें। साकबनिक मनि-गन-गुन जैसें।

दो०—बंदौं संत समानचित हित अनहित नहिं कोउ।
अंजुलिगत सुभ सुमन जिमि सम सुगंध कर दोउ ॥८॥
संत सरलचित जगतहित जानि सुभाउ सनेहु।
बालबिनय सुनि करि कृपा राम-चरन-रति देहु ॥९॥

चौ०-बहुरि बंदि खलगन सतिभाये। जे बिनु काज दाहिनेहु बाये।
पर-हित-हानि लाभ जिन्ह केरे। उजरे हरष बिषाद बसेरे।
हरि-हर-जस राकेस राहु से। पर-अकाज भट सहसबाहु से।
जे परदोष लखहिं सहसाखी। परहित घृत जिन्हके मन माखी।
तेज कृसानु रोष महिषेसा। अघ-अवगुन-धन-धनी धनेसा।
उदय केतुसम हित सबही के। कुंभकरन सम सोवत नीके।

पर-अकाजु लगि तनु परिहरहीं। जिमि हिम उपल कृषी दलि गरहीं।
बंदौं खल जस सेप सरोषा। सहसबदन बरनइ परदोषा।
पुनि प्रनवौं पृथुराज-समाना। परअघ सुनइ सहसदस काना।
बहुरि सक्र सम बिनवौं तेही। संतत सुरानीक हित जेही।
बचन बज्र जेहि सदा पिआरा। सहसनयन परदोष निहारा।
दो०—उदासीन-अरि-मीत-हित सुनत जरहिं खलरीति।
जानु पानिजुग जोरि जन बिनती करौं सप्रीति ॥१०॥
चौ०—मैं अपनी दिसि कीन्ह निहोरा। तिन्ह निज ओर न लाउब भोरा।
बायस पलिअहि अति अनुरागा। होहिं निरामिप कबहुँ कि कागा।
बंदौं संत असंतन* चरना। दुखप्रद उभय बीच कछु बरना।
बिछुरत एक प्रान हरि लेई। मिलत एक दुख दारुन देई।
उपजहिं एक संग जग माहीं। जलज जोंक जिमि गुन बिलगाहीं।
सुधा सुरा सम साधु असाधू। जनक एक जग जलधि अगाधू।
भल अनभल निज निज करतूती। लहत सुजस अपलोक बिभूती।
सुधा सुधाकर सुरसरि साधू। गरल अनल कलि-मल-सरि ब्याधू।
गुन अवगुन जानत सब कोई। जो जेहि भाव नीक तेहि सोई।
दो०—भलो भलाइहि पै लहै लहै निचाइहि नीचु।
सुधा सराहिअ अमरता गरल सराहिअ मीचु ॥११॥
चौ०—खल अघ-अगुन साधु गुन-गाहा। उभय अपार उदधि अवगाहा।
तेहि तें कछु गुन दोष बखाने। संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने।
भलेउ पोच सब बिधि उपजाए। गनि गुन दोष बेद बिलगाए।
कहहिं बेद, इतिहास, पुराना। बिधिप्रपंचु गुन-अवगुन-साना।
दुख सुख पाप पुन्य दिन राती। साधु असाधु सुजाति कुजाती।
दानव देव ऊँच अरु नीचू। अमिअ सजीवनु, माहुरु मीचू।
माया ब्रह्म जीव जगदीसा। लच्छि अलच्छि रंक अवनीसा।

---

* अयो०—असज्जन।

कासी मग सुरसरि क्रमनासा*। मरु मारव महिदेव गवासा†।
सरग नरक अनुराग विरागा। निगम अगम गुन-दोष-विभागा।
दो०—जड़ चेतन गुन दोषमय विस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि बारिविकार ॥१२॥
चौ०—अस विवेक जब देइ विधाता। तब तजि दोष गुनहि मनु राता।
कालसुभाउ करम बरिआई। भलेउ प्रकृतिबस चुकइ भलाई।
सो सुधारि हरिजन जिमि लेहीं। दलि दुख दोष विमल जसु देहीं।
खलउ करहिं भल पाइ सुसंगू। मिटइ न मलिन सुभाउ अभंगू।
लखि सुबेष जग-बंचक जेऊ। बेषप्रताप पूजिअहि तेऊ।
उघरहिं अंत न होइ निबाहू। कालनेमि जिमि रावन राहू।
कियेहु कुबेषु साधु सनमानू। जिमि जग जामवंत हनुमानू।
हानि कुसंग सुसंगति लाहू। लोकहु बेद विदित सब काहू।
गगन चढ़इ रज पवनप्रसंगा। कीचहि मिलइ नीच-जल-संगा।
साधु असाधु सदन सुक सारी। सुमिरहिं रामु देहिं गनि गारी।
धूम कुसंगति कारिख होई। लिखिअ पुरान मंजु मसि सोई।
सोइ जल अनल-अनिल-संघाता। होइ जलद जग-जीवनु-दाता।
दो०—ग्रह भेषज जल पवन पट पाइ कुजोग सुजोग।
होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग लखहिं सुलच्छन लोग ॥१३॥
सम प्रकास तम पाख दुहुँ नाम भेद विधि कीन्ह।
ससि पोषक सोषक समुझि जग जस अपजस दीन्ह ॥१४॥
जड़ चेतन जग जीव जत सकल राममय जानि।
बंदौं सब के पद कमल सदा जोरि जुगपानि ॥१५॥
देव दनुज नर नाग खग प्रेत पितर गंधर्ब।
बंदौं किन्नर रजनिचर कृपा करहु अब सर्ब ॥१६॥

---

* कासि०—कविनासा।
† मरु = मरुदेश, मारवाड़। मारव = मालव। गवासा = गाय खानेवाले।

चौ०-आकर चारि लाख चौरासी। जाति जीव जल-थल-नभ-बासी।
सीय-राम-मय सब जग जानी। करौं प्रनाम जोरि जुगपानी।
जानि कृपा कर किंकर मोहू। सब मिलि करहु छाँड़ि छल छोहू।
निज बुधिबल-भरोस मोहि नाहीं। तातें बिनय करौं सब पाहीं।
करन चहौं रघुपति-गुन-गाहा। लघु मति मोरि चरित अवगाहा।
सूझ न एकौ अंग उपाऊ। मन मति रंक मनोरथ राऊ।
मति अति नीचि ऊँचि रुचि आछी। चहिअ अमिअ जग जुरै न छाछी।
छमिहहिं सज्जन मोरि ढिठाई। सुनिहहिं बालबचन मन लाई।
जौं बालक कह तोतरि बाता। सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता।
हँसिहहिं कूर कुटिल कुबिचारी। जे पर—दूषन—भूषन—धारी।
निज कवित्त केहि लाग न नीका। सरस होउ अथवा अति फीका।
जे परभनिति सुनत हरषाहीं। ते बर पुरुष बहुत जग नाहीं।
जग बहु नर सुरसरि-सम भाई। जे निज बाढ़ि बढ़हिं जल पाई।
सज्जन सुकृत-सिंधु-सम कोई। देखि पूर बिधु बाढ़इ जोई।
दो०—भाग छोट अभिलाषु बड़ करौं एक बिस्वास।
पैहहिं सुख सुनि सुजन सब खल करिहहिं उपहास ॥१७॥
चौ०-खलपरिहास होइ हित मोरा। काक कहहिं कलकंठ कठोरा।
हंसहिं बक गादुर* चातकही। हँसहिं मलिन खल बिमल बतकही।
कवित-रसिक न राम-पद-नेहू। तिन कहँ सुखद हासरस एहू।
भाषाभनिति भोरि मति मोरी। हँसिबे जोग हँसे नहिं खोरी।
प्रभु-पद-प्रीति न सामुझि नीकी। तिन्हहिं कथा सुनि लागिहि फीकी।
हरि-हर-पद-रति मति न कुतरकी। तिन्ह कहुँ मधुर कथा रघुबर की।
राम-भगति-भूषित जिअ जानी। सुनिहहिं सुजन सराहि सुबानी।
कबि न होउँ नहिं बचनप्रबीनू†। सकल कला सब बिद्या हीनू।

---

* अयो०—दादुर।

† छक्कनलाल की प्रति में 'चतुर प्रबीनू' पाठ है।

आखर अरथ अलंकृति नाना। छंद प्रबंध अनेक बिधाना।
भावभेद रसभेद अपारा। कबित-दोष-गुन बिबिध प्रकारा।
कबित-बिबेक एक नहिं मोरें। सत्य कहउँ लिखि कागज* कोरें।

दो०—भनिति मोरि सब गुनरहित बिस्वबिदित गुन एक।
सो बिचारि सुनहहिं सुमति जिन्हके बिमल बिबेक ॥१८॥

चौ०—एहि महँ रघुपति नाम उदारा। अति पावन पुरान-स्रुति-सारा।
मंगल—भवन अमंगल-हारी। उमासहित जेहि जपत पुरारी।
भनिति बिचित्र सुकबि-कृत जोऊ। रामनाम बिनु सोह न सोऊ।
बिधुबदनी सब भाँति सँवारी। सोह न बसन बिना बर नारी।
सब गुन-रहित कुकबि-कृत बानी। राम-नाम-जस-अंकित जानी।
सादर कहहिं सुनहिं बुध ताही। मधुकर सरिस संत गुनग्राही।
जदपि कबित-रस एकौ नाहीं। रामप्रताप प्रगट एहि माहीं।
सोइ भरोस मोरे मन आवा। केहि न सुसंग बड़प्पनु पावा।
धूमौ तजै सहज करुआई। अगरुप्रसंग सुगंध बसाई।
भनिति भदेस बस्तु भलि बरनी। रामकथा जग-मंगलकरनी।

छंद—मंगलकरनि कलिमलहरनि तुलसी कथा रघुनाथ की।
गति कूर कबिता-सरित की ज्यों सरित पावन पाथ की ॥
प्रभु-सुजस-संगति भनिति भलि होइहि सुजन-मन-भावनी।
भवअंग भूति मसान की सुमिरत सुहावनि पावनी ॥

दो०—प्रिय लागिहि अति सबहि मम भनिति राम-जस-संग।
दारु बिचारु कि करइ कोउ बंदिअ मलय प्रसंग ॥१९॥
स्याम सुरभि-पय बिसद अति गुनद करहिं सब पान।
गिराग्राम्य सिय-राम-जस गावहिं सुनहिं सुजान ॥२०॥

चौ०-मनि-मानिक-मुकुता-छबि जैसी। अहि-गिरि-गज-सिर सोह न तैसी।
नृपकिरीट तरुनीतनु पाई। लहहिं सकल सोभा अधिकाई।

---

* काशि० प्र०, संत०—कागर। हस्त० सरल०—कागद।

तैसेहि सुकवि-कवित बुध कहहीं। उपजहिं अनत अनत छवि लहहीं।
भगति-हेतु विधिभवन विहाई। सुमिरत सारद आवति धाई।
राम-चरित-सर विनु अन्हवाये। सो स्रमु जाइ न कोटि उपाये।
कवि कोविद अस हृदय विचारी। गावहिं हरिजस कलि-मल-हारी।
कीन्हे प्राकृत-जन-गुन-गाना। सिर धुनि गिरा लगति पछिताना।
हृदय सिंधु मति सीप समाना। स्वाती सारद कहहिं सुजाना।
जौं बरखै वर वारि विचारू। होहिं कवितमुकुता मनि चारू।
दो०—जुगुति वेधि पुनि पोहिअहिं रामचरित वर ताग।
पहिरहिं सज्जन विमल उर सोभा अति अनुराग ॥२१॥
चौ०-जे जनमे कलिकाल कराला। करतब वायस वेष मराला।
चलत कुपंथ वेदमग छाँड़े। कपट कलेवर कलिमल भाँड़े।
वंचक भगत कहाइ राम के। किंकर कंचन कोह काम के।
तिन्ह महँ प्रथम रेख जग मोरी। धिग धरमध्वज धंधकधोरी *।
जौं अपने अवगुन सब कहऊं। बाढ़इ कथा पार नहिं लहऊं।
तातें मैं अति अलप बखाने। थोरे महुँ जानिहहिं सयाने।
समुझि विविध विधि विनती मोरी। कोउ न कथा सुनि देइहि खोरी।
एतेहु पर करिहहिं ते संका। मोहि तें अधिक जे जड़ मति रंका।
कवि न होउँ नहिं चतुर कहावौं। मति-अनुरूप रामगुन गावौं।
कहँ रघुपति के चरित अपारा। कहँ मति मोरि निरत संसारा।
जेहि मारुत गिरि मेरु उड़ाहीं। कहहु तूल केहि लेखे माहीं।
समुझत अमित रामप्रभुताई। करत कथा मन अति कदराई।
दो०—सारद सेष महेस विधि आगम निगम पुरान।
नेति नेति कहि जासु गुन करहिं निरंतर गान ॥२२॥
चौ०-सब जानत प्रभुप्रभुता सोई। तदपि कहे विनु रहा न कोई।
तहाँ वेद अस कारन राखा। भजनप्रभाउ भाँति बहु भाखा।

---

* काशि० संत०—धँधरकधोरी।

एक अनीह अरूप अनामा। अज सच्चिदानंद परधामा।
ब्यापक बिस्वरूप भगवाना। तेहि धरि देह चरित कृत नाना।
सो केवल भगतन हित लागी। परम कृपाल प्रनत-अनुरागी।
जेहि जन पर ममता अति छोहू। जेहि करुना करि कीन्ह न कोहू।
गई बहोर गरीब-नेवाजू। सरल सबल साहिब रघुराजू।
बुध बरनहिं हरिजस अस जानी। करहिं पुनीत सुफल निज बानी।
तेहि बल मैं रघुपति-गुन-गाथा। कहिहउँ नाई रामपद माथा।
मुनिन्ह प्रथम हरिकीरति गाई। तेहि मग चलत सुगम मोहिं भाई।

दो०—अति अपार जे सरित बर जौं नृप सेतु कराहिं।
चढ़ि पिपीलिकउ परम लघु बिनु स्रम पारहि जाहिं ॥२३॥

चौ०-एहि प्रकार बल मनहिं देखाई। करिहौं रघुपति-कथा सोहाई।
ब्यास आदि कबिपुंगव नाना। जिन्ह सादर हरि-सुजस बखाना।
चरन कमल बंदौं तिन्ह केरे। पूरहु सकल मनोरथ मेरे।
कलि के कबिन्ह करौं परनामा। जिन्ह बरने रघुपति-गुन-ग्रामा।
जे प्राकृत कबि परम सयाने। भाषा जिन्ह हरिचरित बखाने।
भये जे अहहिं जे होइहहिं आगें। प्रनवौं सबहि कपट सब त्यागें।
होहु प्रसन्न देहु बरदानू। साधु-समाज भनिति-सनमानू।
जो प्रबंध बुध नहिं आदरहीं। सो स्रम बादि बालकबि करहीं।
कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि-सम सब कहँ हित होई।
राम-सुकीरति भनिति भदेसा। असमंजस अस मोहिं अँदेसा।
तुम्हरी कृपा सुलभ सोउ मोरे। सिअनि सोहावनि टाट पटोरे*।

दो०—सरल कबित कीरति बिमल सोइ आदरहिं सुजान।
सहज बयर बिसराइ रिपु जो सुनि करहिं बखान ॥२४॥

---

* इसके आगे यह चौपाई सदलमिश्र, सतसिंह, छक्कनलाल आदि प्रतियों में है।
"करहु अनुग्रह अस जिय जानी। बिमल जसहिं अनुहरइ सुबानी।"
बाबा रघुनाथदास की पुस्तक में भी यह चौपाई है।
अयो० प्रति में 'तुम्हरी.......पटोरे' नहीं है।

सो न होइ बिनु बिमल मति मोहिं मतिबल अति थोर।
करहु कृपा हरिजस कहउँ पुनि पुनि करउँ निहोर ॥२५॥
कविकोविद रघुबरचरित—मानस-मंजु-मराल।
बालविनय सुनि सुरुचि लखि मोपर होहु कृपाल ॥२६॥
सो०—बंदौं मुनि-पद-कंजु रामायन जेहिं निरमयेउ।
सखर सुकोमल मंजु दोषरहित दूषन-सहित ॥२७॥
बंदौं चारिउ वेद भव-बारिधि-बोहित सरिस।
जिन्हहिं न सपनेहु खेद बरनत रघुबर बिसद जसु ॥२८॥
बंदौं विधि-पद-रेनु भवसागर जेहिं कीन्ह जहँ।
संत सुधा ससि धेनु प्रगटे खल बिष बारुनी ॥२९॥
दो०—बिबुध-बिप्र-बुध-ग्रह-चरन बंदि कहौं कर जोरि।
होइ प्रसन्न पुरवहु सकल मंजु मनोरथ मोरि ॥३०॥
चौ०-पुनि बंदौं सारद सुरसरिता। जुगल पुनीत मनोहर चरिता।
मज्जन पान पाप हर एका। कहत सुनत एक हर अबिबेका।
गुर पितु मातु महेस भवानी। प्रनवौं दीनबंधु दिनदानी।
सेवक स्वामि सखा सिय-पी के। हित निरुपधि सब बिधि तुलसी के।
कलि बिलोकि जगहित हर-गिरिजा। साबर-मंत्र-जाल जिन्ह सिरिजा।
अनमिल आखर अरथ न जापू। प्रगट प्रभाउ महेस-प्रतापू।
सो उमेस* मोहिं पर अनुकूलो। करिहिं कथा मुद-मंगल मूला।
सुमिरि सिवा-सिव पाइ पसाऊ। बरनउँ रामचरित चितचाऊ।
भनिति मोरि सिव-कृपा बिभाती। ससि समाज मिलि मनहुँ सुराती।
जे एहि कथहिं सनेह समेता। कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता।
होइहहिं राम-चरन-अनुरागी। कलि-मल-रहित सु-मंगल-भागी।
दो०—सपनेहुँ साँचेहु मोहि पर जौ हर-गौरि-पसाउ।
तो फुर होउ जो कहेउँ सब भाषा-भनिति-प्रभाउ ॥३१॥

---

* अयो०—सोउ महेस।

चौ०-वंदौं अवधपुरी अति पावनि। सरजू सरि कलि-कलुप-नसावनि।
प्रनवौं पुर-नर-नारि बहोरी। ममता जिन्ह पर प्रभुहि न थोरी।
सियनिंदक अघ-ओघ नसाये। लोक बिसोक बनाइ बसाये।
वंदौं कौसल्या दिसि प्राची। कीरति जासु सकल जग माँची।
प्रगटेउ जहँ रघुपति ससि चारू। बिस्वसुखद खल-कमल-तुसारू।
दसरथराउ सहित सब रानी। सुकृत-सुमंगल-मूरति मानी।
करौं प्रनाम करम मन बानी। करहु कृपा सुत-सेवक जानी।
जिन्हहिं बिरचि बड़ भयेउ बिधाता। महिमा-अवधि राम-पितु-माता।
सो०—वंदौं अवधभुआल सत्य प्रेम जेहि रामपद।
बिछुरत दीनदयाल प्रिय तनु तृन इव परिहरेउ ॥३२॥
चौ०-प्रनवौं परिजनसहित बिदेहू। जाहि रामपद गूढ़ सनेहू।
जोग भोग महँ राखेउ गोई। राम बिलोकत प्रगटेउ सोई।
प्रनवौं प्रथम भरत के चरना। जासु नेम ब्रत जाइ न बरना।
राम-चरन-पंकज मन जासू। लुबुध मधुप इव तजै न पासू।
वंदौं लछिमन-पद-जलजाता। सीतल सुभग-भगत-सुख-दाता।
रघुपति कीरति बिमल पताका। दंड समान भयेउ जस जाका।
सेप सहस्रसीस जग-कारन। जो अवतरेउ भूमि-भय-टारन।
सदा सो सानुकूल रह मो पर। कृपासिंधु सौमित्रि गुनाकर।
रिपु-सूदन-पद-कमल नमामी। सूर सुसील भरत अनुगामी।
महावीर बिनवौं हनुमाना। राम जासु जस आपु बखाना।
सो०—प्रनवौं पवनकुमार खल-बन-पावक ग्यानघन।
जासु हृदय-आगार बसहिं राम सर-चाप-धर ॥३३॥
चौ०-कपिपति रीछ निसाचर-राजा। अंगदादि जे कीससमाजा।
वंदौं सब के चरन सोहाए। अधम सरीर राम जिन्ह पाए।
रघुपति-चरन-उपासक जेते। खग मृग सुर नर असुर समेते।
वंदौं पदसरोज सब केरे। जे बिनु काम राम के चेरे।
सुकसनकादि भगत मुनि नारद। जे मुनिबर बिग्यानबिसारद।

प्रनवौं सबहि धरनि धरि सीसा। करहु कृपा जन जानि मुनीसा॥
जनकसुता जगजननि जानकी। अतिसय प्रिय करुनानिधान की॥
ताके जुग-पद-कमल मनावौं। जासु कृपा निरमल मति पावौं॥
पुनि मन बचन कर्म रघुनायक। चरन कमल बंदौं सब लायक॥
राजिवनयन धरे धनुसायक। भगत-बिपति-भंजन सुखदायक॥
दो०—गिरा अरथ जल बीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न।
बंदौं सीतारामपद जिन्हहिं परम प्रिय खिन्न॥३४॥
चौ०-बंदौं रामनाम* रघुबर को। हेतु कृसानु भानु हिमकर को॥
बिधि-हरि-हर-मय बेदप्रान सो। अगुन अनूपम गुननिधान सो॥
महामंत्र जोइ जपत महेसू। कासी मुकुति-हेतु उपदेसू॥
महिमा जासु जान गनराऊ। प्रथम पूजिअत नामप्रभाऊ॥
जान आदिकबि नामप्रतापू। भयेउ सुद्ध करि उलटा जापू॥
सहस-नाम-सम सुनि सिवबानी। जपि† जेइँ पिय संग भवानी॥
हरषे हेतु हेरि हर ही को। किय भूषनु तियभूषन ती को॥
नामप्रभाउ जान सिव नीको। कालकूट फलु दीन्ह अमी को॥
दो०—बरषा रितु रघुपति भगति तुलसी सालि सुदास।
रामनाम बर बरनयुग सावन भादव मास॥३५॥
चौ०-आखर मधुर मनोहर दोऊ। बरन बिलोचन जन जिय जोऊ॥
सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू। लोकलाहु पर-लोक-निबाहू॥
कहत सुनत सुमिरत सुठि नीके। राम लखन सम प्रिय तुलसी के॥
बरनत बरन प्रीति बिलगाती। ब्रह्म जीव सम सहज सँघाती॥
नर-नारायन सरिस सुभ्राता। जगपालक बिसेषि जनत्राता॥
भगति-सु-तिअ कल करनबिभूषन। जग-हित-हेतु बिमल बिधु पूषन॥
स्वाद तोष सम सुगति सुधा के। कमठ सेष सम धर बसुधा के॥
जन-मन-मंजु-कंज-मधुकर से। जीह जसोमति हरि हलधर से॥

---

* अयो०—नाम राम। † अयो०—जपति सदा।

दो०—एकु छत्रु एकु मुकुटमनि सब बरननि पर जोउ।
तुलसी रघुबरनाम के बरन बिराजत दोउ॥ ३६॥

समुझत सरिस नाम अरु नामी। प्रीति परसपर प्रभु अनुगामी।
नाम रूप दुइ ईस उपाधी। अकथ अनादि सुसामुझि साधी।
को बड़ छोट कहत अपराधू। सुनि गुन भेदु समुझिहहिं साधू।
देखिअहिं रूप नामआधीना। रूप ग्यान नहिं नामविहीना।
रूप बिसेष नाम बिनु जाने। करतलगत न परहिं पहिचाने।
सुमिरिअ नामु रूप बिनु देखे। आवत हृदय सनेह बिसेखे।
नाम-रूप-गति अकथ कहानी। समुझत सुखद न परति बखानी।
अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी। उभय प्रबोधक चतुर दुभाखी।

दो०—राम-नाम-मनि-दीप धरु जीह देहरीद्वार।
तुलसी भीतर बाहरहुँ जौं चाहसि उँजियार॥ ३७॥

चौ०—नाम जीह जपि जागहिं जोगी। बिरति बिरंचिप्रपंच बियोगी।
ब्रह्मसुखहि अनुभवहिं अनूपा। अकथ अनामय नाम न रूपा।
जाना चहहिं गूढ़गति जेऊ। नाम जीह जपि जानहिं तेऊ।
साधक नाम जपहिं लय लाएँ। होहिं सिद्ध अनिमादिक पाएँ।
जपहिं नाम जन आरत भारी। मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी।
रामभगत जग चारि प्रकारा। सुकृती चारिउ अनघ उदारा।
चहूँ चतुर कहुँ नाम अधारा। ग्यानी प्रभुहि बिसेषि पिआरा।
चहुँ जुग चहुँ स्रुति नाम प्रभाऊ। कलि बिसेषि नहिं आन उपाऊ।

दो०—सकल-कामना-हीन जे राम-भगति-रस-लीन।
नाम सुपेम-पियूष-ह्रद तिन्हहुँ किये मन मीन॥ ३८॥

चौ०—अगुन सगुन दुइ ब्रह्मसरूपा। अकथ अगाध अनादि अनूपा।
मोरें मत बड़ नाम दुहूँ ते। किये जेहि जुग निज बस निज बूते।
प्रौढ़ि सुजन जनि जानहिं जन की। कहउँ प्रतीति प्रीति रुचि मन की।
एकु दारुगत देखिअ एकू। पावक सम जुग ब्रह्मबिबेकू।
उभय अगम जुग सुगम नाम तें। कहेउँ नामु बड़ ब्रह्म राम तें।

रा ासी । सत चेतन घन आनँदरासी ।
व्यापकु एकु ब्रह्म अवि ारी । सकल जीव जग दीन दुखारी ।
अस प्रभु हृदय अछत अवि तें । सोउ प्रगटत जिमि मोल रतन तें ।
नामनिरूपन नामजतन बड़ नामप्रभाउ अपार ।
दो०—निरगुन तें एहि भाँति निज बिचार-अनुसार ॥ ३९ ॥
कहउँ नामु बड़ राम ारी । सहि संकट किये साधु सुखारी ।
चौ०-राम भगत हित नरतनु-ध सा । भगत होहिं मुद-मंगल-वासा ।
नामु सप्रेम जपत अनया री । नाम कोटि खल कुमति सुधारी ।
राम एक तापसतिय त ो । सहित सेन-सुत कीन्हि बिबाकी ।
रिषिहित राम सुकेतुसुता ा । दलइ नाम जिमि रबि निसि नासा ।
सहित दोष-दुख दास दुरा पू । भव-भय-भंजन नामप्रतापू ।
भंजेउ राम आपु भवचा न । जनमन अमित नाम किये पावन ।
दंडकबन प्रभु कीन्ह सोहाव न । नाम सकल कलि-कलुष-निकंदन
निसिचर-निकर दले रघुनंद सुगति दीन्हि रघुनाथ ।
दो०—सबरी गीध सुसेवकनि बेदबिदित गुनगाथ ॥ ४० ॥
नाम उधारे अमित खल । राखे सरन जान सब कोऊ
चौ०-राम सुकंठ बिभीषन दोउ । लोक बेद बर बिरद बिराजे
नाम गरीब अनेक नेवाजे । सेतुहेतु स्रमु कीन्ह न थोरा
राम भालु-कपि-कटकु बटोरा । करहु बिचार सुजन मन माहीं।
नाम लेत भवसिंधु सुखाहीं । सीय सहित निज पुर पगु धारा ।
राम सकुल रन रावनु मारा । गावत गुन सुर मुनि बर बानी ।
राजा राम अवध रजधानी । बिनु स्रम प्रबल मोहदल जीती ।
सेवक सुमिरत नाम सप्रीती । नामप्रसाद सोच नहिं सपने ।
फिरत सनेहमगन सुख अपने दायक बर-दानि ।
दो०—ब्रह्म राम तें नामु बड़ बर- लये महेस जिय जानि ॥ ४१ ॥
रामचरित सतकोटि महँ साजु अमंगल मंगलरासी ।
चौ०—नामप्रसाद संभु अविनासी नामप्रसाद ब्रह्म-सुख-भोगी ।
सुकसनकादि सिद्ध मुनि जोगी ।

साधु सुजान सुसील नृपाला। ईस-अंश-भव परमकृपाला।
सुनि सनमानहिं सबहिं सुबानी। भनिति भगति नति गति पहिचानी।
यह प्राकृत-महिपाल-सुभाऊ। जानि-सिरोमनि कोसलराऊ।
रीझत रामसनेह निसोतें। को जग मंद मलिनमति मो तें।

दो०—सठ सेवक की प्रीति रुचि रखिहहिं राम कृपालु।
उपल किये जलजान जेहिं सचिव सुमति कपि भालु॥४४॥
हौंहुँ कहावत सबु कहत राम सहत उपहास।
साहिब सीतानाथ सों सेवक तुलसीदास॥४५॥

चौ०-अति बड़ि मोरि ढिठाई खोरी। सुनि अघ नरकहु नाक सिकोरी।
समुझि सहम मोहिं अपडर अपने। सो सुधि राम कीन्हि नहिं सपने।
सुनि अवलोकि सुचित चख चाही। भगति मोरि मति स्वामि सराही।
कहत नसाइ होइ हिय नीकी। रीझत राम जानि जन जी की।
रहति न प्रभुचित चूक किये की। करत सुरति सय बार हिये की।
जेहिं अघ बधेउ ब्याध जिमि बाली। फिरि सुकंठ सोइ कीन्हि कुचाली।
सोइ करतूति बिभीषन केरी। सपनेहुँ सो न राम हिय हेरी।
ते भरतहिं भेंटत सनमाने। राजसभा* रघुबीर बखाने।

दो०—प्रभु तरुतर कपि डार पर ते किय आपु समान।
तुलसी कहूँ न राम से साहिब सीलनिधान॥४६॥
राम निकाई रावरी है सबही को नीक।
जौं यह साँची है सदा तौ नीको तुलसी क॥४७॥
एहि बिधि निज गुन दोष कहि सबहिं बहुरि सिरु नाइ।
बरनउँ रघुबर-बिसद-जसु सुनि कलिकलुष नसाइ॥४८॥

चौ०-जागबलिक जो कथा सोहाई। भरद्वाज मुनिबरहिं सुनाई।
कहिहौं सोइ संबाद बखानी। सुनहु सकल सज्जन सुखु मानी।
संभु कीन्ह यह चरित सोहावा। बहुरि कृपा करि उमहिं सुनावा।

---

* काशि० अयो० रामसभा।

सोइ सिव कागभुसुंडिहि दीन्हा। रामभगत अधिकारी चीन्हा।
तेहि सन जागबलिक पुनि पावा। तिन्ह पुनि भरद्वाज प्रति गावा।
ते श्रोता बकता समसीला। समदरसी जानहिं हरिलीला।
जानहिं तीनि काल निज ग्याना। कर-तल-गत आमलक-समाना।
औरौ जे हरिभगत सुजाना। कहहिं सुनहिं समुझहिं बिधि नाना।
दो०—मैं पुनि निज गुरु सन सुनी कथा सो सूकरखेत।
समुझी नहिं तसि बालपन तब अति रहेउँ अचेत ॥४६॥
श्रोता बकता ग्याननिधि कथा राम कै गूढ़।
किमि समुझौं मैं जीव जड़ कलि-मल-ग्रसित बिमूढ़ ॥५०॥
चौ०—तदपि कही गुर बारहिं बारा। समुझि परी कछु मतिअनुसारा।
भाषाबद्ध करबि मैं सोई। मोरे मन प्रबोध जेहि होई।
जस कछु बुधि-बिबेक-बल मेरें। तस कहिहौं हिय हरि के प्रेरें।
निज-संदेह-मोह-भ्रम-हरनी। करौं कथा भव-सरिता-तरनी।
बुध-बिश्राम सकल-जन-रंजनि। रामकथा कलि-कलुष-बिभंजनि।
रामकथा कलि-पन्नग-भरनी। पुनि बिबेक-पावक कहुँ अरनी।
रामकथा कलि कामद गाई। सुजन-सजीवनि-मूरि सोहाई।
सोइ बसुधातल सुधा-तरंगिनि। भयभंजनि भ्रम-भेक-भुअंगिनि।
असुर-सेन-सम नरक-निकंदिनि। साधु-बिबुध-कुल-हित गिरि-नंदिनि।
संत-समाज-पयोधि-रमा सी। बिस्व-भार-भर अचल छमा सी।
जम-गन-मुँह-मसि जग जमुना सी। जीवन-मुकुति-हेतु जनु कासी।
रामहिं प्रिय पावनि तुलसी सी। तुलसिदास-हित हिय हुलसी सी।
सिवप्रिय मेकल सैल-सुता सी। सकल-सिद्धि-सुख-संपति-रासी।
सद-गुन-सुर-गन-अंब अदिति सी। रघुबर-भगति-प्रेम परमिति सी।
दो०—रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु।
तुलसी सुभग सनेह बन सिय-रघुबीर-बिहारु ॥५१॥
चौ०—राम-चरित-चिंतामनि चारू। संत-सुमति-तिय सुभग सिँगारू।
जगमंगल गुनग्राम राम के। दानि मुकुति धन धरम धाम के।

सद्‌गुर ग्यान बिराग जोग के। बिबुधबैद भव भीम रोग के।
जननि-जनक सिय-राम पेम के। बीज सकल ब्रत-धरम-नेम के।
समन पाप-संताप-सोक के। प्रिय पालक परलोक-लोक के।
सचिव सुभट भूपतिबिचार के। कुंभज लोभ-उदधि अपार के।
काम-कोह-कलि-मल-करि-गन के। केहरि सावक जन-मन-बन के।
अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के। कामद घन दारिद दवारि के।
मंत्र-महा-मनि बिषयब्याल के। मेटत कठिन कुअंक भाल के।
हरन मोहतम दिनकर कर से। सेवक-सालि-पाल जलधर से।
अभिमतदानि देव-तरु-बर से। सेवत सुलभ सुखद हरिहर से।
सुकबि-सरद-नभ मन उडुगन से। राम-भगत-जन जीवनधन से।
सकल सुकृतफल भूरि भोग से। जग हित निरुपधि साधुलोग से।
सेवक-मन-मानस-मराल से। पावन गंग-तरंग-माल से।

दो०—कुपथ कुतरक कुचालि कलि कपट दंभ पाखंड।
दहन राम-गुन-ग्राम जिमि इंधन अनल प्रचंड॥५२॥
रामचरित राकेस-कर-सरिस सुखद सब काहु।
सज्जन-कुमुद-चकोर-चित हित बिसेषि बड़ लाहु॥५३॥

चौ०—कीन्हि प्रस्न जेहि भाँति भवानी। जेहि बिधि संकर कहा बखानी।
सो सब हेतु कहब मैं गाई। कथा-प्रबंध बिचित्र बनाई।
जेहि यह कथा सुनी नहिं होई। जनि आचरज करै सुनि सोई।
कथा अलौकिक सुनहिं जे ग्यानी। नहिं आचरजु करहिं अस जानी।
रामकथा कै मिति जग नाहीं। असि प्रतीति तिन्ह के मन माहीं।
नाना भाँति रामअवतारा। रामायन सतकोटि अपारा।
कलपभेद हरिचरित सोहाए। भाँति अनेक मुनीसन्ह गाए।
करिअ न संसय अस उर आनी। सुनिअ कथा सादर रति मानी।

दो०—राम अनंत अनंत गुन अमित कथाबिस्तार।
सुनि आचरजु न मानिहहिं जिन्हके बिमल बिचार॥५४॥

चौ०—एहि बिधि सब संसय करि दूरी। सिर धरि गुरु-पद-पंकज-धूरी।

पुनि सबहीं बिनवौं कर जोरी। करत कथा जेहि लाग न खोरी।
सादर सिवहिं नाइ अब माथा। बरनौं बिसद राम-गुन-गाथा।
संवत सोरह सै इकतीसा। करौं कथा हरिपद धरि सीसा।
नौमी भौमवार मधुमासा। अवधपुरी यह चरित प्रकासा।
जेहि दिन रामजनम श्रुति गावहिं। तीरथ सकल तहाँ चलि आवहिं।
असुर नाग खग नर मुनि देवा। आइ करहिं रघुनायक-सेवा।
जनम-महोत्सव रचहिं सुजाना। करहिं राम-कल-कीरति गाना।
दो०—मज्जहिं सज्जन बृंद बहु पावन सरजू नीर।
जपहिं राम धरि ध्यान उर सुंदर स्याम सरीर॥५५॥
चौ०-दरस परस मज्जन अरु पाना। हरै पाप कह बेद पुराना।
नदी पुनीत अमित महिमा अति। कहि न सकै सारदा बिमल मति।
राम-धाम-दा पुरी सुहावनि। लोक समस्त बिदित अति पावनि।
चारि खानि जग जीव अपारा। अवध तजें तनु नहिं संसारा।
सब बिधि पुरी मनोहर जानी। सकल सिद्धिप्रद मंगलखानी।
बिमल कथा कर कीन्ह अरंभा। सुनत नसाहिं काम मद दंभा।
राम-चरित-मानस एहि नामा। सुनत श्रवन पाइअ बिश्रामा।
मन करि बिषय अनलवन जरई। होइ सुखी जौं एहि सर परई।
राम-चरित-मानस मुनिभावन। बिरचेउ संभु सुहावन पावन।
त्रिबिध-दोष-दुखदारिद-दावन। कलिकुचालि-कुलि-कलुष-नसावन।
रचि महेस निज मानस राखा। पाइ सुसमउ सिवा सन भाखा।
तातें राम-चरित-मानस बर। धरेउ नाम हिय हेरि हरषि हर।
कहौं कथा सोइ सुखद सुहाई। सादर सुनहु सुजन मन लाई।
दो०—जस मानस जेहि बिधि भयेउ जग प्रचार जेहि हेतु।
अब सोइ कहौं प्रसंग सब सुमिरि उमावृषकेतु॥५६॥
चौ०-संभुप्रसाद सुमति हिय हुलसी। राम-चरित-मानस कबि तुलसी।
करइ मनोहर मति अनुहारी। सुजन सुचित सुनि लेहु सुधारी।
सुमति भूमि थल हृदय अगाधू। बेद पुरान उदधि घन साधू।

बरषहिं राम सुजस वर बारी। मधुर मनोहर मंगलकारी।
लीला सगुन जो कहहिं बखानी। सोइ स्वच्छता करै मल हानी।
पेम भगति जो बरनि न जाई। सोइ मधुरता सुसीतलताई।
सो जल सुकृत सालिहित होई। राम-भगत-जन-जीवन सोई।
मेधा महिगत सो जल पावन। सकिलि श्रवनमग चलेउ सुहावन।
भरेउ सुमानस सुथल थिराना। सुखद सीत रुचि चारु चिराना।
दो०—सुठि सुंदर संवाद वर बिरचे बुद्धि बिचारि।
तेइ एहि पावन सुभग सर घाट मनोहर चारि ॥ ५७ ॥
चौ०-सप्त प्रबंध सुभग सोपाना। ग्याननयन निरपत मन माना।
रघुपतिमहिमा अगुन अवाधा। वरनव सोइ वर वारि अगाधा।
रामसीअ जस सलिल सुधासम। उपमा बीचि-बिलास मनोरम।
पुरइनि सघन चारु चौपाई। जुगुति मंजु मनि सीप सुहाई।
छंद सोरठा सुंदर दोहा। सोइ बहुरंग कमलकुल सोहा।
अरथ अनूप सुभाव सुभासा। सोइ पराग मकरंद सुवासा।
सुकृतपुंज मंजुल अलिमाला। ग्यान-बिराग-बिचार मराला।
धुनि अवरेब कवित गुन जाती। मीन मनोहर ते बहु भाँती।
अरथ धरम कामादिक चारी। कहव ग्यान बिग्यान बिचारी।
नव रस जप तप जोग बिरागा। ते सब जलचर चारु तड़ागा।
सुकृती साधु नाम गुन गाना। ते बिचित्र जल बिहँग समाना।
संत-सभा चहुँ दिसि अँवराई। श्रद्धा रितु वसंत सम गाई।
भगति निरूपन बिबिध बिधाना। छमा दया द्रुम* लता बिताना।
सम जम नियम फूल फल ग्याना। हरिपद रस वर बेद बखाना।
औरौ कथा अनेक प्रसंगा। तेइ सुक पिक बहु बरन बिहंगा।
दो०—पुलक वाटिका बाग वन सुख सुबिहंग बिहारु।
माली सुमन सनेह जल सींचत लोचन चारु ॥ ५८ ॥

* काशि०—द्रुम।

चौ०-जे गावहिं यह चरित सँभारे। तेइ एहि ताल चतुर रखवारे।
सदा सुनहिं सादर नर नारी। तेइ सुर बर मानस-अधिकारी।
अति खल जे विषई बक कागा। एहि सर निकट न जाहिं अभागा।
संबुक भेक सेवार समाना। इहाँ न विषय कथा रस नाना।
तेहि कारन आवत हिय हारे। कामी काक बलाक बिचारे।
आवत एहि सर अति कठिनाई। रामकृपा बिनु आइ न जाई।
कठिन कुसंग कुपंथ कराला। तिन्ह के वचन बाघ हरि ब्याला।
गृहकारज नाना जंजाला। तेइ अति दुर्गम सैल बिसाला।
बन बहु बिषम मोह मद माना। नदी कुतर्क भयंकर नाना।

दो०—जे श्रद्धा - संबल - रहित नहिं संतन्ह कर साथ।
तिन्ह कहँ मानस अगम अति जिनहिं न प्रिय रघुनाथ ॥५६॥

चौ०-जौं करि कष्ट जाइ पुनि कोई। जातहि नींद जुड़ाई होई।
जड़ता जाड़ बिषम उर लागा। गयहु न मज्जन पाव अभागा।
करि न जाइ सर मज्जन पाना। फिरि आवै समेत अभिमाना।
जौं बहोरि कोउ पूछन आवा। सरनिंदा करि ताहि बुझावा।
सकल बिघ्न ब्यापहिं नहिं तेही। राम सुकृपा बिलोकहिं जेही।
सोइ सादर सर मज्जनु करई। महाघोर त्रयताप न जरई।
ते नर यह सर तजहिं न काऊ। जिन्ह के रामचरन भल भाऊ।
जो नहाइ चह एहि सर भाई। सो सतसंग करौ मन लाई।
अस मानस मानस-चष चाही। भइ कविबुद्धि बिमल अवगाही।
भयेउ हृदय आनंद उछाहू। उमगेउ प्रेम – प्रमोद – प्रवाहू।
चली सुभग कविता सरिता सो। राम बिमल जस जलभरिता सो।
सरजू नाम सुमंगलमूला। लोक–वेद–मत मंजुल कूला।
नदी पुनीत सुमानस–नंदिनि। कलि-मल-त्रिन-तरु-मूल-निकंदिनि।

दो०—श्रोता त्रिविध समाज पुर ग्राम नगर दुहुँ कूल।
संतसभा अनुपम अवध सकल सुमंगलमूल ॥ ६० ॥

चौ०-रामभगति सुरसरितहि जाई। मिली सुकीरति सरजु सुहाई।

सानुज राम-समर-जसु पावन। मिलेउ महानदु सोन सुहावन।
जुग बिच भगति देव-धुनि-धारा। सोहति सहित सुबिरति बिचारा।
त्रिबिध ताप-त्रासक तिमुहानी। रामसरूप सिंधु समुहानी।
मानस मूल मिली सुरसरिही। सुनत सुजनमन पावन करिही।
बिच बिच कथा बिचित्र बिभागा। जनु सरितीर तीर बनु बागा।
उमा—महेस—बिवाह—बराती। ते जलचर अगनित बहु भाँती।
रघुबर—जनम—अनंद—बधाई। भवँर तरंग मनोहरताई।
दो०—बालचरित चहुँ बंधु के बनज बिपुल बहुरंग।
नृप रानी परिजन सुकृत मधुकर बारिबिहंग॥ ६१॥
चौ०-सीय-स्वयंबर-कथा सुहाई। सरित सुहावनि सो छबि छाई।
नदी नाव पटु प्रश्न अनेका। केवट कुसल उतर सबिबेका।
सुनि अनुकथन परसपर होई। पथिकसमाज सोह सरि सोई।
घोर धार भृगुनाथ-रिसानी। घाट सुबद्ध राम-बर-बानी।
सानुज - राम—बिवाह—उछाहू। सो सुभ उमग सुखद सब काहू।
कहत सुनत हरषहिं पुलकाहीं। ते सुकृती मन मुदित नहाहीं।
रामतिलक-हित मंगल साजा। परब जोग जनु जुरे समाजा।
काई कुमति केकई केरी। परी जासु फल बिपति घनेरी।
दो०—समन अमित उतपात सब भरतचरित जपजाग।
कलिअघ खल-अवगुन-कथन ते जलमल बक काग॥६२॥
चौ०-कीरति सरित छहूँ रितु रूरी। समय सुहावनि पावनि भूरी।
हिम हिमसैल - सुता-सिव-ब्याहू। सिसिर सुखद प्रभु-जनम-उछाहू।
बरनब राम - बिबाह - समाजू। सो मुदमंगलमय रितुराजू।
ग्रीषम दुसह राम - बन - गवनू। पंथकथा खर आतप पवनू।
बरषा घोर निसाचररारी। सुरकुल सालि सुमंगलकारी।
राम-राजसुख बिनय बड़ाई। बिसद सुखद सोइ सरद सुहाई।
सतीसिरोमनि सिय-गुन-गाथा। सोइ गुन अमल अनूपम पाथा।
भरतसुभाउ सुसीतलताई। सदा एकरस बरनि न जाई।

दो०—अवलोकनि बोलनि मिलनि प्रीति परसपर हास।
भायप भलि चहूँ बंधु की जल माधुरी सुवास ॥६३॥

चौ०–आरति विनय दीनता मोरी। लघुता ललित सुवारि न खोरी
अदभुत सलिल सुनत सुखकारी। आस पिआस मनोमलहारी
राम सुपेमहि पोषत पानी। हरत सकल कलि-कलुष-गलानी।
भव-श्रम-सोषक तोषक तोषा। समन दुरित दुख दारिद दोषा।
काम–कोह–मद–मोह–नसावन। बिमल–बिवेक–बिराग–बढ़ावन।
सादर मज्जन पान किए तें। मिटहिं पाप परिताप हिए तें।
जिन्ह एहि वारि न मानस धोए। ते कायर कलिकाल बिगोए।
त्रिषित निरषि रविकरभव बारी। फिरिहहिं मृग जिमि जीव दुखारी।

दो०—मति अनुहारि सुबारि गुन-गन गनि मन अन्हवाइ।
सुमिरि भवानी-संकरहि कह कवि कथा सुहाइ ॥६४॥
अब रघुपति-पद-पंकरुह हिअ धरि पाइ प्रसाद।
कहौं जुगल मुनिवर्य कर मिलन सुभग संवाद * ॥६५॥

चौ०–भरद्वाज मुनि बसहिं प्रयागा। तिन्हहिं रामपद अति अनुरागा।
तापस सम–दम–दया–निधाना। परमारथपथ परम सुजाना।
माघ मकरगत रवि जब होई। तीरथपतिहि आव सब कोई।
देव दनुज किन्नर नरश्रेनी। सादर मज्जहिं सकल त्रिबेनी।
पूजहिं माधव–पद–जलजाता। परसि अपयवटु हरषहिं गाता।
भरद्वाज-आश्रम अति पावन। परम रम्य मुनिवर-मन-भावन।
तहाँ होइ मुनि-रिषय-समाजा। जाहिं जे मज्जन तीरथराजा।
मज्जहिं प्रात समेत उछाहा। कहहिं परसपर हरि-गुन-गाहा।

---

* काशि०—की प्रति में (अयो० प्रति के) इस दोहे के स्थान पर यह दोहा है—
भरद्वाज जिमि प्रश्न किय जागबलिक मुनि पाय।
प्रथम मुख्य संबाद सोइ कहिहौं हेतु बुझाय॥
अन्य हस्तलिखित प्रतियों में ये दोनों दोहे हैं।

दो०—ब्रह्मनिरूपन धर्म-विधि बरनहिं तत्त्व-विभाग।
कहहिं भगति भगवंत कै संजुत-ग्यान-विराग ॥६६॥

चौ०–एहि प्रकार भरि माघ नहाहीं। पुनि सब निज निज आश्रम जाहीं।
प्रति संबत अति होइ अनंदा। मकर मज्जि गवनहिं मुनिबृंदा।
एक बार भरि मकर नहाए। सब मुनीस आश्रमन्ह सिधाए।
जागबलिक मुनि परम बिबेकी। भरद्वाज राखे पद टेकी।
सादर चरनसरोज पखारे। अति पुनीत आसन बैठारे।
करि पूजा मुनि सुजसु बखानी। बोले अति पुनीत मृदु बानी।
नाथ एक संसउ बड़ मोरें। करगत बेदतत्त्व सब तोरें।
कहत सो मोहि लागत भय लाजा। जौं न कहौं बड़ होइ अकाजा।

दो०—संत कहहिं अस नीति प्रभु श्रुति पुरान मुनि गाव।
होइ न बिमल बिबेक उर गुर सन किएँ दुराव ॥६७॥

चौ०–अस बिचारि प्रगटौं निज मोहू। हरहु नाथ करि जन पर छोहू।
रामनाम कर अमित प्रभावा। संत पुरान उपनिषद गावा।
संतत जपत संभु अबिनासी। सिव भगवान ग्यान-गुन-रासी।
आकर चारि जीव जग अहहीं। कासीं मरत परम पद लहहीं।
सोपि राममहिमा मुनिराया। सिव उपदेसु करत करि दाया।
रामु कवन प्रभु पूछौं तोही। कहिअ बुझाइ कृपानिधि मोही।
एक राम अवधेस-कुमारा। तिन्ह कर चरित बिदित संसारा।
नारिबिरह दुखु लहेउ अपारा। भयेउ रोषु रन रावन मारा।

दो०—प्रभु सोइ राम कि अपर कोउ जाहि जपत त्रिपुरारि।
सत्यधाम सर्बग्य तुम्ह कहहु बिबेकु बिचारि ॥६८॥

चौ०–जैसे मिटइ मोर भ्रम भारी। कहहु सो कथा नाथ बिस्तारी।
जागबलिक बोले मुसुकाई। तुम्हहि बिदित रघुपतिप्रभुताई।
रामभगत तुम्ह मन क्रम बानी। चतुराई तुम्हारि मैं जानी।
चाहहु सुनै रामगुन गूढ़ा। कीन्हहु प्रस्न मनहुँ अति मूढ़ा।
तात सुनहु सादर मन लाई। कहौं राम कै कथा सुहाई।

महा मोह महिषेसु बिसाला। रामकथा कालिका कराला।
रामकथा ससिकिरन समाना। संत चकोर करहिं जेहि पाना।
ऐसेइ संसय कीन्ह भवानी। महादेव तब कहा बखानी।
दो०—कहौं सो मतिअनुहारि अब उमा-संभु-संवाद।
भयेउ समय जेहि हेतु जेहि सुनु मुनि मिटिहि बिषाद ॥६६॥
चौ०-एक बार त्रेता जुग माहीं। संभु गए कुंभज ऋषि पाहीं।
संग सती जगजननि भवानी। पूजे रिषि अखिलेश्वर जानी।
रामकथा मुनिवर्ज बखानी। सुनी महेस परम सुख मानी।
रिषि पूछी हरिभगति सुहाई। कही संभु अधिकारी पाई।
कहत सुनत रघुपति-गुन गाथा। कछु दिन तहां रहे गिरिनाथा।
मुनि सन बिदा माँगि त्रिपुरारी। चले भवन सँग दच्छकुमारी।
तेहि अवसर भंजन महिभारा। हरि रघुबंस लीन्ह अवतारा।
पितावचन तजि राज उदासी। दंडकवन बिचरत अविनासी।
दो०—हृदय विचारत जात हर केहि विधि दरसनु होइ।
गुप्त रूप अवतरेउ प्रभु गये जान सब कोइ ॥७०॥
सो०—संकर उर अति छोभु सती न जानहिं मरमु सोइ।
तुलसी दरसन-लोभु मन डरु लोचन लालची ॥७१॥
चौ०-रावन मरन मनुज कर जाँचा। प्रभु बिधिबचन कीन्ह चह साँचा।
जौं नहिं जाउँ रहइ पछितावा। करत विचारु न बनत बनावा।
एहि बिधि भये सोच बस ईसा। तेही समय जाइ दससीसा।
लीन्ह नीच मारीचहि संगा। भयेउ तुरत सोइ कपट कुरंगा।
करि छल मूढ़ हरी वैदेही। प्रभुप्रभाउ तस विदित न तेही।
मृग बधि बंधु सहित हरि आए। आश्रमु देखि नयन जल छाये।
बिरहबिकल नर इव रघुराई। खोजत बिपिन फिरत दोउ भाई।
कबहूँ जोग बियोग न जाके। देखा प्रगट बिरहदुख ताके।
दो०—अति बिचित्र रघुपतिचरित जानहिं परम सुजान।
जे मतिमंद बिमोहबस हृदय धरहिं कछु आन ॥७२॥

चौ०-संभु समय तेहि रामहिं देखा। उपजा हिय अति हरषु बिसेखा।
भरि लोचन छबिसिंधु निहारी। कुसमय जानि न कीन्हि चिन्हारी।
जय सच्चिदानंद जगपावन। अस कहि चलेउ मनोज-नसावन।
चले जात सिव सती समेता। पुनि पुनि पुलकत कृपानिकेता।
सती सो दसा संभु कै देखी। उर उपजा संदेहु बिसेखी।
संकर जगतबंद्य जगदीसा। सुर नर मुनि सब नावत सीसा।
तिन्ह नृपसुतहिं कीन्ह परनामा। कहि सच्चिदानंद परधामा।
भये मगन छबि तासु बिलोकी। अजहुँ प्रीति उर रहति न रोकी।

दो०—ब्रह्म जो ब्यापक बिरज अज अकल अनीह अभेद।
सो कि देह धरि होइ नर जाहि न जानत बेद॥ ७३॥

चौ०-बिष्णु जो सुरहित नरतनु-धारी। सोउ सर्बग्य जथा त्रिपुरारी।
खोजै सो कि अग्य इव नारी। ग्यानधाम श्रीपति असुरारी।
संभुगिरा पुनि मृषा न होई। सिव सर्बग्य जानु सब कोई।
अस संसय मन भयेउ अपारा। होइ न हृदय प्रबोध प्रचारा।
जद्यपि प्रगट न कहेउ भवानी। हर अंतरजामी सब जानी।
सुनहि सती तव नारिसुभाऊ। संसय अस न धरिय उर काऊ।
जासु कथा कुंभज रिषि गाई। भगति जासु मैं मुनिहिं सुनाई।
सोइ मम इष्ट-देव रघुबीरा। सेवत जाहि सदा मुनि धीरा।

छंद—मुनि धीर जोगी सिद्ध संतत बिमल मन जेहि ध्यावहीं।
कहि नेति निगम पुरान आगम जासु कीरति गावहीं॥
सोइ रामु ब्यापक ब्रह्म भुवन-निकाय-पति मायाधनी।
अवतरेउ अपने भगत-हित निजतंत्र नित रघु-कुल-मनी।

सो०—लाग न उर उपदेसु जदपि कहेउ सिव बार बहु।
बोले बिहँसि महेसु हरि-माया-बलु जानि जिय॥ ७४॥

चौ०-जौ तुम्हरे मन अति संदेहू। तौ किन जाइ परीछा लेहू।
तब लगि बैठ अहौं बट छाहीं। जब लगि तुम्ह ऐहहु मोहि पाहीं।
जैसे जाइ मोह भ्रम भारी। करेहु सो जतनु बिबेकु बिचारी।

चलीं सती सिवआयसु पाई। करहिं विचारु करौं का भाई।
इहाँ संभु अस मन अनुमाना। दच्छसुता कहुँ नहिं कल्याना।
मोरेहु कहें न संसय जाहीं। विधि बिपरीत भलाई नाहीं।
होइहि सोइ जो राम रचि राखा। को करि तरक बढ़ावइ साखा।
अस कहि लगे जपन हरिनामा। गईं सती जहँ प्रभु सुखधामा।
दो०—पुनि पुनि हृदय विचारु करि धरि सीता कर रूप।
आगे होइ चलि पंथ तेहि जेहि आवत नरभूप ॥७५॥
चौ०—लछिमन दीख उमाकृत बेषा। चकित भये भ्रम हृदय बिसेषा।
कहि न सकत कछु अति गंभीरा। प्रभुप्रभाउ जानत मतिधीरा।
सतीकपटु जानेउ सुरस्वामी। सबदरसी सब-अंतरजामी।
सुमिरत जाहि मिटइ अग्याना। सोइ सर्बग्य राम भगवाना।
सती कीन्ह चह तहहुँ दुराऊ। देखहु नारि-सुभाउ-प्रभाऊ।
निज मायाबलु हृदय बखानी। बोले बिहँसि राम मृदु बानी।
जोरि पानि प्रभु कीन्ह प्रनामू। पितासमेत लीन्ह निज नामू।
कहेउ बहोरि कहाँ बृषकेतू। बिपिन अकेलि फिरहु केहि हेतू।
दो०—रामबचन मृदु गूढ़ सुनि उपजा अति संकोचु।
सती सभीत महेस पहिं चलीं हृदय बड़ सोचु ॥ ७६ ॥
चौ०—मैं संकर कर कहा न माना। निज अग्यानु राम पर आना।
जाइ उतरु अब देइहौं काहा। उर उपजा अति दारुन दाहा।
जाना राम सती दुख पावा। निज प्रभाउ कछु प्रगटि जनावा।
सती दीख कौतुक मग जाता। आगें राम सहित श्रीभ्राता।
फिरि चितवा पाछें प्रभु देखा। सहित बंधु सिय सुंदर बेखा।
जहँ चितवहि तहँ प्रभु आसीना। सेवहिं सिद्ध मुनीस प्रबीना।
देखे सिव बिधि बिष्णु अनेका। अमित प्रभाउ एक तें एका।
बंदत चरन करत प्रभुसेवा। बिबिध बेष देखे सब देवा।
दो०—सती बिधात्री इंदिरा देखी अमित अनूप।
जेहि जेहि बेष अजादि सुर तेति तेहि तन अनुरूप ॥ ७७ ॥

चौ०-देखे जहँ तहँ रघुपति जेते। सक्तिन्ह सहित सकल सुर तेते॥
जीव चराचर जो संसारा। देखे सकल अनेक प्रकारा॥
पूजहिं प्रभुहिं देव बहु बेखा। रामरूप दूसर नहिं देखा॥
अवलोके रघुपति बहुतेरे। सीतासहित न बेप घनेरे॥
सोइ रघुवर सोइ लछिमनु सीता। देखि सती अति भई सभीता॥
हृदय कंप तनसुधि कछु नाहीं। नयन मूँदि बैठीं मग माहीं॥
बहुरि बिलोकेउ नयन उघारी। कछु न दीख तहँ दच्छकुमारी॥
पुनि पुनि नाइ रामपद सीसा। चलीं तहाँ जहँ रहे गिरीसा॥

दो०—गईं समीप महेस तब हँसि पूछी कुसलात।
लीन्हि परीछा कवन विधि कहहु सत्य सब बात॥ ७८॥

चौ०-सती समुझि रघुबीरप्रभाऊ। भयबस सिव सन कीन्ह दुराऊ॥
कछु न परीछा लीन्हि गोसाईं। कीन्ह प्रनामु तुम्हारिहि नाईं॥
जो तुम्ह कहा सो मृषा न होई। मोरे मन प्रतीति अति सोई॥
तब संकर देखेउ धरि ध्याना। सती जो कीन्ह चरित सबु जाना॥
बहुरि राममायहि सिरु नावा। प्रेरि सतिहि जेहि झूठ कहावा॥
हरिइच्छा भावी बलवाना। हृदय बिचारत संभु सुजाना॥
सती कीन्ह सीता कर बेषा। सिव-उर भयेउ बिषाद बिसेषा॥
जौं अब करौं सती सन प्रीती। मिटै भगतिपथ होइ अनीती॥

दो०—परम पुनीत न जाइ तजि किये प्रेम बड़ पाप।
प्रगटि न कहत महेसु कछु हृदय अधिक संताप॥ ७९॥

चौ०-तब संकर प्रभुपद सिरु नावा। सुमिरत रामु हृदय अस आवा॥
एहि तन सतिहि भेंट मोहि नाहीं। सिव संकल्पु कीन्ह मन माहीं॥
अस विचारि संकर मतिधीरा। चले भवन सुमिरत रघुबीरा॥
चलत गगन भइ गिरा सुहाई। *जय महेस भलि भगति दृढ़ाई*॥
अस पन तुम्ह बिनु करै को आना। रामभगत समरथ भगवाना॥
सुनि नभगिरा सती उर सोचा। पूछा सिवहिं समेत सकोचा॥
कीन्ह कवन पन कहहु कृपाला। सत्यधाम प्रभु दीनदयाला॥

जदपि सती पूछा बहु भाँती। तदपि न कहेउ त्रिपुरआराती।
दो०—सती हृदय अनुमान किय सब जानेउ सर्बग्य।
कीन्ह कपट मैं संभु सन नारि सहज जड़ अग्य ॥ ८० ॥
सो०—जलु पय सरिस बिकाइ देखहु प्रीति की रीति भलि।
बिलग होइ रस जाइ कपट खटाई परत पुनि ॥८१॥
चौ०-हृदय सोच समुझत निज करनी। चिंता अमित जाइ नहिं बरनी।
कृपासिंधु सिव परम अगाधा। प्रगट न कहेउ मोर अपराधा।
संकररुख अवलोकि भवानी। प्रभु मोहि तजेउ हृदय अकुलानी।
निज अघ समुझि न कछु कहि जाई। तपै अँवाँ इव उर अधिकाई।
सतिहि ससोच जानि वृषकेतू। कही कथा सुंदर सुखहेतू।
बरनत पंथ बिबिध इतिहासा। बिस्वनाथ पहुँचे कैलासा।
तहँ पुनि संभु समुझि पन आपन। बैठे बटतर करि कमलासन।
संकर सहज सरूपु सँभारा। लागि समाधि अखंड अपारा।
दो०—सती बसहिं कैलास तब अधिक सोचु मन माहिं।
मरमु न कोऊ जान कछु जुग सम दिवस सिराहिं ॥८२॥
चौ०-नित नव सोच सती उर भारा। कब जैहौं दुख-सागर-पारा।
मैं जो कीन्ह रघुपतिअपमाना। पुनि पतिबचन मृषा करि जाना।
सो फल मोहि बिधाता दीन्हा। जो कछु उचित रहा सोइ कीन्हा।
अब बिधि अस बूझिअ नहिं तोहीं। संकरबिमुख जिआवसि मोहीं।
कहि न जाइ कछु हृदय-गलानी। मन महुँ रामहिं सुमिर सयानी।
जौं प्रभु दीनदयाल कहावा। आरतिहरन बेद जसु गावा।
तौ मैं बिनय करौं कर जोरी। छूटौ बेगि देह यह मोरी।
जौं मोरें सिवचरन सनेहू। मन क्रम बचन सत्य ब्रतु एहू।
दो०—तौ सबदरसी सुनिअ प्रभु करौ सो बेगि उपाइ।
होइ मरनु जेहि बिनहिं श्रम दुसह बिपत्ति बिहाइ ॥ ८३ ॥
चौ०-एहि बिधि दुखित प्रजेसकुमारी। अकथनीय दारुन दुख भारी।
बीते संबत सहस सतासी। तजी समाधि संभु अबिनासी।

रामनाम सिव सुमिरन लागे। जानेउ सती जगतपति जागे।
जाइ संभुपद वंदनु कीन्हा। सन्मुख संकर आसन दीन्हा।
लगे कहन हरिकथा रसाला। दच्छ प्रजेस भये तेहि काला।
देखा विधि विचारि सब लायक। दच्छहिं कीन्ह प्रजापतिनायक।
बड़ अधिकार दच्छ जब पावा। अति अभिमान हृदय तब आवा।
नहिं कोउ अस जनमा जग माहीं। प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं।

दो०—दच्छ लिये मुनि बोलि सब करन लगे बड़ जाग।
नेवते सादर सकल सुर जे पावत मखभाग॥ ८४॥

चौ०-किन्नर नाग सिद्ध गंधर्बा। बधुन्ह समेत चले सुर सर्बा।
विष्णु विरंचि महेसु विहाई। चले सकल सुर जान बनाई।
सती विलोके ब्योम विमाना। जात चले सुंदर विधि नाना।
सुरसुंदरी करहिं कल गाना। सुनत श्रवन छूटहिं मुनिध्याना।
पूछेउ तब सिव कहेउ बखानी। पिताजग्य सुनि कछु हरपानी।
जौं महेस मोहि आयसु देहीं। कछु दिन जाइ रहौं मिस एहीं।
पतिपरित्याग हृदय दुखु भारी। कहै न निज अपराध विचारी।
बोलीं सती मनोहर बानी। भय संकोच प्रेम रस सानी।

दो०—पिताभवन उत्सव परम जौं प्रभु आयसु होइ।
तौ मैं जाउँ कृपायतन सादर देखन सोइ॥ ८५॥

चौ०-कहेहु नीक मोरेहुँ मन भावा। यह अनुचित नहिं नेवत पठवा।
दच्छ सकल निज सुता बोलाईं। हमरे बयर तुम्हौं बिसराईं।
ब्रह्मसभा हम सन दुखु माना। तेहि ते अजहुँ करहिं अपमाना।
जौं बिनु बोलें जाहु भवानी। रहै न सीलु सनेहु न कानी।
जदपि मित्र-प्रभु-पितु-गुर गेहा। जाइअ बिनु बोलेहु न सँदेहा।
तदपि विरोध मान जहँ कोई। तहाँ गये कल्यान न होई।
भाँति अनेक संभु समुझावा। भावीवस न ग्यानु उर आवा।
कह प्रभु जाहु जो बिनहिं बोलाएँ। नहिं भलि बात हमारे भाएँ।

दो०—कहि देखा हर जतन बहु रहइ न दच्छकुमारि।
दिए मुख्य गन संग तब बिदा कीन्ह त्रिपुरारि॥ ८६॥

चौ०-पिताभवन जब गईं भवानी। दच्छत्रास काहु न सनमानी॥
सादर भलेहि मिलि एक माता। भगिनी मिलीं बहुत मुसुकाता॥
दच्छ न कछु पूछी कुसलाता। सतिहि बिलोकि जरे सब गाता॥
सती जाइ देखेउ तब जागा। कतहुँ न दीख संभु कर भागा॥
तब चित चढ़ेउ जो संकर कहेऊ। प्रभु अपमानु समुझि उर दहेऊ॥
पाछिल दुख न हृदय अस ब्यापा। जस यह भयेउ महा परितापा॥
जद्यपि जग दारुन दुख नाना। सब तें कठिन जाति अपमाना॥
समुझि सो सतिहि भयो अति क्रोधा। बहु बिधि जननी कीन्ह प्रबोधा॥

दो०—सिव-अपमान न जाइ सहि हृदय न होइ प्रबोध।
सकल सभहिं हठि हटकि तब बोलीं बचन सक्रोध॥८७॥

चौ०-सुनहु सभासद सकल मुनिंदा। कही सुनी जिन्ह संकर-निंदा॥
सो फलु तुरत लहब सब काहू। भली भाँति पछिताब पिताहू॥
संत-संभु-श्रीपति-अपवादा। सुनिअ जहाँ तहँ असि मरजादा॥
काटिअ तासु जीभ जो बसाई। श्रवन मूँदि न त चलिअ पराई॥
जगदातमा महेस पुरारी। जगतजनक सब के हितकारी॥
पिता मंदमति निंदत तेही। दच्छ-सुक्र-संभव यह देही॥
तजिहौं तुरत देह तेहि हेतू। उर धरि चंद्रमौलि बृषकेतू॥
अस कहि जोगअगिनि तनु जारा। भयेउ सकल मख हाहाकारा॥

दो०—सतीमरन सुनि संभुगन लगे करन मख खीस।
जग्यबिधंस बिलोकि भृगु रच्छा कीन्हि मुनीस॥८८॥

चौ०-समाचार जब संकर पाये। बीरभद्र करि कोपु पठाये॥
जग्यबिधंस जाइ तिन्ह कीन्हा। सकल सुरन्ह बिधिवत फल दीन्हा॥
भइ जगबिदित दच्छगति सोई। जसि कछु संभु-बिमुख कै होई॥
यह इतिहास सकल जग जाना। तातें मैं संछेप बखाना॥
सती मरत हरि सन बरु माँगा। जनम जनम सिवपद-अनुरागा॥

तेहि कारन हिमगिरि-गृह जाई। जनमीं पारवती तनु पाई।
जब तें उमा सैलगृह जाईं। सकल सिद्धि संपति तहँ छाईं।
जहँ तहँ मुनिन्ह सुआश्रम कीन्हे। उचित बास हिमभूधर दीन्हे।
दो०—सदा सुमन फल सहित सब द्रुम नव नाना जाति।
प्रगटीं सुंदर सैल पर मनिआकर बहु भाँति ॥ ८९ ॥
चौ०-सरिता सब पुनीत जलु बहहीं। खग मृग मधुप सुखी सब रहहीं।
सहज बयरु सब जीवन्ह त्यागा। गिरि पर सकल करहिं अनुरागा।
सोह सैल गिरिजा गृह आएँ। जिमि जन रामभगति के पाएँ।
नित नूतन मंगल गृह तासू। ब्रह्मादिक गावहिं जस जासू।
नारद समाचार सब पाए। कौतुकहीं गिरि गेह सिधाए।
सैलराज बड़ आदर कीन्हा। पद पखारि वर आसनु दीन्हा।
नारि सहित मुनिपद सिरु नावा। चरनसलिल सबु भवनु सिंचावा।
निज सौभाग्य बहुत गिरि बरना। सुता बोलि मेली मुनिचरना।
दो०-त्रिकालग्य सर्वग्य तुम्ह गति सर्वत्र तुम्हारि।
कहहु सुता के दोष गुन मुनिवर हृदय विचारि ॥ ९० ॥
चौ०-कह मुनि बिहँसि गूढ़ मृदुबानी। सुता तुम्हारि सकल गुनखानी।
सुंदर सहज सुसील सयानी। नाम उमा अंबिका भवानी।
सब लच्छनसंपन्न कुमारी। होइहि संतत पिअहि पिआरी।
सदा अचल एहि कर अहिवाता। एहि तें जसु पइहहिं पितु माता।
होइहि पूज्य सकल जग माहीं। एहि सेवत कछु दुर्लभ नाहीं।
एहि कर नाम सुमिरि संसारा। तिय चढ़िहहिं पतिब्रत-असिधारा।
सैल सुलच्छनि सुता तुम्हारी। सुनहु जे अब अवगुन दुइ चारी।
अगुन अमान मातु-पितु-हीना। उदासीन सब-संसय-छीना।
दो०—जोगी जटिल अकाम मन नगन अमंगल वेष।
अस स्वामी एहि कहँ मिलिहि परी हस्त असि रेख ॥ ९१ ॥
चौ०-सुनि मुनिगिरा सत्य जिय जानी। दुख दंपतिहिं उमा हरषानी
नारदहू यह भेदु न जाना। दसा एक समुझब बिलगाना

सकल सखी गिरिजा गिरि मैना । पुलक सरीर भरे जल नैना ।
होइ न मृषा देवरिषि भाखा । उमा सो वचनु हृदय धरि राखा ।
उपजेउ सिवपदकमल सनेहू । मिलन कठिन मन भा संदेहू ।
जानि कुअवसरु प्रीति दुराई । सखी उछंग बैठि पुनि जाई ।
झूठ न होइ देवरिषि-बानी । सोचहिं दंपति सखी सयानी ।
उर धरि धीर कहै गिरिराऊ । कहहु नाथ का करिअ उपाऊ ।

दो०—कह मुनीस हिमवंत सुनु जो विधि लिखा लिलार ।
देव दनुज नर नाग मुनि कोउ न मेटनहार ॥ ६२ ॥

चौ०—तदपि एक मैं कहौं उपाई । होइ करै जो दैव सहाई ।
जस बरु मैं बरनेउ तुम्ह पाहीं । मिलिहि उमहिं तस संसय नाहीं ।
जे जे बर के दोष बखाने । ते सब सिव पहिं मैं अनुमाने ।
जौं बिबाहु संकर सन होई । दोषौ गुन सम कह सबु कोई ।
जौं अहिसेज सयन हरि करहीं । बुध कछु तिन कर दोष न धरहीं ।
भानु कृसानु सर्व रस खाहीं । तिन्ह कहँ मंद कहत कोउ नाहीं ।
सुभ अरु असुभ सलिल सब बहई । सुरसरि कोउ अपुनीत न कहई ।
समरथ कहुँ नहिं दोष गोसाईं । रबि पावक सुरसरि की नाईं ।

दो०—जौं अस हिसिषा करहिं नर जड़ बिबेक अभिमान ।
परहिं कलप भरि नरक महुँ जीव कि ईस समान ॥ ६३ ॥

चौ०—सुरसरि-जलकृत बारुनि जाना । कबहुँ न संत करहिं तेहि पाना ।
सुरसरि मिलें सो पावन जैसे । ईस अनीसहि अंतर तैसे ।
संभु सहज समरथ भगवाना । एहि बिबाह सब बिधि कल्याना ।
दुराराध्य पै अहहिं महेसू । आसुतोष पुनि किएँ कलेसू ।
जो तप करै कुमारि तुम्हारी । भाविउ मेटि सकहिं त्रिपुरारी ।
जद्यपि बर अनेक जग माहीं । एहि कहँ सिव तजि दूसर नाहीं ।
बरदायक प्रनतारति – भंजन । कृपासिंधु सेवक – मन – रंजन ।
इच्छित फल बिनु सिव अवराधें । लहिअ न कोटि जोग जप साधें ।

दो०—अस कहि नारद सुमिरि हरि गिरिजहि दीन्ह असीस।
होइहि यह कल्यान अब संसय तजहु गिरीस ॥६४॥
चौ०—कहि अस ब्रह्मभवन मुनि गयेऊ। आगिल चरित सुनहु जस भयेऊ।
पतिहि एकांत पाइ कह मैना। नाथ न मैं समुझे मुनिबैना।
जौं घरु बरु कुल होइ अनूपा। करिअ बिवाहु सुता-अनुरूपा।
नत कन्या बरु रहै कुँआरी। कंत उमा मम प्रान-पिआरी।
जौं न मिलिहि बरु गिरिजहि जोगू। गिरि जड़ सहज कहिहि सब लोगू।
सोइ बिचारि पति करेहु बिवाहू। जेहि न बहोरि होइ उर दाहू।
अस कहि परी चरन धरि सीसा। बोले सहित सनेह गिरीसा।
बरु पावक प्रगटै ससि माहीं। नारद-बचनु अन्यथा नाहीं।
दो०—प्रिया सोच परिहरहु सब सुमिरहु श्रीभगवान।
पारबतिहि निरमयेउ जेहि सोइ करिहि कल्यान ॥ ६५ ॥
चौ०—अब जौं तुम्हहि सुता पर नेहू। तौ अस जाइ सिखावन देहू।
करै सो तपु जेहि मिलहिं महेसू। आन उपाय न मिटिहि कलेसू।
नारद-बचन सगर्भ सहेतू। सुंदर सब-गुन-निधि बृषकेतू।
अस बिचारि तुम्ह तजहु असंका। सबहि भाँति संकरु अकलंका।
सुनि पतिबचन हरषि मन माहीं। गई तुरत उठि गिरिजा पाहीं।
उमहि बिलोकि नयन भरि बारी। सहित सनेह गोद बैठारी।
बारहिं बार लेति उर लाई। गदगद कंठ न कछु कहि जाई।
जगतमातु सर्बग्य भवानी। मातुसुखद बोलीं मृदुबानी।
दो०—सुनहि मातु मैं दीख अस सपन सुनावौं तोहि।
सुंदर गौर सुबिप्रबर अस उपदेसेउ मोहि ॥ ६६ ॥
चौ०—करहि जाइ तपु सैलकुमारी। नारद कहा सो सत्य बिचारी।
मातुपितहि पुनि यह मत भावा। तपु सुखप्रद दुख दोष नसावा।
तपबल रचै प्रपंचु बिधाता। तपबल बिष्णु सकल-जग-त्राता।
तपबल संभु करहिं संहारा। तपबल सेषु धरै महिभारा।
तपअधार सब सृष्टि भवानी। करहि जाइ तपु अस जिअ जानी।

सुनत बचन बिसमित महतारी। सपन सुनायेउ गिरिहि हँकारी।
मातुपितहि बहु बिधि समुझाई। चलीं उमा तप-हित हरषाई।
प्रिय परिवार पिता अरु माता। भए बिकल मुख आव न बाता।
दो०—बेदसिरा मुनि आइ तब सबहि कहा समुझाइ।
पारबती-महिमा सुनत रहे प्रबोधहि पाइ॥ ६७॥
चौ०-उर धरि उमा प्रान-पति-चरना। जाइ बिपिन लागीं तपु करना।
अति सुकुमार न तनु तपजोगू। पतिपद सुमिरि तजेउ सब भोगू।
नित नव चरन उपज अनुरागा। बिसरी देह तपहि मन लागा।
संबत सहस मूल फल खाए। सागु खाइ सत बरष गवाँए।
कछु दिन भोजनु बारि बतासा। किए कठिन कछु दिन उपवासा।
बेलपाति महि परै सुखाई। तीनि सहस संबत सोइ खाई।
पुनि परिहरे सुखानेउ परना। उमहि नामु तब भयउ अपरना।
देखि उमहि तप-खीन-सरीरा। ब्रह्मगिरा भै गगन गँभीरा।
दो०—भयेउ मनोरथ सुफल तव सुनु गिरिराज-कुमारि।
परिहरु दुसह कलेस सब अब मिलिहहिं त्रिपुरारि॥ ६८॥
चौ०-अस तपु काहु न कीन्ह भवानी। भए अनेक धीर मुनि ग्यानी।
अब उर धरहु ब्रह्म-बर-बानी। सत्य सदा संतत सुचि जानी।
आवहिं पिता बुलावन जबही। हठ परिहरि घर जायेहु तबही।
मिलहिं तुम्हहिं जब सप्तरिषीसा। जानेहु तब प्रमान बागीसा।
सुनत गिरा बिधि गगन बखानी। पुलकगात गिरिजा हरषानी।
उमाचरित सुंदर मैं गावा। सुनहु संभु कर चरित सुहावा।
जब तें सती जाइ तनु त्यागा। तब तें सिव मन भयेउ बिरागा।
जपहिं सदा रघुनायकनामा। जहँ तहँ सुनहिं राम-गुन-ग्रामा।
दो०—चिदानंद सुखधाम सिव बिगत-मोह-मद-काम।
बिचरहिं महि धरि हृदय हरि सकल-लोक-अभिराम॥ ६६॥
चौ०-कतहुँ मुनिन्ह उपदेसहिं ग्याना। कतहुँ रामगुन करहिं बखाना।
जदपि अकाम तदपि भगवाना। भगत-बिरह-दुख-दुखित सुजाना।

एहि विधि गयेउ काल बहु बीती। नित नै होइ रामपद प्रीती॥
नेमु प्रेमु संकर कर देखा। अविचल हृदय भगति कै रेखा॥
प्रगटे रामु कृतग्य कृपाला। रूप-सील-निधि तेज बिसाला॥
बहु प्रकार संकरहिं सराहा। तुम्ह बिनु अस ब्रतु को निरबाहा॥
बहु बिधि राम सिवहिं समुझावा। पारबती कर जनमु सुनावा॥
अति पुनीत गिरजा कै करनी। बिस्तर सहित कृपानिधि बरनी॥

दो०—अब बिनती मम सुनहु सिव जौं मो पर निजु नेहु।
जाइ बिबाहहु सैलजहिं यह मोहिं माँगे देहु॥ १००॥

चौ०—कह सिव जदपि उचित अस नाहीं। नाथबचन पुनि मेटि न जाहीं॥
सिर धरि आयेसु करिअ तुम्हारा। परम धरमु यह नाथ हमारा॥
मातु पिता गुर प्रभु कै बानी। बिनहिं बिचार करिअ सुभ जानी॥
तुम्ह सब भाँति परम-हित-कारी। अग्या सिर पर नाथ तुम्हारी॥
प्रभु तोषेउ सुनि संकरबचना। भगति-बिबेक-धरम-जुत रचना॥
कह प्रभु हर तुम्हार पन रहेऊ। अब उर राखेहु जो हम कहेऊ॥
अंतरधान भए अस भाखी। संकर सोइ मूरति उर राखी॥
तबहिं सप्तरिषि सिव पहिं आए। बोले प्रभु अति बचन सुहाए॥

दो०—पारबती पहिं जाइ तुम्ह प्रेमपरीच्छा लेहु।
गिरिहिं प्रेरि पठयेहु भवन दूरि करेहु संदेहु *॥ १०१॥

चौ०—रिषिन्ह गौरि देखी तहँ कैसी। मूरतिवंत तपस्या जैसी॥
बोले मुनि सुनु सैलकुमारी। करहु कवन कारन तपु भारी॥
केहि अवराधहु का तुम्ह चहहू। हम सन सत्य मरमु किन कहहू॥
सुनत रिषिन्ह के बचन भवानी। बोली गूढ़ मनोहर बानी †॥
कहत बचन मनु अति सकुचाई। हँसिहहु सुनि हमारि जड़ताई॥
मनु हठ परा न सुनै सिखावा। चहत बारि पर भीति उठावा॥

---

* अयो० की प्रति के मार्जिन पर इसके अनंतर यह चौपाई दी है—
तब रिषि तुरत गौरि पहँ गयेऊ। देखि दसा मुनि बिस्मै भयऊ॥

† यह चौपाई काशि० और अयो० प्रतियों में नहीं है।

नारद कहा सत्य सोइ जाना। बिनु पंखन हम चहहिं उड़ाना।
देखहु मुनि अविवेक हमारा। चाहिअ सदा सिवहिं भरतारा।
दो०—सुनत बचन बिहँसे रिषय गिरिसंभव तव देह।
नारद कर उपदेसु सुनि कहहु बसेउ कि सुगेह ॥ १०२ ॥
चौ०—दच्छसुतन्ह उपदेसिन्हि जाई। तिन फिरि भवन न देखा आई।
चित्रकेतु कर घरु उन घाला। कनककसिपु कर पुनि अस हाला।
नारदसिष जे सुनहिं नर नारी। अवसि होहिं तजि भवन भिखारी।
मन कपटी तन सज्जन चीन्हा। आपु सरिस सबही चह कीन्हा।
तेहि के बचन मानि बिस्वासा। तुम्ह चाहहु पति सहज उदासा।
निर्गुन निलज कुबेष कपाली। अकुल अगेह दिगंबर ब्याली।
कहहु कवन सुख अस बरु पाएँ। भल भूलिहु ठग के बौराएँ।
पंच कहे सिव सती बिबाही। पुनि अवडेरि मरायेन्हि ताही।
दो०—अब सुख सोवत सोचु नहिं भीख माँगि भव खाहिं।
सहज एकाकिन्ह के भवन कबहुँ कि नारि खटाहिं ॥ १०३ ॥
चौ०—अजहूँ मानहु कहा हमारा। हम तुम्ह कहुँ बर नीक बिचारा।
अति सुंदर सुचि सुखद सुसीला। गावहिं बेद जासु जसलीला।
दूषनरहित सकल-गुन-रासी। श्रीपति-पुर-बैकुंठ-निवासी।
अस बर तुम्हहि मिलाउब आनी। सुनत बिहँसि कह बचन भवानी।
सत्य कहेहु गिरिभव तनु एहा। हठ न छूट छूटै बरु देहा।
कनकौ पुनि पषान तें होई। जारेहु सहजु न परिहर सोई।
नारदबचन न मैं परिहरऊँ। बसौ भवन उजरौ नहिं डरऊँ।
गुर के बचन प्रतीति न जेही। सपनेहु सुगम न सुख सिधि तेही।
दो०—महादेव अवगुन-भवन बिष्णु सकल-गुनधाम।
जेहि कर मनु रम जाहि सन तेहि ताही सन काम ॥१०४॥
चौ०—जौं तुम्ह मिलतेहु प्रथम मुनीसा। सुनतिउँ सिख तुम्हारि धरि सीसा।
अब मैं जनमु संभुहित हारा। को गुन दूषन करै बिचारा।
जौं तुम्हरे हठ हृदय बिसेषी। रहि न जाइ बिनु किए बरेषी।

तौ कौतुकिअन्ह आलसु नाहीं। बर कन्या अनेक जग माहीं।
जनम कोटि लगि रगरि हमारी। बरौं संभु नतु रहौं कुआँरी।
तजौं न नारद कर उपदेसू। आपु कहहिं सत बार महेसू।
मैं पा परौं कहै जगदंबा। तुम्ह गृह गवनहु भयेउ बिलंबा।
दखि प्रेम बोले मुनि ग्यानी। जय जय जगदंबिके भवानी।
दो०—तुम्ह माया भगवान सिव सकल-जगत-पितु-मातु।
नाइ चरन सिरु मुनि चले पुनि पुनि हरषत गातु ॥ १०५ ॥
चौ०—जाइ मुनिन्ह हिमवंत पठाए। करि बिनती गिरिजहि गृह ल्याए।
बहुरि सप्तरिषि सिव पहिं जाई। कथा उमा कै सकल सुनाई।
भए मगन सिव सुनत सनेहा। हरषि सप्तरिषि गवने गेहा।
मनु थिरु करि तब संभु सुजाना। लगे करन रघुनायक-ध्याना।
तारकु असुर भयेउ तेहि काला। भुजप्रताप बल तेज बिसाला।
तेइ सब लोक लोकपति जीते। भए देव सुख*-संपति-रीते।
अजर अमर सो जीति न जाई। हारे सुर करि बिबिध लराई।
तब बिरंचि सन जाइ पुकारे। देखे बिधि सब देव दुखारे।
दो०—सब सन कहा बुझाइ बिधि दनुजनिधन तब होइ।
संभु-सुक्र-संभूत सुत एहि जीतै रन सोइ ॥ १०६ ॥
चौ०—मोर कहा सुनि करहु उपाई। होइहि ईस्वर करिहि सहाई।
सती जो तजी दच्छमख देहा। जनमी जाइ हिमाचल-गेहा।
तेइ तपु कीन्ह संभु पति लागी। सिव समाधि बैठे सब त्यागी।
जदपि अहै असमंजस भारी। तदपि बात एक सुनहु हमारी।
पठवहु काम जाइ सिव पाहीं। करै छोभ संकर-मन माहीं।
तब हम जाइ सिवहिं सिर नाई। करवाउब बिवाह बरिआई।
एहि बिधि भलेहि देवहित होई। मत अति नीक कहै सब कोई।
अस्तुति सुरन्ह कीन्हि अति हेतू। प्रगटेउ बिषमबान झखकेतू।

* काशि०—सब।

दो०—सुरन्ह कही निज विपति सब सुनि मन कीन्ह विचार।
संभुविरोध न कुसल मोहिं विहँसि कहेउ अस मार ॥१०७॥

चौ०–तदपि करब मैं काज तुम्हारा। श्रुति कह परम धरम उपकारा।
परहित लागि तजै जो देही। संतत संत प्रसंसहिं तेही।
अस कहि चलेउ सबहिं सिर नाई। सुमनधनुष कर सहित सहाई।
चलत मार अस हृदय विचारा। सिवविरोध ध्रुव मरन हमारा।
तब आपन प्रभाउ विस्तारा। निज बस कीन्ह सकल संसारा।
कोपेउ जबहिं वारि-चर-केतू। छन महँ मिटे सकल श्रुतिसेतू।
ब्रह्मचर्ज ब्रत संजम नाना। धीरज धरम ग्यान विग्याना।
सदाचार जप जोग विरागा। सभय विवेक-कटक सब भागा।

छंद—भागेउ विवेक सहाइ सहित सो सुभट संजुग महि मुरे।
सदग्रंथ पर्वत कंदरन्हि महुँ जाइ तेहि अवसर दुरे॥
होनिहार का करतार को रखवार जग खरभरु परा।
दुइ माथ केहि रतिनाथ जेहि कहुँ कोपि कर धनुसर धरा॥

दो०—जे सजीव जग चर अचर नारि पुरुष अस नाम।
ते निज निज मरजाद तजि भए सकल बस काम ॥१०८॥

चौ०-सब के हृदय मदन अभिलाखा। लता निहारि नवहिं तरुसाखा।
नदी उमगि अंबुधि कहुँ धाई। संगम करहिं तलाव तलाई।
जहँ असि दसा जड़न कै बरनी। को कहि सकै सचेतन्ह करनी।
पसु पच्छी नभ-जल-थल-चारी। भए कामबस समय विसारी।
मदनअंध ब्याकुल सब लोका। निसि दिन नहिं अवलोकहिं कोका।
देव दनुज नर किन्नर ब्याला। प्रेत पिसाच भूत बेताला।
इन्ह कै दसा न कहेउँ बखानी। सदा काम के चेरे जानी।
सिद्ध विरक्त महा मुनि जोगी। तेपि कामबस भए वियोगी।
छंद—भए कामबस जोगीस तापस पामरन्ह की को कहै।
देखहिं चराचर नारिमय जे ब्रह्ममय देखत रहै॥

अबला बिलोकहिं पुरुषमय जगु पुरुष सब अबलामयं।
दुइ दंड भरि ब्रह्मांड भीतर काम कृत कौतुक अयं॥

सो०—धरा न काहू धीर सब के मन मनसिज हरे।
जे राखे रघुबीर ते उबरे तेहि काल महुँ॥ १०६॥

चौ०-उभय घरी अस कौतुक भयेऊ। जब लगि काम संभु पहँ गयेऊ।
सिवहिं बिलोकि ससंकेउ मारू। भयेउ जथाथिति सब संसारू।
भए तुरत जग जीव सुखारे। जिमि मद उतरि गए मतवारे।
रुद्रहिं देखि मदन भय माना। दुराधर्ष दुर्गम भगवाना।
फिरत लाज कछु कहि नहिं जाई। मरन ठानि मन रचेसि उपाई।
प्रगटेसि तुरत रुचिर रितुराजा। कुसुमित नव तरु राज बिराजा।
बन उपबन बापिका तड़ागा। परम सुभग सब दिसाबिभागा।
जहँ तहँ जनु उमगत अनुरागा। देखि मुएहु मन मनसिज जागा।

छंद—जागै मनोभव मुएहु मन बन सुभगता न परै कही।
सीतल सुगंध सुमंद मारुत मदन अनल सखा सही॥
बिकसे सरन्हि बहु कंज गुंजत पुंज मंजुल मधुकरा।
कल हंस पिक सुक सरस रव करि गान नाचहिं अपछरा।

दो०—सकल कला करि कोटि बिधि हारेउ सेन समेत।
चली न अचल समाधि सिव कोपेउ हृदय निकेत॥ ११०॥

चौ०-देखि रसाल*बिटपबर-साखा। तेहि पर चढ़ेउ मदन मन माखा।
सुमनचाप निज सर संधाने। अति रिसि ताकि श्रवन लगि ताने।
छाँड़ेउ बिषम बान† उर लागे। छूटि समाधि संभु तब जागे।
भयेउ ईसमन छोभु बिसेखी। नयन उघारि सकल दिसि देखी।
सौरभपल्लव मदन बिलोका। भयेउ कोप कंपेउ त्रयलोका।
तब सिव तीसर नयन उघारा। चितवत काम भयेउ जरि छारा।

* काशि०—बिसाल।
† अयो०—छाँड़े बिषम बिसिष।

हाहाकार भयेउ जग भारी । डरपे सुर भए असुर सुखारी ।
समुझि कामसुख सोचहिं भोगी । भए अकंटक साधक जोगी ।

छंद—जोगी अकंटक भए पतिगति सुनति रति मुरछित भई ।
रोदति बदति बहु भाँति करुना करति संकर पहिं गई ॥
अति प्रेम करि बिनती बिबिध बिधि जोरि कर सनमुख रही ।
प्रभु आसुतोष कृपाल सिव अबला निरखि बोले सही ॥

दो०—अब तें रति तव नाथ कर होइहि नाम अनंग ।
बिनु बपु ब्यापिहि सबहि पुनि सुनु निज मिलन प्रसंग ॥१११॥

चौ०—जब जदुबंस कृष्ण-अवतारा । होइहि हरन महा महिभारा ।
कृष्णतनय होइहि पति तोरा । बचन अन्यथा होइ न मोरा ।
रति गवनी सुनि संकरबानी । कथा अपर अब कहउँ बखानी ।
देवन्ह समाचार सब पाए । ब्रह्मादिक बैकुंठ सिधाए ।
सब सुर बिष्णु बिरंचि समेता । गए जहाँ सिव कृपानिकेता ।
पृथक पृथक तिन्ह कीन्ह प्रसंसा । भए प्रसन्न चंद्र-अवतंसा ।
बोले कृपासिंधु बृषकेतू । कहहु अमर आए केहि हेतू ।
कह बिधि तुम्ह प्रभु अंतरजामी । तदपि भगति बस बिनवौं स्वामी ।

दो०—सकल सुरन्ह के हृदय अस संकर परम उछाहु ।
निज नयनन्हि देखा चहहिं नाथ तुम्हार बिबाहु ॥ ११२ ॥

चौ०—यह उत्सव देखिअ भरि लोचन । सोइ कछु करहु मदन-मद-मोचन ।
काम जारि रति कहँ बर दीन्हा । कृपासिंधु यह अति भल कीन्हा ।
साँसति करि पुनि करहिं पसाऊ । नाथ प्रभुन्ह कर सहज सुभाऊ ।
पारबती तप कीन्ह अपारा । करहु तासु अब अंगीकारा ।
सुनि बिधिबिनय समुझि प्रभुबानी । ऐसइ होय कहा सुख मानी ।
तब देवन दुंदुभी बजाई । बरषि सुमन जय जय सुरसाई ।
अवसर जानि सप्तरिषि आए । तुरतहि बिधि गिरिभवन पठाए ।
प्रथम गए जहँ रही भवानी । बोले मधुर बचन छलसानी ।

दो०–कहा हमार न सुनेहु तव नारद कै उपदेस।
अब भा झूठ तुम्हार पन जारेउ काम महेस ॥ ११३ ॥
चौ०–सुनि बोली मुसुकाइ भवानी। उचित कहेहु मुनिबर बिग्यानी।
तुम्हरे जान काम अब जारा। अब लगि संभु रहे सविकारा।
हमरे जान सदा सिव जोगी। अज अनवद्य अकाम अभोगी।
जौं मैं सिव सेयेउँ अस जानी। प्रीति समेत करम मन बानी।
तौ हमार पन सुनहु मुनीसा। करिहहिं सत्य कृपानिधि ईसा।
तुम्ह जो कहेहु हर जारेउ मारा। सो अति बड़ अविवेक तुम्हारा।
तात अनल कर सहज सुभाऊ। हिम तेहि निकट जाइ नहिं काऊ।
गए समीप सो अवसि नसाई। असि मनमथ महेस कै नाई।
दो०—हिय हरषे मुनि बचन सुनि देखि प्रीति बिस्वास।
चले भवानी नाइ सिर गए हिमाचल पास ॥ ११४ ॥
चौ०–सब प्रसंग गिरिपतिहिं सुनावा। मदन-दहन सुनि अति दुख पावा।
बहुरि कहेउ रति कर बरदाना। सुनि हिमवंत बहुत सुख माना।
हृदय बिचारि संभु – प्रभुताई। सादर मुनिवर लिए बुलाई।
सुदिन सुनखत सुघरी सोचाई। बेगि बेदबिधि लगन धराई।
पत्री सप्तरिषिन्ह सोइ दीन्ही। गहि पद बिनय हिमाचल कीन्ही।
जाइ बिधिहि तिन्ह दीन्हि सो पाती। बाँचत प्रीति न हृदय समाती।
लगन बाँचि अज सबहिं सुनाई। हरषे मुनि मुनि-सुर-समुदाई।
सुमनवृष्टि नभ बाजन बाजे। मंगल कलस दसहुँ दिसि साजे।
दो०—लगे सँवारन सकल सुर बाहन बिबिध बिमान।
होहिं सगुन मंगल सुभग करहिं अपछरा गान ॥ ११५ ॥
चौ०–सिवहिं संभुगन करहिं सिँगारा। जटामुकुट अहिमौर सँवारा।
कुंडल कंकन पहिरे ब्याला। तन बिभूति पट केहरिछाला।
ससि ललाट सुंदर सिर गंगा। नयन तीनि उपवीत भुजंगा।
गरल कंठ उर नर-सिर-माला। असिव बेष सिवधाम कृपाला।
कर त्रिसूल अरु डँवरु बिराजा। चले बसह चढ़ि बाजहिं बाजा।

देखि सिवहिं सुरत्रिय मुसुकाहीं। वरलायक दुलहिनि जग नाहीं।
विष्णु विरंचि आदि सुरव्राता। चढ़ि चढ़ि वाहन चले वराता।
सुरसमाज सब भाँति अनूपा। नहिं वरात दूलह-अनुरूपा।

दो०—विष्णु कहा अस विहँसि तब बोलि सकल दिसिराज।
विलग विलग होइ चलहु सब निज निज सहित समाज॥११६॥

चौ०—वर अनुहारि वरात न भाई। हँसी करैहहु पर-पुर जाई।
विष्णु-वचन सुनि सुर मुसुकाने। निज निज सेन सहित विलगाने।
मनही मन महेस मुसुकाहीं। हरि के व्यंग वचन नहिं जाहीं।
अति प्रिय वचन सुनत प्रिय केरे। भृंगहि प्रेरि सकल गन टेरे।
सिव अनुसासन सुनि सब आए। प्रभु-पदजलज सीस तिन्ह नाए।
नाना वाहन नाना वेखा। विहँसे सिव समाज निज देखा।
कोउ मुखहीन विपुलमुख काहू। विनु पद कर कोउ बहु-पद-बाहू।
विपुलनयन कोउ नयनविहीना। रिष्टपुष्ट कोउ अति तनखीना।

छंद—तनखीन कोउ अति पीन पावन कोउ अपावन गति धरे।
भूषन कराल कपाल कर सब सद्य सोनित तन भरे॥
खर-स्वान-सुअर-सृगाल-मुख गन वेष अगनित को गनै।
बहु जिनिस प्रेत पिसाच जोगि जमात बरनत नहिं बनै॥

सो०—नाचहिं गावहिं गीत परम तरंगी भूत सब।
देखत अति विपरीत बोलहिं वचन विचित्र विधि॥ ११७॥

चौ०—जस दूलह तसि वनी वराता। कौतुक विविध होहिं मग जाता।
इहां हिमाचल रचेउ विताना। अति विचित्र नहिं जाइ वखाना।
सैल सकल जहँ लगि जग माहीं। लघु विसाल नहिं वरनि सिराहीं।
वन सागर सब नदी तलावा। हिमगिरि सब कहँ नेवति पठावा।
काम-रूप सुंदर-तनु – धारी। सहित समाज सोह वर नारी।
आए सकल हिमाचल गेहा। गावहिं मंगल सहित सनेहा।
प्रथमहिं गिरि बहु गृह सँवराए। जथाजोग जहँ तहँ सब छाए।
पुर सोभा अवलोकि सुहाई। लागइ लघु विरंचि निपुनाई।

जेहि विधि तुमहिं रूप अस दीन्हा। तेहि जड़ बर बाउर कस कीन्हा।

छंद—कस कीन्ह बर बौराह विधि जेहि तुम्हहिं सुंदरता दई।
जो फलु चहिअ सुरतरुहिं सो बरबस बबूरहिं लागई॥
तुम्ह सहित गिरि ते गिरौं पावक जरौं जलनिधि महुँ परौं।
घर जाउ अपजस होउ जग जीवत बिवाह न हौं करौं॥

दो०—भईं बिकल अबला सकल दुखित देखि गिरिनारि।
करि बिलाप रोदति बदति सुता सनेह सँभारि॥ १२०॥

चौ०—नारद कर मैं कहा बिगारा। भवन मोर जिन्ह बसत उजारा।
अस उपदेस उमहिं जिन्ह दीन्हा। बौरे बरहिं लागि तप कीन्हा।
साँचेहु उन्हके मोह न माया। उदासीन धन धाम न जाया।
पर-घर-घालक लाज न भीरा। बाँझ कि जान प्रसव की पीरा।
जननिहिं बिकल बिलोकि भवानी। बोली जुत बिवेक मृदुबानी।
अस बिचारि सोचहि मति माता। सो न टरै जो रचै बिधाता।
करम लिखा जौ बाउर नाहू। तौ कत दोष लगाइअ काहू।
तुम्ह सन मिटहि कि बिधि के अंका। मातु ब्यर्थ जनि लेहु कलंका।

छंद—जनि लेहु मातु कलंक करुणा परिहरहु अवसर नहीं।
दुख सुख जो लिखा लिलार हमरे जाब जहँ पाउब तहीं॥
सुनि उमाबचन बिनीत कोमल सकल अबला सोचहीं।
बहु भाँति बिधिहि लगाइ दूषन नयन बारि बिमोचहीं॥

दो०—तेहि अवसर नारद सहित अरु रिषिसप्त समेत।
समाचार सुनि तुहिनगिरि गवने तुरित निकेत॥ १२१॥

चौ०—तब नारद सबही समुझावा। पूरब-कथा-प्रसंग सुनावा।
मैना, सत्य सुनहु मम बानी। जगदंबा तव सुता भवानी।
अजा अनादि सक्ति अबिनासिनि। सदा संभु-अरधंग-निवासिनि।
जग-संभव-पालन-लय-कारिनि। निज इच्छा लीला-बपु-धारिनि।
जनमीं प्रथम दच्छगृह जाई। नाम सती सुंदर तनु पाई।
तहँउँ सती संकरहि बिवाहीं। कथा प्रसिद्ध सकल जग माहीं।

एक बार आवत सिव संगा। देखेउ रघुकुल-कमल-पतंगा।
भयेउ मोह सिव कहा न कीन्हा। भ्रमबस बेष सीय कर लीन्हा।

छंद—सियबेष सती जो कीन्ह तेहि अपराध संकर परिहरी।
हरबिरह जाइ बहोरि पितु के जग्य जोगानल जरी॥
अब जनमि तुम्हरे भवन निज पति लागि दारुन तपु किया।
अस जानि संसय तजहु गिरिजा सर्वदा संकरप्रिया॥

दो०—सुनि नारद के बचन तब सब कर मिटा बिषाद।
छन महँ ब्यापेउ सकल पुर घर घर यह संवाद॥१२२॥

चौ०-तब मैना हिमवंत अनंदे। पुनि पुनि पारबतीपद बंदे।
नारि पुरुष सिसु जुवा सयाने। नगर लोग सब अति हरषाने।
लगे होन पुर मंगल गाना। सजे सबहि हाटकघट नाना।
भाँति अनेक भई जेवनारा। सूपसास्त्र जस कछु ब्यवहारा।
सो जेवनार कि जाइ बखानी। बसहिं भवन जेहि मातु भवानी।
सादर बोले सकल बराती। बिष्नु बिरंचि देव सब जाती।
बिबिधि पाँति बैठी जेवनारा। लगे परोसन निपुन सुआरा।
नारिबृंद सुर जेवँत जानी। लगीं देन गारी मृदुबानी।

छंद—गारी मधुर सुर देहिं सुंदरि ब्यंग बचन सुनावहीं।
भोजन करहिं सुर अति बिलंब बिनोद सुनि सचुपावहीं॥
जेवँत जो बढ्यो अनंद सो मुख कोटिहू न परै कह्यो।
अँचवाइ दीन्हे पान गवने बास जहँ जाको रह्यो॥

दो०—बहुरि मुनिन्ह हिमवंत कहँ लगन सुनाई आइ।
समय बिलोकि बिवाह कर पठए देव बोलाइ॥१२३॥

चौ०-बोलि सकल सुर सादर लीन्हे। सबहिं जथोचित आसन दीन्हे।
बेदी बेदबिधान सँवारी। सुभग सुमंगल गावहिं नारी।
सिंघासन अति दिब्य सुहावा। जाइ न बरनि बिचित्र बनावा।
बैठे सिव बिप्रन्ह सिरु नाई। हृदय सुमिरि निज प्रभु रघुराई।
बहुरि मुनीसन्ह उमा बोलाई। करि सिंगार सखी ले आई।

देखत रूप सकल सुर मोहे। बरनै छबि अस जग कवि को है।
जगदंबिका जानि भवबामा। सुरन्ह मनहिं मन कीन्ह प्रनामा।
सुंदरता-मरजाद भवानी। जाइ न कोटिन बदन बखानी।
छंद—कोटिहु बदन नहिं बनै बरनत जग-जननि-सोभा महा।
सकुचहिं कहत श्रुति सेष सारद मंदमति तुलसी कहा॥
छबिखानि मातु भवानि गवनी मध्य मंडप सिव जहाँ।
अवलोकि सकै न सकुचि पति-पद-कमल मन मधुकर तहाँ॥
दो०—मुनि-अनुसासन गनपतिहिं पूजेउ संभु-भवानि।
कोउ सुनि संसय करै जनि सुर अनादि जिय जानि॥१२४॥
चौ०-जसि विवाह कै विधि श्रुति गाई। महामुनिन्ह सो सब करवाई।
गहि गिरीस कुस कन्या पानी। भवहिं समरपी जानि भवानी।
पानिग्रहन जब कीन्ह महेसा। हिय हरपे तब सकल सुरेसा।
वेदमंत्र मुनिवर उच्चरहीं। जय जय जय संकर सुर करहीं।
बाजहिं बाजन विविध विधाना। सुमनवृष्टि नभ भै विधि नाना।
हर गिरिजा कर भयेउ विवाहू। सकल भुवन भरि रहा उछाहू।
दासी दास तुरँग रथ नागा। धेनु बसन मनि बस्तु विभागा।
अन्न कनक भाजन भरि जाना। दाइज दीन्ह न जाइ बखाना।
छंद—दाइज दियो बहु भाँति पुनि कर जोरि हिमभूधर कह्यौ।
का देउँ पूरनकाम संकर चरनपंकज गहि रह्यौ॥
सिव कृपासागर ससुर कर संतोप सब भाँतिहि कियो।
पुनि गहे पदपाथोज मैना प्रेमपरिपूरन हियो॥
दो०—नाथ उमा मम प्रान सम गृहकिंकरी करेहु।
छमेहु सकल अपराध अब होइ प्रसन्न बरु देहु॥ १२५॥
चौ०-बहु विधि संभु सासु समुझाई। गवनी भवन चरन सिरु नाई।
जननी उमा बोलि तब लीन्ही। लै उछंग सुंदर सिख दीन्ही।
करेहु सदा संकर-पद पूजा। नारिधरम पति देव न दूजा।
बचन कहत भरि लोचन बारी। बहुरि लाइ उर लीन्हि कुमारी।

कत विधि सृजी नारि जग माहीं। पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।
भै अति प्रेम बिकल महतारी। धीरज कीन्ह कुसमउ विचारी।
पुनि पुनि मिलति परति गहि चरना। परम प्रेम कछु जाइ न वरना।
सब नारिन्ह मिलि भेंटि भवानी। जाइ जननिउर पुनि लपटानी।

छंद—जननी बहुरि मिलि चलीं उचित असीस सब काहू दई।
फिरि फिरि बिलोकति मातुतन तब सखी लेइ सिव पहिं गई॥
जाचक सकल संतोषि संकर उमा सहित भवन चले।
सब अमर हरषे सुमन बरषि निसान नभ बाजे भले॥

दो०—चले संग हिमवंतु तब पहुँचावन अति हेतु।
बिबिध भाँति परितोषु करि विदा कीन्ह वृषकेतु॥१२६॥

चौ०—तुरत भवन आए गिरिराई। सकल शैल सर लिए बोलाई।
आदर दान विनय बहु माना। सब कर बिदा कीन्ह हिमवाना।
जबहिं संभु कैलासहि आए। सुर सब निज निज लोक सिधाए।
जगत-मातुपितु संभु-भवानी। तेहि सिंगारु न कहौं बखानी।
करहिं बिबिध विधि भोग विलासा। गनन्ह समेत बसहिं कैलासा।
हर-गिरिजा-विहार नित नयऊ। एहि विधि विपुल काल चलि गयऊ।
तब जनमेउ षट-बदन कुमारा। तारकु असुर समर जेहि मारा।
आगम निगम प्रसिद्ध पुराना। षन्मुख-जनमु सकल जगु जाना।

छंद—जगु जान षन्मुख-जनमु करमु प्रतापु पुरुपारथु महा।
तेहि हेतु मैं वृष-केतु-सुत कर चरित संछेपहि कहा॥
यह उमा-संभु-बिवाहु जे नर नारि कहहिं जे गावहीं।
कल्यान काज बिवाह मंगल सर्वदा सुखु पावहीं॥

दो०—चरितसिंधु गिरिजारमन वेद न पावहिं पारु।
बरनै तुलसीदासु किमि अति मति-मंद गवाँरु॥१२७॥

चौ०-संभुचरित सुनि सरस सुहावा। भरद्वाज मुनि अति सुख पावा।
बहु लालसा कथा पर बाढ़ी। नयन नीरु रोमावलि ठाढ़ी।
प्रमविवस मुख आव न बानी। दसा देखि हरषे मुनि ग्यानी।

अहो धन्य तव जनम मुनीसा। तुम्हहि प्रान सम प्रिय गौरीसा।
सिव-पद-कमल जिन्हहिं रति नाहीं। रामहिं ते सपनेहुँ न सुहाहीं।
बिनु छल बिस्व-नाथ-पद-नेहू। रामभगत कर लच्छन एहू।
सिव सम को रघु-पति-व्रत-धारी। बिनु अघ तजी सती असि नारी।
पनु करि रघुपतिभगति दृढ़ाई। को सिव सम रामहिं प्रिय भाई।
दो०—प्रथमहिं मैं कहि सिवचरित बूझा मरमु तुम्हार।
सुचि सेवक तुम्ह राम के रहित समस्त बिकार ॥१२८॥
चौ०-मैं जाना तुम्हार गुन सीला। कहौं सुनहु अब रघु-पति-लीला।
सुनु मुनि आजु समागम तोरें। कहि न जाइ जस सुख मन मोरें।
रामचरित अति अमित मुनीसा। कहि न सकहिं सतकोटि अहीसा।
तदपि जथाश्रुत कहौं बखानी। सुमिरि गिरापति प्रभु धनुपानी।
सारद दारुनारि सम स्वामी। राम सूत्रधर अंतरजामी।
जेहि पर कृपा करहिं जनु जानी। कबि-उर-अजिर नचावहिं बानी।
प्रनवौं सोइ कृपाल रघुनाथा। बरनौं बिसद तासु गुनगाथा।
परम रम्य गिरिबर कैलासू। सदा जहाँ सिव-उमा-निवासू।
दो०—सिद्ध तपोधन जोगिजन सुर किन्नर मुनिबृंद।
बसहिं तहाँ सुकृती सकल सेवहिं सिव सुखकंद ॥ १२९ ॥
चौ०-हरि-हर-बिमुख धरमरति नाहीं। ते नर तहँ सपनेहुँ नहिं जाहीं।
तेहि गिरि पर बट बिटप बिसाला। नित नूतन सुंदर सब काला।
त्रिबिध समीर सुसीतलि छाया। सिव-बिश्राम-बिटप श्रुति गाया।
एक बार तेहि तर प्रभु गयेऊ। तरु बिलोकि उर अति सुखु भयेऊ।
निज कर डासि नाग-रिपु-छाला। बैठे सहजहिं संभु कृपाला।
कुंद - इंदु - दर - गौर-सरीरा। भुज प्रलंब परिधन मुनिचीरा।
तरुन-अरुन-अंबुज-सम चरना। नखदुति भगत-हृदय-तम-हरना।
भुजँग - भूति - भूषन त्रिपुरारी। आननु सरद - चंद-छबि-हारी।
दो०—जटामुकुट सुरसरित सिर लोचन नलिन बिसाल।
नीलकंठ लावन्यनिधि सोह बालबिधु भाल ॥ १३० ॥

चौ०-बैठे सोइ कामरिपु कैसें। धरे सरीर सांतरस जैसें।
पारबती भल अवसरु जानी। गईं संभु पहिं मातु भवानी।
जानि प्रिया आदरु अति कीन्हा। बामभाग आसनु हर दीन्हा।
बैठीं सिवसमीप हरषाई। पूरब-जनम-कथा चितु आई।
पति-हिय-हेतु अधिक अनुमानी। बिहँसि उमा बोलीं प्रिय बानी।
कथा जो सकल-लोक-हितकारी। सोइ पूछन चह सैल-कुमारी।
बिस्वनाथ मम नाथ पुरारी। त्रिभुवन महिमा बिदित तुम्हारी।
चर अरु अचर नाग नर देवा। सकल करहिं पद-पंकज-सेवा।

दो०—प्रभु समरथ सर्बग्य सिव सकल-कला-गुन-धाम।
जोग-ग्यान-बैराग्य-निधि प्रनतकलपतरु नाम ॥ १३१ ॥

चौ०-जौं मो पर प्रसन्न सुखरासी। जानिअ सत्य मोहि निज दासी।
तौं प्रभु हरहु मोर अग्याना। कहि रघुनाथ कथा-बिधि नाना।
जासु भवन सुरतरु-तर होई। सहि कि दरिद्रजनित दुख सोई।
ससिभूषन अस हृदय बिचारी। हरहु नाथ मम मतिभ्रम भारी।
प्रभु जे मुनि परमारथबादी। कहहिं राम कहुँ ब्रह्म अनादी।
सेष सारदा बेद पुराना। सकल करहिं रघुपति-गुन-गाना।
तुम्ह पुनि राम राम दिन राती। सादर जपहु अनंग-अराती।
राम सो अवध-नृपति-सुत सोई। की अज अगुन अलखगति कोई।

दो०-जौं नृपतनय तो ब्रह्म किमि नारिबिरह-मतिभोरि।
देखि चरित महिमा सुनत भ्रमति बुद्धि अति मोरि ॥१३२॥

चौ०-जौं अनीह ब्यापक बिभु कोऊ। कहहु बुझाइ नाथ मोहिं सोऊ।
अग्य जानि रिस उर जनि धरहू। जेहि बिधि मोह मिटै सोइ करहू।
मैं बन दीखि रामप्रभुताई। अति-भय-बिकल न तुम्हहिं सुनाई।
तदपि मलिनमन बोधु न आवा। सो फलु भली भाँति हम पावा।
अजहूँ कछु संसउ मन मोरें। करहु कृपा बिनवौं करजोरें।
प्रभु तब मोहिं बहु भाँति प्रबोधा। नाथ सो समुझि करहु जनि क्रोधा।
तब कर अस बिमोह अब नाहीं। रामकथा पर रुचि मन माहीं।

कहहु पुनीत राम-गुन-गाथा। भुजँग - राज-भूषन सुरनाथा।
दो०—बंदौं पद धरि धरनि सिरु विनय करौं कर जोरि।
बरनहु रघुवर-बिसद-जसु श्रुतिसिद्धांत निचोरि॥ १३३॥
चौ०-जदपि जोषिता नहिं अधिकारी। दासी मन क्रम बचन तुम्हारी।
गूढउ तत्व न साधु दुरावहिं। आरत अधिकारी जहँ पावहिं।
अति आरति पूछौं सुरराया। रघुपतिकथा कहहु करि दाया।
प्रथम सो कारन कहहु बिचारी। निर्गुन ब्रह्म सगुन - बपु - धारी।
पुनि प्रभु कहहु राम-अवतारा। बालचरित पुनि कहहु उदारा।
कहहु जथा जानकी बिवाही। राज तजा सो दूषन काहीं।
बन बसि कीन्हे चरित अपारा। कहहु नाथ जिमि रावन मारा।
राज बैठि कीन्ही बहु लीला। सकल कहहु संकर सुखसीला।
दो०—बहुरि कहहु करुनायतन कीन्ह जो अचरज राम।
प्रजा सहित रघु-बंस-मनि किमि गवने निजधाम॥ १३४॥
चौ०-पुनि प्रभु कहहु सो तत्व बखानी। जेहि बिग्यान मगन मुनि ग्यानी।
भगति ग्यान बिग्यान बिरागा। पुनि सब बरनहु सहित बिभागा।
औरौ रामरहस्य अनेका। कहहु नाथ अति बिमल बिवेका।
जो प्रभु मैं पूछा नहिं होई। सोउ दयाल राखहु जनि गोई।
तुम्ह त्रिभुवन-गुर बेद बखाना। आन जीव पाँवर का जाना।
प्रश्न उमा कै सहज सुहाई। छलबिहीन सुनि सिव मन भाई।
हरि-हिय रामचरित सब आए। प्रेम पुलक लोचन जल छाए।
श्री—रघुनाथ—रूप उर आवा। परमानंद अमित सुख पावा।
दो०—मगन ध्यानरस दंड जुग पुनि मन बाहेर कीन्ह।
रघुपतिचरित महेस तब हरषित बरनै लीन्ह॥ १३५॥
चौ०-झूठेउ सत्य जाहि बिनु जाने। जिमि भुजंग बिनु रजु पहिचाने।
जेहि जाने जग जाइ हेराई। जागे जथा सपनभ्रम जाई।
बंदौं बालरूप सोइ रामू। सब सिधि सुलभ जपत जिसु नामू।
मंगल—भवन अमंगल—हारी। द्रवौ सो दसरथ-अजिर-बिहारी।

करि प्रनाम रामहिं त्रिपुरारी। हरषि सुधासम गिरा उचारी।
धन्य धन्य गिरि-राज-कुमारी। तुम्ह समान नहिं कोउ उपकारी।
पूछेहु रघुपति-कथा-प्रसंगा। सकल लोक जगपावनि गंगा।
तुम्ह रघुबीर-चरन-अनुरागी। कीन्हिहु प्रश्न जगत हित लागी।
दो०—रामकृपा तें पारबति सपनेहु तव मन माहिं।
सोक मोह संदेह भ्रम मम विचार कछु नाहिं ॥ १३६ ॥
चौ०-तदपि असंका कीन्हिहु सोई। कहत सुनत सब कर हित होई।
जिन हरिकथा सुनी नहिं काना। श्रवनरंध्र अहि-भवन समाना।
नयनन्हि संत दरस नहिं देखा। लोचन मोर-पंख कर लेखा।
ते सिर कटु तुम्बरि सम तूला। जे न नमत हरि-गुर-पद-मूला।
जिन्ह हरिभगति हृदय नहिं आनी। जीवत सव समान तेइ प्रानी।
जो नहिं करै राम-गुन-गाना। जीह सो दादुर-जीह समाना।
कुलिस कठोर निठुर सोइ छाती। सुनि हरिचरित न जो हरषाती।
गिरिजा सुनहु राम कै लीला। सुरहित दनुज-बिमोहन-सीला।
दो०—रामकथा सुरधेनु सम सेवत सव-सुख-दानि।
सतसमाज सुरलोक सब को न सुनै अस जानि ॥ १३७ ॥
चौ०-रामकथा सुंदर करतारी। संसय बिहँग उड़ावन-हारी।
रामकथा कलि-बिटप-कुठारी। सादर सुनु गिरिराज-कुमारी।
राम-नाम-गुन-चरित सुहाए। जनम करम अगनित श्रुति गाए।
जथा अनंत राम भगवाना। तथा कथा कीरति गुन नाना।
तदपि जथाश्रुत जसि मति मोरी। कहिहौं देखि प्रीति अति तोरी।
उमा प्रश्न तव सहज सुहाई। सुखद संत-संमत मोहि भाई।
एक बात नहिं मोहिं सुहानी। जदपि मोहबस कहेहु भवानी।
तुम्ह जो कहा राम कोउ आना। जेहि श्रुति गाव धरहिं मुनि ध्याना।
दो०—कहहिं सुनहिं अस अधम नर ग्रसे जो मोहपिसाच।
पाखंडी हरि-पद-बिमुख जानहिं झूठ न साँच ॥१३८॥
चौ०-अग्य अकोबिद अंध अभागी। काई बिषय-मुकुर-मन लागी।

लंपट कपटी कुटिल बिसेखी। सपनेहु संत-सभा नहिं देखी।
कहहिं ते बेद असंमत बानी। जिन्ह के सूझ लाभ नहिं हानी।
मुकुर मलिन अरु नयनबिहीना। रामरूप देखहिं किमि दीना।
जिन्ह के अगुन न सगुन बिबेका। जल्पहिं कल्पित बचन अनेका।
हरि-माया-बस जगत भ्रमाहीं। तिन्हहिं कहत कछु अघटित नाहीं।
बातुल भूत बिबस मतवारे। ते नहिं बोलहिं बचन बिचारे।
जिन्ह कृत महा-मोह-मद-पाना। तिन्ह कर कहा करिअ नहिं काना।
सो०—अस निज हृदय बिचारि तजु संसय भजु रामपद।
सुनु गिरि-राज-कुमारि भ्रम-तम-रबि-कर बचन मम ॥१३९॥
चौ०—सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान बुध बेदा।
अगुन अरूप अलख अज जोई। भगत-प्रेम-बस सगुन सो होई।
जो गुनरहित सगुन सोइ कैसें। जलु हिम उपल बिलग नहिं जैसें।
जासु नाम भ्रम-तिमिर-पतंगा। तेहि किमि कहिअ बिमोह प्रसंगा।
राम सच्चिदानंद दिनेसा। नहिं तहँ मोह-निसा-लव-लेसा।
सहज प्रकासरूप भगवाना। नहिं तहँ पुनि बिग्यान-बिहाना।
हरष बिषाद ग्यान अग्याना। जीव-धरम अहमिति अभिमाना।
राम ब्रह्म व्यापक जग जाना। परमानंद परेस पुराना।
दो०—पुरुष प्रसिद्ध प्रकासनिधि प्रकट परावरनाथ।
रघु-कुल-मनि मम स्वामि सोइ कहि सिव नायेउ माथ ॥१४०॥
चौ०—निज भ्रम नहिं समुझहिं अग्यानी। प्रभु पर मोह धरहिं जड़ प्रानी।
जथा गगन घनपटल निहारी। झाँपेउ भानु कहहिं कुबिचारी।
चितव जो लोचन अंगुलि लाएँ। प्रगट जुगल ससि तेहि के भाएँ।
उमा रामबिषयक अस मोहा। नभ तम धूम धूरि जिमि सोहा।
बिषय, करन*, सुर, जीव समेता। सकल एक तें एक सचेता।
सब कर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई।

* करन = [करण] इंद्रिय।

जगत प्रकास्य प्रकासक रामू। मायाधीस ग्यान-गुन-धामू।
जासु सत्यता तें जड़ माया। भास सत्य इव मोह सहाया।
दो०—रजत सीप महुँ भास जिमि जथा भानु कर वारि।
अदपि मृषा तिहुँ काल सोइ भ्रम न सकै कोउ टारि ॥१४१॥
चौ०-एहि बिधि जग हरि आश्रित रहई। जदपि असत्य देत दुख अहई।
जौं सपने सिर काटै कोई। बिनु जागें न दूरि दुख होई।
जासु कृपा अस भ्रम मिटि जाई। गिरिजा सोइ कृपालु रघुराई।
आदि अंत कोउ जासु न पावा। मति अनुमान निगम अस गावा।
बिनु पद चलै सुनै बिनु काना। कर बिनु करम करै बिधि नाना।
आननरहित सकल-रस-भोगी। बिनु बानी बकता बड़ जोगी।
तन बिनु परस, नयन बिनु देखा। ग्रहै घ्रान बिनु बास असेखा।
असि सब भाँति अलौकिक करनी। महिमा जासु जाइ नहिं बरनी।
दो०—जेहि इमि गावहिं बेद बुध जाहि धरहिं मुनि ध्यान।
सोइ दसरथसुत भगतहित कोसलपति भगवान ॥१४२॥
चौ०-कासी मरत जंतु अवलोकी। जासु नामबल करौं बिसोकी।
सोइ प्रभु मोर चराचरस्वामी। रघुबर सब उर अंतरजामी।
बिबसहु जासु नाम नर कहहीं। जनम अनेक रचित अघ दहहीं।
सादर सुमिरन जे नर करहीं। भववारिधि गोपद इव तरहीं।
राम सो परमातमा भवानी। तहँ भ्रम अति अबिहित तव बानी।
अस संसय आनत उर माहीं। ग्यान बिराग सकल गुन जाहीं।
सुनि सिव के भ्रमभंजन बचना। मिटि गै सब कुतरक कै रचना।
भै रघुपति-पद-प्रीति-प्रतीती। दारुन असंभावना बीती।
दो०—पुनि पुनि प्रभु-पद-कमल गहि जोरि पंकरुह पानि।
बोलीं गिरिजा बचन बर मनहुँ प्रेमरस सानि ॥१४३॥
चौ०-ससिकर सम सुनि गिरा तुम्हारी। मिटा मोह सरदातप भारी।
तुम्ह कृपाल सबु संसउ हरेऊ। रामसरूप जानि मोहिं परेऊ।
नाथकृपा अब गयेउ बिषादा। सुखी भइउँ प्रभु-चरन-प्रसादा।

अब मोहि आपनि किंकरि जानी। जदपि सहज जड़ नारि अयानी।
प्रथम जो मैं पूछा सोइ कहहू। जौं मो पर प्रसन्न प्रभु अहहू।
राम ब्रह्म चिन्मय अबिनासी। सर्वरहित सब-उर-पुर-बासी।
नाथ धरेउ नरतनु केहि हेतू। मोहि समुझाइ कहहु बृषकेतू।
उमाबचन सुनि परम बिनीता। रामकथा पर प्रीति पुनीता।

दो०—हिय हरषे कामारि तब संकर सहज सुजान।
बहु बिधि उमहि प्रसंसि पुनि बोले कृपानिधान ॥ १४४ ॥

सो०—सुनु सुभ कथा भवानि रामचरितमानस बिमल।
कहा भुसुंडि बखानि सुना बिहंगनायक गरुड़ ॥ १४५ ॥
सो संबाद उदार जेहि बिधि भा आगे कहब।
सुनहु रामअवतार-चरित परम सुंदर अनघ ॥ १४६ ॥
हरिगुन नाम अपार कथारूप अगनित अमित।
मैं निज-मति-अनुसार कहौं उमा सादर सुनहु ॥ १४७ ॥

चौ०-सुनु गिरिजा हरिचरित सुहाए। बिपुल बिसद निगमागम गाए।
हरि-अवतार हेतु जेहि होई। इदमित्थं कहि जाइ न सोई।
राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी। मत हमार अस सुनहि सयानी।
तदपि संत मुनि बेद पुराना। जस कछु कहहिं स्वमति-अनुमाना।
तस मैं सुमुखि सुनावौं तोही। समुझि परै जस कारन मोही।
जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी। सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी।
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जनपीरा।

दो०—असुर मारि थापहिं सुरन्ह राखहिं निज-श्रुति-सेतु।
जग बिस्तारहिं बिसद जस रामजनम कर हेतु ॥ १४८ ॥

चौ०-सोइ जस गाइ भगत भव तरहीं। कृपासिंधु जनहित तनु धरहीं।
रामजनम के हेतु अनेका। परम बिचित्र एक तें एका।
जनम एक दुइ कहौं बखानी। सावधान सुनु सुमति भवानी।
द्वारपाल हरि के प्रिय दोऊ। जय अरु बिजय जान सब कोऊ।

विप्रश्राप तें दूनौ भाई। तामस असुर देह तिन्ह पाई।
कनककसिपु अरु हाटकलोचन। जगतबिदित सुर-पति-पद-मोचन।
बिजई समर बीर बिख्याता। धरि बराह-बपु एक निपाता।
होइ नरहरि दूसर पुनि मारा। जन प्रहलादसुजस बिस्तारा।

दो०—भए निसाचर जाइ तेइ महाबीर बलवान।
कुंभकरन रावन सुभट सुरबिजई जग जान॥ १४६॥

चौ०—मुकुत न भए हते भगवाना। तीनि जनम द्विज-बचन-प्रवाना।
एक बार तिन्ह के हित लागी। धरेउ सरीर भगतअनुरागी।
कस्यप अदिति तहाँ पितु माता। दसरथ कौशल्या बिख्याता।
एक कलप एहि बिधि अवतारा। चरित पवित्र किए संसारा।
एक कलप सुर देखि दुखारे। समर जलंधर सन सब हारे।
संभु कीन्ह संग्राम अपारा। दनुज महाबल मरै न मारा।
परम सती असुराधिप नारी। तेहि बल ताहि न जितहिं पुरारी।

दो०—छल करि टारेउ तासु ब्रत प्रभु सुरकारज कीन्ह।
जब तेहि जानेउ मरम तब श्राप कोप करि दीन्ह॥ १५०॥

चौ०—तासु श्राप हरि दीन्ह प्रवाना। कौतुकनिधि कृपाल भगवाना।
तहाँ जलंधर रावन भयेऊ। रन हति राम परम पद दयेऊ।
एक जनम कर कारन एहा। जेहि लगि राम धरी नरदेहा।
प्रति अवतार कथा प्रभु केरी। सुनु मुनि बरनी कबिन्ह घनेरी।
नारद श्राप दीन्ह एक बारा। कलप एक तेहि लगि अवतारा।
गिरिजा चकित भईं सुनि बानी। नारद बिष्णुभगत मुनि ग्यानी।
कारन कवन श्राप मुनि दीन्हा। का अपराध रमापति कीन्हा।
यह प्रसंग मोहि कहहु पुरारी। मुनिमन मोह आचरज भारी।

दो०—बोले बिहँसि महेस तब ग्यानी मूढ़ न कोइ।
जेहि जस रघुपति करहिं जब सो तस तेहि छन होइ॥ १५१॥

सो०—कहौं राम-गुन-गाथ भरद्वाज सादर सुनहु।
भवभंजन रघुनाथ भजु तुलसी तजि मान मद॥ १५२॥

चौ०–हिम-गिरि-गुहा एक अति पावनि। बह समीप सुरसरी सुहावनि।
आश्रम परम पुनीत सुहावा। देखि देवरिषि मन अति भावा।
निरखि सैल सरि विपिनविभागा। भयेउ रमा-पति-पद अनुरागा।
सुमिरत हरिहि श्रापगति-बाधी। सहज विमल मन लागि समाधी।
मुनिगति देखि सुरेस डेराना। कामहिं बोलि कीन्ह सनमाना।
सहित सहाय जाहु मम हेतू। चलेउ हरषि हिय जन-चर-केतू।
सुनासीर मन महुँ असि त्रासा। चहत देवरिषि मम पुर बासा।
जे कामी लोलुप जग माहीं। कुटिल काक इव सबहि डेराहीं।

दो०—सूख हाड़ लै भाग सठ स्वान निरखि मृगराज।
छीनि लेइ जनि जानि जड़ तिमि सुरपतिहि न लाज॥१५३॥

चौ०–तेहि आश्रमहि मदन जब गयेऊ। निज माया बसंत निरमयेऊ।
कुसुमित विविध विटप बहुरंगा। कूजहिं कोकिल गुंजहिं भृंगा।
चली सुहावनी त्रिविध बयारी। काम कृसानु बढ़ावनिहारी।
रंभादिक सुरनारि नवीना। सकल असम-सर-कला-प्रवीना।
करहिं गान बहु तान तरंगा। बहु विधि क्रीड़हिं पानि पतंगा।
देखि सहाय मदन हरषाना। कीन्हेसि पुनि प्रपंच विधि नाना।
कामकला कछु मुनिहि न ब्यापी। निज भय डरेउ मनोभव पापी।
सीम कि चांपि सकै कोउ तासू। बड़ रखवार रमापति जासू।

दो०—सहित सहाय सभीत अति मानि हारि मन मयन।
गहेसि जाइ मुनिचरन तब कहि सुठि आरत बयन॥१५४॥

चौ०–भयेउ न नारद मन कछु रोषा। कहि प्रिय वचन काम परितोषा।
नाइ चरन सिरु आयसु पाई। गयेउ मदन तब सहित सहाई।
मुनि सुसीलता आपनि करनी। सुर-पति-सभा जाइ सब बरनी।
सुनि सब के मन अचरज आवा। मुनिहि प्रसंसि हरिहि सिरु नावा।
तब नारद गवने सिव पाहीं। जिता काम अहमिति मन माहीं।
मारचरित संकरहि सुनाए। अति प्रिय जानि महेस सिखाए।
बार बार बिनवौं मुनि तोही। जिमि यह कथा सुनायेहु मोही।

तिमि जनि हरिहि सुनायेहु कबहूँ। चलेहु प्रसंग दुरापहु तबहूँ।

दो०—संभु दीन्ह उपदेस हित नहिं नारदहि सुहान।
भरद्वाज कौतुक सुनहु हरिइच्छा बलवान॥ १५५॥

चौ०—राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई। करै अन्यथा अस नहिं कोई।
संभुबचन मुनि मन नहिं भाए। तब बिरंचि के लोक सिधाए।
एक बार करतब बर बीना। गावत हरिगुन गान-प्रबीना।
छीरसिंधु गवने मुनिनाथा। जहँ बस श्रीनिवास श्रुतिमाथा।
हरषि मिलेउ उठि रमानिकेता। बैठे आसन रिषिहि समेता।
बोले बिहँसि चराचरराया। बहुते दिनन्ह कीन्हि मुनि दाया।
कामचरित नारद सब भाखे। जद्यपि प्रथम बरजि सिव राखे।
अति प्रचंड रघुपति कै माया। जेहि न मोह अस को जग जाया।

दो०—रूख बदन करि बचन मृदु बोले श्रीभगवान।
तुम्हरे सुमिरन तें मिटहिं मोह मार मद मान॥ १५६॥

चौ०—सुनु मुनि मोह होइ मन ताकें। ग्यान बिराग हृदय नहिं जाकें।
ब्रह्मचरज – ब्रत –रत मतिधीरा। तुम्हहिं कि करै मनोभव पीरा।
नारद कहेउ सहित अभिमाना। कृपा तुम्हारि सकल भगवाना।
करुनानिधि मन दीख बिचारी। उर अंकुरेउ गर्बतरु भारी।
बेगि सो मैं डारिहौं उखारी। पन हमार सेवक-हितकारी।
मुनि कर हित मम कौतुक होई। अवसि उपाय करब मैं सोई।
तब नारद हरिपद सिरु नाई। चले हृदय अहमिति अधिकाई।
श्रीपति निज माया तब प्रेरी। सुनहु कठिन करनी तेहि केरी।

दो०—बिरचेउ मगु महुँ नगर तेहि सतजोजन बिस्तार।
श्री-निवास-पुर तें अधिक रचना बिबिध प्रकार॥ १५७॥

चौ०—बसहिं नगर सुंदर नर नारी। जनु बहु मनसिज रति तनुधारी।
तेहि पुर बसै सीलनिधि राजा। अगनित हय गय सेन-समाजा।
सत सुरेस सम बिभव बिलासा। रूप तेज बल नीति निवासा।
बिस्वमोहनि तासु कुमारी। श्री बिमोह जिसु रूप निहारी।

सोइ हरि-माया सब-गुन-खानी। सोभा तासु कि जाइ बखानी।
करै स्वयंबर सो नृपबाला। आए तहँ अगनित महिपाला।
मुनि कौतुकी नगर तेहि गयेऊ। पुरबासिन्ह सब पूछत भयेऊ।
सुनि सब चरित भूपगृह आए। करि पूजा नृप मुनि बैठाए।
दो०—आनि देखाई नारदहि भूपति राजकुमारि।
कहहु नाथ गुन दोष सब एहि के हृदय बिचारि ॥ १५८ ॥
चौ०-देखि रूप मुनि बिरति बिसारी। बड़ी बार लगि रहे निहारी।
लच्छन तासु बिलोकि भुलाने। हृदय हरष नहिं प्रगट बखाने।
जो एहि बरै अमर सोइ होई। समरभूमि तेहि जीत न कोई।
सेवहिं सकल चराचर ताही। बरै सीलनिधि-कन्या जाही।
लच्छन सब बिचारि उर राखे। कछुक बनाइ भूप सन भाखे।
सुता सुलच्छन कहि नृप पाहीं। नारद चले सोच मन माहीं।
करौं जाइ सोइ जतन बिचारी। जेहि प्रकार मोहिं बरै कुमारी।
जप तप कछु न होइ तेहि काला। हे बिधि मिलै कवन बिधि बाला।
दो०—एहि अवसर चाहिअ परम सोभा रूप बिसाल।
जो बिलोकि रीझै कुँअरि तब मेलै जयमाल ॥ १५६ ॥
चौ०-हरि सन माँगौं सुंदरताई। होइहि जात गहरु अति भाई।
मोरें हित हरि सम नहिं कोऊ। एहि अवसर सहाय सोइ होऊ।
बहु बिधि बिनय कीन्हि तेहि काला। प्रगटेउ प्रभु कौतुकी कृपाला।
प्रभु बिलोकि मुनिनयन जुड़ाने। होइहि काजु हिएँ हरषाने।
अति आरत कहि कथा सुनाई। करहु कृपा करि होहु सहाई।
आपन रूप देहु प्रभु मोही। आन भाँति नहिं पावौं ओही।
जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा। करहु सो बेगि दास मैं तोरा।
निज मायाबल देखि बिसाला। हिय हँसि बोले दीनदयाला।
दो०—जेहि बिधि होइहि परम हित नारद सुनहु तुम्हार।
सोइ हम करब न आन कछु बचन न मृषा हमार ॥१६०॥
चौ०-कुपथ माँग रुजब्याकुल रोगी। बैद न देइ सुनहु मुनि जोगी।

एहि विधि हित तुम्हार मैं ठयेऊ। कहि अस अंतरहित प्रभु भयेऊ।
मायाबिबस भए मुनि मूढ़ा। समुझी नहिं हरिगिरा निगूढ़ा।
गवने तुरत तहां रिषिराई। जहां स्वयंबरभूमि बनाई।
निज निज आसन बैठे राजा। बहु बनाव करि सहित समाजा।
मुनिमन हरष रूप अति मोरें। मोहि तजि आनहि बरिहि न भोरें।
मुनिहित कारन कृपानिधाना। दीन्ह कुरूप न जाइ बखाना।
सो चरित्र लखि काहु न पावा। नारद जानि सबहि सिर नावा।
दो०—रहे तहां दुइ रुद्रगन ते जानहिं सब भेउ।
बिप्रबेष देखत फिरहिं परम कौतुकी तेउ॥ १६१॥
चौ०-जेहि समाज बैठे मुनि जाई। हृदय रूप-अहमिति अधिकाई।
तहँ बैठे महेसगन दोऊ। बिप्रबेष गति लखै न कोऊ।
करहिं कूटि नारदहि सुनाई। नीकि दीन्हि हरि सुंदरताई।
रीझिहि राजकुअँरि छबि देखी। इनहिं बरिहि हरि जानि बिसेखी।
मुनिहि मोह मन हाथ पराएँ। हँसहिं संभुगन अति सचु पाएँ।
जदपि सुनहिं मुनि अटपटि बानी। समुझि न परै बुद्धि भ्रम-सानी।
काहु न लखा सो चरित बिसेखा। सो सरूप नृपकन्या देखा।
मर्कटबदन भयंकर देही। देखत हृदय क्रोध भा तेही।
दो०—सखी संग लै कुअँरि तब चलि जनु राजमराल।
देखत फिरै महीप सब करसरोज जयमाल॥ १६२॥
ज०-जेहि दिसि बैठे नारद फूली। सो दिसि तेहि न बिलोकी भूली।
पुनि पुनि मुनि उकसहिं अकुलाहीं। देखि दसा हरगन मुसुकाहीं।
धरि नृपतनु तहँ गयेउ कृपाला। कुअँरि हरषि मेलेउ जयमाला।
दुलहिन लैगे लच्छिनिवासा। नृपसमाज सब भयेउ निरासा।
मुनि अति बिकल मोहमति नाँठी। मनि गिरि गई छूटि जनु गाँठी।
तब हरगन बोले मुसुकाई। निज मुख मुकुर बिलोकहु जाई।
अस कहि दोउ भागे भय भारी। बदन दीख मुनि बारि निहारी।
बेषु बिलोकि क्रोध अति बाढ़ा। तिन्हहिं सराप दीन्ह अति गाढ़ा।

दो०—होहु निसाचर जाइ तुम्ह कपटी पापी दोउ।
हँसेहु हमहिं सो लेहु फल बहुरि हँसेहु मुनि कोउ ॥१६३॥

चौ०–पुनि जल दीख रूप निज पावा। तदपि हृदय संतोष न आवा।
फरकत अधर कोप मन माहीं। सपदि चले कमलापति पाहीं।
देहौं श्राप कि मरिहौं जाई। जगत मोरि उपहास कराई।
बीचहि पंथ मिले दनुजारी। संग रमा सोइ राजकुमारी।
बोले मधुर बचन सुरसाईं। मुनि कहँ चले बिकल की नाईं।
सुनत बचन उपजा अति क्रोधा। मायावस न रहा मन बोधा।
परसंपदा सकहु नहिं देखी। तुम्हरे इरिषा कपट बिसेखी।
मथत सिंधु रुद्रहि बौरायहु। सुरन्ह प्रेरि बिषपान करायहु।

दो०—असुर सुरा बिष संकरहि आपु रमा मनि चारु।
स्वारथ साधक कुटिल तुम्ह सदा कपटब्यवहारु ॥१६४॥

चौ०–परम स्वतंत्र न सिर पर कोई। भावै मनहिं करहु तुम्ह सोई।
भलेहि मंद मंदेहि भल करहू। बिसमउ हरष न हिअ कछु धरहू।
डहँकि डहँकि परिचेहु सब काहू। अति असंक मन सदा उछाहू।
करम सुभासुभ तुम्हहिं न बाधा। अब लगि तुम्हहिं न काहू साधा।
भले भवन अब बायन दीन्हा। पावहुगे फल आपन कीन्हा।
बंचेहु मोहि जवनि धरि देहा। सोइ तनु धरहु श्राप मम एहा।
कपिआकृति तुम्ह कीन्हि हमारी। करिहहिं कीस सहाय तुम्हारी।
मम अपकार कीन्ह तुम्ह भारी। नारि-बिरह तुम्ह होब दुखारी।

दो०—श्राप सीस धरि हरषि हिअ प्रभु बहु बिनती कीन्हि।
निज माया कै प्रबलता करषि कृपानिधि लीन्हि ॥ १६५ ॥

चौ०–जब हरिमाया दूरि निवारी। नहिं तहँ रमा न राजकुमारी।
तब मुनि अति सभीत हरिचरना। गहे पाहि प्रनतारतिहरना।
मृषा होउ मम श्राप कृपाला। मम इच्छा कह दीनदयाला।
मैं दुर्बचन कहे बहुतेरे। कह मुनि पाप मिटिहिं किमि मेरे।
जपहु जाइ संकर-सत-नामा। होइहि हृदय तुरत बिश्रामा।

कोउ नहिं सिव समान प्रिय मोरें। असि परतीति तजहु जनि भोरें।
जेहि पर कृपा न करहिं पुरारी। सो न पाव मुनि भगति हमारी।
अस उर धरि महि विचरहु जाई। अब न तुम्हहि माया निअराई।

दो०—बहु बिधि मुनिहि प्रबोधि प्रभु तब भए अंतरधान।
सत्यलोक नारद चले करत राम-गुन-गान॥ १६६॥

चौ०-हरगन मुनिहि जात पथ देखी। बिगतमोह मन हरष बिसेखी।
अति सभीत नारद पहिं आए। गहि पद आरत बचन सुनाए।
हरगन हम न बिप्र मुनिराया। बड़ अपराध कीन्ह फलु पाया।
स्राप अनुग्रह करहु कृपाला। बोले नारद दीनदयाला।
निसिचर जाइ होहु तुम्ह दोऊ। बैभव बिपुल तेज बल होऊ।
भुजबल बिस्व जितब तुम्ह जहिआ। धरिहहिं बिष्नु मनुजतनु तहिआ।
समर मरन हरिहाथ तुम्हारा। होइहहु मुकुत न पुनि संसारा।
चले जुगल मुनिपद सिरु नाई। भए निसाचर कालहि पाई।

दो०—एक कलप एहि हेतु प्रभु लीन्ह मनुज-अवतार।
सुररंजन सज्जनसुखद हरि भंजन-भुवि-भार॥ १६७॥

चौ०-एहि बिधि जनम करम हरि केरे। सुंदर सुखद बिचित्र घनेरे
कलप कलप प्रति प्रभु अवतरहीं। चारु चरित नाना बिधि करहीं
तब तब कथा मुनीसन्ह गाई। परम पुनीत प्रबंध बनाई
बिबिध प्रसंग अनूप बखाने। करहिं न सुनि आचरजु सयाने
हरि अनंत हरिकथा अनंता। कहहिं सुनहिं बहु बिधि सब संता
रामचंद्र के चरित सुहाए। कलप कोटि लगि जाहिं न गाए
यह प्रसंग मैं कहा भवानी। हरिमाया मोहहिं मुनि ग्यानी
प्रभु कौतुकी प्रनत-हित-कारी। सेवत सुलभ सकल दुखहारी

दो०—सुर नर मुनि कोउ नाहिं जेहि न मोह माया प्रबल।
अस बिचारि मन माहिं भजिअ महा-माया-पतिहिं॥१६८

चौ०-अपर हेतु सुनु सैलकुमारी। कहौं बिचित्र कथा बिस्तारी
जेहि कारन अज अगुन अरूपा। ब्रह्म भयेउ कोसल-पुर-भूपा

जो प्रभु विपिन फिरत तुम्ह देखा। बंधु समेत धरे मुनिवेखा।
जासु चरित अवलोकि भवानी। सतीसरीर रहिहु बौरानी।
अजहुँ न छाया मिटति तुम्हारी। तासु चरित सुनु भ्रम-रुज-हारी।
लीला कीन्हि जो तेहि अवतारा। सो सब कहिहौं मति अनुसारा।
भरद्वाज सुनि संकरबानी। सकुचि सप्रेम उमा मुसुकानी।
लगे बहुरि बरनै बृषकेतू। सो अवतार भयेउ जेहि हेतू।

दो०—सो मैं तुम्ह सन कहौं सबु सुनु मुनीस मन लाइ।
रामकथा कलि-मल-हरनि मंगल-करनि सुहाइ॥ १६६॥

चौ०—स्वायंभू मनु अरु सतरूपा। जिन्ह तें भइ नरसृष्टि अनूपा।
दंपति-धरम आचरन नीका। अजहुँ गाव श्रुति जिन्ह कै लीका।
नृप उत्तानपाद सुत तासू। ध्रुव हरिभगत भयेउ सुत जासू।
लघुसुत नाम प्रियब्रत ताही। बेद पुरान प्रसंसहिं जाही।
देवहूति पुनि तासु कुमारी। जो मुनि कर्दम कै प्रिय नारी।
आदि देव प्रभु दीनदयाला। जठर धरेउ जेहि कपिल कृपाला।
सांख्यसास्त्र जिन्ह प्रगट बखाना। तत्वविचार निपुन भगवाना।
तेहि मनु राज कीन्ह बहु काला। प्रभुआयसु सब विधि प्रतिपाला।

सो०—होइ न विषय विराग भवन बसत भा चौथपनु।
हृदय बहुत दुख लाग जनम गयेउ हरिभगति बिनु॥१७०॥

चौ०—बरबस राज सुतहीं तब दीन्हा। नारि समेत गवन बन कीन्हा।
तीरथबर नैमिष बिख्याता। अति पुनीत साधक-सिधि-दाता।
बसहिं तहां मुनि-सिद्ध-समाजा। तहँ हिअ हरषि चलेउ मनु राजा।
पंथ जात सोहहिं मति धीरा। ग्यान भगति जनु धरे सरीरा।
पहुँचे जाइ धेनु-मति-तीरा। हरषि नहाने निरमल नीरा।
आए मिलन सिद्ध मुनि ग्यानी। धरम धुरंधर नृपरिषि जानी।
जहँ जहँ तीरथ रहे सुहाए। मुनिन्ह सकल सादर करवाए।
कृससरीर मुनिपट परिधाना। सतसमाज नित सुनहिं पुराना।

दो०—द्वादस* अच्छर मंत्र पुनि जपहिं सहित अनुराग ।
वासुदेव-पद-पंकरुह दंपतिमन अति लाग ॥ १७१ ॥

चौ०—करहिं अहार साक फल कंदा । सुमिरहिं ब्रह्म सच्चिदानंदा ।
पुनि हरि हेतु करन तप लागे । बारि-अधार मूल फल त्यागे ।
उर अभिलाष निरंतर होई । देखिअ नयन परम प्रभु सोई ।
अगुन अखंड अनंत अनादी । जेहि चिंतहिं परमारथवादी ।
नेति नेति जेहि वेद निरूपा । चिदानंद निरुपाधि अनूपा ।
संभु विरंचि विष्णु भगवाना । उपजहिं जासु अंस तें नाना ।
ऐसेउ प्रभु सेवकवस अहई । भगत-हेतु लीला-तनु गहई ।
जौं यह वचन सत्य श्रुति भाषा । तौ हमार पूजिहि अभिलाषा ।

दो०—एहि विधि बीते बरष षट सहस बारि-आहार ।
संवत सप्त सहस्र पुनि रहे समीर-अधार ॥ १७२ ॥

चौ०—बरष सहस दस त्यागेउ सोऊ । ठाढ़े रहे एकपग दोऊ ।
विधि-हरि-हर तप देखि अपारा । मनु समीप आए बहु बारा ।
माँगहु बर बहु भाँति लोभाए । परम धीर नहिं चलहिं चलाए ।
अस्थिमात्र होइ रहे सरीरा । तदपि मनाग† मनहिं नहिं पीरा ।
प्रभु सर्बग्य दास निज जानी । गति अनन्य तापस नृप रानी ।
माँगु माँगु बर भै नभबानी । परम गँभीर कृपामृत-सानी ।
मृतक-जिआवनि गिरा सुहाई । श्रवनरंध्र होइ उर जब आई ।
हृष्ट पुष्ट तन भए सुहाए । मानहुँ अबहिं भवन तें आए ।

दो०—श्रवन-सुधा-सम बचन सुनि पुलक प्रफुल्लित गात ।
बोले मनु करि दंडवत प्रेम न हृदय समात ॥ १७३ ॥

चौ०—सुनु सेवक-सुरतरु सुरधेनू । विधि-हरि-हर-बंदित-पद-रेनू ।
सेवत सुलभ सकल-सुख-दायक । प्रनतपाल स-चराचर-नायक ।
जौं अनाथहित हम पर नेहू । तौ प्रसन्न होइ यह बर देहू ।

* "ओं नमो भगवते वासुदेवाय" यही द्वादशाक्षर मंत्र है ।
† मनाग = थोड़ा ।

जो प्रभु बिपिन फिरत तुम्ह देखा। बंधु समेत धरे मुनिबेखा।
जासु चरित अवलोकि भवानी। सतीसरीर रहिहु बौरानी।
अजहुँ न छाया मिटति तुम्हारी। तासु चरित सुनु भ्रम-रुज-हारी।
लीला कीन्हि जो तेहि अवतारा। सो सब कहिहौं मति अनुसारा।
भरद्वाज सुनि संकरबानी। सकुचि सप्रेम उमा मुसुकानी।
लगे बहुरि बरनै बृषकेतू। सो अवतार भयेउ जेहि हेतू।

दो०—सो मैं तुम्ह सन कहौं सबु सुनु मुनीस मन लाइ।
रामकथा कलि-मल-हरनि मंगल-करनि सुहाइ॥ १६९॥

चौ०—स्वायंभू मनु अरु सतरूपा। जिन्ह तें भइ नरसृष्टि अनूपा।
दंपति-धरम आचरन नीका। अजहुँ गाव श्रुति जिन्ह कै लीका।
नृप उत्तानपाद सुत तासू। ध्रुव हरिभगत भयेउ सुत जासू।
लघुसुत नाम प्रियब्रत ताही। बेद पुरान प्रसंसहिं जाही।
देवहूति पुनि तासु कुमारी। जो मुनि कर्दम कै प्रिय नारी।
आदि देव प्रभु दीनदयाला। जठर धरेउ जेहि कपिल कृपाला।
सांख्यसास्त्र जिन्ह प्रगट बखाना। तत्वबिचार निपुन भगवाना।
तेहि मनु राज कीन्ह बहु काला। प्रभुआयसु सब बिधि प्रतिपाला।

सो०—होइ न बिषय बिराग भवन बसत भा चौथपनु।
हृदय बहुत दुख लाग जनम गयेउ हरिभगति बिनु॥१७०॥

चौ०—बरबस राज सुतहीं तब दीन्हा। नारि समेत गवन बन कीन्हा।
तीरथबर नैमिष बिख्याता। अति पुनीत साधक-सिधि-दाता।
बसहिं तहां मुनि-सिद्ध-समाजा। तहँ हिय हरषि चलेउ मनु राजा।
पंथ जात सोहहिं मति धीरा। ग्यान भगति जनु धरे सरीरा।
पहुँचे जाइ धेनु-मति-तीरा। हरषि नहाने निरमल नीरा।
आए मिलन सिद्ध मुनि ग्यानी। धरम धुरंधर नृपरिषि जानी।
जहँ जहँ तीरथ रहे सुहाए। मुनिन्ह सकल सादर करवाए।
कृससरीर मुनिपट परिधाना। सतसमाज नित सुनहिं पुराना।

दो०—द्वादस* अच्छर मंत्र पुनि जपहिं सहित अनुराग।
वासुदेव-पद-पंकरुह दंपतिमन अति लाग॥ १७१॥
चौ०–करहिं अहार साक फल कंदा। सुमिरहिं ब्रह्म सच्चिदानंदा।
पुनि हरि हेतु करन तप लागे। वारि-अधार मूल फल त्यागे।
उर अभिलाष निरंतर होई। देखिअ नयन परम प्रभु सोई।
अगुन अखंड अनंत अनादी। जेहि चिंतहिं परमारथवादी।
नेति नेति जेहि वेद निरूपा। चिदानंद निरुपाधि अनूपा।
संभु विरंचि विष्णु भगवाना। उपजहिं जासु अंस तें नाना।
ऐसेउ प्रभु सेवकबस अहई। भगत-हेतु लीला-तनु गहई।
जौं यह बचन सत्य श्रुति भाषा। तौ हमार पूजिहि अभिलाषा।
दो०—एहि विधि बीते बरष षट सहस वारि-आहार।
संवत सप्त सहस्र पुनि रहे समीर-अधार॥ १७२॥
चौ०–बरष सहस दस त्यागेउ सोऊ। ठाढ़े रहे एकपग दोऊ।
बिधि-हरि-हर तप देखि अपारा। मनु समीप आए बहु बारा।
माँगहु बर बहु भाँति लोभाए। परम धीर नहिं चलहिं चलाए।
अस्थिमात्र होइ रहे सरीरा। तदपि मनाग†मनहिं नहिं पीरा।
प्रभु सर्वग्य दास निज जानी। गति अनन्य तापस नृप रानी।
माँगु माँगु बर भै नभबानी। परम गँभीर कृपामृत-सानी।
मृतक-जिआवनि गिरा सुहाई। श्रवनरंध्र होइ उर जब आई।
हृष्ट पुष्ट तन भए सुहाए। मानहुँ अबहिं भवन तें आए।
दो०—श्रवन-सुधा-सम बचन सुनि पुलक प्रफुल्लित गात।
बोले मनु करि दंडवत प्रेम न हृदय समात॥ १७३॥
चौ०–सुनु सेवक-सुर-तरु सुरधेनू। बिधि-हरि-हर-बंदित-पद-रेनू।
सेवत सुलभ सकल-सुख-दायक। प्रनतपाल स-चराचर-नायक।
जौं अनाथहित हम पर नेहू। तौ प्रसन्न होइ यह बर देहू।

* "ॐ नमो भगवते वासुदेवाय" यही द्वादशाक्षर मंत्र है।
† मनाग = थोड़ा।

जो सरूप बस सिवमन माहीं। जेहि कारन मुनि जतन कराहीं।
जो भुसुंडि - मन – मानस-हंसा। सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंसा।
देखहिं हम सो रूप भरि लोचन। कृपा करहु प्रनतारति-मोचन।
दंपति-बचन परम प्रिय लागे। मृदुल विनीत प्रेम-रस-पागे।
भगतबछल प्रभु कृपानिधाना। बिस्वबास प्रगटे भगवाना।
दो०—नीलसरोरुह नीलमनि नील-नीर-धर स्याम।
लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम ॥१७४॥
चौ०—सरद-मयंक-बदन छविसींवाँ। चारु कपोल चिवुक दर ग्रीवाँ।
अधर अरुन रद सुंदर नासा। विधु-कर-निकर-बिनिंदक हासा।
नव-अंबुज-अंबक-छबि नीकी। चितवनि ललित भावती जी की।
भृकुटि मनोज-चाप-छबि-हारी। तिलक ललाटपटल-दुतिकारी।
कुंडल मकर मुकुट सिर भ्राजा। कुटिल केस जनु मधुपसमाजा।
उर श्रीवत्स रुचिर बनमाला। पदिक हार भूषन मनिजाला।
केहरिकंधर चारु जनेऊ। बाहु बिभूषन सुंदर तेऊ।
करि-कर-सरिस सुभग भुजदंडा। कटि निषंग कर सर कोदंडा।
दो०—तड़ितविनिंदक पीतपट उदर रेख बर तीनि।
नाभि मनोहर लेति जनु जमुन-भवँर-छबि छीनि ॥ १७५ ॥
चौ०—पदराजीव बरनि नहिं जाहीं। मुनि-मन-मधुप बसहिं जिन्ह माहीं।
बामभाग सोभति अनुकूला। आदिसक्ति छबिनिधि जगमूला।
जासु अंस उपजहिं गुनखानी। अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी।
भृकुटिबिलास जासु जग होई। राम-बाम-दिसि सीता सोई।
छबिसमुद्र हरि रूप बिलोकी। एकटक रहे नयनपट रोकी।
चितवहिं सादर रूप अनूपा। तृप्ति न मानहिं मनु-सतरूपा।
हरषबिबस तन दसा भुलानी। परे दंड इव गहि पद पानी।
सिर परसे प्रभु निज-कर-कंजा। तुरत उठाए करुनापुंजा।
दो०—बोले कृपानिधान पुनि अति प्रसन्न मोहिं जानि।
माँगहु बर जोइ भाव मन महादानि अनुमानि ॥ १७६ ॥

चौ०-सुनि प्रभुवचन जोरि जुगपानी। धरि धीरजु बोले मृदु बानी।
नाथ देखि पदकमल तुम्हारे। अब पूरे सब काम हमारे।
एक लालसा बड़ि उर माहीं। सुगम अगम कहि जाति सो नाहीं।
तुम्हहिं देत अति सुगम गोसाईं। अगम लाग मोहि निज कृपनाईं।
जथा दरिद्र बिबुधतरु पाई। बहु संपति माँगत सकुचाई।
तासु प्रभाउ जान नहिं सोई। तथा हृदय मम संसय होई।
सो तुम्ह जानहु अंतरजामी। पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी।
सकुच बिहाइ माँगु नृप मोही। मोरें नहिं अदेय कछु तोही।

दो०—दानि सिरोमनि कृपानिधि नाथ कहौं सतभाउ।
चाहौं तुम्हहिं समान सुत प्रभु सन कवन दुराउ ॥१७७॥

चौ०-देखि प्रीति सुनि बचन अमोले। एवमस्तु करुनानिधि बोले।
आपु सरिस खोजौं कहँ जाई। नृप तव तनय होब मैं आई।
सतरूपहि बिलोकि कर जोरें। देबि माँगु बरु जो रुचि तोरें।
जो बरु नाथ चतुर नृप माँगा। सोइ कृपाल मोहि अति प्रिय लागा।
प्रभु परंतु सुठि होति ढिठाई। जदपि भगतहित तुम्हहिं सुहाई।
तुम्ह ब्रह्मादिजनक जगस्वामी। ब्रह्म सकल-उर-अंतरजामी।
अस समुझत मन संसय होई। कहा जो प्रभु प्रवान पुनि सोई।
जे निज भगत नाथ तव अहहीं। जो सुख पावहिं जो गति लहहीं।

दो०—सोइ सुख, सोइ गति, सोइ भगति, सोइ निज-चरन-सनेहु।
सोइ बिबेक, सोइ रहनि प्रभु हमहि कृपा करि देहु ॥१७८॥

चौ०-सुनि मृदु गूढ़ रुचिर बचरचना। कृपासिंधु बोले मृदुबचना।
जो कछु रुचि तुम्हरे मन माहीं। मैं सो दीन्ह सब संसय नाहीं।
मातु बिबेक अलौकिक तोरें। कबहुँ न मिटिहि अनुग्रह मोरें।
बंदि चरन मनु कहेउ बहोरी। अवर एक बिनती प्रभु मोरी।
सुत बिषयिक तव पद रति होऊ। मोहि बड़ मूढ़ कहै किन कोऊ।
मनि बिनु फनि जिमि जल बिनु मीना। मम जीवन तिमि तुम्हहिं अधीना।
अस बरु माँगि चरन गहि रहेऊ। एवमस्तु करुनानिधि कहेऊ।

अब तुम्ह मम अनुसासन मानी। बसहु जाइ सुर-पति-रजधानी।
सो०—तहँ करि भोग बिलास तात गएँ कछु काल पुनि।
होइहहु अवधभुआल तब मैं होब तुम्हार सुत ॥ १७६ ॥
चौ०-इच्छामय नरबेष सवाँरे। होइहौं प्रगट निकेत तुम्हारे।
अंसन्ह सहित देह धरि ताता। करिहौं चरित भगत सुख-दाता।
जेहि सुनि सादर नर बड़भागी। भव तरिहहिं ममता मद त्यागी।
आदिसक्ति जेहि जग उपजाया। सोउ अवतरिहि मोरि यह माया।
पुरउब मैं अभिलाष तुम्हारा। सत्य सत्य पन सत्य हमारा।
पुनि पुनि अस कहि कृपानिधाना। अंतरधान भए भगवाना।
दंपति उर धरि भगति कृपाला। तेहि आश्रम निवसे कछु काला।
समय पाइ तन तजि अनयासा। जाइ कीन्ह अमरावति-बासा।
दो०—यह इतिहास पुनीत अति उमहि कहो वृषकेतु।
भरद्वाज सुनु अपर पुनि रामजनम कर हेतु ॥ १८० ॥
चौ०-सुनु मुनि कथा पुनीत पुरानी। जो गिरिजा प्रति संभु बखानी।
बिस्वबिदित एक कैकय देसू। सत्यकेतु तहँ बसै नरेसू।
धरमधुरंधर नीतिनिधाना। तेज प्रताप सील बलवाना।
तेहि के भए जुगलसुत बीरा। सब-गुन-धाम महा-रनधीरा।
राजधनी जो जेठ सुत आही। नाम प्रतापभानु अस ताही।
अपर सुतहि अरिमर्दन नामा। भुजबल अतुल अचल संग्रामा।
भाइहि भाइहि परम समीती। सकल-दोष-छल-बरजित प्रीती।
जेठे सुतहि राज नृप दीन्हा। हरि-हित आपु गवन बन कीन्हा।
दो०—जब प्रतापरबि भयेउ नृप फिरी दोहाई देस।
प्रजा पाल अति बेद बिधि कतहुँ नहीं अघलेस ॥ १८१ ॥
चौ०-नृप-हित-कारक सचिव सयाना। नाम धरमरुचि सुक्र समाना।
सचिव सयान बंधु बलबीरा। आपु प्रतापपुंज रनधीरा।
सेन संग चतुरंग अपारा। अमित सुभट सब समर जुझारा।
सेन बिलोकि राउ हरषाना। अरु बाजे गहगहे निसाना।

बिजय-हेतु कटकई बनाई। सुदिन साधि नृप चलेउ बजाई।
जहँ तहँ परी अनेक लराई। जीते सकल भूप बरिआई।
सप्त दीप भुजबल बस कीन्हे। लेइ लेइ दंड छाँड़ि नृप दीन्हे।
सकल-अवनि-मंडल तेहि काला। एक प्रतापभानु महिपाला।

दो०—स्वबस बिस्व करि बाहुबल निज पुर कीन्ह प्रबेसु।
अरथ-धरम-कामादि सुख सेवै समय नरेसु॥ १८२॥

चौ०-भूप-प्रतापभानु-बल पाई। कामधेनु भै भूमि सुहाई।
सब-दुख-बरजित प्रजा सुखारी। धरमसील सुंदर नर नारी।
सचिव धरमरुचि हरि-पद-प्रीती। नृप-हित-हेतु सिखव नित नीती।
गुर सुर संत पितर महिदेवा। करै सदा नृप सब कै सेवा।
भूप धरम जे बेद बखाने। सकल करै सादर सुख माने।
दिन प्रति देइ बिबिध बिधि दाना। सुनै सास्त्रबर बेद पुराना।
नाना बापीं कूप तड़ागा। सुमनबाटिका सुंदर बागा।
बिप्रभवन सुरभवन सुहाए। सब तीरथन्ह बिचित्र बनाए।

दो०—जहँ लगि कहे पुरान श्रुति एक एक सब जाग।
बार सहस्र सहस्र नृप किए सहित अनुराग॥ १८३॥

चौ०-हृदय न कछु फल अनुसंधाना। भूप बिबेकी परम सुजाना।
करै जे धरम करम मन बानी। बासुदेव अरपित नृप ग्यानी।
चढ़ि बर बाजि बार एक राजा। मृगया कर सब साजि समाजा।
बिंध्याचल गँभीर बन गयेऊ। मृग पुनीत बहु मारत भयेऊ।
फिरत बिपिन नृप दीख बराहू। जनु बन दुरेउ ससिहि ग्रसि राहू।
बड़ बिधु नहिं समात मुख माहीं। मनहुँ क्रोधबस उगिलत नाहीं।
कोल-कराल-दसन-छबि गाई। तनु बिसाल पीवर अधिकाई।
घुरघुरात हय आरौ पाएँ। चकित बिलोकत कान उठाएँ।

दो०—नील महीधर सिखर सम देखि बिसाल बराहु।
चपरि चलेउ हय सुटुकि नृप हाँकि न होइ निबाहु॥ १८४॥

चौ०-आवत देखि अधिक रव बाजी। चलेउ बराह मरुतगति भाजी।

तुरत कीन्ह नृप सरसंधाना । महि मिलि गयेउ बिलोकत बाना ।
तकि तकि तीर महीस चलावा । करि छल सुअर सरीर बचावा ।
प्रगटत दुरत जाइ मृग भागा । रिसबस भूप चलेउ सँग लागा ।
गयेउ दूरि घन गहन बराहू । जहँ नाहिंन गज-बाजि-निबाहू ।
अति अकेल बन बिपुल कलेसू । तदपि न मृगमग तजै नरेसू ।
कोल बिलोकि भूप बड़ धीरा । भागि पैठि गिरिगुहा गँभीरा ।
अगम देखि नृप अति पछिताई । फिरेउ महाबन परेउ भुलाई ।
दो०—खेद खिन्न छुद्धित तृषित राजा बाजिसमेत ।
खोजत ब्याकुल सरित सर जल बिनु भयेउ अचेत ॥ १८५ ॥
चौ०—फिरत बिपिन आश्रम एक देखा । तहँ बस नृपति कपट-मुनि-बेखा ।
जासु देस नृप लीन्ह छुड़ाई । समर सेन तजि गयेउ पराई ।
समय प्रतापभानु कर जानी । आपन अति असमय अनुमानी ।
गयेउ न गृह मन बहुत गलानी । मिला न राजहि नृप अभिमानी ।
रिस उर मारि रंक जिमि राजा । बिपिन बसै तापस के साजा ।
तासु समीप गवन नृप कीन्हा । यह प्रतापरबि तेहि तब चीन्हा ।
राउ तृषित नहिं सो पहिचाना । देखि सुबेष महामुनि जाना ।
उतरि तुरँग तें कीन्ह प्रनामा । परम चतुर न कहेउ निज नामा ।
दो०—भूपति तृषित बिलोकि तेहि सरबरु दीन्ह देखाइ ।
मज्जन पान समेत हय कीन्ह नृपति हरषाइ ॥ १८६ ॥
चौ०—गै श्रम सकल सुखी नृप भयेऊ । निज आश्रम तापस लै गयेऊ ।
आसन दीन्ह अस्त रबि जानी । पुनि तापस बोलेउ मृदुबानी ।
को तुम्ह कस बन फिरहु अकेले । सुंदर जुबा जीव परहेले ।
चक्रबर्त्ति के लच्छन तोरें । देखत दया लागि अति मोरें ।
नाम प्रतापभानु अवनीसा । तासु सचिव मैं सुनहु मुनीसा ।
फिरत अहेरे परेउँ भुलाई । बड़े भाग देखेउँ पद आई ।
हम कहँ दुरलभ दरस तुम्हारा । जानत हौं कछु भल होनिहारा ।
कह मुनि तात भयेउ अँधियारा । जोजन सत्तरि नगर तुम्हारा ।

दो०—निसा घोर गंभीर बन पंथ न सुनहु सुजान।
बसहु आजु अस जानि तुम्ह जायेहु होत बिहान ॥ १८७ ॥
तुलसी जसि भवितव्यता तैसी मिलै सहाइ।
आपु न आवै ताहि पहिं ताहि तहाँ लै जाइ ॥ १८८ ॥
चौ०-भलेहि नाथ आयसु धरि सीसा। बाँधि तुरँग तरु बैठ महीसा।
नृप बहु भाँति प्रसंसेउ ताही। चरन बंदि* निज भाग्य सराही।
पुनि बोलेउ मृदु गिरा सुहाई। जानि पिता प्रभु करौं ढिठाई।
मोहि मुनीस सुत सेवक जानी। नाथ नाम निज कहहु बखानी।
तेहि न जान नृप नृपहि सो जाना। भूप सुहृद सो कपटसयाना।
बैरी पुनि छत्री पुनि राजा। छल बल कीन्ह चहै निज काजा
समुझि राजसुख दुखित अराती। अँवाँ अनल इव सुलगै छाती
सरल बचन नृप के सुनि काना। बयर सँभारि हृदय हरषाना।
दो०—कपटबोरि बानी मृदुल बोलेउ जुगुति समेत।
नाम हमार भिखारि अब निर्धन रहित निकेत ॥ १८९ ॥
चौ०-कह नृप जे बिग्याननिधाना। तुम्ह सारिखे गलितअभिमाना।
रहहिं अपनपौ सदा दुराएँ। सब बिधि कुसल कुबेष बनाएँ।
तेहि तें कहहिं संत श्रुति टेरें। परम अकिंचन प्रिय हरि केरें।
तुम्ह सम अधन भिखारि अगेहा। होत बिरंचि सिवहि संदेहा।
जो सि सो सि तव चरन नमामी। मो पर कृपा करिअ अब स्वामी।
सहज प्रीति भूपति कै देखी। आपु बिषय बिस्वास बिसेखी।
सब प्रकार राजहि अपनाई। बोलेउ अधिक सनेह जनाई।
सुनु सतिभाउ कहौं महिपाला। इहाँ बसत बीते बहु काला।
दो०—अब लगि मोहि न मिलेउ कोउ मैं न जनावौं काहु।
लोकमान्यता अनलसम कर तपकानन दाहु ॥ १९० ॥
सो०—तुलसी देखि सुबेखु भूलहिं मूढ़ न चतुर नर।
सुंदर केकिहि पेखु बचन सुधासम असन अहि ॥ १९१ ॥

---

* काशि० अयो०—बंध।

चौ०–तातें गुपुत रहौं जग माहीं। हरि तजि किमपि प्रयोजन नाहीं।
प्रभु जानत सब विनहि जनाएँ। कहहु कवन सिधि लोक रिझाएँ।
तुम्ह सुचि सुमति परम प्रिय मोरें। प्रीति प्रतीति मोहि पर तोरें।
अब जौं तात दुरावौं तोही। दारुन दोष घटै अति मोही।
जिमि जिमि तापसु कथै उदासा। तिमि तिमि नृपहि उपज बिस्वासा।
देखा स्ववस करम-मन-बानी। तब बोला तापस बगध्यानी।
नाम हमार एकतनु भाई। सुनि नृप बोलेउ पुनि सिरु नाई।
कहहु नाम कर अरथ बखानी। मोहि सेवक अति आपन जानी।

दो०—आदि सृष्टि उपजी जबहि तब उतपति भै मोरि।
नाम एकतनु हेतु तेहि देह न धरी बहोरि॥ १६२॥

चौ०-जनि आचरजु करहु मन माहीं। सुत तप तें दुर्लभ कछु नाहीं।
तपबल तें जग सृजै विधाता। तपबल विष्णु भए परित्राता।
तपबल संभु करहिं संहारा। तप तें अगम न कछु संसारा।
भयेउ नृपहि सुनि अति अनुरागा। कथा पुरातन कहै सो लागा।
करम धरम इतिहास अनेका। करै निरूपन बिरति बिवेका।
उद्भव - पालन - प्रलय - कहानी। कहेसि अमित आचरज बखानी।
सुनि महीप तापसबस भयेऊ। आपन नाम कहन तब लयेऊ।
कह तापस नृप जानौं तोही। कीन्हेहु कपट लाग भल मोही।

सो०—सुनु महीस असि नीति जहँ तहँ नाम न कहहि नृप।
मोहि तोहि पर अति प्रीति सोइ चतुरता विचारि तव॥१६३॥

चौ०–नाम तुम्हार प्रतापदिनेसा। सत्यकेतु तव पिता नरेसा।
गुरप्रसाद सब जानिअ राजा। कहिअ न आपन जानि अकाजा।
देखि तात तव सहज सुधाई। प्रीतिप्रतीति नीति निपुनाई।
उपजि परी ममता मन मोरें। कहौं कथा निज पूछे तोरें।
अब प्रसन्न मैं संसय नाहीं। माँगु जो भूप भाव मन माहीं।
सुनि सुबचन भूपति हरषाना। गहि पद बिनय कीन्हि बिधि नाना।
कृपासिंधु मुनि दरसन तोरें। चारि पदारथ करतल मोरें।

प्रभुहि तथापि प्रसन्न विलोकी । माँगि अगम बरु होउँ असोकी ।
दो०—जरा-मरन-दुख-रहित तनु समर जितै जनि कोउ ।
एकछत्र रिपुहीन महि राज कलप सत होउ ॥ १६४ ॥
चौ०-कह तापस नृप ऐसेइ होऊ । कारन एक कठिन सुनु सोऊ ।
कालौ तुअ पद नाइहि सीसा । एक विप्रकुल छाँड़ि महीसा ।
तपबल विप्र सदा बरिआरा । तिन्हके कोप न कोउ रखवारा ।
जौं विप्रन्ह बस करहु नरेसा । तौं तुअ बस बिधि बिष्णु महेसा ।
चल न ब्रह्मकुल सन बरिआई । सत्य कहौं दोउ भुजा उठाई ।
विप्रश्राप बिनु सुनु महिपाला । तोर नास नहिं कवनेहुँ काला ।
हरषेउ राउ बचन सुनि तासू । नाथ न होइ मोर अब नासू ।
तव प्रसाद प्रभु कृपानिधाना । मो कहुँ सर्ब काल कल्याना ।
दो०—एवमस्तु कहि कपट मुनि बोला कुटिल बहोरि ।
मिलब हमार भुलाब निज कहहु त हमहिं न खोरि ॥ १६५ ॥
चौ०-तातें मैं तोहि बरजौं राजा । कहें कथा तव परम अकाजा ।
छठें श्रवन यह परत कहानी । नास तुम्हार सत्य मम बानी ।
यह प्रगटें अथवा द्विजश्रापा । नास तोर सुनु भानुप्रतापा ।
आन उपाय निधन तव नाहीं । जौं हरि हर कोपहिं मन माहीं ।
सत्य नाथ पद गहि नृप भाखा । द्विज-गुर-कोप कहहु को राखा ।
राखै गुर जौं कोप बिधाता । गुरबिरोध नहिं कोउ जगत्राता ।
जौं न चलब हम कहे तुम्हारें । होउ नास नहिं सोच हमारें ।
एकहिं डर डरपत मन मोरा । प्रभु महि-देव-श्राप अति घोरा ।
दो०—होहिं विप्र बस कवन बिधि कहहु कृपा करि सोउ ।
तुम्ह तजि दीनदयाल निज हितू न देखौं कोउ ॥ १६६ ॥
चौ०-सुनु नृप बिबिध जतन जग माहीं । कष्टसाध्य पुनि होहिं कि नाहीं ।
अहै एक अति सुगम उपाई । तहाँ परंतु एक कठिनाई ।
मम आधीन जुगुति नृप सोई । मोर जाब तव नगर न होई ।
आजु लगे अरु जब तें भयेउँ । काहू के गृह ग्राम न गयेउँ ।

जौं न जाउँ तव होइ अकाजू। बना आइ असमंजस आजू।
सुनि महीस बोलेउ मृदु बानी। नाथ निगम असि नीति बखानी।
बड़े सनेह लघुन्ह पर करहीं। गिरि निज सिरन्हि सदा तृन धरहीं।
जलधि अगाध मौलि बह फेनू। संतत धरनि धरत सिर रेनू।

दो०—अस कहि गहे नरेस पद स्वामी होहु कृपाल।
मोहि लागि दुख सहिअ प्रभु सज्जन दीनदयाल॥ १६७॥

चौ०—जानि नृपहि आपन आधीना। बोला तापस कपटप्रवीना।
सत्य कहौं भूपति सुनु तोही। जग नाहिंन दुर्लभ कछु मोहीं।
अवसि काज मैं करिहौं तोरा। मन तन बचन भगत तैं मोरा।
जोग जुगुति तप मंत्रप्रभाऊ। फलै तबहिं जब करिअ दुराऊ।
जौं नरेस मैं करौं रसोई। तुम्ह परुसहु मोहि जान न कोई।
अन्न सो जोइ जोइ भोजन करई। सोइ सोइ तव आयसु अनुसरई।
पुनि तिन्हके गृह जेंवै जोऊ। तव बस होइ भूप सुनु सोऊ।
जाइ उपाय रचहु नृप एहू। संबत भरि संकलप करेहू।

दो०—नित नूतन द्विज सहस सत बरेउ सहित परिवार।
मैं तुम्हरे संकलप लगि दिनहिं करवि जेवनार॥१६८॥

चौ०—एहि विधि भूप कष्ट अति थोरें। होइहहिं सकल विप्र बस तोरें।
करिहहिं विप्र होम मख सेवा। तेहि प्रसंग सहजहिं बस देवा।
और एक तोहिं कहौं लखाऊ। मैं एहि वेष न आउब काऊ।
तुम्हरे उपरोहित कहुँ राया। हरि आनब मैं करि निज माया।
तपबल तेहि करि आपु समाना। रखिहौं इहां बरष परवाना*।
मैं धरि तासु वेषु सुनु राजा। सब बिधि तोर सवाँरब काजा।
गै निसि बहुत सैन अब कीजै। मोहि तोहि भूप भेंट दिन तीजे।
मैं तपबल तोहि तुरँग-समेता। पहुँचैहौं सोवतहिं निकेता।

दो०—मैं आउब सोइ वेष धरि पहिचानेउ तब मोहि।
जब एकांत बुलाइ सब कथा सुनावौं तोहि॥ १६९॥

* परवाना = परिमाण।

चौ०-सैन कीन्ह नृप आयसु मानी । आसन जाइ बैठ छल ग्यानी ।
अमित भूप निद्रा अति आई । सो किमि सोव सोच अधिकाई ।
कालकेतु निसिचर तहँ आवा । जेहि सूकर होइ नृपहि भुलावा ।
परम मित्र तापस-नृप केरा । जानै सो अति कपट घनेरा ।
तेहि के सत सुत अरु दस भाई । खल अति अजय देव-दुख-दाई ।
प्रथमहि भूप समर सब मारे । बिप्र संत सुर देखि दुखारे ।
तेहि खल पाछिल बयरु सँभारा । तापस नृप मिलि मंत्र बिचारा ।
जेहि रिपुछय सोइ रचेन्हि उपाऊ । भावी बस न जान कछु राऊ ।
दो०—रिपु तेजसी अकेल अपि लघु करि गनिअ न ताहु ।
अजहुँ देत दुख रबिससिहि सिर अवसेषित राहु ॥२००॥
चौ०-तापस नृप निज सखहि निहारी । हरषि मिलेउ उठि भयेउ सुखारी ।
मित्रहि कहि सब कथा सुनाई । जातुधान बोला सुख पाई ।
अब साधेउँ रिपु सुनहु नरेसा । जौं तुम्ह कीन्ह मोर उपदेसा ।
परिहरि सोचु रहहु तुम्ह सोई । बिनु औषध बिआधि बिधि खोई ।
कुलसमेत रिपुमूल बहाई । चौथे दिवस मिलब मैं आई ।
तापस-नृपहि बहुत परितोषी । चला महाकपटी अति रोषी ।
भानुप्रतापहि बाजिसमेता । पहुँचाएसि छन माँझ निकेता ।
नृपहि नारि पहिं सैन कराई । हयगृह बाँधेसि बाजि बनाई ।
दो०—राजा के उपरोहितहि हरि लै गयेउ बहोरि ।
लै राखेसि गिरि खोह महँ माया करि मति भोरि ॥२०१॥
चौ०-आपु बिरचि उपरोहितरूपा । परेउ जाइ तेहि सेज अनूपा ।
जागेउ नृप अनभए बिहाना । देखि भवन अति अचरजु माना ।
मुनिमहिमा मन महँ अनुमानी । उठेउ गवहिं जेहि जान न रानी ।
कानन गयेउ बाजि चढ़ि तेही । पुर-नरनारि न जानेउ केही ।
गए जामजुग भूपति आवा । घर घर उत्सव बाजु बधावा ।
उपरोहितहि देख जब राजा । चकित बिलोक सुमिरि सोइ काजा ।
जुगसम नृपहि गए दिन तीनी । कपटी मुनिपद रहि मति लीनी ।

समय जानि उपरोहित आवा। नृपहि मते सब कहि समुझावा।

दो०—नृप हरषेउ पहिचानि गुरु भ्रमवस रहा न चेत।
वरे तुरत सतसहस वर विप्र कुटुंबसमेत ॥ २०२॥

चौ०-उपरोहित जेवनार बनाई। छरस चारि विधि जसि श्रुति गाई।
मायामय तेहि कीन्ह रसोई। विंजन बहु गनि सकै न कोई।
विविध मृगन्ह कर आमिष राँधा। तेहि महुँ विप्रमांसु खल साँधा।
भोजन कहँ सब विप्र बोलाए। पग पखारि सादर बैठाए।
परुसन जबहिं लाग महिपाला। भै अकासबानी तेहि काला।
विप्रबृंद उठि उठि गृह जाहू। है बड़ि हानि अन्न जनि खाहू।
भयेउ रसोईं भू-सुर-मासू। सब द्विज उठे मानि विस्वासू।
भूप विकल मति मोह भुलानी। भावी-बस न आव मुख बानी।

दो०—बोले विप्र सकोप तब नहिं कछु कीन्ह विचार।
जाइ निसाचर होहु नृप मूढ़ सहित परिवार ॥ २०३॥

चौ०-छत्रबंधु तैं विप्र बोलाई। घालै लिए सहित समुदाई।
ईश्वर राखा धरम हमारा। जैहसि तैं समेत परिवारा।
संवत मध्य नास तव होऊ। जलदाता न रहिहि कुल कोऊ।
नृप सुनि श्राप विकल अति त्रासा। भै बहोरि बरगिरा अकासा।
विप्रहु श्राप विचारि न दीन्हा। नहिं अपराध भूप कछु कीन्हा।
चकित विप्र सब सुनि नभबानी। भूप गयेउ जहँ भोजनखानी।
तहँ न असन नहिं विप्र सुआरा। फिरेउ राउ मन सोच अपारा।
सब प्रसंग महिसुरन्ह सुनाई। त्रसित परेउ अवनी अकुलाई।

दो०—भूपति भावी मिटै नहिं जदपि न दूषन तोर।
किए अन्यथा होइ नहिं विप्रश्राप अति घोर ॥ २०४॥

चौ०-अस कहि सब महिदेव सिधाए। समाचार पुरलोगन्ह पाए।
सोचहिं दूषन दैवहि देहीं। विरचत हंस काग किय जेहीं।
उपरोहितहि भवन पहुँचाई। असुर तापसहि खबरि जनाई।
तेहि खल जहँ तहँ पत्र पठाए। सजि सजि सेन भूप सब आए।

घेरेन्हि नगर निसान बजाई। बिबिध भाँति नित होइ लराई।
जूझे सकल सुभट करि करनी। बंधुसमेत परेउ नृप धरनी।
सत्यकेतु-कुल कोउ नहिं बाँचा। बिप्रश्राप किमि होइ असाँचा।
रिपु जिति सब नृप नगर बसाई। निज पुर गवने जय जसु पाई।

दो०—भरद्वाज सुनु जाहि जब होइ बिधाता बाम।
धूरि मेरुसम, जनक जम, ताहि ब्यालसम दाम ॥ २०५ ॥

चौ०-काल पाइ मुनि सुनु सोइ राजा। भयेउ निसाचर सहित समाजा।
दस सिर ताहि बीस भुजदंडा। रावन नाम बीर बरिबंडा।
भूपअनुज अरि-मर्दन-नामा। भयेउ सो कुंभकरन बलधामा।
सचिव जो रहा धरमरुचि जासू। भयेउ बिमात्र बंधु लघु तासू।
नाम बिभीषन जेहि जगु जाना। बिष्णुभगत बिग्याननिधाना।
रहे जे सुत सेवक नृप केरे। भए निसाचर घोर घनेरे।
कामरूप खल जिनिस अनेका। कुटिल भयंकर बिगतबिबेका।
कृपारहित हिंसक सब पापी। बरनि न जाइ बिश्व-परितापी।

दो०—उपजे जदपि पुलस्त्यकुल पावन अमल अनूप।
तदपि महो-सुर-श्राप-बस भए सकल अघरूप ॥ २०६ ॥

चौ०-कीन्ह बिबिध तप तीनिहुँ भाई। परम उग्र नहिं बरनि सो जाई।
गयेउ निकट तप देखि बिधाता। माँगहु बर प्रसन्न मैं ताता।
करि बिनती पद गहि दससीसा। बोलेउ बचन सुनहु जगदीसा।
हम काहू के मरहिं न मारे। बानर मनुज जाति दुइ बारे।
एवमस्तु तुम्ह बड़ तप कीन्हा। मैं ब्रह्मा मिलि तेहि बर दीन्हा।
पुनि प्रभु कुंभकरन पहिं गयेऊ। तेहि बिलोकि मम बिसमय भयेऊ।
जौं एहि खल नित करब अहारू। होइहि सब उजारि संसारू।
सारद प्रेरि तासु मति फेरी। माँगेसि नींद मास षट केरी।

दो०—गए बिभीषन पास पुनि कहेउ पुत्र बर माँगु।
तेहि माँगेउ भगवंत-पद-कमल अमल अनुरागु ॥ २०७ ॥

चौ०-तिन्हहिं देइ बर ब्रह्म सिधाए। हरषित ते अपने गृह आए।

मय-तनुजा मंदोदरि नामा। परम सुंदरी नारि ललामा।
सोइ मय दीन्हि रावनहि आनी। होइहि जातुधानपति जानी।
हरषित भयेउ नारि भलि पाई। पुनि दोउ बंधु बिआहेसि जाई।
गिरि त्रिकूट एक सिंधु मँझारी। बिधिनिर्मित दुर्गम अति भारी।
सोइ मय दानव बहुरि सँवारा। कनकरचित मनिभवन अपारा।
भोगावति जसि अहि-कुल-बासा। अमरावति जसि सक्रनिवासा।
तिन्हतें अधिक रम्य अति बंका। जगविख्यात नाम तेहि लंका।

दो०—खाईं सिंधु गँभीर अति चारिहु दिसि फिरि आव।
कनककोट मनिखचित दृढ़ बरनि न जाइ बनाव ॥२०८॥
हरिप्रेरित जेहि कलप जोइ जातुधानपति होइ।
सूर प्रतापी अतुल बल दलसमेत बस सोइ ॥२०९॥

चौ०-रहे तहाँ निसिचर भट भारे। ते सब सुरन्ह समर संहारे।
अब तहँ रहहिं सक्र के प्रेरे। रच्छक कोटि जच्छपति केरे।
दसमुख कतहुँ खबरि असि पाई। सेन साजि गढ़ घेरेसि जाई।
देखि बिकट भट बड़ि कटकाई। जच्छ जीव लै गए पराई।
फिरि सब नगर दसानन देखा। गयेउ सोच सुख भयेउ बिसेखा।
सुंदर सहज अगम अनुमानी। कीन्हि तहाँ रावन रजधानी।
जेहि जस जोग बाँटि गृह दीन्हे। सुखी सकल रजनीचर कीन्हे।
एक बार कुबेर पर धावा। पुष्पकजान जीति लेइ आवा।

दो०—कौतुक ही कैलास पुनि लीन्हेसि जाइ उठाइ।
मनहुँ तौलि निज बाहुबल चला बहुत सुख पाइ ॥२१०॥

चौ०-सुख संपति सुत सेन सहाई। जय प्रताप बल बुद्धि बड़ाई।
नित नूतन सब बाढ़त जाई। जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई।
अतिबल कुंभकरन अस भ्राता। जेहि कहुँ नहिं प्रतिभट जग जाता।
करै पान सोवइ षटमासा। जागत होइ तिहूँ पुर त्रासा।
जौं दिन प्रति अहार कर सोई। बिस्व बेगि सब चौपट होई।
समरधीर नहिं जाइ बखाना। तेहि सम अमित बीर बलवाना।

बारिदनाद जेठ सुत तासू। भट महुँ प्रथम लीक जग जासू।
जेहि न होइ रन सनमुख कोई। सुरपुर नितहि परावन होई।

दो०—कुमुख, अकंपन, कुलिसरद, धूमकेतु, अतिकाय।
एक एक जग जीति सक ऐसे सुभट-निकाय ॥२११॥

चौ०-कामरूप जानहिं सब माया। सपनेहुँ जिन्हके धरम न दाया।
दसमुख बैठ सभा एक बारा। देखि अमित आपन परिवारा।
सुतसमूह जन परिजन नाती। गनै को पार निसाचरजाती।
सेन बिलोकि सहज अभिमानी। बोला बचन क्रोध-मद-सानी।
सुनहु सकल रजनीचर-जूथा। हमरे बैरी बिबुधबरूथा।
ते सनमुख नहिं करहिं लराई। देखि सबल रिपु जाहिं पराई।
तिन्ह कर मरन एक बिधि होई। कहौं बुझाइ सुनहु अब सोई।
द्विजभोजन मख होम सराधा। सब कै जाइ करहु तुम्ह बाधा।

दो०—छुधाछीन बलहीन सुर सहजहिं मिलिहहिं आइ।
तब मारिहौं कि छाडिहौं भली भाँति अपनाइ ॥ २१२ ॥

चौ०-मेघनाद कहुँ पुनि हँकरावा। दीन्ही सिख बल बयरु बढ़ावा।
जे सुर समरधीर बलवाना। जिनके लरिबे कर अभिमाना।
तिन्हहिं जीति रन आनेसु बाँधी। उठि सुत पितु-अनुसासन काँधी।
एहि बिधि सबही अग्या दीन्ही। आपुन चलेउ गदा कर लीन्ही।
चलत दसानन डोलति अवनी। गर्जत गर्भ स्रवहिं सुर-रवनी।
रावन आवत सुनेउ सकोहा। देवन्ह तके मेरु-गिरि-खोहा।
दिगपालन्ह के लोक सुहाए। सूने सकल दसानन पाए।
पुनि पुनि सिंघनाद करि भारी। देइ देवतन्ह गारि प्रचारी।
रन-मद-मत्त फिरै जग धावा। प्रतिभट खोजत कतहुँ न पावा।
रबि ससि पवन बरुन धनधारी। अगिनि काल जम सब अधिकारी।
किन्नर सिद्ध मनुज सुर नागा। हठि सबही के पंथहि लागा।
ब्रह्मसृष्टि जहँ लगि तनुधारी। दस-मुख-बस-वर्ती नर नारी।
आयसु करहिं सकल भयभीता। नवहिं आइ नित चरन बिनीता।

दो०—भुजबल बिस्व बस्य करि राखेसि कोउ न स्वतंत्र।
मंडलीकमनि रावन राज करै निज मंत्र ॥२१३॥
देव-जच्छ-गंधर्व-नर-किन्नर-नाग-कुमारि।
जीति बरीं निज बाहुबल बहु सुंदर बर नारि ॥२१४॥

चौ०-इंद्रजीत सन जो कछु कहेऊ। सो सब जनु पहिलेहि करि रहेऊ।
प्रथमहिं न जिन्ह कहुँ आयसु दीन्हा। तिन्ह कर चरित सुनहु जो कीन्हा।
देखत भीमरूप सब पापी। निसिचर-निकर देवपरितापी।
करहिं उपद्रव असुर-निकाया। नाना रूप धरहिं करि माया।
जेहि बिधि होइ धरम निर्मूला। सो सब करहिं बेदप्रतिकूला।
जेहि जेहि देस धेनु द्विज पावहिं। नगर गाउँ पुर आगि लगावहिं।
सुभ आचरन कतहुँ नहिं होई। देव बिप्र गुरु मान न कोई।
नहिं हरिभगति जग्य जप दाना। सपनेहुँ सुनिअ न बेद पुराना।

छंद—जप जोग बिरागा तप मखभागा श्रवन सुनै दससीसा।
आपुन उठि धावै रहै न पावै धरि सब घालै खीसा॥
अस भ्रष्ट अचारा भा संसारा धरम सुनिअ नहिं काना।
तेहि बहु बिधि त्रासै देस निकासै जो कह बेद पुराना।

सो०—बरनि न जाइ अनीति घोर निसाचर जो करहिं।
हिंसा पर अति प्रीति तिन्हके पापहिं कवनि मिति ॥२१५॥

चौ०-बाढ़े खल बहु चोर जुआरा। जे लंपट पर-धन पर-दारा।
मानहिं मातु पिता नहिं देवा। साधुन्ह सन करवावहिं सेवा।
जिन्हके यह आचरन भवानी। ते जानहु निसिचर सब प्रानी।
अतिसय देखि धरम कै ग्लानी। परम सभीत धरा अकुलानी।
गिरि सरि सिंधु भार नहिं मोही। जस मोहि गरुअ एक परद्रोही।
सकल धरम देखै बिपरीता। कहि न सकै रावन भयभीता।
धेनुरूप धरि हृदय बिचारी। गई तहाँ जहँ सुर-मुनि-झारी।
निज संताप सुनाएसि रोई। काहू तें कछु काज न होई।

छं०—सुर मुनि गंधर्बा मिलि करि सर्बा गे बिरंचि के लोका।
सँग गो-तनु-धारी भूमि बिचारी परम बिकल भय सोका॥
ब्रह्मा सब जाना मन अनुमाना मोर कछू न बसाई।
जा करि तैं दासी सो अबिनासी हमरेउ तोर सहाई॥

सो०—धरनि धरहि मन धीर कह बिरंचि हरिपद सुमिरु।
जानत जन की पीर प्रभु भंजिहि दारुन बिपति॥२१६॥

चौ०—बैठे सुर सब करहिं बिचारा। कहँ पाइअ प्रभु करिअ पुकारा।
पुर बैकुंठ जान कह कोई। कोउ कह पयनिधि बस प्रभु सोई।
जाके हृदय भगति जसि प्रीती। प्रभु तहँ प्रगट सदा तेहि रीती।
तेहि समाज गिरजा मैं रहेऊँ। अवसर पाइ बचन एकु कहेऊँ।
हरि ब्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम तें प्रकट होहिं मैं जाना।
देस काल दिसि बिदिसिहु माहीं। कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं।
अग-जग-मय सबरहित बिरागी। प्रेम तें प्रभु प्रगटैं जिमि आगी।
मोर बचन सब के मन माना। साधु साधु करि ब्रह्म बखाना।

दो०—सुनि बिरंचि मन हरष तन पुलकि नयन बह नीर।
अस्तुति करत जोर कर सावधान मतिधीर॥२१७॥

छंद—जय जय सुरनायक जन-सुख-दायक प्रनतपाल भगवंता।
गो-द्विज-हितकारी जय असुरारी सिंधु-सुता-प्रिय-कंता॥
पालन सुर धरनी अद्भुतकरनी मरम न जानै कोई।
जो सहज कृपाला दीनदयाला करहु अनुग्रह सोई॥
जय जय अबिनासी सब-घट-बासी ब्यापक परमानंदा।
अबिगत गोतीतं चरित पुनीतं मायारहित मुकुंदा॥
जेहि लागि बिरागी अति अनुरागी बिगतमोह मुनिबृंदा।
निसि बासर ध्यावहिं गुनगन गावहिं जयति सच्चिदानंदा॥
जेहि सृष्टि उपाई त्रिबिध बनाई संग सहाय न दूजा।
सो करौ अघारी चिंत हमारी जानिअ भगति न पूजा॥

जो भव-भय-भंजन मुनि-मन-रंजन गंजन* बिपतिबरूथा।
मन बच क्रम बानी छाँड़ि सयानी सरन सकल-सुर-जूथा॥
सादर श्रुति सेषा रिषय असेषा जा कहँ कोउ नहिं जाना।
जेहि दीन पिआरे वेद पुकारे द्रवौ सो श्रीभगवाना॥
भव-बारिधि-मंदर सब बिधि सुंदर गुनमंदिर सुखपुंजा।
मुनि सिद्ध सकल सुर परम भयातुर नमत नाथ पदकंजा॥

दो०—जानि सभय सुर भूमि सुनि बचन समेत सनेह।
गगनगिरा गंभीर भै हरनि सोक संदेह॥२१८॥

चौ०-जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा। तुम्हहि लागि धरिहौं नरबेसा।
अंसन्ह सहित मनुज अवतारा। लेइहौं दिन-कर-बंस-उदारा।
कस्यप अदिति महातप कीन्हा। तिन्ह कहँ मैं पूरब बर दीन्हा।
ते दसरथ कौसल्या रूपा। कोसलपुरी प्रगट नरभूपा।
तिन्हके गृह अवतरिहौं जाई। रघु-कुल-तिलक सो चारिउ भाई।
नारदवचन सत्य सब करिहौं। परम सक्तिसमेत अवतरिहौं।
हरिहौं सकल भूमि-गरुआई। निर्भय होहु देव-समुदाई।
गगन-ब्रह्मबानी सुनि काना। तुरत फिरे सुर हृदय जुड़ाना।
तब ब्रह्मा धरनिहि समुझावा। अभय भई भरोस जिय आवा।

दो०—निज लोकहि बिरंचि गे देवन्ह इहै सिखाइ।
बानरतनु धरि धरनि महुँ हरिपद सेवहु जाइ॥२१९॥

चौ०-गए देव सब निज निज धामा। भूमिसहित मन कहँ बिश्रामा।
जो कछु आयसु ब्रह्मा दीन्हा। हरषे देव बिलंब न कीन्हा।
बन-चर-देह धरी छिति माहीं। अतुलित बल प्रताप तिन्ह पाहीं।
गिरि-तरु-नख-आयुध सब बीरा। हरिमारग चितवहिं मतिधीरा।
गिरि कानन जहँ तहँ भरि पूरी। रहे निज निज अनीक रचि रूरी।

---

* काशि० अयो०—संदन। हस्तलिखित प्रति में 'गंजन' है। पाठ उत्तम होने से यही रखा गया।

यह सब रुचिर चरित मैं भाखा। अब सो सुनहु जो बीचहिं राखा।
अवधपुरी रघुकुल-मनि-राऊ। वेदविदित तेहि दशरथ नाऊ।
धरम-धुरंधर गुननिधि ग्यानी। हृदय भगति मति सारँगपानी।
दो०—कौसल्यादि नारि प्रिय सब आचरन पुनीत।
मति अनुकूल प्रेम दृढ़ हरि-पद-कमल विनीत ॥ २२० ॥
चौ०-एक बार भूपति मन माहीं। भइ गलानि मोरे सुत नाहीं।
गुरगृह गयेउ तुरत महिपाला। चरन लागि करि विनय विसाला।
निज दुख सुख सब गुरहि सुनायेउ। कहि बसिष्ठ बहु विधि समुझायेउ।
धरहु धीर होइहहिं सुत चारी। त्रिभुवन-विदित भगत-भय-हारी।
सृंगी रिषिहि बसिष्ठ बोलावा। पुत्रकाम सुभ जग्य करावा।
भगतिसहित मुनि आहुति दीन्हे। प्रगटे अगिनि चरू कर लीन्हे।
जो बसिष्ठ कछु हृदय बिचारा। सकल काज भा सिद्ध तुम्हारा।
यह हबि बाँटि देहु नृप जाई। जथाजोग जेहि भाग बनाई।
दो०—तब अदृस्य भए पावक सकल सभहि समुझाइ।
परमानंद मगन नृप हरष न हृदय समाइ ॥ २२१ ॥
चौ०-तबहि राय प्रिय नारि बोलाई। कौसल्यादि तहाँ चलि आई।
अरध भाग कौसल्यहि दीन्हा। उभय भाग आधे कर कीन्हा।
कैकेई कहँ नृप सो दयेऊ। रहेउ सो उभय भाग पुनि भयेऊ।
कौसल्या कैकेई हाथ धरि। दीन्ह सुमित्रहि मन प्रसन्न करि।
एहि बिधि गर्भसहित सब नारी। भईं हृदय हरषित सुख भारी।
जा दिन तें हरि गर्भहिं आए। सकल लोक सुख संपति छाए।
मंदिर महँ सब राजहिं रानी। सोभा सील तेज की खानी।
सुखजुत कछुक काल चलि गयेऊ। जेहि प्रभु प्रगट सो अवसर भयेऊ।
दो०—जोग लगन ग्रह बार तिथि सकल भए अनुकूल।
चर अरु अचर हरषजुत रामजनम सुखमूल ॥ २२२ ॥
चौ०-नवमी तिथि मधुमास पुनीता। सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता।
मध्य दिवस अति सीत न घामा। पावन काल लोकबिश्रामा।

जो भव-भय-भंजन मुनि-मन-रंजन गंजन* बिपतिबरूथा।
मन बच क्रम बानी छाँड़ि सयानी सरन सकल-सुर-जूथा॥
सादर श्रुति सेषा रिषय असेषा जा कहँ कोउ नहिं जाना।
जेहि दीन पिआरे बेद पुकारे द्रवौ सो श्रीभगवाना॥
भव-बारिधि-मंदर सब बिधि सुंदर गुनमंदिर सुखपुंजा।
मुनि सिद्ध सकल सुर परम भयातुर नमत नाथ पदकंजा॥
दो०—जानि सभय सुर भूमि सुनि बचन समेत सनेह।
गगनगिरा गंभीर भै हरनि सोक संदेह॥२१८॥
चौ०-जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा। तुम्हहि लागि धरिहौं नरबेसा।
अंसन्ह सहित मनुज अवतारा। लेइहौं दिन-कर-बंस-उदारा।
कस्यप अदिति महातप कीन्हा। तिन्ह कहँ मैं पूरब बर दीन्हा।
ते दसरथ कौसल्या रूपा। कोसलपुरी प्रगट नरभूपा।
तिन्हके गृह अवतरिहौं जाई। रघु-कुल-तिलक सो चारिउ भाई।
नारदबचन सत्य सब करिहौं। परम सक्तिसमेत अवतरिहौं।
हरिहौं सकल भूमि-गरुआई। निर्भय होहु देव-समुदाई।
गगन-ब्रह्मबानी सुनि काना। तुरत फिरे सुर हृदय जुड़ाना।
तब ब्रह्मा धरनिहि समुझावा। अभय भई भरोस जिय आवा।
दो०—निज लोकहि बिरंचि गे देवन्ह इहै सिखाइ।
बानरतनु धरि धरनि महँ हरिपद सेवहु जाइ॥२१९॥
चौ०-गए देव सब निज निज धामा। भूमिसहित मन कहँ बिश्रामा।
जो कछु आयसु ब्रह्मा दीन्हा। हरषे देव बिलंब न कीन्हा।
बन-चर-देह धरी छिति माहीं। अतुलित बल प्रताप तिन्ह पाहीं।
गिरि-तरु-नख-आयुध सब बीरा। हरिमारग चितवहिं मतिधीरा।
गिरि कानन जहँ तहँ भरि पूरी। रहे निज निज अनीक रचि रूरी।

---

* काशि० प्रयो०—खंदन। हस्तलिखित प्रति में 'गंजन' है। पाठ उत्तम होने से यही रखा गया।

यह सब रुचिर चरित मैं भाखा। अब सो सुनहु जो बीचहिं राखा।
अवधपुरी रघुकुल-मनि-राऊ। वेदविदित तेहि दशरथ नाऊ।
धरम-धुरंधर गुननिधि ग्यानी। हृदय भगति मति सारँगपानी।
दो०—कौसल्यादि नारि प्रिय सब आचरन पुनीत।
मति अनुकूल प्रेम दृढ़ हरि-पद-कमल विनीत॥ २२०॥
चौ०-एक बार भूपति मन माहीं। भइ गलानि मोरे सुत नाहीं।
गुरगृह गयेउ तुरत महिपाला। चरन लागि करि बिनय बिसाला।
निज दुख सुख सब गुरहि सुनायेउ। कहि बसिष्ठ बहु बिधि समुझायेउ।
धरहु धीर होइहहिं सुत चारी। त्रिभुवन-विदित भगत-भय-हारी।
सृंगी रिषिहि बसिष्ठ बोलावा। पुत्रकाम सुभ जग्य करावा।
भगतिसहित मुनि आहुति दीन्हे। प्रगटे अगिनि चरू कर लीन्हे।
जो बसिष्ठ कछु हृदय बिचारा। सकल काज भा सिद्ध तुम्हारा।
यह हवि बाँटि देहु नृप जाई। जथाजोग जेहि भाग बनाई।
दो०—तब अदृस्य भए पावक सकल सभहि समुझाइ।
परमानंद मगन नृप हरष न हृदय समाइ॥ २२१॥
चौ०-तबहि राय प्रिय नारि बोलाईं। कौसल्यादि तहाँ चलि आईं।
अरध भाग कौसल्यहि दीन्हा। उभय भाग आधे कर कीन्हा।
कैकेई कहँ नृप सो दयेऊ। रहेउ सो उभय भाग पुनि भयेऊ।
कौसल्या कैकेई हाथ धरि। दीन्ह सुमित्रहि मन प्रसन्न करि।
एहि बिधि गर्भसहित सब नारी। भईं हृदय हरषित सुख भारी।
जा दिन तें हरि गर्भहिं आए। सकल लोक सुख संपति छाए।
मंदिर महँ सब राजहिं रानी। सोभा सील तेज की खानी।
सुखजुत कछुक काल चलि गयेऊ। जेहि प्रभु प्रगट सो अवसर भयेऊ।
दो०—जोग लगन ग्रह बार तिथि सकल भए अनुकूल।
चर अरु अचर हरषजुत रामजनम सुखमूल॥ २२२॥
चौ०-नवमी तिथि मधुमास पुनीता। सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता।
मध्य दिवस अति सीत न घामा। पावन काल लोकबिश्रामा।

सीतल मंद सुरभि बह बाऊ। हरषित सुर संतन्ह मन चाऊ।
बन कुसुमित गिरिगन मनिआरा। स्रवहिं सकल सरितामृतधारा।
सो अवसर बिरंचि जब जाना। चले सकल सुर साजि बिमाना।
गगन बिमल संकुल सुरजूथा। गावहिं गुन गंधर्ब-बरूथा।
बरषहिं सुमन सुअंजलि साजी। गहगहि गगन दुंदुभी बाजी।
अस्तुति करहिं नाग मुनि देवा। बहु बिधि लावहिं निज निज सेवा।

दो०—सुर-समूह बिनती करि पहुँचे निज निज धाम।
जगनिवास प्रभु प्रगटे अखिल-लोक-बिश्राम ॥ २२३ ॥

छंद—भए प्रगट कृपाला परम दयाला कौसल्या-हित-कारी।
हरषित महतारी मुनि-मन-हारी अद्भुत रूप बिचारी ॥
लोचनअभिरामं तनुघनस्यामं निज आयुध भुज चारी।
भूषन बनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी ॥
कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करौं अनंता।
माया-गुन-ग्यानातीत अमाना बेद पुरान भनंता ॥
करुना-सुख-सागर सब-गुन-आगर जेहि गावहिं श्रुति संता।
सो मम हित लागी जनअनुरागी भयेउ प्रगट श्रीकंता ॥
ब्रह्मांडनिकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै।
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहै॥
उपजा जब ग्याना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत बिधि कीन्ह चहै।
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै ॥
माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा।
कीजिअ सिसुलीला अति-प्रिय-सीला यह सुख परम अनूपा ॥
सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा ॥

दो०—बिप्र-धेनु-सुर-संत-हित लीन्ह मनुज-अवतार।
निज-इच्छा-निर्मित-तनु माया-गुन-गो-पार ॥२२४॥

चौ०-सुनि सिसुरुदन परम प्रिय बानी। संभ्रम चलि आईं सब रानी।
हरषित जहँ तहँ धाईं दासी। आनँदमगन सकल पुरबासी।
दसरथ पुत्रजनम सुनि काना। मानहुँ ब्रह्मानंद-समाना।
परम प्रेम मन पुलक सरीरा। चाहत उठन करत मति धीरा।
जा कर नाम सुनत सुभ होई। मोरे गृह आवा प्रभु सोई।
परमानंद पूरि मन राजा। कहा बुलाइ बजावहु बाजा।
गुरु बसिष्ठ कहँ गयेउ हँकारा। आए द्विजन्ह सहित नृपद्वारा।
अनुपम बालक देखिन्ह जाई। रूपरासि गुन कहि न सिराई।

दो०—तब नंदीमुख श्राद्ध करि* जातकरम सब कीन्ह।
हाटक धेनु बसन मनि नृप बिप्रन्ह कहँ दीन्ह ॥ २२५ ॥

चौ०-ध्वज पताक तोरन पुर छावा। कहि न जाइ जेहि भाँति बनावा।
सुमन बृष्टि अकास तें होई। ब्रह्मानंद-मगन सब कोई।
बृंद बृंद मिलि चलीं लोगाईं। सहज सिँगार किए उठि धाईं।
कनककलस मंगल भरि थारा। गावत पैठहिं भूपदुआरा।
करि आरति नेवछावरि करहीं। बार बार सिसुचरनन्हि परहीं।
मागध सूत बंदिगन गायक। पावन गुन गावहिं रघुनायक।
सरबस दान दीन्ह सब काहू। जेहि पावा राखा नहिं ताहू।
मृग-मद-चंदन-कुंकुम-कीचा। मची सकल बीथिन्ह बिच बीचा।

दो०—गृह गृह बाज बधाव सुभ प्रगटे सुखमाकंद।
हरषवंत सब जहँ तहँ नगर नारि-नर-बृंद ॥ २२६ ॥

चौ०-कैकयसुता सुमित्रा दोऊ। सुंदर सुत जनमत भइँ ओऊ।
सो सुख संपति समय समाजा। कहि न सकै सारद अहिराजा।
अवधपुरी सोहै एहि भाँती। प्रभुहि मिलन आई जनु राती।
देखि भानु जनु मन सकुचानी। तदपि बनी संध्या अनुमानी।
अगरधूप बहु जनु अँधियारी। उड़ै अबीर मनहुँ अरुनारी।

* काशि०—तब नंदीमुख सराध करि।

मंदिर-मनि-समूह जनु तारा। नृप-गृह-कलस सो इंदु उदारा।
भवन-वेद-धुनि अति मृदु बानी। जनु खग-मुखर समय अनुमानी॥*
कौतुक देखि पतंग भुलाना। एक मास तेइ जात न जाना।

दो०—मासदिवस कर दिवस भा मरम न जानै कोइ।
रथसमेत रवि थाकेउ निसा कवन विधि होइ॥ २२७॥

चौ०-यह रहस्य काहू नहिं जाना। दिनमनि चले करत गुनगाना।
देखि महोत्सव सुर मुनि नागा। चले भवन बरनत निज भागा।
औरै एक कहौं निज चोरी। सुनु गिरिजा अति दृढ़ मति तोरी।
काकभुसुंडि संग हम दोऊ। मनुजरूप जानै नहिं कोऊ।
परमानंद प्रेम - सुख - फूले। बीथिन्ह फिरहिं मगन मन भूले।
यह सुभ चरित जान पै सोई। कृपा राम कै जापर होई।
तेहि अवसर जो जेहि विधि आवा। दीन्ह भूप जो जेहि मन भावा।
गज रथ तुरँग हेम गो हीरा। दीन्हे नृप नाना बिधि चीरा।

दो०—मन संतोष सबन्हि के जहँ तहँ देहिं असीस।
सकल तनय चिरजीवहु तुलसिदास के ईस॥ २२८॥

चौ०-कछुक दिवस बीते एहि भाँती। जात न जानिअ दिन अरु राती।
नामकरन कर अवसर जानी। भूप बोलि पठए मुनि ग्यानी।
करि पूजा भूपति अस भाखा। धरिअ नाम जो मुनि गुनि राखा।
इन्हके नाम अनेक अनूपा। मैं नृप कहब स्वमति अनुरूपा।
जो आनंदसिंधु सुखरासी। सीकर तें त्रैलोक सुपासी।
सो सुखधाम राम अस नामा। अखिल लोक दायक बिश्रामा।
बिस्वभरन पोषन कर जोई। ता कर नाम भरत अस होई।
जाके सुमिरन तें रिपुनासा। नाम सत्रुहन वेद प्रकासा।

दो०—लच्छन-धाम रामप्रिय सकल-जगत-आधार।
गुरु बसिष्ठ तेहि राखा लछिमन नाम उदार॥ २२९॥

* काशि० अयो०—मनु सानी।

चौ०-धरे नाम गुर हृदय बिचारी। बेदतत्त्व नृप तव सुत चारी।
मुनिधन जन-सरबस सिव-प्राना। बाल-केलि-रस तेहि सुख माना।
बारेहि तें निज हित पति जानी। लछिमन राम-चरन-रति मानी।
भरत सत्रुहन दूनौ भाई। प्रभुसेवक जसि प्रीति बड़ाई।
स्याम गौर सुंदर दोउ जोरी। निरखहिं छबि जननी तृन तोरी।
चारिउ सील-रूप-गुन-धामा। तदपि अधिक सुखसागर रामा।
हृदय अनुग्रह इंदु प्रकासा। सूचत किरन मनोहर हासा।
कबहुँ उछंग कबहुँ बर पलना। मातु दुलारैं कहि प्रिय ललना।
दो०—ब्यापक ब्रह्म निरंजन निर्गुन बिगतबिनोद।
सो अज प्रेम-भगति-बस कौसल्या के गोद ॥ २३० ॥
चौ०-काम-कोटि-छबि स्यामसरीरा। नील-कंज बारिद-गंभीरा।
अरुन-चरन-पंकज-नखजोती। कमल-दलन्हि बैठे जनु मोती।
रेख कुलिस ध्वज अंकुस सोहे। नूपुर-धुनि सुनि मुनिमन मोहे।
कटि-किंकिनी उदर त्रय-रेखा। नाभि गँभीर जान जिन्ह देखा।
भुज बिसाल भूषन जुत भूरी। हिय हरिनख अति सोभा रूरी।
उर मनिहारपदिक की सोभा। बिप्रचरन देखत मन लोभा।
कंबु कंठ अति चिबुक सुहाई। आनन अमित-मदन-छबि छाई।
दुइ दुइ दसन अधर अरुनारे। नासा तिलक को बरनै पारे।
सुंदर श्रवन सुचारु कपोला। अति प्रिय मधुर तोतरे बोला।
चिक्कन कच कुंचित गभुआरे। बहु प्रकार रचि मातु सवाँरे।
पीत झगुलिआ तनु पहिराई। जानु-पानि-बिचरनि मोहि भाई।
रूप सकहिं नहिं कहि श्रुति सेखा। सो जानहिं सपनेहु जिन्ह देखा।
दो०—सुखसंदोह मोहपर ग्यान-गिरा-गोतीत।
दंपति परम-प्रेम-बस कर सिसु-चरित पुनीत ॥ २३१ ॥
चौ०-एहि बिधि राम जगत-पितु माता। कोसलपुर-बासिन्ह-सुखदाता।
जिन्ह रघुनाथ-चरन-रति मानी। तिन्ह की यह गति प्रगट भवानी।
रघुपतिबिमुख जतन कर कोरी। कवन सकै भव-बंधन छोरी।

जीव चराचर बस कै राखे। सो माया प्रभु सों भय भाखे।
भृकुटिविलास नचावै ताही। अस प्रभु छाँड़ि भजिअ कहु काही।
मन क्रम बचन छाँड़ि चतुराई। भजत कृपा करिहहिं रघुराई।
एहि बिधि सिसु-विनोद प्रभु कीन्हा। सकल-नगर-बासिन्ह सुख दीन्हा।
लै उछंग कबहुँक हलरावै। कबहुँ पालने घालि झुलावै।
दो०—प्रेममगन कौसल्या निसि दिन जात न जान।
सुत-सनेह-बस माता बालचरित कर गान॥ २३२॥
चौ०—एक बार जननी अन्हवाए। करि सिंगार पलना पौढ़ाए।
निज-कुल-इष्ट-देव भगवाना। पूजाहेतु कीन्ह असनाना।
करि पूजा नैवेद्य चढ़ावा। आपु गई जहँ पाक बनावा।
बहुरि मातु तहँवाँ चलि आई। भोजन करत देखि सुत जाई।
गइ जननी सिसु पहँ भयभीता। देखा बाल तहाँ पुनि सूता।
बहुरि आइ देखा सुत सोई। हृदय कंप मन धीर न होई।
इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा। मतिभ्रम मोर कि आन बिसेखा।
देखि राम जननी अकुलानी। प्रभु हँसि दीन्ह मधुर मुसुकानी।
दो०—देखरावा मातहिं निज अद्भुत रूप अखंड।
रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रह्मंड॥ २३३॥
चौ०-अगनित रबि ससि सिव चतुरानन। बहु गिरि सरित सिंधु महि कानन।
काल करम गुन ग्यान सुभाऊ। सोउ देखा जो सुना न काऊ।
देखी माया सब बिधि गाढ़ी। अति सभीत जोरें कर ठाढ़ी।
देखा जीव नचावै जाही। देखी भगति जो छोरै ताही।
तन पुलकित मुख बचन न आवा। नयन मूँदि चरनहि सिरु नावा।
बिसमयवंति देखि महतारी। भए बहुरि सिसुरूप खरारी।
अस्तुति करि न जाइ भय माना। जगतपिता मैं सुत करि जाना।
हरि जननी बहु बिधि समुझाई। यह जनि कतहुँ कहसि सुनु माई।
दो०—बार बार कौसल्या बिनय करै कर जोरि।
अब जनि कबहूँ ब्यापै प्रभु मोहि माया तोरि॥ २३४॥

चौ०-बालचरित हरि बहु बिधि कीन्हा । अति अनँद दासन्ह कहँ दीन्हा ।
कछुक काल बीते सब भाई । बड़े भए परिजन-सुखदाई ।
चूड़ाकरन कीन्ह गुरु आई । बिप्रन्ह पुनि दछिना बहु पाई ।
परम मनोहर चरित अपारा । करत फिरत चारिउ सुकुमारा ।
मन-क्रम-बचन-अगोचर जोई । दसरथ-अजिर बिचर प्रभु सोई ।
भोजन करत बोल जब राजा । नहिं आवत तजि बाल-समाजा ।
कौसल्या जब बोलन आई । ठुमुकु ठुमुकु प्रभु चलहिं पराई ।
निगम नेति सिव अंत न पावा । ताहि धरै जननी हठि धावा ।
धूसर धूरि भरे तनु आए । भूपति बिहँसि गोद बैठाए ।
दो०—भोजन करत चपल चित इत उत अवसरु पाइ ।
भाजि चले किलकात मुख दधिओदन लपटाइ ॥ २३५ ॥
चौ०-बालचरित अति सरल सुहाए । सारद सेष संभु श्रुति गाए ।
जिन्ह कर मन इन्ह सन नहिं राता । ते जन बंचित किए बिधाता ।
भए कुमार जबहिं सब भ्राता । दीन्ह जनेऊ गुर-पितु-माता ।
गुरगृह गए पढ़न रघुराई । अलप काल बिद्या सब आई ।
जाकी सहज स्वास श्रुति चारी । सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी ।
बिद्या-बिनय-निपुन गुनसीला । खेलहिं खेल सकल नृपलीला ।
करतल बान धनुष श्रुति सोहा । देखत रूप चराचर मोहा ।
जिन्ह बीथिन्ह बिहरहिं सब भाई । थकित होहिं सब लोग लुगाई ।
दो०—कोसल-पुर-बासी नर नारि बृद्ध अरु बाल ।
प्रानहुँ तें प्रिय लागत सब कहँ राम कृपाल ॥ २३६ ॥
चौ०-बंधु सखा संग लेहिं बुलाई । बन मृगया नित खेलहिं जाई ।
पावन मृग मारहिं जिय जानी । दिन प्रति नृपहिं देखावहिं आनी ।
जे मृग रामबान के मारे । ते तनु तजि सुरलोक सिधारे ।
अनुज सखा सँग भोजन करहीं । मातु पिता अग्या अनुसरहीं ।
जेहि बिधि सुखी होहिं पुरलोगा । करहिं कृपानिधि सोइ संजोगा ।
बेद पुरान सुनहिं मन लाई । आपु कहहिं अनुजन्ह समुझाई ।

जीव चराचर बस कै राखे। सो माया प्रभु सों भय भाखे।
भृकुटिविलास नचावै ताही। अस प्रभु छाँड़ि भजिअ कहु काही।
मन क्रम बचन छाँड़ि चतुराई। भजत कृपा करिहहिं रघुराई।
एहि विधि सिसु-विनोद प्रभु कीन्हा। सकल-नगर-बासिन्ह सुख दीन्हा।
लै उछंग कबहुँक हलरावै। कबहुँ पालने घालि झुलावै।

दो०—प्रेममगन कौसल्या निसि दिन जात न जान।
सुत-सनेह-बस माता बालचरित कर गान॥ २३२॥

चौ०-एक बार जननी अन्हवाए। करि सिंगार पलना पौढ़ाए।
निज-कुल-इष्ट-देव भगवाना। पूजाहेतु कीन्ह असनाना।
करि पूजा नैवेद चढ़ावा। आपु गई जहँ पाक बनावा।
बहुरि मातु तहँवाँ चलि आई। भोजन करत देखि सुत जाई।
गइ जननी सिसु पहँ भयभीता। देखा बाल तहाँ पुनि सूता।
बहुरि आइ देखा सुत सोई। हृदय कंप मन धीर न होई।
इहां उहां दुइ बालक देखा। मतिभ्रम मोर कि आन बिसेखा।
देखि राम जननी अकुलानी। प्रभु हँसि दीन्ह मधुर मुसुकानी।

दो०—देखरावा मातहिं निज अद्भुत रूप अखंड।
रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रह्मंड॥ २३३॥

चौ०-अगनित रबि ससि सिव चतुरानन। बहु गिरि सरित सिंधु महि कानन।
काल करम गुन ग्यान सुभाऊ। सोउ देखा जो सुना न काऊ।
देखी माया सब बिधि गाढ़ी। अति सभीत जोरें कर ठाढ़ी।
देखा जीव नचावै जाही। देखी भगति जो छोरै ताही।
तन पुलकित मुख बचन न आवा। नयन मूँदि चरनहि सिरु नावा।
बिसमयवंति देखि महतारी। भए बहुरि सिसुरूप खरारी।
अस्तुति करि न जाइ भय माना। जगतपिता मैं सुत करि जाना।
हरि जननी बहु बिधि समुझाई। यह जनि कतहुँ कहसि सुनु माई।

दो०—बार बार कौसल्या बिनय करै कर जोरि।
अब जनि कबहूँ ब्यापै प्रभु मोहि माया तोरि॥ २३४॥

चौ०-बालचरित हरि बहु बिधि कीन्हा। अति आनँद दासन्ह कहँ दीन्हा।
कछुक काल बीते सब भाई। बड़े भए परिजन-सुखदाई।
चूड़ाकरन कीन्ह गुरु आई। बिप्रन्ह पुनि दछिना बहु पाई।
परम मनोहर चरित अपारा। करत फिरत चारिउ सुकुमारा।
मन-क्रम-बचन-अगोचर जोई। दसरथ-अजिर बिचर प्रभु सोई।
भोजन करत बोल जब राजा। नहिं आवत तजि बाल-समाजा।
कौसल्या जब बोलन आई। ठुमुकु ठुमुकु प्रभु चलहिं पराई।
निगम नेति सिव अंत न पावा। ताहि धरै जननी हठि धावा।
धूसर धूरि भरे तनु आए। भूपति बिहँसि गोद बैठाए।
दो०—भोजन करत चपल चित इत उत अवसरु पाइ।
भाजि चले किलकात मुख दधिओदन लपटाइ॥ २२५॥
चौ०-बालचरित अति सरल सुहाए। सारद सेष संभु श्रुति गाए।
जिन्ह कर मन इन्ह सन नहिं राता। ते जन बंचित किए बिधाता।
भए कुमार जबहिं सब भ्राता। दीन्ह जनेऊ गुर-पितु-माता।
गुरगृह गए पढ़न रघुराई। अलप काल बिद्या सब आई।
जाकी सहज स्वास श्रुति चारी। सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी।
बिद्या-बिनय-निपुन गुनसीला। खेलहिं खेल सकल नृपलीला।
करतल बान धनुष श्रुति सोहा। देखत रूप चराचर मोहा।
जिन्ह बीथिन्ह बिहरहिं सब भाई। थकित होहिं सब लोग लुगाई।
दो०—कोसल-पुर-बासी नर नारि बृद्ध अरु बाल।
प्रानहुँ तें प्रिय लागत सब कहँ राम कृपाल॥ २२६॥
चौ०-बंधु सखा संग लेहिं बुलाई। बन मृगया नित खेलहिं जाई।
पावन मृग मारहिं जिय जानी। दिन प्रति नृपहिं देखावहिं आनी।
जे मृग रामबान के मारे। ते तनु तजि सुरलोक सिधारे।
अनुज सखा सँग भोजन करहीं। मातु पिता अग्या अनुसरहीं।
जेहि बिधि सुखी होहिं पुरलोगा। करहिं कृपानिधि सोइ संजोगा।
बेद पुरान सुनहिं मन लाई। आपु कहहिं अनुजन्ह समुझाई।

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा । मातु पिता गुरु नावहिं माथा ।
आयसु माँगि करहिं पुरकाजा । देखि चरित हरषै मन राजा ।

दो०—ब्यापक अकल अनीह अज निर्गुन नाम न रूप ।
भगत-हेतु नाना विधि करत चरित्र अनूप ॥ २३७ ॥

चौ०-यह सब चरित कहा मैं गाई । आगिलि कथा सुनहु मन लाई ।
विस्वामित्र महामुनि ग्यानी । बसहिं बिपिन सुभ आश्रम जानी ।
जहँ जप जग्य जोग मुनि करहीं । अति मारीच सुबाहुहि डरहीं ।
देखत जग्य निसाचर धावहिं । करहिं उपद्रव मुनि दुख पावहिं ।
गाधि-तनय-मन चिंता ब्यापी । हरि बिनु मरहिं न निसिचर पापी ।
तब मुनिवर मन कीन्ह बिचारा । प्रभु अवतरेउ हरन महिभारा ।
एहू मिस देखौं पद जाई । करि बिनती आनौं दोउ भाई ।
ग्यान-बिराग-सकल-गुन-अयना । सो प्रभु मैं देखब भरि नयना ।

दो०—बहु बिधि करत मनोरथ जात लागि नहिं बार ।
करि मज्जन सरजूजल गए भूप दरबार ॥ २३८ ॥

चौ०-मुनि-आगमन सुना जब राजा । मिलन गयेउ लेइ बिप्रसमाजा ।
करि दंडवत मुनिहिं सनमानी । निज आसन बैठारेन्हि आनी ।
चरन पखारि कीन्हि अति पूजा । मो सम आजु धन्य नहिं दूजा ।
बिबिध भाँति भोजन करवावा । मुनिवर हृदय हरष अति पावा ।
पुनि चरननिह मेले सुत चारी । राम देखि मुनि देह बिसारी ।
भए मगन देखत मुख-सोभा । जनु चकोर पूरनससि लोभा ।
तब मन हरषि बचन कह राऊ । मुनि अस कृपा न कीन्हेहु काऊ ।
केहि कारन आगमन तुम्हारा । कहहु सो करत न लावौं बारा ।
असुरसमूह सतावहिं मोही । मैं जाचन आयौं नृप तोही ।
अनुजसमेत देहु रघुनाथा । निसि-चर-बध मैं होब सनाथा ।

दो०—देहु भूप मन हरषित तजहु मोह अग्यान ।
धर्म सुजस प्रभु तुम कौं इन्ह कहँ अति कल्यान ॥ २३९ ॥

चौ०-सुनि राजा अति अप्रिय बानी। हृदय कंप मुखदुति कुम्हिलानी॥
चौथेपन पायेउँ सुत चारी। विप्र वचन नहिं कहेहु बिचारी॥
माँगहु भूमि धेनु धन कोसा। सरबस देउँ आजु सह रोसा॥
देह प्रान तें प्रिय कछु नाहीं। सोउ मुनि देउँ निमिष एक माहीं॥
सब सुत प्रिय मोहि प्रान की नाईं। राम देत नहिं बनै गोसाईं॥
कहँ निसिचर अति घोर कठोरा। कहँ सुंदर सुत परम किसोरा॥
सुनि नृपगिरा प्रेम - रस - सानी। हृदय हरष माना मुनि ग्यानी॥
तब बसिष्ठ बहु बिधि समुझावा। नृपसंदेह नास कहँ पावा॥
अति आदर दोउ तनय बोलाए। हृदय लाइ बहु भाँति सिखाए॥
मेरे प्राननाथ सुत दोऊ। तुम्ह मुनि पिता आन नहिं कोऊ॥

दो०—सौंपे भूप रिषिहि सुत बहु बिधि देइ असीस।
जननीभवन गए प्रभु चले नाइ पद सीस॥

सो०—पुरुषसिंह दोउ बीर हरषि चले मुनि-भय-हरन।
कृपासिंधु मतिधीर अखिल-बिस्व-कारन-करन॥२४०॥

चौ०-अरुन नयन उर बाहु बिसाला। नीलजलज तनु स्याम तमाला॥
कटि पट पीत कसे बर भाथा। रुचिर-चाप-सायक दुहुँ हाथा॥
स्याम गौर सुंदर दोउ भाई। बिस्वामित्र महानिधि पाई॥
प्रभु ब्रह्मन्य देव मैं जाना। मोहि निति पिता तजेउ भगवाना॥
चले जात मुनि दीन्हि देखाई। सुनि ताड़का क्रोध करि धाई॥
एकहि बान प्रान हरि लीन्हा। दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा॥
तब रिषि निज नाथहि जिय चीन्ही। बिद्यानिधि कहँ बिद्या दीन्ही॥
जा तें लाग न छुधा पिपासा। अतुलित बल तनु तेज प्रकासा॥

दो०—आयुध सर्ब समर्पि कै प्रभु निज आश्रम आनि।
कंद मूल फल भोजन दीन्ह भगत-हित जानि॥ २४१॥

चौ०-प्रात कहा मुनि सन रघुराई। निर्भय जग्य करहु तुम्ह जाई॥
होम करन लागे मुनिझारी। आपु रहे मख की रखवारी॥
सुनि मारीच निसाचर कोही। लै सहाय धावा मुनिद्रोही॥

बिनु फर बान राम तेहि मारा। सत जोजन गा सागरपारा।
पावकसर सुबाहु पुनि मारा। अनुज निसाचर कटकु सँघारा।
मारि असुर द्विज-निर्भय-कारी। अस्तुति करहिं देव-मुनि-झारी।
तहँ पुनि कछुक दिवस रघुराया। रहे कीन्हि बिप्रन्ह पर दाया।
भगति-हेतु बहु कथा पुराना। कहे बिप्र जद्यपि प्रभु जाना।
तब मुनि सादर कहा बुझाई। चरित एक प्रभु देखिअ जाई।
धनुषजग्य सुनि रघु-कुल-नाथा। हरषि चले मुनिवर के साथा।
आश्रम एक दीख मग माहीं। खग मृग जीव जंतु तहँ नाहीं।
पूछा मुनिहि सिला प्रभु देखी। सकल कथा मुनि कही बिसेखी।

दो०—गौतमनारी श्रापबस उपल-देह धरि धीर।
चरन-कमल-रज चाहति कृपा करहु रघुबीर ॥२४२॥

छंद—परसत पद पावन सोकनसावन प्रगट भई तपपुंज सही।
देखत रघुनायक जन-सुख-दायक सनमुख होइ कर जोरि रही॥
अति प्रेम अधीरा पुलक सरीरा मुख नहिं आवै बचन कही।
अतिसय बड़भागी चरनन्हि लागी जुगल नयन जलधार बही॥
धीरजु मन कीन्हा प्रभु कहँ चीन्हा रघुपति-कृपा-भगति पाई।
अति निर्मल बानी अस्तुति ठानी ग्यानगम्य जय रघुराई॥
मैं नारि अपावन प्रभु जगपावन रावनरिपु जन-सुखदाई।
राजीवबिलोचन भव-भय-मोचन पाहि पाहि सरनहि आई॥
मुनि श्राप जो दीन्हा अति भल कीन्हा परम अनुग्रह मैं माना।
देखेउँ भरि लोचन हरि भवमोचन इहै लाभ संकर जाना॥
बिनती प्रभु मोरी मैं मतिभोरी नाथ न माँगौं बर आना।
पद-कमल-परागा रस अनुरागा मम मन मधुप करै पाना॥
जेहि पद सुरसरिता परम पुनीता प्रगट भई सिव सीस धरी।
सोई पदपंकज जेहि पूजत अज मम सिर धरेउ कृपाल हरी॥
एहि भाँति सिधारी गौतमनारी बार बार हरि-चरन परी।
जो अति मन भावा सो बर पावा गइ पतिलोक अनंद-भरी॥

दो०—अस प्रभु दीनबंधु हरि कारनरहित दयाल ।
तुलसिदास सठ तेहि भजु छाँड़ि कपट जंजाल ॥२४३॥

चौ०-चले राम लछिमन मुनि संगा । गए जहाँ जगपावनि गंगा ।
गाधिसूनु सब कथा सुनाई । जेहि प्रकार सुरसरि महि आई ।
तब प्रभु रिपिन्ह समेत नहाए । बिबिध दान महिदेवन्ह पाए ।
हरपि चले मुनि-बृंद-सहाया । बेगि बिदेह-नगर नियराया ।
पुररम्यता राम जब देखी । हरपे अनुज समेत बिसेखी ।
वापी कूप सरित सर नाना । सलिल सुधासम मनि सोपाना ।
गुंजत मंजु मत्त रस भृंगा । कूजत कल बहु बरन बिहंगा ।
बरन बरन बिकसे बनजाता । त्रिबिध समीर सदा सुखदाता ।

दो०—सुमनवाटिका बाग बन बिपुल बिहंगनिवास ।
फूलत फलत सुपल्लवत सोहत पुर चहुँ पास ॥ २४४ ॥

चौ०-बनै न बरनत नगर निकाई । जहाँ जाइ मन तहइँ लोभाई ।
चारु बजार बिचित्र अँबारी । मनिमय बिधि जनु स्वकर सवाँरी ।
धनिक बनिक बर धनद समाना । बैठे सकल बस्तु लै नाना ।
चौहट सुंदर गली सुहाई । संतत रहहिं सुगंध सिँचाई ।
मंगलमय मंदिर सब केरे । चित्रित जनु रतिनाथ चितेरे ।
पुर-नर-नारि सुभग सुचि संता । धरमसील ग्यानी गुनवंता ।
अति अनूप जहँ जनकनिवासू । बिथकहिं बिबुध बिलोकि निवासू ।
होत चकित चित कोट बिलोकी । सकल-भुवन-सोभा जनु रोकी

दो०—धवल धाम मनि-पुरट-पट्ट सुघटित नाना भाँति ।
सियनिवास सुंदर सदन सोभा किमि कहि जाति ॥ २४५ ॥

चौ०-सुभग द्वार सब कुलिस कपाटा । भूप भीर नट मागध भाटा ।
बनी बिसाल बाजि-गज-साला । हय-गज-रथ-संकुल सब काला ।
सूर सचिव सेनप बहुतेरे । नृप-गृह-सरिस सदन सब केरे ।
पुर बाहिर सर सरित समीपा । उतरे जहँ तहँ बिपुल महीपा ।
देखि अनूप एक अँवराई । सब सुपास सब भाँति सुहाई ।

कासिक कहेउ मोर मनु माना । इहाँ रहिअ रघुबीर सुजाना ।
भलेहि नाथ कहि कृपानिकेता । उतरे तहँ मुनि-वृंद-समेता ।
बिस्वामित्र महामुनि आए । समाचार मिथिलापति पाए ।

दो०—संग सचिव सुचि भूरि भट भूसुर बर गुरु ग्याति ।
चले मिलन मुनिनायकहि मुदित राउ एहि भाँति ॥ २४६ ॥

चौ०-कीन्ह प्रनाम चरन धरि माथा । दीन्हि असीस मुदित मुनिनाथा ।
बिप्रबृंद सब सादर बंदे । जानि भाग्य बड़ राउ अनंदे ।
कुसल प्रश्न कहि बारहिं बारा । बिस्वामित्र नृपहि बैठारा ।
तेहि अवसर आए दोउ भाई । गए रहे देखन फुलवाई ।
स्याम गौर मृदु बयस किसोरा । लोचन सुखद बिस्व-चित-चोरा ।
उठे सकल जब रघुपति आए । बिस्वामित्र निकट बैठाए ।
भए सब सुखी देखि दोउ भ्राता । बारि बिलोचन पुलकित गाता ।
मूरति मधुर मनोहर देखी । भयेउ बिदेहु बिदेहु बिसेखी ।

दो०—प्रेममगन मन जानि नृप करि बिबेक धरि धीर ।
बोलेउ मुनिपद नाई सिरु गदगद गिरा गँभीर ॥ २४७ ॥

चौ०-कहहु नाथ सुंदर दोउ बालक । मुनि-कुल-तिलक कि नृप-कुल-पालक ।
ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा । उभय बेष धरि की सोइ आवा ।
सहज बिरागरूप मन मोरा । थकित होत जिमि चंद चकोरा ।
तातें प्रभु पूछौं सतिभाऊ । कहहु नाथ जनि करहु दुराऊ ।
इन्हहिं बिलोकत अति अनुरागा । बरबस ब्रह्मसुखहि मन त्यागा ।
कह मुनि बिहँसि कहेहु नृप नीका । बचन तुम्हार न होइ अलीका ।
ये प्रिय सबहि जहाँ लगि प्रानी । मन मुसुकाहिं राम सुनि बानी ।
रघुकुल-मनि दसरथ के जाए । मम हित लागि नरेस पठाए ।

दो०—राम लखन दोउ बंधु बर रूप-सील-बल-धाम ।
मख राखेउ सबु साखि जगु जिते असुर संग्राम ॥ २४८ ॥

चौ०-मुनि तव चरन देखि कह राऊ । कहि न सकौं निज पुन्य प्रभाऊ ।
सुंदर स्याम गौर दोउ भ्राता । आनँदहू के आनँददाता ।

इन्हकै प्रीति परसपर पावनि। कहि न जाइ मन भाव सुहावनि।
सुनहु नाथ कह मुदित बिदेहू। ब्रह्म जीव इव सहज सनेहू।
पुनि पुनि प्रभुहि चितव नरनाहू। पुलकगात उर अधिक उछाहू।
मुनिहिं प्रसंसि नाइ पद सीसू। चलेउ लिवाइ नगर अवनीसू।
सुंदर सदन सुखद सब काला। तहां बास लै दीन्ह भुआला।
करि पूजा सब बिधि सेवकाई। गयेउ राउ गृह बिदा कराई।

दो०—रिषय संग रघुवंस-मनि करि भोजन बिश्रामु।
बैठे प्रभु भ्राता सहित दिवसु रहा भरि जामु ॥ २४९ ॥

चौ०-लषन हृदयलालसा बिसेखी। जाइ जनकपुर आइअ देखी।
प्रभुभय बहुरि मुनिहि सकुचाहीं। प्रगट न कहहिं बहुरि मुसुकाहीं।
राम अनुज-मन की गति जानी। भगतबछलता हिय हुलसानी।
परम बिनीत सकुचि, मुसुकाई। बोले गुर-अनुसासन पाई।
नाथ लषन पुर देखन चहहीं। प्रभु-सकोच-डर प्रगट न कहहीं।
जौं राउर आयसु मैं पावौं। नगर देखाइ तुरत लै आवौं।
सुनि मुनीस कह बचन सप्रीती। कस न राम तुम्ह राखहु नीती।
धरम-सेतु-पालक तुम्ह ताता। प्रेमबिबस सेवक-सुख-दाता।

दो०—जाइ देखि आवहु नगर सुखनिधान दोउ भाइ।
करहु सुफल सब के नयन सुंदर बदन देखाइ ॥ २५० ॥

चौ०-मुनि-पद-कमल बंदि दोउ भ्राता। चले लोक-लोचन-सुखदाता।
बालकबृंद देखि अति सोभा। लगे संग लोचन मनु लोभा।
पीत बसन परिकर कटि भाथा। चारु चाप सर सोहत हाथा।
तन अनुहरत सुचंदन खोरी। स्यामल गौर मनोहर जोरी।
केहरिकंधर बाहु बिसाला। उर अति रुचिर नाग-मनि-माला।
सुभग सोन सरसीरुह लोचन। बदन मयंक ताप-त्रय-मोचन।
कानन्हि कनक फूल छबि देहीं। चितवत चितहि चोर जनु लेहीं।
चितवनि चारु भृकुटि बर बाँकी। तिलक-रेख-सोभा जनु चाँकी।

दो०—रुचिर चौतनी सुभग सिर मेचक कुंचित केस।
नख-सिख-सुंदर बंधु दोउ सोभा सकल सुदेस ॥ २५१ ॥

चौ०–देखन नगर भूपसुत आए। समाचार पुरबासिन्ह पाए।
धाए धाम काम सब त्यागी। मनहुँ रंक निधि लूटन लागी।
निरख सहज सुंदर दोउ भाई। होहिं सुखी लोचन-फल पाई।
जुवती भवन झरोखन्हि लागीं। निरखहिं रामरूप अनुरागीं।
कहहिं परसपर बचन सप्रीती। सखि इन्ह कोटि-काम-छवि जीती।
सुर नर असुर नाग मुनि माहीं। सोभा असि कहुँ सुनिअत नाहीं।
विष्णु चारि भुज बिधि मुखचारी। बिकट बेष मुखपंच पुरारी।
अपर देवु अस कोउ न आही। यह छवि सखी पटतरिअ जाही।

दो०—बय किसोर सुखमासदन स्यामगौर सुखधाम।
अंग अंग पर वारिअहि कोटि कोटि सत काम ॥ २५२ ॥

चौ०–कहहु सखी अस को तनु धारी। जो न मोह यह रूप निहारी।
कोउ सप्रेम बोली मृदु बानी। जो मैं सुना सो सुनहु सयानी।
ए दोऊ दसरथ के ढोटा। बालमरालन्ह के कल जोटा।
मुनि-कौसिक-मख के रखवारे। जिन्ह रन-अजिर निसाचर मारे।
स्याम – गात कल–कंज-विलोचन। जो मारीच-सुभुज–मद-मोचन।
कौसल्या सुत सो सुखखानी। नाम राम धनुसायक पानी।
गौर किसोर बेष वर काछें। कर सर चाप राम के पाछें।
लछिमनु नाम रामु-लघु-भ्राता। सुनु सखि तासु सुमित्रा माता।

दो०—बिप्रकाजु करि बंधु दोउ मग मुनिबधू उधारि।
आए देखन चापमख सुनि हरषीं सब नारि ॥२५३॥

चौ०–देखि रामछवि कोउ एक कहई। जोगु जानकिहि यह बरु अहई।
जौं सखि इन्हहिं देख नरनाहू। पन परिहरि हठि करै बिवाहू।
कोउ कह ए भूपति पहिचाने। मुनिसमेत सादर सनमाने।
सखि परंतु पन राउ न तजई। बिधिबस हठि अविवेकहि भजई।
कोउ कह जौं भल अहइ विधाता। सब कहँ सुनिअ उचित-फल-दाता।

तौ जानकिहि मिलिहि यरु एहू। नाहिंन आलि इहाँ सँदेहू।
जौं विधियस अस बनै सँजोगू। तौ कृतकृत्य होइ सब लोगू।
सखि हमरे आरति अति ता ते। कबहुँक ए आवहिं एहि नाते।
दो०—नाहिं त हम कहुँ सुनहु सखि इन्ह कर दरसन दूरि।
यह संघट तब होइ जब पुन्य पुराकृत भूरि॥२५४॥
चौ०–बोली अपर कहेहु सखि नीका। एहि बिआह अति हित सबही का।
कोउ कह संकरचाप कठोरा। ए स्यामल मृदुगात किसोरा।
सब असमंजस अहै सयानी। यह सुनि अपर कहै मृदु बानी।
सखि इन्ह कहँ कोउ कोउ अस कहहीं। बड़ प्रभाउ देखत लघु अहहीं।
परसि जासु पद-पंकज-धूरी। तरी अहल्या कृत-अघ-भूरी।
सो कि रहहिं बिनु सिवधनु तोरें। यह प्रतीति परिहरिअ न भोरें।
जेहि बिरंचि रचि सीय सवाँरी। तेहि स्यामल बरु रचेउ बिचारी।
तासु बचन सुनि सब हरषानीं। ऐसेइ होउ कहहिं मृदु बानी।
दो०—हिय हरषहिं बरषहिं सुमन सुमुखि-सुलोचनि-बृंद।
जाहिं जहाँ जहँ बंधु दोउ तहँ तहँ परमानंद॥२५५॥
चौ०-पुर-पूरब-दिसि गे दोउ भाई। जहँ धनु-मख-हित भूमि बनाई।
अति बिस्तार चारु गच ढारी। बिमल बेदिका रुचिर सवाँरी।
चहुँ दिसि कंचनमंच बिसाला। रचे जहाँ बैठहिं महिपाला।
तेहि पाछे समीप चहुँ पासा। अपर मंचमंडली – बिलासा।
कछुक ऊँचि सब भाँति सुहाई। बैठहिं नगर-लोग जहँ जाई।
तिन्ह के निकट बिसाल सुहाए। धवल धाम बहुबरन बनाए।
जहँ बैठे देखहिं सब नारी। जथाजोगु निज कुल अनुहारी।
पुर-बालक कहि कहि मृदुबचना। सादर प्रभुहि देखावहिं रचना।
दो०—सब सिसु एहि मिसु प्रेमबस परसि मनोहर गात।
तन पुलकहिं अति हरषु हिय देखि देखि दोउ भ्रात॥२५६॥
चौ०–सिसु सब राम प्रेमबस जाने। प्रीतिसमेत निकेत बखाने।
निज निज रुचि सब लेहिं बोलाई। सहित सनेह जाहिं दोउ भाई।

रामु देखावहिं अनुजहि रचना। कहि मृदु मधुर मनोहर बचना।
लवनिमेष महँ भुवननिकाया। रचै जासु अनुसासन माया।
भगति-हेतु सोइ दीन-दयाला। चितवत चकित धनुष-मख-साला।
कौतुक देखि चले गुरु पाहीं। जानि बिलंबु त्रास मन माहीं।
जासु त्रास डर कहुँ डर होई। भजनप्रभाउ देखावत सोई।
कहि बातैं मृदु मधुर सुहाईं। किए बिदा बालक बरिआईं।

दो०—सभय सप्रम विनीत अति सकुच-सहित दोउ भाइ।
गुरु-पद-पंकज नाइ सिर बैठे आयसु पाइ ॥२५७॥

चौ०-निसिप्रवेस मुनि आयसु दीन्हा। सबही संध्यावंदनु कीन्हा।
कहत कथा इतिहास पुरानी। रुचिर रजनि जुग जाम सिरानी।
मुनिवर सैन कीन्ह तब जाई। लगे चरन चाँपन दोउ भाई।
जिन्ह के चरनसरोरुह लागी। करत बिबिध जप जोग बिरागी।
तेइ दोउ बंधु प्रेम जनु जीते। गुर-पद-कमल पलोटत प्रीते।
बार बार मुनि अग्या दीन्ही। रघुबर जाइ सैन तब कीन्ही।
चाँपत चरन लषनु उर लाए। सभय सप्रेम परम सचु पाए।
पुनि पुनि प्रभु कह सोवहु ताता। पौढ़े धरि उर पदजलजाता।

दो०—उठे लषनु निसिबिगत सुनि अरुन-सिखा-धुनि कान।
गुर तें पहिलेहि जगतपति जागे रामु सुजान ॥ २५८ ॥

चौ०-सकल सौच करि जाइ नहाए। नित्य निबाहि मुनिहि सिर नाए।
समय जानि गुरु आयसु पाई। लेन प्रसून चले दोउ भाई।
भूपबागु बर देखेउ जाई। जहँ बसंतरितु रही लोभाई।
लागे बिटप मनोहर नाना। बरन बरन बर बेलिबिताना।
नव पल्लव फल सुमन सुहाए। निज संपति सुररूख लजाए।
चातक कोकिल कीर चकोरा। कूजत बिहँग नटत कल मोरा।
मध्य बाग सरु सोह सुहावा। मनिसोपान बिचित्र बनावा।
बिमल सलिल सरसिज बहुरंगा। जलखग कूजत गुंजत भृंगा।

दो०—बागु तड़ागु बिलोकि प्रभु हरषे बंधुसमेत।
परम रम्य आरामु यह जो रामहिं सुख देत॥ २५९॥

चौ०—चहुँ दिसि चितइ पूछि मालीगन। लगे लेन दल फूल मुदितमन।
तेहि अवसर सीता तहँ आई। गिरिजापूजन जननि पठाई।
संग सखी सब सुभग सयानी। गावहिं गीत मनोहर बानी।
सर समीप गिरिजागृह सोहा। बरनि न जाइ देखि मन मोहा।
मज्जनु करि सर सखिन्ह समेता। गई मुदित मन गौरिनिकेता।
पूजा कीन्हि अधिक अनुरागा। निज अनुरूप सुभग बर माँगा।
एक सखी सिय संगु बिहाई। गई रही देखन फुलवाई।
तेइ दोउ बंधु बिलोके जाई। प्रेमबिबस सीता पहँ आई।

दो०—तासु दसा देखी सखिन्ह पुलक गात जलु नयन।
कहु कारन निज हरष कर पूछहिं सब मृदु बयन॥ २६०॥

चौ०—देखन बागु कुँअर दोउ आए। बय किसोर सब भाँति सुहाए।
स्याम गौर किमि कहौं बखानी। गिरा अनयन नयनबिनु बानी।
सुनि हरषीं सब सखी सयानी। सियहिय अति उतकंठा जानी।
एक कहइ नृपसुत तेइ आली। सुने जे मुनि सँग आए काली।
जिन्ह निज रूप मोहनी डारी। कीन्हे स्वबस नगर-नर-नारी।
बरनत छबि जहँ तहँ सब लोगू। अवसि देखिअहिं देखन जोगू।
तासु बचन अति सियहि सुहाने। दरस लागि लोचन अकुलाने।
चली अग्र करि प्रिय सखि सोई। प्रीति पुरातनि लखै न कोई।

दो०—सुमिरि सीय नारदबचन उपजी प्रीति पुनीत।
चकित बिलोकति सकल दिसि जनु सिसु मृगी सभीत॥२६१॥

चौ०-कंकन-किंकिनि-नूपुर-धुनि सुनि। कहत लखनसन राम हृदय गुनि।
मानहुँ मदन दुंदुभी दीन्ही। मनसा बिस्वबिजय कहँ कीन्ही।
अस कहि फिरि चितए तेहि ओरा। सिय-मुख-ससि भए नयनचकोरा।
भए बिलोचन चारु अचंचल। मनहुँ सकुचि निमि तजे दृगंचल।
देखि सीयसोभा सुख पावा। हृदयँ सराहत बचनु न आवा।

जनु बिरंचि सब निज निपुनाई। बिरचि बिस्व कहँ प्रगटि देखाई।
सुंदरता कहँ सुंदर करई। छबिगृह दीपसिखा जनु बरई।
सब उपमा कबि रहे जुठारी। केहि पटतरौं बिदेहकुमारी।

दो०—सियसोभा हिय बरनि प्रभु आपनि दसा बिचारि।
बोले सुचि मन अनुज सन बचन समय-अनुहारि॥ २६२॥

चौ०—तात जनक-तनया यह सोई। धनुपजग्य जेहि कारन होई।
पूजन गौरि सखी लै आई। करत प्रकास फिरइ फुलवाई।
जासु बिलोकि अलौकिक सोभा। सहज पुनीत मोर मन छोभा।
सो सबु कारन जान बिधाता। फरकहिं सुभग अंग सुनु भ्राता।
रघुबंसिन्ह कर सहज सुभाऊ। मनु कुपंथ पगु धरै न काऊ।
मोहि अतिसय प्रतीत मन केरी। जेहि सपनेहु परनारि न हेरी।
जिन्ह कै लहहिं न रिपु रन पीठी। नहिं लावहिं परतिय मनु डीठी।
मंगन लहहिं न जिन्ह कै नाहीं। ते नरबर थोरे जग माहीं।

दो०—करत बतकही अनुज सन मन सियरूप लुभान।
मुख-सरोज-मकरंद-छबि करै मधुप इव पान॥ २६३॥

चौ०-चितवति चकित चहूँ दिसि सीता। कहँ गए नृपकिसोर मनु चिंता।
जहँ बिलोक मृग-सावक-नयनी। जनु तहँ बरिस कमल-सित-श्रेनी।
लता-ओट तब सखिन लखाए। स्यामल गौर किसोर सुहाए।
देखि रूप लोचन ललचाने। हरषे जनु निज निधि पहिचाने।
थके नयन रघु-पति-छबि देखे। पलकन्हिहू परिहरीं निमेखे।
अधिक सनेह देह भै भोरी। सरद-ससिहि जनु चितव चकोरी।
लोचनमग रामहिं उर आनी। दीन्हे पलककपाट सयानी।
जब सिय सखिन्ह प्रेमबस जानीं। कहि न सकहिं कछु मन सकुचानीं।

दो०—लताभवन तें प्रगट भए तेहि अवसर दोउ भाइ।
निकसे जनु जुग बिमल बिधु जलदपटल बिलगाइ॥२६४॥

चौ०—सोभासीवँ सुभग दोउ बीरा। नील—पीत—जलजाभ—सरीरा।

मोरपंख* सिर सोहत नीके। गुच्छ बीच बिच कुसुमकली के।
भाल तिलक श्रमबिंदु सुहाए। श्रवन सुभग भूषन छबि छाए।
बिकट भृकुटि कच घूँघरवारे। नवसरोज लोचन रतनारे।
चारु चिबुक नासिका कपोला। हासबिलास लेत मनु मोला।
मुखछबि कहि न जाइ मोहि पाहीं। जो बिलोकि बहु काम लजाहीं।
उर मनिमाल कंबुकल ग्रीवाँ। काम-कलभ-कर भुज बलसीवाँ।
सुमनसमेत बाम कर दोना। साँवर कुअँर सखी सुठि लोना।
दो०—केहरिकटि पट पीत धर सुखमा-सील-निधान।
देखि भानु-कुल-भूषनहि बिसरा सखै† अपान ॥२६५॥
चौ०-धरि धीरजु एक आलि सयानी। सीता सन बोली गहि पानी।
बहुरि गौरि कर ध्यान करेहू। भूपकिसोर देखि किन लेहू।
सकुचि सीय तब नयन उघारे। सनमुख दोउ रघुसिंह निहारे।
नखसिख देखि राम कै सोभा। सुमिरि पितापन मन अति छोभा।
परबस सखिन्ह लखी जब सीता। भए गहरु सब कहहिं सभीता।
पुनि आउब एहि बेरियाँ काली। अस कहि मन बिहँसी एक आली।
गूढ़ गिरा सुनि सिय सकुचानी। भयेउ बिलंब मातुभय मानी।
धरि बड़ि धीर राम उर आने। फिरि आपनपौ पितुबस जाने।
दो०—देखन मिस मृग बिहग तरु फिरै बहोरि बहोरि।
निरखि निरखि रघुबीरछबि बाढ़ै प्रीति न थोरि ॥२६६॥
चौ०-जानि कठिन सिवचाप बिसूरति। चली राखि उर स्यामल मूरति।
प्रभु जब जात जानकी जानी। सुख-सनेह-सोभा-गुन-खानी।
परम-प्रेम-मय मृदु मसि कीन्ही। चारु चित्त भीतो लिखि लीन्ही।
गई भवानी-भवन बहोरी। बंदि चरन बोली कर जोरी।
जय जय गिरि-बर-राज-किसोरी। जय महेस-मुख-चंद-चकोरी।
जय गज-बदन-षडानन-माता। जगतजननि दामिनि-दुति-गाता।

* इस्त०, सदल०—काकपच्छ।
† अयो०—सखिन्ह।

नहिं तव आदि मध्य अवसाना। अमित प्रभाव बेद नहिं जाना॥
भव-भव-बिभव-पराभव-कारिनि। बिस्व-बिमोहनि स्व-बस-बिहारिनी॥

दो०—पतिदेवता सुतीय महुँ मातु प्रथम तव रेख।
महिमा अमित न सकहिं कहि सहस सारदा सेख॥२६७॥

चौ०—सेवत तोहि सुलभ फल चारी। बरदायिनि त्रिपुरारि पिआरी॥
देबि पूजि पदकमल तुम्हारे। सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे॥
मोर मनोरथ जानहु नीके। बसहु सदा उरपुर सबही के॥
कीन्हेउँ प्रगट न कारन तेही। अस कहि चरन गहे बैदेही॥
बिनय-प्रेम-बस भई भवानी। खसी माल मूरति मुसुकानी॥
सादर सिय प्रसाद सिर धरेऊ। बोली गौरि हरषु उर भरेऊ॥
सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजिहि मनकामना तुम्हारी॥
नारदबचन सदा सुचि साँचा। सो बर मिलिहि जाहि मन राँचा॥

छंद—मन जाहि राँचेउ मिलिहि सो बर सहज सुंदर साँवरो।
करुनानिधान सुजान सीलसनेह जानत रावरो॥
एहि भाँति गौरि-असीस सुनि सियसहित हिय हरषित अलीं।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मंदिर चलीं॥

सो०—जानि गौरि अनकूल सिय-हिय-हरष न जात कहि।
मंजुल-मंगल-मूल बाम अंग फरकन लगे॥२६८॥

चौ०—हृदय सराहत सीय लोनाई। गुर समीप गवने दोउ भाई॥
राम कहा सब कौसिक पाहीं। सरल सुभाव छुआ छल नाहीं॥
सुमन पाइ मुनि पूजा कीन्ही। पुनि असीस दुहुँ भाइन्ह दीन्ही॥
सुफल मनोरथ होहु तुम्हारे। राम लषन सुनि भए सुखारे॥
करि भोजन मुनिबर बिग्यानी। लगे कहन कछु कथा पुरानी॥
बिगतदिवस गुर-आयसु पाई। संध्या करन चले दोउ भाई॥
प्राची दिसि ससि उगेउ सुहावा। सिय-मुख-सरिस देखि सुख पावा॥
बहुरि बिचार कीन्ह मन माहीं। सीय-बदन-सम हिमकर नाहीं॥

दो०—जनम सिंधु पुनि बंधु बिष दिन मलीन सकलंकु।
सिय-मुख-समता पाव किमि चंद बापुरो रंकु॥ २६९॥
चौ०-घटै बढ़ै बिरहिनि-दुखदाई। ग्रसै राहु निज संधिहि पाई॥
कोक-सोक-प्रद पंकजद्रोही। अवगुन बहुत चंद्रमा तोही॥
बैदेही-मुख-पटतर दीन्हे। होइ दोष बड़ अनुचित कीन्हे॥
सिय-मुख-छबि बिधुब्याज बखानी। गुर पहँ चले निसा बड़ि जानी॥
करि मुनि-चरन-सरोज प्रनामा। आयसु पाइ कीन्ह बिश्रामा॥
बिगतनिसा रघुनायक जागे। बंधु बिलोकि कहन अस लागे॥
उयेउ अरुन अवलोकहु ताता। पंकज-लोक-कोक-सुख-दाता॥
बोले लषन जोरि जुग पानी। प्रभु-प्रभाउ-सूचक मृदु बानी॥
दो०-अरुन उदय सकुचे कुमुद उडुगन-जोति मलीन।
तिमि तुम्हार आगमन सुनि भए नृपति बलहीन॥ २७०॥
चौ०-नृप सब नखत करहिं उँजियारी। टारि न सकहिं चापतम भारी॥
कमल कोक मधुकर खग नाना। हरषे सकल निसा-अवसाना॥
ऐसेहि प्रभु सब भगत तुम्हारे। होइहहिं टूटे धनुष सुखारे॥
उयेउ भानु बिनु श्रम तम नासा। दुरे नखत जग तेज प्रकासा॥
रबि निज-उदय-ब्याज रघुराया। प्रभुप्रताप सब नृपन्ह दिखाया॥
तव भुज-बल-महिमा उदघाटी। प्रगटी धनु-बिघटन-परिपाटी॥
बंधुबचन सुनि प्रभु मुसुकाने। होइ सुचि सहज पुनीत नहाने॥
नित्यक्रिया करि गुर पहिं आए। चरनसरोज सुभग सिर नाए॥
सतानंद तब जनक बोलाए। कौसिक मुनि पहिं तुरत पठाए॥
जनकबिनय तिन्ह आनि सुनाई। हरषे बोलि लिये दोउ भाई॥
दो०—सतानंदपद बंदि प्रभु बैठे गुर पहिं जाइ।
चलहु तात मुनि कहेउ तब पठवा जनक बोलाइ॥२७१॥
चौ०-सयस्वयंबर देखिअ जाई। ईश काहि धौं देइ बड़ाई॥
लषन कहा जसभाजन सोई। नाथ कृपा तव जा पर होई॥
हरषे मुनि सब सुनि बर बानी। दीन्हि असीस सबहिं सुख मानी॥

पुनि मुनि-वृंद-समेत कृपाला। देखन चले धनुष-मख-साला।
रंगभूमि आए दोउ भाई। असि सुधि सब पुरबासिन्ह पाई।
चले सकल गृह-काज बिसारी। बाल जुवान जरठ नर नारी*।
देखी जनक भीर भै भारी। सुचि सेवक सब लिए हँकारी।
तुरत सकल लोगन्ह पहिं जाहू। आसन उचित देहु सब काहू।

दो०—कहि मृदु बचन बिनीत तिन्ह बैठारे नर नारि।
उत्तम मध्यम नीच लघु निज निज थल अनुहारि॥ २७२॥

चौ०-राजकुँअर तेहि अवसर आए। मनहुँ मनोहरता तन छाए।
गुनसागर नागर बर बीरा। सुंदर स्यामल गौर सरीरा।
राजसमाज बिराजत रूरे। उडुगन महुँ जनु जुग बिधु पूरे।
जिन्ह कै रही भावना जैसी। प्रभुमूरति तिन्ह देखी तैसी।
देखहिं भूप महा रनधीरा। मनहुँ बीररस धरे सरीरा।
डरे कुटिल नृप प्रभुहि निहारी। मनहुँ भयानक मूरति भारी।
रहे असुर छल छोनिप-बेखा। तिन्ह प्रभु प्रगट कालसम देखा।
पुरबासिन्ह देखे दोउ भाई। नरभूषन लोचन-सुख-दाई।

दो०—नारि बिलोकहिं हरषि हिय निज-निज-रुचि-अनुरूप।
जनु सोहत शृंगार धरि मूरति परम अनूप॥२७३॥

चौ०-बिदुषन प्रभु बिराटमय दीसा। बहु-मुख-कर-पग-लोचन-सीसा।
जनकजाति अवलोकहिं कैसे। सजन सगे प्रिय लागहिं जैसे।
सहित बिदेह बिलोकहिं रानी। सिसुसम प्रीति न जाइ बखानी।
जोगिन्ह परम-तत्त्व-मय भासा। सांत-शुद्ध-सम सहज प्रकासा।
हरिभगतन देखे दोउ भ्राता। इष्टदेव इव सब-सुख-दाता।
रामहिं चितव भाव जेहि सीया। सो सनेह सुख नहिं कथनीया।
उर अनुभवति न कहि सक सोऊ। कवन प्रकार कहै कवि कोऊ।
जेहि बिधि रहा जाहि जस भाऊ। तेहि तस देखेउ कोसलराऊ।

* यह चौपाई काशि० प्रति में नहीं है।

दो०—राजत राजसमाजं महँ कोसल-राज-किसोर।
सुंदर-स्यामल-गौर-तनु बिस्व-बिलोचन-चोर ॥२७४॥

चौ०-सहज मनोहर मूरति दोऊ। कोटि-काम-उपमा लघु सोऊ।
सरद-चंद-निंदक मुख नीके। नीरजनयन भावते जी के।
चितवनि चारु मार-मद-हरनी। भावति हृदय जाति नहिं बरनी।
कल कपोल श्रुतिकुंडल लोला। चिबुक अधर सुंदर मृदु बोला।
कुमुद-बंधु-कर निंदक हाँसा। भृकुटी बिकट मनोहर नासा।
भाल बिसाल तिलक झलकाहीं। कच बिलोकि अलि-अवलि लजाहीं।
पीत चौतनी सिरन्ह सुहाई। कुसुमकली बिच बीच बनाई।
रेखा रुचिर कंबुकल ग्रीवाँ। जनु त्रिभुवन सोभा की सीवाँ।

दो०—कुंजर-मनि-कंठा कलित उरन्हि तुलसिका माल।
वृषभकंध केहरिठवनि बलनिधि बाहुबिसाल ॥ २७५ ॥

चौ०-कटि तूनीर पीत पट बाँधे। कर सर धनुष बाम बर काँधे।
पीत - जग्य - उपबीत सोहाए। नखसिख मंजु महा छबि छाए।
देखि लोग सब भए सुखारे। एकटक लोचन टरत न टारे।
हरषे जनक देखि दोउ भाई। मुनि-पद-कमल गहे तब जाई।
करि बिनती निज कथा सुनाई। रंगअवनि सब मुनिहि देखाई।
जहँ जहँ जाहिं कुअँर बर दोऊ। तहँ तहँ चकित चितव सब कोऊ।
निज निज रुख रामहिं सब देखा। कोउ न जान कछु मरम बिसेखा।
भलि रचना मुनि नृप सन कहेऊ। राजा मुदित महासुख लहेऊ।

दो०—सब मंचन्ह तें मंच एक सुंदर बिसद बिसाल।
मुनिसमेत दोउ बंधु तहँ बैठारे महिपाल ॥ २७६ ॥

चौ०-प्रभुहि देखि सब नृप हिय हारे। जनु राकेस उदय भए तारे।
अस प्रतीति सब के मन माहीं। राम चाप तोरब सक नाहीं।
बिनु भंजेहु भवधनुष बिसाला। मेलिहि सीय रामउर माला।
अस बिचारि गवनहु घर भाई। जस प्रताप बल तेज गवाँई।
बिहँसे अपर भूप सुनि बानी। जे अबिबेक अंध अभिमानी।

तोरेहु धनुष ब्याहु अवगाहा। बिनु तोरें को कुअँरि बिआहा।
एक बार कालहु किन होऊ। सियहित समर जितब हम सोऊ।
यह सुनि अपर भूप मुसुकाने। धरमसील हरिभगत सयाने।
सो०—सीय बिआहब राम गरब दूरि करि नृपन्ह को।
जीति को सक संग्राम दसरथ के रनबाँकुरे ॥२७७॥
चौ०-बृथा मरहु जनि गाल बजाई। मनमोदकन्हि कि भूख बुताई।
सिख हमार सुनि परम पुनीता। जगदंबा जानहु जिय सीता।
जगतपिता रघुपतिहि बिचारी। भरि लोचन छबि लेहु निहारी।
सुंदर सुखद सकल-गुन-रासी। ए दोउ बंधु संभु-उर-बासी।
सुधासमुद्र समीप बिहाई। मृगजल निरखि मरहु कत धाई।
करहु जाइ जा कहँ जोइ भावा। हम तौ आजु जनमफल पावा।
अस कहि भले भूप अनुरागे। रूप अनूप बिलोकन लागे।
देखहिं सुर नभ चढ़े बिमाना। बरषहिं सुमन करहिं कल गाना।
दो०—जानि सुअवसर सीय तब पठई जनक बोलाइ।
चतुर सखी सुंदर सकल सादर चलीं लेवाइ ॥२७८॥
चौ०-सियसोभा नहिं जाइ बखानी। जगदंबिका रूप-गुन-खानी।
उपमा सकल मोहि लघु लागी। प्राकृत-नारि-अंग-अनुरागी।
सीय बरनि तेहि उपमा देई। कुकबि कहाइ अजस को लेई।
जौं पटतरिअ तीय महुँ सीया। जग अस जुबति कहाँ कमनीया।
गिरा मुखर तनुअरध भवानी। रति अति दुखित अतनु पति जानी।
बिष बारुनी बंधु प्रिय जेही। कहिअ रमासम किमि बैदेही।
जौं छबि-सुधा-पयोनिधि होई। परम-रूप-मय कच्छप सोई।
सोभा रजु मंदरु सिंगारू। मथइ पानिपंकज निज मारू।
दो०—एहि बिधि उपजै लच्छि जब सुंदरता-सुख-मूल।
तदपि सकोचसमेत कबि कहहिं सीय सम तूल ॥२७९॥
चौ०-चली संग लै सखी सयानी। गावति गीत मनोहर बानी।
सोह नवलतनु सुंदर सारी। जगतजननि अतुलित छबि भारी।

भूपन सकल सुदेस सुहाए। अंग अंग रचि सखिन्ह बनाए।
रंगभूमि जब सिय पगु धारी। देखि रूप मोहे नर नारी।
हरपि सुरन्ह दुंदुभी बजाई। बरपि प्रसून अपछरा गाई।
पानिसरोज सोह जयमाला। अवचट चितए सकल भुआला।
सीय चकित चित रामहि चाहा। भए मोहबस सब नरनाहा।
मुनिसमीप देखे दोउ भाई। लगे ललकि लोचन-निधि पाई।
दो०—गुरु-जन-लाज समाज बड़ देखि सीय सकुचानि।
लगी बिलोकन सखिन्ह तन रघुबीरहि उर आनि ॥२८०॥
चौ०—रामरूप अरु सियछवि देखी। नरनारिन्ह परिहरी निमेखी।
सोचहिं सकल कहत सकुचाहीं। बिधि सन बिनय करहिं मन माहीं।
हरु बिधि बेगि जनकजड़ताई। मति हमार असि देहि सुहाई।
बिनु बिचार पन तजि नरनाहू। सीय राम कर करै बिआहू।
जग भल कहिहि भाव सब काहू। हठ कीन्हे अंतहु उर-दाहू।
एहि लालसा मगन सब लोगू। बर साँवरो जानकी जोगू।
तब बंदीजन जनक बोलाए। बिरदावली कहत चलि आए।
कह नृप जाइ कहहु पन मोरा। चले भाट हिय हरप न थोरा।
दो०—बोले बंदी बचन बर सुनहु सकल महिपाल।
पन बिदेह कर कहहिं हम भुजा उठाइ बिसाल ॥२८१॥
चौ०-नृप-भुज-बलु-बिधु सिव-धनु-राहू। गरुअ कठोर बिदित सब काहू।
रावन बान महाभट भारे। देखि सरासन गवहिं सिधारे।
सोइ पुरारिकोदंड कठोरा। राजसमाज आजु जेइ तोरा।
त्रि-भुवन-जय-समेत बैदेही। बिनहिं बिचार बरै हठि तेही।
सुनि पन सकल भूप अभिलाषे। भट मानी अतिसय मन माषे।
परिकर बाँधि उठे अकुलाई। चले इष्टदेवन्ह सिरु नाई।
तमकि तमकि तकि*सिवधनु धरहीं। उठै न कोटि भाँति बल करहीं।
जिन्ह के कछु बिचार मन माहीं। चाप समीप महीप न जाहीं।

* प्रयो०—तमकि ताकि तकि।

दो०—तमकि धरहिं धनु मूढ़ नृप उठै न चलहिं लजाइ।
मनहुँ पाइ भट-बाहु-बल अधिक अधिक गरुआइ ॥२८२॥

चौ०-भूप सहस दस एकहिं बारा। लगे उठावन टरै न टारा।
डगै न संभुसरासन कैसे। कामीवचन सतीमन जैसे।
सब नृप भए जोग उपहासी। जैसे बिनु बिराग संन्यासी।
कीरति, बिजय, बीरता भारी। चले चापकर बरबस हारी।
श्रीहत भए हारि हिय राजा। बैठे निज निज जाइ समाजा।
नृपन्ह बिलोकि जनक अकुलाने। बोले बचन रोष जनु साने।
दीप दीप के भूपति नाना। आए सुनि हम जो पन ठाना।
देव दनुज धरि मनुजसरीरा। बिपुल बीर आए रनधीरा।

दो०—कुँअरि मनोहरि, बिजय बड़ि, कीरति अति कमनीय।
पावनिहार बिरंचि जनु रचेउ न धनुदमनीय ॥२८३॥

चौ०-कहहु काहि यह लाभ न भावा। काहु न संकरचाप चढ़ावा।
रहै चढ़ाउब तोरब भाई। तिल भरि भूमि न सके छुड़ाई*।
अब जनि कोउ माखै भट मानी। बीरबिहीन मही मैं जानी।
तजहु आस निज निज गृह जाहू। लिखा न बिधि बैदेहिबिआहू।
सुकृत जाइ जौं पन परिहरऊँ। कुअँरि कुआँरि रहउ का करऊँ।
जौं जनतेउँ बिनु भट भुवि भाई। तौ पन करि होतेउँ न हँसाई।
जनकबचन सुनि सब नरनारी। देखि जानकिहि भए दुखारी।
माखे लखन कुटिल भइँ भौंहैं। रदपट फरकत नयन रिसौहैं।

दो०—कहि न सकत रघुबीर-डर लगे बचन जनु बान।
नाइ राम-पद-कमल सिर बोले गिरा प्रमान ॥२८४॥

चौ०-रघुबंसिन्ह मह जहँ कोउ होई। तेहि समाज अस कहै न कोई।
कही जनक जसि अनुचित बानी। बिद्यमान रघु-कुल-मनि जानी।
सुनहु भानु-कुल-पंकज-भानू। कहौं सुभाव न कछु अभिमानू।

---

* काशि०—उठाई।

जौं तुम्हार अनुसासन पावौं। कंदुक इव ब्रह्मांड उठावौं।
काँचे घट जिमि डारौं फोरी। सकौं मेरु मूलक इव तोरी।
तव प्रतापमहिमा भगवाना। का बापुरो पिनाक पुराना।
नाथ जानि अस आयसु होऊ। कौतुक करौं विलोकिअ सोऊ।
कमलनाल जिमि चाप चढ़ावौं। जोजन सत प्रमान लै धावौं।

दो०—तोरौं छत्रकदंड जिमि तव प्रतापबल नाथ।
जौ न करौं प्रभु-पद-सपथ कर न धरौं धनु भाथ ॥२८५॥

चौ०-लपन सकोप बचन जब बोले। डगमगानि महि दिग्गज डोले।
सकल लोक सब भूप डेराने। सियहिय हरप जनक सकुचाने।
गुरु रघुपति सब मुनि मन माहीं। मुदित भए पुनि पुनि पुलकाहीं।
सयनहिं रघुपति लपन निवारे। प्रेमसमेत निकट बैठारे।
विस्वामित्र समय सुभ जानी। बोले अति सनेह-मय बानी।
उठहु राम भंजहु भवचापा। मेटहु तात जनकपरितापा।
सुनि गुरुबचन चरन सिरु नावा। हरप विपाद न कछु उर आवा।
ठाढ़ भए उठि सहज सुभाए। ठवनि जुवा मृगराज लजाए।

दो०—उदित उदय-गिरि-मंच पर रघुवर बालपतंग।
विगसे संतसरोज सब हरपे लोचनभृंग ॥२८६॥

चौ०-नृपन्ह केरि आसा-निसि नासी। बचन नखतअवली न प्रकासी।
मानी महिप कुमुद सकुचाने। कपटी भूप उलूक लुकाने।
भए विसोक कोक मुनि देवा। बरपहिं सुमन जनावहिं सेवा।
गुरुपद वंदि सहित अनुरागा। राम मुनिन्ह सन आयसु माँगा।
सहजहि चले सकल-जग-स्वामी। मत्त - मंजु - बर-कुंजर - गामी।
चलत राम सब-पुर-नर-नारी। पुलक - पूरि - तन भए सुखारी।
वंदि पितर सब सुकृत सँभारे। जौं कछु पुन्य प्रभाव हमारे।
तौं सिवधनु मृनाल की नाईं। तोरहिं राम गनेस गोसाईं।

दो०—रामहिं प्रेम समेत लखि सखिन्ह समीप बोलाइ।
सीतामातु सनेहबस बचन कहै बिलखाइ ॥ २८७ ॥

चौ०-देखी विपुल विकल बैदेही। निमिष विहात कलपसम तेही।
तृषित बारि बिनु जो तनु त्यागा। मुएँ करै का सुधा-तड़ागा।
का बरषा जब कृषी सुखाने। समय चुकें पुनि का पछिताने।
अस जिय जानि जानकी देखी। प्रभु पुलके लखि प्रीति बिसेखी।
गुरहि प्रनामु मनहिं मन कीन्हा। अति लाघव उठाइ धनु लीन्हा।
दमकेउ दामिनि जिमि जब लयेऊ। पुनि धनु नभ-मंडल-सम भयेऊ।
लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़े। काहु न लखा देख सब ठाढ़े।
तेहि छन राम मध्य धनु तोरा। भरेउ भुवन धुनि घोर कठोरा।

छंद—भरे भुवन घोर कठोर रव रबिबाजि तजि मारग चले।
चिक्करहिं दिग्गज डोल महि अहि कोल कूरम कलमले*॥
सुर असुर मुनि कर कान दीन्हे सकल बिकल बिचारहीं।
कोदंड खंडेउ राम तुलसी जयति बचन उचारहीं॥

सो०—संकर-चाप जहाज सागर रघुबर-बाहु-बल।
बूड़ सो सकल समाज चढ़े जो प्रथमहि मोहबस॥२६३॥

चौ०-प्रभु दोउ चापखंड महि डारे। देखि लोग सब भए सुखारे।
कौसिक-रूप-पयोनिधि पावन। प्रेमबारि अवगाह सुहावन।
राम-रूप-राकेस निहारी। बढ़त बीचि पुलकावलि भारी
बाजे नभ गहगहे निसाना। देवबधू नाचहिं करि गाना
ब्रह्मादिक सुर सिद्ध मुनीसा। प्रभुहि प्रसंसहिं देहिं असीसा
बरषहिं सुमन रंग बहु माला। गावहिं किंनर गीत रसाला
रही भुवन भरि जय जय बानी। धनुष-भंग-धुनि जात न जानी।†
मुदित कहहिं जहँ तहँ नर नारी। भंजेउ राम संभुधनु भारी।

दो०—बंदी मागध सूतगन बिरद बदहिं मतिधीर।
करहिं निछावरि लोग सब हय गय मनि धन चीर॥२६४॥

---

* काशि०—गिरि लोल सागर खलबले।
† यह चौपाई काशि० प्रति में नहीं है।

चौ०-झाँझि मृदंग संख सहनाई। भेरि ढोल दुंदुभी* सुहाई।
बाजहिं बहु बाजने सुहाए। जहँ तहँ जुवतिन मंगल गाए।
सखिन्ह सहित हरषीं सब रानी। सूखत धान परा जनु पानी।
जनक लहेउ सुख सोच बिहाई। पैरत थके थाह जनु पाई।
श्रीहत भए भूप धनु टूटे। जैसे दिवस दीपछबि छूटे।
सीयसुखहि बरनिश्र केहि भाँती। जनु चातकी पाइ जलस्वाती।
रामहि लषन बिलोकत कैसे। ससिहि चकोरकिसोरकु जैसे।
सतानंद तब श्रायसु दीन्हा। सीता गमन राम पहिं कीन्हा।
दो०—संग सखी सुंदरि सकल गावहिं मंगलचार।
गवनी बाल-मराल-गति सुखमा अंग अपार॥ २६५॥
चौ०-सखिन्ह मध्य सिय सोहति कैसी। छबि-गन-मध्य महाछबि जैसी।
कर सरोज जयमाल सोहाई। बिस्व-बिजय-सोभा जनु छाई।
तन सकोच मन परम उछाहू। गूढ़ प्रेम लखि परै न काहू।
जाइ समीप राम-छबि देखी। रहि जनु कुश्ररि चित्र श्रवरेखी।
चतुर सखी लखि कहा बुझाई। पहिरावहु जयमाल सुहाई।
सुनत जुगल कर माल उठाई। प्रेमबिबस पहिराइ न जाई†।
सोहत जनु जुग जलज सनाला। ससिहि सभीत देत जयमाला।
गावहिं छबि श्रवलोकि सहेली। सिय जयमाल रामउर मेली।
सो०—रघुबरउर जयमाल देखि देव बरषहिं सुमन।
सकुचे सकल भुश्राल जनु बिलोकि रबि कुमुदगन॥२६६॥
चौ०-पुर अरु ब्योम बाजने बाजे। खल भए मलिन साधु सब राजे।
सुर किन्नर नर नाग मुनीसा। जय जय जय कहि देहिं श्रसीसा।
नाचहिं गावहिं बिबुधबधूटीं। बार बार कुसुमावलि छूटीं।
जहँ तहँ बिप्र बेदधुनि करहीं। बंदी बिरदावलि उच्चरहीं।
महि पाताल नाक जसु ब्यापा। राम बरी सिय भंजेउ चापा।

* काशि०—डिंडिमि।
† यह चौपाई काशि० प्रति में नहीं है।

करहिं आरती पुर-नर-नारी। देहिं निछावरि वित्त बिसारी।
सोहति सीय राम कै जोरी। छबि श्रृंगार मनहुँ एक ठोरी।
सखीं कहहिं प्रभुपद गहु सीता। करत न चरनपरस अति भीता।
दो०—गौतम-तिय-गति सुरति करि नहिं परसति पग पानि।
मन बिहँसे रघु-बंस-मनि प्रीति अलौकिक जानि ॥२६७॥
चौ०-तब सिय देखि भूप अभिलाषे। कूर कपूत मूढ़ मन माषे।
उठि उठि पहिरि सनाह अभागे। जहँ तहँ गाल बजावन लागे।
लेहु छँड़ाय सीय कह कोऊ। धरि बाँधहु * नृपबालक दोऊ।
तोरें धनुष चाँड़ नहिं सरई। जीअत हमहिं कुअँरि को बरई।
जौं बिदेह कछु करै सहाई। जीतहु समर सहित दोउ भाई।
साधु भूप बोले सुनि बानी। राजसमाजहिं लाज लजानी।
बलु प्रतापु बीरता बड़ाई। नाक पिनाकहि संग सिधाई।
सोइ सूरता कि अब कहुँ पाई। असि बुधि तौ बिधि मुह मसि लाई।
दो०—देखहु रामहिं नयन भरि तजि इरषा मद कोहु।
लषन-रोष-पावक-प्रबलु जानि सलभ जनि होहु ॥ २६८ ॥
चौ०-बैनतेयबलि जिमि चह कागू। जिमि सस चहै नाग-अरि-भागू।
जिमि चह कुसल अकारन कोही। सब संपदा चहै सिवद्रोही।
लोभी लोलुप कीरति चहई। अकलंकता कि कामी लहई।
हरि-पद-बिमुख परमगति चाहा। तस तुम्हार लालच नरनाहा।
कोलाहल सुनि सीय सकानी। सखीं लवाइ गईं जहँ रानी।
राम सुभाय चले गुरु पाहीं। सियसनेहु बरनत मन माहीं।
रानिन्ह सहित सोचबस सीया। अब धौं बिधिहि काह करनीया।
भूप-बचन सुनि इत उत तकहीं। लषन रामडर बोलि न सकहीं।
दो०—अरुन नयन भृकुटी कुटिल चितवत नृपन्ह सकोप।
मनहुँ मत्त-गज-गन निरखि सिंहकिसोरहि चोप ॥ २६९ ॥

* काशि०—मारहु।

चौ०-खरभर देखि विकल पुरनारी। सब मिलि देहिं महीपन्ह गारी।
तेहि अवसर सुनि सिव-धनु-भंगा। आए भृगु-कुल-कमल-पतंगा।
देखि महीप सकल सकुचाने। बाज झपट जनु लवा लुकाने।
गौर सरीर भूति भलि भ्राजा। भाल बिसाल त्रिपुंड बिराजा।
सीस जटा ससिबदन सुहावा। रिसिबस कछुक अरुन होइ आवा।
भृकुटी कुटिल नयन रिस राते। सहजहुँ चितवत मनहुँ रिसाते।
वृषभकंध उर बाहु बिसाला। चारु जनेउ माल मृगछाला।
कटि मुनि-बसन तून दुइ बाँधे। धनु सर कर कुठार कल काँधे।

दो०—संत* बेष करनी कठिन बरनि न जाइ सरूप।
धरि मुनितनु जनु बीररसु आयेउ जहँ सब भूप ॥२००॥

चौ०-देखत भृगु-पति-बेषु कराला। उठे सकल भयबिकल भुआला।
पितुसमेत कहि निज निज नामा। लगे करन सब दंडप्रनामा।
जेहि सुभाय चितवहिं हितु जानी। सो जानै जनु आइ खुटानी।
जनक बहोरि आइ सिरु नावा। सीय बोलाइ प्रनाम करावा।
आसिष दीन्हि सखी हरषानी। निज समाज लै गईं सयानी।
बिस्वामित्र मिले पुनि आई। पदसरोज मेले दोउ भाई।
रामु लषनु दसरथ के ढोटा। देखि असीस दीन्ह भल जोटा।
रामहिं चितै रहे भरि लोचन। रूप अपार मार-मद-मोचन।

दो०—बहुरि बिलोकि बिदेह सन कहहु काह अति भीर।
पूँछत जानि अजान जिमि ब्यापेउ कोपु सरीर ॥२०१॥

चौ०-समाचार कहि जनक सुनाए। जेहि कारन महीप सब आए।
सुनत बचन फिरि अनत निहारे। देखे चापखंड महि डारे।
अति रिस बोले बचन कठोरा। कहु जड़ जनक धनुष कै तोरा।
बेगि देखाउ मूढ़ न त आजू। उलटौं महि जहँ लगि तव राजू।
अति डर उतर देत नृप नाहीं। कुटिल भूप हरषे मन माहीं।

---

* काशि०—साधु।

सुर मुनि नाग नगर-नर-नारी। सोचहिं सकल त्रास उर भारी।
मन पछिताति सीयमहतारी। विधि अब सवँरी बात बिगारी।
भृगुपति कर सुभाउ सुनि सीता। अरध निमेषु कलपसम बीता।

दो०—सभय बिलोके लोग सब जानि जानकी भीरु।
हृदय न हरष विषाद कछु बोले श्रीरघुवीरु ॥ ३०२ ॥

चौ०—नाथ संभु-धनु-भंजनि-हारा। होइहि कोउ एक दास तुम्हारा।
आयसु काह कहिअ किन मोही। सुनि रिसाइ बोले मुनि कोही।
सेवक सो जो करै सेवकाई। अरिकरनी करि करिअ लराई।
सुनहु राम जेहि सिव-धनु तोरा। सहस-बाहु-सम सो रिपु मोरा।
सो बिलगाउ बिहाइ समाजा। नतु मारे जैहैं सब राजा।
सुनि मुनिवचन लषन मुसुकाने। बोले परसुधरहि अपमाने।
बहु धनुही तोरी लरिकाईं। कबहुँ न असि रिस कीन्ह गोसाईं।
एहि धनु पर ममता केहि हेतू। सुनि रिसाइ कह भृगु-कुल-केतू।

दो०—रे नृपबालक कालबस बोलत तोहि न सँभार।
धनुही सम त्रिपुरारि-धनु बिदित सकल संसार ॥३०३॥

चौ०—लषन कहा हँसि हमरे जाना। सुनहु देव सब धनुष समाना।
का छति लाभु जून धनु तोरे। देखा राम नयन के भोरे।
छुअत टूट रघुपतिहु न दोषू। मुनि बिनु काज करिअ कत रोषू।
बोले चितै परसु की ओरा। रे सठ सुनेहि सुभाउ न मोरा।
बालक बोलि बधौं नहिं तोही। केवल मुनि जड़ जानहि मोही।
बालब्रह्मचारी अति कोही। बिस्वबिदित छत्रिय-कुल-द्रोही।
भुजबल भूमि भूप बिनु कीन्ही। बिपुल बार महिदेवन्ह दीन्ही।
सहसबाहु-भुज-छेदनि-हारा। परसु बिलोकु महीपकुमारा।

दो०—मातुपितहि जनि सोचबस करसि महीपकिसोर।
गरभन के अरभकदलन परसु मोर अति घोर ॥३०४॥

चौ०—बिहँसि लषन बोले मृदुबानी। अहो मुनीस महा भट मानी।
पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू। चहत उड़ावन फूँकि पहारू।

इहाँ कुम्हड़बतिया कोउ नाहीं । जे तरजनी देखि मरि जाहीं ।
देखि कुठार सरासन बाना । मैं कछु कहेउँ सहित अभिमाना ।
भृगुकुल समुझि जनेउ बिलोकी । जो कछु कहहु सहौं रिस रोकी ।
सुर महिसुर हरिजन अरु गाई । हमरे कुल इन्ह पर न सुराई ।
बधे पाप अपकीरति हारे । मारतहू पा परिअ तुम्हारे ।
कोटि-कुलिस-सम बचन तुम्हारा । ब्यर्थ धरहु धनु बान कुठारा ।

दो०—जो बिलोकि अनुचित कहेउँ छमहु महामुनि धीर ।
सुनि सरोष भृगु-बंस-मनि बोले गिरा गँभीर ॥२०५॥

चौ०-कौसिक सुनहु मंद यह बालक । कुटिल कालबस निज-कुल-घालक ।
भानु – बंस – राकेस – कलंकू । निपट निरंकुस निठुर निसंकू* ।
कालकवलु होइहि छन माहीं । कहौं पुकारि खोरि मोहि नाहीं ।
तुम्ह हटकहु जौं चहहु उबारा । कहि प्रतापु बलु रोपु हमारा ।
लषन कहेउ मुनि सुजस तुम्हारा । तुम्हहिं अछत को बरनै पारा ।
अपने मुँह तुम्ह आपनि करनी । बार अनेक भाँति बहु बरनी ।
नहिं संतोष तौ पुनि कछु कहहू । जनि रिस रोकि दुसह दुख सहहू ।
बीरब्रती तुम्ह धीर अछोभा । गारी देत न पावहु सोभा ।

दो०—सूर समर करनी करहिं कहि न जनावहिं आपु ।
बिद्यमान रिपु पाइ रन कायर करहिं प्रलापु† ॥ २०६ ॥

चौ०-तुम्ह तौ कालु हाँक जनु लावा । बार बार मोहि लागि बोलावा ।
सुनत लषन के बचन कठोरा । परसु सुधारि धरेउ कर घोरा ।
अब जनि देइ दोष मोहि लोगू । कटुबादी बालक बधजोगू ।
बाल बिलोकि बहुत मैं बाँचा । अब यहु मरनिहार भा साँचा ।
कौसिक कहा छमिअ अपराधू । बाल-दोष-गुन गनहिं न साधू ।
कर कुठार मैं अकरुन कोही । आगे अपराधी गुरुद्रोही ।
उतर देत छाँड़ौं बिनु मारे । केवल कौसिक सील तुम्हारे ।

* अयो०—अबुध असंकू ।

† अयो०—बिद्यमान रन पाइ रिपु कायर कथहिं प्रलापु ।

न तु एहि काटि कुठार कठोरे। गुरुहिं उरिन होतेउँ श्रम थोरे॥

दो०—गाधिसूनु कह हृदय हँसि मुनिहि हरिअरै सूझ।

अयमय खाँड़ न ऊखमय* अजहुँ न बूझ अबूझ॥ २०७॥

चौ०-कहेउ लषन मुनि सील तुम्हारा। को नहिं जान विदित संसारा॥
माता-पितहि उरिन भए नीके। गुररिन रहा सोच बड़ जी के॥
सो जनु हमरेहि माथे काढ़ा। दिन चलि गयेउ ब्याज बहु वाढ़ा॥
अब आनिअ व्यवहरिआ बोली। तुरत देउँ मैं थैली खोली॥
सुनि कटुवचन कुठार सुधारा। हाय हाय सब सभा पुकारा॥
भृगुवर परसु देखावहु मोही। विप्र विचारि बचौं नृपद्रोही॥
मिले न कबहुँ सुभट रन गाढ़े। द्विज देवता घरहिं के वाढ़े॥
अनुचित कहि सब लोग पुकारे। रघुपति सैनहिं लषन निवारे॥

दो०—लषन-उतर आहुति सरिस भृगु-वर-कोप कृसानु।

बढ़त देखि जलसम वचन बोले रघु-कुल-भानु॥ २०८॥

चौ०-नाथ करहु बालक पर छोहू। सूध दूधमुख करिअ न कोहू॥
जौं पै प्रभुप्रभाउ कछु जाना। तौ कि बराबरि करै अयाना॥
जौं लरिका कछु अचगरि करहीं। गुर पितु मातु मोद मन भरहीं॥
करिअ कृपा सिसु सेवक जानी। तुम्ह सम सील धीर मुनि ग्यानी॥
रामवचन सुनि कछुक जुड़ाने। कहि कछु लषन बहुरि मुसुकाने॥
हँसत देखि नखसिख रिस ब्यापी। राम तोर भ्राता बड़ पापी॥
गौर सरीर स्याम मन माहीं। काल-कूट-मुख पयमुख नाहीं॥
सहज टेढ़ अनुहरै न तोही। नीच मीचसम देख न मोही॥

दो०—लषन कहेउ हँसि सुनहु मुनि क्रोध पाप कर मूल।

जेहि बस जन अनुचित करहिं चरहिं विस्वप्रतिकूल॥२०९॥

चौ०-मैं तुम्हार अनुचर मुनिराया। परिहरि कोप करिअ अब दाया॥
टूट चाप नहिं जुरिहि रिसाने। बैठिअ होइहि पाय पिराने॥

* सद०, राम०—अयमय खाँड़ ऊख मिमि।

जौं अति प्रिय तौ करिअ उपाई। जोरिय कोउ बड़ गुनी बोलाई॥
बोलत लषनहिं जनक डेराहीं। मष्ट करहु अनुचित भल नाहीं॥
थरथर काँपहिं पुर-नर-नारी। छोट कुमार खोट बड़ भारी॥
भृगुपति सुनि सुनि निर्भय बानी। रिस तन जरै होइ बलहानी॥
बोले रामहिं देइ निहोरा। बचौं बिचारि बंधु लघु तोरा॥
मन मलीन तनु सुंदर कैसे। बिष-रस-भरा कनकघट जैसे॥

दो०—सुनि लछिमन बिहँसे बहुरि नयन तरेरे राम।
गुर-समीप गवने सकुचि परिहरि बानी बाम॥ ३१०॥

चौ०-अति बिनीत मृदु सीतलि बानी। बोले राम जोरि जुग पानी॥
सुनहु नाथ तुम्ह सहज सुजाना। बालकबचन करिअ नहिं काना॥
बररै बालकु एकु सुभाऊ। इन्हहिं न संत * बिदूषहिं काऊ॥
तेहिं नाहीं कछु काज बिगारा। अपराधी मैं नाथ तुम्हारा॥
कृपा, कोप, बध, बंध गोसाईं। मो पर करिअ दास की नाईं॥
कहिअ बेगि जेहि बिधि रिस जाई। मुनिनायक सोइ करौं उपाई॥
कह मुनि राम जाय रिस कैसे। अजहुँ अनुज तव चितव अनैसे॥
एहि के कंठ कुठार न दीन्हा। तौ मैं काह कोप करि कीन्हा॥

दो०—गर्भ स्रवहिं अवनिप-रवँनि सुनि कुठारगति घोर।
परसु अछत देखौं जिअत बैरी भूपकिसोर॥ ३११॥

चौ०-बहै न हाथ दहै रिस छाती। भा कुठार कुंठित नृपघाती॥
भयेउ बाम बिधि फिरेउ सुभाऊ। मोरे हृदय कृपा कसि काऊ॥
आजु दैव दुख दुसह सहावा। सुनि सौमित्रि बहुरि सिरु नावा॥
बाउकृपा मूरति अनुकूला। बोलत बचन झरत जनु फूला॥
जौ पै कृपा जरहिं मुनि गाता। क्रोध भए तन राखु बिधाता॥
देखु जनक हठि बालक एहू। कीन्ह चहत जड़ जमपुर गेहू॥
बेगि करहु किन आँखिन ओटा। देखत छोट खोट नृपढोटा॥
बिहँसे लषन कहा मुनि पाहीं। मूँदें आँखि कतहुँ कोउ नाहीं॥

* काशि०—बिदुष।

दो०—परसुराम तव राम प्रति बोले उर अति क्रोध।
संभुसरासन तोरि सठ करसि हमार प्रबोध॥ ३१२॥

चौ०–बंधु कहै कटु संमत तोरें। तूँ छल विनय करसि कर जोरें।
करु परितोष मोर संग्रामा। नाहिं त छाँड़ु कहाउब रामा।
छल तजि करहि समर सिवद्रोही। बंधुसहित न त मारौं तोही।
भृगुपति बकहिं कुठार उठाए। मन मुसुकाहिं राम सिर नाए।
गुनहु लषन कर हम पर रोषू। कतहुँ सुधाइहु तें बड़ दोषू।
टेढ़ जानि संका* सब काहू। बक्र चंद्रमहि ग्रसै न राहू।
राम कहेउ रिस तजिअ मुनीसा। कर कुठार आगे यह सीसा।
जेहि रिस जाइ करिअ सोइ स्वामी। मोहि जानिअ आपन अनुगामी।

दो०-प्रभु सेवकहि समर कस तजहु विप्रबर रोसु।
बेष बिलोकि कहेसि कछु बालकहू नहिं दोसु॥ ३१३॥

चौ०–देखि कुठार-बान-धनु-धारी। भै लरिकहि रिस बीरु बिचारी।
नाम जान पै तुम्हहिं न चीन्हा। बंससुभाव उतरु तेइ दीन्हा।
जौं तुम्ह अवतेहु मुनि की नाईं। पदरज सिर सिसु धरत गोसाईं।
छमहु चूक अनजानत केरी। चहिअ बिप्रउर कृपा घनेरी।
हमहिं तुम्हहि सरवरि कस नाथा। कहहु न कहाँ चरन कहँ माथा।
राम मात्र लघु नाम हमारा। परसुसहित बड़ नाम तुम्हारा।
देव एकगुन धनुष हमारें। नवगुन परम पुनीत तुम्हारें†।
सब प्रकार हम तुम्ह सन हारे। छमहु बिप्र अपराध हमारे।

दो०—बार बार मुनि विप्रबर कहा राम सन राम।
बोले भृगुपति सरुष होइ तहूँ बंधुसम बाम॥३१४॥

चौ०-निपटहि द्विज करि जानहि मोही। मैं जस बिप्र सुनावौं तोही।
चाप स्रुवा सर आहुति जानू। कोप मोर अति घोर कृसानू।
समिधि सेन चतुरंग सुहाई। महामहीप भए पसु आई।

---

* अयो०—बंदै।

† यह चौपाई काशि० प्रति में नहीं है।

मैं यह परसु काटि बलि दीन्हे। समरजग्य जग कोटिक कीन्हे।
मोर प्रभाव विदित नहिं तोरे। बोलसि निदरि बिप्र के भोरे।
भंजेउ चाप दाप बड़ बाढ़ा। अहमिति मनहुँ जीति जग ठाढ़ा।
राम कहा मुनि कहहु बिचारी। रिस अति बड़ि लघु चूक हमारी।
छुवतहि टूट पिनाक पुराना। मैं केहि हेतु करौं अभिमाना।

दो०—जौं हम निदरहिं बिप्र बदि सत्य सुनहु भृगुनाथ।
तौ अस को जग सुभट जेहि भयबस नावहिं माथ ॥३१५॥

चौ०-देव दनुज भूपति भट नाना। समबल अधिक होउ बलवाना।
जौं रन हमहिं प्रचारै कोऊ। लरहिं सुखेन काल किन होऊ।
छत्रिय-तनु धरि समर सकाना। कुलकलंक तेहि पाँवर जाना।
कहौं सुभाव न कुलहि प्रसंसी। कालहु डरहिं न रन रघुबंसी।
बिप्रबंस कै असि प्रभुताई। अभय होइ जो तुम्हहिं डेराई।
सुनि मृदु बचन गूढ़ रघुपति के। उघरे पटल परसु-धर-मति के।
राम रमापति कर धनु लेहू। खैंचहु मिटै मोर संदेहू।
देत चाप आपुहि चलि गयेऊ। परसुराम मन बिसमउ भयेऊ।

दो०—जाना रामप्रभाउ तब पुलक प्रफुल्लित गात।
जोरि पानि बोले बचन हृदय न प्रेमु समात ॥३१६॥

चौ०-जय रघुबंस-बनज-बन-भानू। गहन-दनुज-कुल-दहन कृसानू।
जय सुर-बिप्र-धेनु-हित-कारी। जय मद-मोह-कोह-भ्रम-हारी।
बिनय-सील करुना-गुन-सागर। जयति बचनरचना अतिनागर
सेवकसुखद सुभग सब अंगा। जय सरीरछबि कोटिअनंगा
करौं काह मुख एक प्रसंसा। जय महेस-मन-मानस-हंसा।
अनुचित बचन कहेउँ अग्याता। छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता।
कहि जय जय जय रघु-कुल-केतू। भृगुपति गए बनहिं तप हेतू।
अपभय कुटिल* महीप डेराने। जहँ तहँ कायर गवहिं पराने।

* काशि०—सकल।

दो०—देवन दीन्ही दुंदुभी प्रभु पर बरषहिं फूल।
हरषे पुर-नर-नारि सब मिटा मोहमय सूल ॥२१७॥

चौ०-अति गहगहे बाजने बाजे। सबहिं मनोहर मंगल साजे।
जूथ जूथ मिलि सुमुखि सुनयनी। करहिं गान कल कोकिलबयनी।
सुख बिदेह कर बरनि न जाई। जनमदरिद्र मनहुँ निधि पाई।
बिगतत्रास भै सीय सुखारी। जनु बिधु उदय चकोरकुमारी।
जनक कीन्ह कौसिकहि प्रनामा। प्रभुप्रसाद धनु भंजेउ रामा।
मोहि कृतकृत्य कीन्ह दुहुँ भाई। अब जो उचित सो कहिअ गोसाईं।
कह मुनि सुनु नरनाथ प्रवीना। रहा बिवाह चापआधीना।
टूटतही धनु भयेउ बिवाहू। सुर नर नाग बिदित सब काहू।

दो०—तदपि जाइ तुम्ह करहु अब जथा-बंस-ब्यवहारू।
बूझि बिप्र कुल वृद्ध गुरु बेदबिदित आचारु ॥२१८॥

चौ०-दूत अवधपुर पठवहु जाई। आनहिं नृप दसरथहि बोलाई।
मुदित राउ कहि भलेहि कृपाला। पठए दूत बोलि तेहि काला।
बहुरि महाजन सकल बोलाए। आइ सबन्हि सादर सिर नाए।
हाट बाट मंदिर सुरबासा। नगर सवाँरहु चारिहु पासा।
हरषि चले निज निज गृह आए। पुनि परिचारक बोलि पठाए।
रचहु बिचित्र बितान बनाई। सिर धरि बचन चले सचु पाई।
पठए बोलि गुनी तिन्ह नाना। जे बितान-बिधि-कुसल सुजाना।
बिधिहि बंदि तिन्ह कीन्ह अरंभा। बिरचे कनककदलि के खंभा।

दो०—हरितमनिन्ह के पत्र फल पदुमराग के फूल।
रचना देखि बिचित्र अति मन बिरंचि कर भूल ॥ ३१९ ॥

चौ०-बेनु हरित-मनि-मय सब कीन्हे। सरल सपरब* परहिं नहिं चीन्हे।
कनककलित अहिबेलि बनाई। लखि नहिं परै सपरन सुहाई।
तेहि के रचि पचि बंध बनाए। बिच बिच मुकुता दाम सुहाए।

---

* सपरब=सपल्लव।

मानिक मरकत कुलिस पिरोजा। चीरि कोरि पचि रचे सरोजा।
किए भृंग बहुरंग बिहंगा। गुंजहिं कूजहिं पवनप्रसंगा।
सुरप्रतिमा खंभन्हि गढ़ि काढ़ीं। मंगलद्रव्य लिए सब ठाढ़ीं।
चौकें भाँति अनेक पुराईं। सिंधुर-मनि-मय सहज सुहाईं।
दो०—सौरभपल्लव सुभग सुठि किए नील-मनि कोरि।
हेम बवरि मरकत घवर लसत पाटमय डोरि॥ ३२०॥
चौ०-रचे रुचिर बर बंदनिवारे। मनहुँ मनोभव फंद सवाँरे।
मंगल-कलस अनेक बनाए। ध्वज पताक पट चँवर सुहाए।
दीप मनोहर मनिमय नाना। जाइ न बरनि बिचित्र बिताना।
जेहि मंडप दुलहिनि बैदेही। सो बरनै असि मति कवि केही।
दूलह राम रूप-गुन-सागर। सो बितान तिहुँ लोक उजागर।
जनकभवन कै सोभा जैसी। गृह गृह प्रति पुर देखिअ तैसी।
जेइ तेरहुति तेहि समय निहारी। तेहि लघु लगत भुवन दस चारी।
जो संपदा नीचगृह सोहा। सो बिलोकि सुरनायक मोहा।
दो०—बसै नगर जेहि लच्छि करि कपट नारि बर बेषु।
तेहि पुर कै सोभा कहत सकुचहिं सारद सेषु॥ ३२१॥
चौ०-पहुँचे दूत रामपुर पावन। हरषे नगर बिलोकि सुहावन।
भूपद्वार तिन्ह खबर जनाई। दसरथ नृप सुनि लिए बोलाई।
करि प्रनाम तिन्ह पाती दीन्ही। मुदित महीप आपु उठि लीन्ही।
बारि बिलोचन बाँचत पाती। पुलक गात आई भरि छाती।
राम लखन उर कर बर चीठी। रहि गए कहत न खाटी मीठी।
पुनि धरि धीर पत्रिका बाँची। हरषी सभा बात सुनि साँची।
खेलत रहे तहाँ सुधि पाई। आए भरत सहित हित भाई।
पूछत अति सनेह सकुचाई। तात कहाँ तें पाती आई।
दो०—कुसल प्रानप्रिय बंधु दोउ अहहिं कहहु केहि देस।
सुनि सनेहसाने बचन बाँची बहुरि नरेस॥ ३२२॥
चौ०-सुनि पाती पुलके दोउ भ्राता। अधिक सनेहु समात न गाता।

प्रीति पुनीत भरत कै देखी। सकल सभा सुख लहेउ बिसेखी।
तब नृप दूत निकट बैठारे। मधुर मनोहर बचन उचारे।
भैया कहहु कुसल दोउ बारे। तुम्ह नीके निज नयन निहारे।
स्यामल गौर धरे धनुभाथा। बय किसोर कौसिकमुनि साथा।
पहिचानहु तुम्ह कहहु सुभाऊ। प्रेमबिबस पुनि पुनि कह राऊ।
जा दिन तें मुनि गए लवाई। तब तें आजु साँचि सुधि पाई।
कहहु बिदेह कवन बिधि जाने। सुनि प्रिय बचन दूत मुसुकाने।
दो०—सुनहु मही-पति-मुकुट-मनि तुम्ह सम धन्य न कोउ।
राम लषन जिन्ह के तनय बिस्वबिभूषन दोउ ॥३२३॥
चौ०-पूँछन जोग न तनय तुम्हारे। पुरुषसिंघ तिहुँ पुर उँजियारे।
जिन्ह के जस प्रताप के आगे। ससि मलीन रबि सीतल लागे।
तिन्ह कहँ कहिअ नाथ किमि चीन्हे। देखिअ रबि कि दीप कर लीन्हे।
सीयस्वयंबर भूप अनेका। सिमिटे सुभट एक तें एका।
संभुसरासन काहु न टारा। हारे सकल बीर बरिआरा।
तीनि लोक महँ जे भट मानी। सब कै सकति संभुधनु भानी।
सकै उठाइ सुरासुर मेरू। सोउ हिय हारि गयेउ करि फेरू।
जेइ कौतुक सिवसैल उठावा। सोउ तेहि सभा पराभव पावा।
दो०—तहाँ राम रघु-बंस-मनि सुनिअ महामहिपाल।
भंजेउ चाप प्रयास बिनु जिमि गज पंकजनाल ॥३२४॥
चौ०-सुनि सरोष भृगुनायक आए। बहुत भाँति तिन्ह आँखि देखाए।
देखि रामबलु निज धनु दीन्हा। करि बहु बिनय गवनु बन कीन्हा।
राजन राम अतुलबल जैसे। तेजनिधान लषन पुनि तैसे।
कंपहिं भूप बिलोकत जा के। जिमि गज हरिकिसोर के ताके।
देव देखि तव बालक दोऊ। अब न आँखि तर आवत कोऊ।
दूत-बचन-रचना प्रिय लागी। प्रेम—प्रताप—बीर-रस-पागी।
सभासमेत राउ अनुरागे। दूतन्ह देन निछावरि लागे।
कहि अनीति ते मूँदहिं काना। धरमु बिचारि सबहि सुख माना।

दो०—तब उठि भूप बसिष्ठ कहँ दीन्हि पत्रिका जाइ।
कथा सुनाई गुरहि सब सादर दूत बोलाइ ॥३२५॥
चौ०-सुनि बोले गुरु अति सुख पाई। पुन्यपुरुष कहँ महि सुख छाई।
जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं। जद्यपि ताहि कामना नाहीं।
तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाएँ। धरमसील पहिं जाहिं सुभाएँ।
तुम्ह गुरु-बिप्र-धेनु-सुर-सेबी। तसि पुनीत कौसल्या देवी।
सुकृती तुम्ह समान जग माहीं। भयेउ न है कोउ होनेउ नाहीं।
तुम्ह तें अधिक पुन्य बड़ काके। राजन राम सरिस सुत जाके।
बीर बिनीत धरम-ब्रत-धारी। गुनसागर बर बालक चारी।
तुम्ह कहँ सर्ब काल कल्याना। सजहु बरात बजाइ निसाना।
दो०—चलहु बेगि सुनि गुरबचन भलेहि नाथ सिरु नाई।
भूपति गवने भवन तब दूतन्ह बासु देवाई ॥३२६॥
चौ०-राजा सब रनिवास बोलाई। जनकपत्रिका बाँचि सुनाई।
सुनि संदेसु सकल हरषानी। अपर कथा सब भूप बखानी।
प्रेमप्रफुल्लित राजहिं रानी। मनहुँ सिखिनि सुनि बारिदबानी।
मुदित असीस देहिं गुरनारी। अति-आनंद-मगन महतारी।
लेहिं परसपर अति प्रिय पाती। हृदय लगाइ जुड़ावहिं छाती।
राम लषन कै कीरति करनी। बारहिं बार भूपबर बरनी।
मुनिप्रसादु कहि द्वार सिधाए। रानिन्ह तब महिदेव बोलाए।
दिए दान आनंदसमेता। चले बिप्रबर आसिष देता।
सो०—जाचक लिए हँकारि दीन्हि निछावरि कोटि बिधि।
चिरजीवहु सुत चारि चक्रवर्ति दसरत्थ के ॥३२७॥
चौ०-कहत चले पहिरे पट नाना। हरषि हने गहगहे निसाना।
समाचार सब लोगन्हि पाए। लागे घर घर होन बधाए।
भुवन चारि दस भयेउ उछाहू। जनक-सुता-रघुबीर-बिआहू।
सुनि सुभ कथा लोग अनुरागे। मग गृह गली सवाँरन लागे।
जद्यपि अवध सदैव सुहावनि। रामपुरी मंगलमय पावनि।

तदपि प्रीति कै रीति सुहाई। मंगलरचना रची बनाई।
ध्वज पताक पट चामर चारू। छावा परम विचित्र बजारू।
कनककलस तोरन मनिजाला। हरद दूब दधि अच्छत माला।
दो०—मंगलमय निज निज भवन लोगन्ह रचे बनाइ।
बीथी सींची चतुरसम चौके चारु पुराइ ॥३२८॥
चौ०-जहँ तहँ जूथ जूथ मिलि भामिनि। सजि नवसप्त सकल दुति-दामिनि
बिधुबदनी मृग-सावक-लोचनि। निज सरूप रति-मान-बिमोचनि।
गावहिं मंगल मंजुल बानी। सुनि कलरव कलकंठि लजानी।
भूपभवन किमि जाइ बखाना। बिस्वबिमोहन रचेउ बिताना।
मंगलद्रव्य मनोहर नाना। राजत बाजत बिपुल निसाना।
कतहुँ बिरद बंदी उच्चरहीं। कतहुँ वेदधुनि भूसुर करहीं।
गावहिं सुंदरि मंगलगीता। लेइ लेइ नाम राम अरु सीता।
बहुत उछाहु भवन अति थोरा। मानहु उमगि चला चहुँ ओरा।
दो०—सोभा दसरथ-भवन कै को कबि बरनै पार।
जहाँ सकल-सुर-सीस-मनि राम लीन्ह अवतार ॥ ३२९ ॥
चौ०—भूप भरत पुनि लिए बोलाई। हय गज स्यंदन साजहु जाई।
चलहु बेगि रघुबीर-बराता। सुनत पुलक पूरे दोउ भ्राता।
भरत सकल साहनी बोलाए। आयसु दीन्ह मुदित उठि धाए।
रचि रुचि जीन तुरग तिन्ह साजे। बरन बरन बर बाजि बिराजे।
सुभग सकल सुठि चंचलकरनी। अय इव जरत धरत पग धरनी।
नाना जाति न जाहिं बखाने। निदरि पवनु जनु चहत उड़ाने।
तिन्ह सब छैल भए असवारा। भरतसरिस बय राजकुमारा।
सब सुंदर सब भूषनधारी। कर सरचाप तून कटि भारी।
दो०—छरे छबीले छैल सब सूर सुजान नबीन।
जुग-पद-चर असवार प्रति जे असि-कला-प्रबीन ॥ ३३० ॥
चौ०—बाँधे बिरद बीर रनगाढ़े। निकसि भए पुर बाहिर ठाढ़े।
फेरहिं चतुर तुरग गति नाना। हरषहिं सुनि सुनि पनव निसाना।

रथ सारथिन्ह विचित्र बनाए। ध्वज पताक मनि भूषन लाए।
चवँर चारु किंकिनि धुनि करहीं। भानु-जान-सोभा अपहरहीं।
सावकरन* अगनित हय होते। ते तिन्ह रथन्ह सारथिन्ह जोते।
सुंदर सकल अलंकृत सोहे। जिन्हहि बिलोकत मुनिमन मोहे।
जे जल चलहिं थलहि की नाईं। टाप न बूड़ बेग-अधिकाई।
अस्त्र सस्त्र सबु साज बनाई। रथी सारथिन्ह लिए बोलाई।
दो०—चढ़ि चढ़ि रथ बाहिर नगर लागी जुरन बरात।
होत सगुन सुंदर सबन्हि जो जेहि कारज जात॥ ३३१॥
चौ०-कलित करिबरन्हि परी अँबारी। कहि न जाइ जेहि भाँति सवाँरी।
चले मत्त गज घंट बिराजी। मनहुँ सुभग सावन-घन-राजी।
बाहन अपर अनेक बिधाना। सिबिका सुभग सुखासन जाना।
तिन्ह चढ़ि चले बिप्र-बर-बृंदा। जनु तनु धरे सकल श्रुति-छंदा।
मागध सूत बंदि गुनगायक। चले जान चढ़ि जो जेहि लायक।
बेसर ऊँट बृषभ बहु जाती। चले बस्तु भरि अगनित भाँती।
कोटिन्ह काँवरि चले कहारा। बिबिध बस्तु को बरनै पारा।
चले सकल – सेवक – समुदाई। निज-निज-साजु-समाजु बनाई।
दो०—सब के उर निर्भर हरषु पूरित पुलक सरीर।
कबहि देखिबे नयन भरि रामलषन दोउ बीर॥ ३३२॥
चौ०-गरजहिं गज घंटाधुनि घोरा। रथरव बाजिहिंस चहुँ ओरा।
निदरि घनहिं घुम्मरहिं निसाना। निज पराइ कछु सुनिअ न काना।
महाभीर भूपति के द्वारे। रज होइ जाइ पषान पबारे।
चढ़ी अटारिन्ह देखहिं नारी। लिए आरती मंगलथारी।
गावहिं गीत मनोहर नाना। अति आनंद न जाइ बखाना।
तब सुमंत्र दुइ स्यंदन साजी। जोते रबि-हय-निंदक बाजी।
दोउ रथ रुचिर भूप पहिं आने। नहिं सारद पहिं जाहिं बखाने।
राजसमाज एक रथ साजा। दूसर तेजपुंज अति भ्राजा।

* सावकरन = श्यामकर्ण।

दो०—तेहि रथ रुचिर बसिष्ठ कहँ हरषि चढ़ाइ नरेसु।
आपु चढ़े स्यंदन सुमिरि हर गुर गौरि गनेसु॥ ३२३॥

चौ०-सहित बसिष्ठ सोह नृप कैसे। सुर–गुर–संग पुरंदर जैसे
करि कुलरीति बेद्‌बिधि राऊ। देखि सबहि सब भाँति बनाऊ
सुमिरि राम गुरआयसु पाई। चले महीपति संख बजाई
हरषे बिबुध बिलोकि बराता। बरषहिं सुमन सु–मंगल–दाता
भयेउ कोलाहल हय गय गाजे। व्योम बरात बाजने बाजे
सुर नर नाग सुमंगल गाई। सरस राग बाजहिं सहनाई
घंट–घंटि–धुनि बरनि न जाहीं। सरव करहिं पायक फहराहीं
करहिं बिदूषक कौतुक नाना। हासकुसल कलगान सुजाना

दो०—तुरग नचावहिं कुँअर बर अकनि मृदंग निसान।
नागर नट चितवहिं चकित डगहिं न ताल-बँधान॥३२४॥

चौ०-बनै न बरनत बनी बराता। होहिं सगुन सुंदर सुभदाता।
चारा चाषु बाम दिसि लेई। मनहुँ सकल मंगल कहि देई।
दाहिन काग सुखेत सुहावा। नकुलदरसु सब काहू पावा।
सानुकूल बह त्रिबिध बयारी। सघट सबाल आव बरनारी।
लोवा फिरि फिरि दरसु देखावा। सुरभी सनमुख सिसुहि पियावा।
मृगमाला फिरि दाहिनि आई। मंगलगन जनु दीन्ह देखाई।
छेमकरी कह छेम बिसेखी। स्यामा बाम सुतरु पर देखी।
सनमुख आयेउ दधि अरु मीना। कर पुस्तक दुइ बिप्र प्रबीना।

दो०—मंगलमय कल्यानमय अभिमत–फल–दातार।
जनु सब साँचे होन हित भए सगुन एक बार॥ ३२५॥

चौ०-मंगल सगुन सुगम सब ताकें। सगुन ब्रह्म सुंदर सुत जाकें।
राम सरिस बर दुलहिनि सीता। समधी दशरथु जनकु पुनीता।
सुनि अस ब्याह सगुन सब नाँचे। अब कीन्हे बिरंचि हम साँचे।
एहि बिधि कीन्ह बरात पयाना। हय गय गाजहिं हने निसाना।
आवत जानि भानु–कुल–केतू। सरितन्हि जनक बँधाए सेतू।

बीच बीच बरबास बनाए। सुर-पुर-सरिस संपदा छाए।
असन सयन बर बसन सुहाए। पावहिं सब निज निज मन भाए।
नित नूतन सुख लखि अनुकूले। सकल बरातिन्ह मंदिर भूले।
दो०—आवत जानि बरात बर सुनि गहगहे निसान।
सजि गज रथ पदचर तुरग लेन चले अगवान ॥२३६॥
चौ०-कनक कलस भरि कोपर थारा। भाजन ललित अनेक प्रकारा।
भरे सुधासम सब पकवाने। भाँति भाँति नहिं जाहिं बखाने।
फल अनेक बर बस्तु सुहाई। हरषि भेंट हित भूप पठाई।
भूषन बसन महामनि नाना। खग मृग हय गय बहु बिधि जाना।
मंगल सगुन सुगंध सुहाए। बहुत भाँति महिपाल पठाए।
दधि चिउरा उपहार अपारा। भरि भरि काँवरि चले कहारा।
अगवानन्ह जब दीखि बराता। उर आनंदु पुलक भर गाता।
देखि बनाव सहित अगवाना। मुदित बरातिन्ह हने निसाना।
दो०—हरषि-परसपर मिलन हित कछुक चले बगमेल।
जनु आनंदसमुद्र दुइ मिलत बिहाइ सुबेल ॥ २३७ ॥
चौ०-बरषि सुमन सुरसुंदरि गावहिं। मुदित देव दुंदुभी बजावहिं।
बस्तु सकल राखीं नृप आगें। बिनय कीन्ह तिन्ह अति अनुरागें।
प्रेमसमेत राय सबु लीन्हा। भइ बकसीस जाचकन्हि दीन्हा।
करि पूजा मान्यता बड़ाई। जनवासे कहँ चले लवाई।
बसन बिचित्र पाँवड़े परहीं। देखि धनदु धनमदु परिहरहीं।
अति सुंदर दीन्हेउ जनवासा। जहँ सब कहँ सब भाँति सुपासा।
जानी सिय बरात पुर आई। कछु निज महिमा प्रगटि जनाई।
हृदय सुमिरि सब सिद्धि बोलाईं। भूप-पहुनई करन पठाईं।
दो०—सिधि सब सियआयसु अकनि गईं जहाँ जनवास।
लिए संपदा सकल सुख सुर-पुर-भोग-बिलास ॥ २३८ ॥
चौ०-निज निज बास बिलोकि बराती। सुरसुख सकल सुलभ सब भाँती।
बिभवभेद कछु कोउ न जाना। सकल जनक कर करहिं बखाना।

सियमहिमा रघुनायक जानी। हरषे हृदय हेतु पहिचानी।
पितुआगमन सुनत दोउ भाई। हृदय न अति आनंदु अमाई।
सकुचन्ह कहि न सकत गुर पाहीं। पितु-दरसन-लालच मनु माहीं।
विस्वामित्र विनय बड़ि देखी। उपजा उर संतोष बिसेखी।
हरषि बंधु दोउ हृदय लगाए। पुलक अंग अंबक जल छाए।
चले जहाँ दसरथ जनवासे। मनहुँ सरोवर तकेउ पिपासे।

दो०—भूप बिलोके जबहिं मुनि आवत सुतन्ह समेत।
उठेउ हरषि सुखसिंधु महुँ चले थाह सी लेत ॥३३९॥

चौ०—मुनिहिं दंडवत कीन्ह महीसा। बार बार पदरज धरि सीसा।
कौसिक राउ लिए उर लाई। कहि असीस पूँछी कुसलाई।
पुनि दंडवत करत दोउ भाई। देखि नृपति उर सुखु न समाई।
सुत हिय लाइ दुसह दुख मेटे। मृतकसरीर प्रान जनु भेंटे।
पुनि बसिष्ठपद सिर तिन्ह नाए। प्रेममुदित मुनिवर उर लाए।
विप्रबृंद बंदे दुहुँ भाई। मनभावती असीसैं पाई।
भरत सहानुज कीन्ह प्रनामा। लिए उठाइ लाइ उर रामा।
हरषे लषन देखि दोउ भ्राता। मिले प्रेम-परि-पूरित गाता।

दो०—पुरजन परिजन जातिजन जाचक मंत्री मीत।
मिले जथाबिधि सबहि प्रभु परम कृपालु बिनीत ॥३४०॥

चौ०—रामहिं देखि बरात जुड़ानी। प्रीति कि रीति न जाति बखानी।
नृप समीप सोहहिं सुत चारी। जनु धनधरमादिक तनुधारी।
सुतन्ह समेत दसरथहि देखी। मुदित नगर-नर-नारि बिसेखी।
सुमन बरषि सुर हनहिं निसाना। नाकनटी नाचहिं करि गाना।
सतानंद अरु बिप्र सचिवगन। मागध सूत बिदुष बंदीजन।
सहित बरात राउ सनमाना। आयसु माँगि फिरे अगवाना।
प्रथम बरात लगन तें आई। ता तें पुर प्रमोद-अधिकाई।
ब्रह्मानंदु लोग सब लहहीं। बढ़हु दिवस निसि बिधि सन कहहीं।

दो०—रामु सीय सोभाअवधि सुकृतअवधि दोउ राज।
जहँ तहँ पुरजन कहहिं अस मिलि नर-नारि-समाज ॥३४१॥
चौ०-जनक-सुकृत-मूरति वैदेही। दसरथसुकृत रामु धरे देही।
इन्ह सम काहु न सिव अवराधे। काहु न इन्ह समान फल लाधे।
इन्ह सम कोउ न भयेउ जग माहीं। है नहिं कतहूँ होनेउ नाहीं।
हम सब सकल सुकृत कै रासी। भए जग जनमि जनक-पुर-वासी।
जिन्ह जानकी-राम-छवि देखी। को सुकृती हम सरिस बिसेखी।
पुनि देखब रघुवीर-बियाहू। लेब भली बिधि लोचन लाहू।
कहहिं परसपर कोकिलबयनी। एहि बिआह बड़ लाभ सुनयनी।
बड़े भाग बिधि बात बनाई। नयनअतिथि होइहहिं दोउ भाई।
दो०—बारहिं बार सनेहबस जनक बोलाउब सीय।
लेन आइहहिं बंधु दोउ कोटि-काम-कमनीय ॥ ३४२ ॥
चौ०-बिबिध भाँति होइहि पहुनाई। प्रिय न काहि अस सासुर माई।
तब तब राम-लषनहिं निहारी। होइहहिं सब पुरलोग सुखारी।
सखि जस राम लषन कर जोटा। तैसइ भूप संग दुइ ढोटा।
स्याम गौर सब अंग सुहाए। ते सब कहहिं देखि जे आए।
कहा एक मैं आजु निहारे। जनु बिरंचि निज हाथ सवाँरे।
भरतु रामही की अनुहारी। सहसा लखि न सकहिं नरनारी।
लषनु सत्रुसूदनु एकरूपा। नख सिख तें सब अंग अनूपा।
मन भावहिं मुख बरनि न जाहीं। उपमा कहुँ त्रिभुवन कोउ नाहीं।
छंद—उपमा न कोउ कह दास तुलसी कतहुँ कबि कोबिद कहैं।
बल-बिनय-बिद्या-सील-सोभा-सिंधु इन्ह से एइ अहैं ॥
पुरनारि सकल पसारि अंचल बिधिहि बचन सुनावहीं।
ब्याहिअहु चारिउ भाइ एहि पुर हम सुमंगल गावहीं ॥
सो०—कहहिं परस्पर नारि बारिबिलोचन पुलकतन।
सखि सब करब पुरारि पुन्य-पयोनिधि भूप दोउ ॥ ३४३ ॥
चौ०-एहि बिधि सकल मनोरथ करहीं। आनँद उमगि उमगि उर भरहीं।

जे नृप सीयस्वयंबर आए। देखि बंधु सब तिन्ह सुख पाए।
कहत रामजसु बिसद बिसाला। निज निज भवन गए महिपाला।
गए बीति कछु दिन एहि भाँती। प्रमुदित पुरजन सकल बराती।
मंगलमूल लगनदिनु आवा। हिमरितु अगहनमासु सुहावा।
ग्रह तिथि नखतु जोगु बर बारू। लगन सोधि बिधि कीन्ह बिचारू।
पठै दीन्हि नारद सन सोई। गनी जनक के गनकन्ह जोई।
सुनी सकल लोगन यह बाता। कहहिं जोतिषी आहि बिधाता।

दो०—धेनु-धूलि-बेला बिमल सकल-सुमंगल-मूल।
बिप्रन्ह कहेउ बिदेह सन जानि सगुन अनुकूल॥ ३४४॥

चौ०—उपरोहितहि कहेउ नरनाहा। अब बिलंब कर कारन काहा।
सतानंद तब सचिव बोलाए। मंगल सकल साजि सब ल्याए।
संख निसान पनव बहु बाजे। मंगलकलस सगुन सुभ साजे।
सुभग सुआसिनि गावहिं गीता। करहिं बेदधुनि बिप्र पुनीता।
लेन चले सादर एहि भाँती। गए जहाँ जनवास बराती।
कोसलपति कर देखि समाजू। अति लघु लाग तिन्हहिं सुरराजू।
भयेउ समउ अब धारिअ पाऊ। यह सुनि परा निसानहि घाऊ।
गुरहि पूँछि करि कुलबिधि राजा। चले संग मुनि-साधु-समाजा।

दो०—भाग्यबिभव अवधेस कर देखि देव ब्रह्मादि।
लगे सराहन सहसमुख जानि जनम निज बादि॥ ३४५॥

चौ०-सुरन्ह सुमंगल अवसर जाना। बरपहिं सुमन बजाइ निसाना।
सिव ब्रह्मादिक बिबुध बरूथा। चढ़े बिमानन्हि नाना जूथा।
प्रेम-पुलक-तन हृदय उछाहू। चले बिलोकन रामबिआहू।
देखि जनकपुर सुर अनुरागे। निज निज लोक सबहि लघु लागे।
चितवहिं चकित बिचित्र बिताना। रचना सकल अलौकिक नाना।
नगर-नारि-नर रूपनिधाना। सुघर सुधरम सुसील सुजाना।
तिन्हहिं देखि सब सुर-सुरनारी। भए नखत जनु बिधु उँजियारी।
बिधिहि भयेउ आचरजु बिसेखी। निज करनी कछु कतहुँ न देखी।

दो०—सिव समुझाए देव सब जनि आचरज भुलाहु।
हृदय बिचारहु धीर धरि सिय-रघुबीर-बिआहु ॥ ३४६ ॥

चौ०-जिन्ह कर नामु लेत जग माहीं। सकल-अमंगल - मूल नसाहीं।
करतल होहिं पदारथ चारी। तेइ सिय रामु कहेउ कामारी।
एहि बिधि संभु सुरन्ह समुझावा। पुनि आगे बरबसहु चलावा।
देवन्ह देखे दसरथु जाता। महामोदु मन पुलकित गाता।
साधु समाजु संग महिदेवा। जनु तनु धरे करहिं सुख सेवा।
सोहत साथ सुभग सुत चारी। जनु अपबरग सकल तनुधारी।
मरकत-कनक-बरन बर जोरी। देखि सुरन्ह भै प्रीति न थोरी।
पुनि रामहिं बिलोकि हिय हरषे। नृपहि सराहि सुमन तिन्ह बरषे।

दो०—रामरूप नख-सिख-सुभग बारहिं बार निहारि।
पुलक गात लोचन सजल उमासमेत पुरारि ॥ ३४७ ॥

चौ०-केकि-कंठ-दुति स्यामल अंगा। तड़ितबिनिंदक बसन सुरंगा।
ब्याहबिभूषन बिबिध बनाए। मंगलमय सब भाँति सुहाए।
सरद-बिमल-बिधु-बदन सुहावन। नयन नवल - राजीव - लजावन।
सकल अलौकिक सुंदरताई। कहि न जाइ मनही मन भाई।
बंधु मनोहर सोहहिं संगा। जात नचावत चपल तुरंगा।
राजकुँअर बरबाजि देखावहिं। बंसप्रसंसक बिरद सुनावहिं।
जेहि तुरंग पर रामु बिराजे। गति बिलोकि खगनायकु लाजे।
कहि न जाइ सब भाँति सुहावा। बाजिबेषु जनु काम बनावा।

छंद—जनु बाजिबेषु बनाइ मनसिजु रामहित अति सोहई।
आपने बय बल रूप गुन गति सकल भुवन बिमोहई ॥
जगमगत जीन जराव जोति सुमोति मनि मानिक लगे।
किंकिनि ललामु ललित बिलोकि सुर नर मुनि ठगे ॥

दो०—प्रभुमनसहिं लयलीन मनु चलत बाजि छबि पाव।
भूषित उडुगन तड़ितघन जनु बर बरहि नचाव ॥ ३४८ ॥

चौ०-जेहि बरबाजि रामु असवारा। तेहि सारदहु न बरनै पारा।

संकरु राम–रूप– अनुरागे। नयन पंचदस अति प्रिय लागे।
हरि हितसहित रामु जब जोहे। रमासमेत रमापति मोहे।
निरखि रामछबि बिधि हरषाने। आठै नयन जानि पछिताने।
सुर-सेनप-उर बहुत उछाहू। बिधि तें डेवढ़ सु-लोचन-लाहू।
रामहिं चितव सुरेस सुजाना। गौतमस्रापु परम हित माना।
देव सकल सुरपतिहिं सिहाहीं। आजु पुरंदर सम कोउ नाहीं।
मुदित देवगन रामहिं देखी। नृपसमाज दुहुँ हरष बिसेखी।
छंद—अति हरष राजसमाजु दुहुँ दिसि दुंदुभी बाजहिं घनी।
बरषहिं सुमन सुर हरषि कहि जय जयति जय रघु-कुल-मनी॥
एहि भाँति जानि बरात आवत बाजने बहु बाजहीं।
रानी सुआसिनि बोलि परिछनि हेतु मंगल साजहीं॥
दो०—सजि आरती अनेक बिधि मंगल सकल सवाँरि।
चलीं मुदित परिछनि करन गजगामिनि बर नारि॥३४९॥
चौ०-बिधुबदनी सब सब मृगलोचनि। सब निज-तन-छबि रति-मद-मोचनि।
पहिरे बरन बरन बर चीरा। सकल बिभूषन सजे सरीरा।
सकल सुमंगल अंग बनाए। करहिं गान कलकंठ लजाए।
कंकन किंकिनि नूपुर बाजहिं। चाल बिलोकि काम गज लाजहिं।
बाजहिं बाजन बिबिध प्रकारा। नभ अरु नगर सुमंगल चारा।
सची सारदा रमा भवानी। जे सुरतिय सुचि सहज सयानी।
कपट–नारि–बर–बेष बनाई। मिलीं सकल रनिवासहिं जाई।
करहिं गान कल मंगल बानी। हरष बिबस सब काहु न जानी।
छंद—को जान केहि आनंद बस सब ब्रह्म बर परिछन चलीं।
कलगान मधुर निसान बरषहिं सुमन सुर सोभा भलीं॥
आनंदकंद बिलोकि दूलह सकल हिय हरषित भईं।
अंभोज-अंबक-अंबु उमगि सुअंग पुलकावलि छईं॥
दो०—जो सुख भा सिय-मातु-मन देखि राम-बर-बेष।
सो न सकहिं कहि कलप-सत सहस सारदा सेष॥३५०॥

चौ०-नयन नीर हटि मंगल जानी। परिछन करहिं मुदित मन रानी।
बेदविहित अरु कुल आचारू। कीन्ह भली बिधि सब ब्यवहारू।
पंच सबद सुनि मंगल नाना। पट पाँवड़े परहिं बिधि नाना।
करि आरती अरघ तिन्ह दीन्हा। राम गवनु मंडप तब कीन्हा।
दसरथ सहित समाज बिराजे। बिभव बिलोकि लोकपति लाजे।
समय समय सुर बरषहिं फूला। सांति पढ़हिं महिसुर अनुकूला।
नभ अरु नगर कोलाहल होई। आपन पर कछु सुनै न कोई।
एहि बिधि राम मंडपहिं आए। अरघु देइ आसन बैठाए।

छंद—बैठारि आसन आरती करि निरखि बरु सुख पावहीं।
मनि बसन भूषन भूरि वारहिं नारि मंगल गावहीं॥
ब्रह्मादि सुरबर बिप्रबेष बनाइ कौतुक देखहीं।
अवलोकि रघु-कुल-कमल-रबि-छबि सुफल जीवन लेखहीं॥

दो०—नाऊ बारी भाट नट रामनिछावरि पाइ।
मुदित असीसहिं नाइ सिर हरषु न हृदय समाइ॥ ३५१॥

चौ०-मिले जनकु दसरथु अति प्रीती। करि बैदिक लौकिक सब रीती।
मिलत महा दोउ राज बिराजे। उपमा खोजि खोजि कबि लाजे।
लही न कतहुँ हारि हिय मानी। इन्ह सम एइ उपमा उर आनी।
सामध देखि देव अनुरागे। सुमन बरषि जसु गावन लागे।
जगु बिरंचि उपजावा जब तें। देखे सुने ब्याह बहु तब तें।
सकल भाँति सम साज समाजू। सम समधी देखे हम आजू।
देवगिरा सुनि सुंदरि साँची। प्रीति अलौकिक दुहुँ दिसि माँची।
देत पाँवड़े अरघु सुहाए। सादर जनकु मंडपहिं ल्याए।

छंद—मंडप बिलोकि बिचित्र रचना रुचिरता मुनिमन हरे।
निज पानि जनक सुजान सब कहुँ आनि सिंहासन धरे॥
कुल-इष्ट-सरिस बसिष्ठ पूजे बिनय करि आसिष लही।
कौसिकहिं पूजत परम प्रीति कि रीति तौ न परै कही॥

दो०—बामदेव आदिक रिषय पूजे मुदित महीस।
दिए दिव्य आसन सबहि सब सन लही असीस ॥ ३५२ ॥

चौ०-बहुरि कीन्ह कोसलपति पूजा। जानि ईससम भाव न दूजा॥
कीन्हि जोरि कर बिनय बड़ाई। कहि निज भाग्य बिभव बहुताई॥
पूजे भूपति सकल बराती। समधी सम सादर सब भाँती॥
आसन उचित दिए सब काहू। कहौं कहा मुख एक उछाहू॥
सकल बरात जनक सनमानी। दान मान बिनती बर बानी॥
बिधि हरि हर दिसिपति दिनराऊ। जे जानहिं रघु-बीर-प्रभाऊ॥
कपट – बिप्र – बर – बेषु बनाए। कौतुक देखहिं अति सचु पाए॥
पूजे जनक देवसम जाने। दिए सुआसन बिनु पहिचाने॥

छंद—पहिचानि को केहि जान सबहि अपान सुधि भोरी भई।
आनंदकंदु बिलोकि दूलहु उभय दिसि आनँदमई॥
सुर लखे राम सुजान पूजे मानसिक आसन दए।
अवलोकि सीलु सुभाउ प्रभु को बिबुधमन प्रमुदित भए॥

दो०—रामचंद्र-मुख-चंद्र – छबि लोचन चारु चकोर।
करत पान सादर सकल प्रेम प्रमोद न थोर ॥ ३५३ ॥

चौ०-समउ बिलोकि बसिष्ठ बुलाए। सादर सतानंद सुनि आए॥
बेगि कुअँरि अब आनहु जाई। चले मुदित मुनि आयसु पाई॥
रानी सुनि उपरोहित बानी। प्रमुदित सखिन्ह समेत सयानी॥
बिप्रबधू कुलबृद्ध बोलाई। करि कुलरीति सुमंगल गाई॥
नारिबेष जे सुर-बर – बामा। सकल सुभाय सुंदरी स्यामा॥
तिन्हहि देखि सुख पावहिं नारी। बिनु पहिचानि प्रान तें प्यारी॥
बार बार सनमानहिं रानी। उमा-रमा-सारद-सम जानी॥
सीय सवाँरि समाज बनाई। मुदित मंडपहिं चलीं लवाई॥

छंद—चलि ल्याइ सीतहि सखी सादर सजि सुमंगल भामिनी।
नवसप्त साजे सुंदरी सब मत्त – कुंजर-गामिनी॥

फलगान सुनि मुनि ध्यान त्यागहिं काम कोकिल लाजहीं।
मंजीर नूपुर कलित कंकन तालगति बर बाजहीं॥

दो०—सोहति बनितावृंद महुँ सहज सुहावनि सीय।
छबि-ललना-गन मध्य जनु सुखमातिय कमनीय॥ ३५४॥

चौ०—सिय सुंदरता बरनि न जाई। लघु मति बहुत मनोहरताई।
आवत दीखि बरातिन्ह सीता। रूपरासि सब भाँति पुनीता।
सबहिं मनहिं मन किए प्रनामा। देखि राम भए पूरनकामा।
हरषे दसरथ सुतन्ह समेता। कहि न जाइ उर आनँद जेता।
सुर प्रनामु करि बरिसहिं फूला। मुनि-असीस-धुनि मंगलमूला।
गान-निसान-कोलाहलु भारी। प्रेम-प्रमोद-मगन नर नारी।
एहि बिधि सीय मंडपहिं आई। प्रमुदित सांति पढ़हिं मुनिराई।
तेहि अवसर कर बिधि ब्यवहारू। दुहुँ कुलगुर सब कीन्ह अचारू।

छंद—आचार करि गुरु गौरि गनपति मुदित बिप्र पुजावहीं।
सुर प्रगटि पूजा लेहिं देहिं असीस अति सुखु पावहीं॥
मधुपर्क मंगलद्रव्य जो जेहि समय मुनि मन महुँ चहैं।
भरे कनकोपर कलस सो तब लिए परिचारक रहैं॥
कुलरीति प्रीतिसमेत रबि कहि देत सबु सादर किए।
एहि भाँति देव पुजाइ सीतहि सुभग सिंघासन दिए॥
सिय-राम-अवलोकनि परसपर प्रेमु काहु न लखि परै।
मन-बुद्धि-बरबानी-अगोचर प्रगट कबि कैसे करै॥

दो०—होम समय तनु धरि अनलु अति सुख आहुति लेहिं।
बिप्रबेष धरि बेद सब कहि बिबाहबिधि देहिं॥ ३५५॥

चौ०—जनक-पाट-महिषी जग जानी। सीयमातु किमि जाइ बखानी।
सुजसु सुकृतु सुखु सुंदरताई। सब समेटि बिधि रची बनाई।
समउ जानि मुनिबरन्ह बोलाई। सुनत सुआसिनि सादर ल्याई।
जनक-बाम-दिसि सोह सुनयना। हिमगिरि संग बनी जनु मयना।
कनककलस मनिकोपर रूरे। सुचि-सुगंध-मंगल-जल-पूरे।

निज कर मुदित राय अरु रानी। धरे राम के आगे आनी।
पढ़हिं वेद मुनि मंगलबानी। गगन सुमन झरि अवसर जानी।
वर बिलोक दंपति अनुरागे। पाय पुनीत पखारन लागे।
छंद—लागे पखारन्ह पायपंकज प्रेम तनु पुलकावली।
नभ नगर गान-निसान-जय-धुनि उमगि जनु चहुँ दिसि चली॥
जे पदसरोज मनोज-अरि-उर-सर सदैव विराजहीं।
जे सुकृत सुमिरत विमलता मन सकल कलिमल भाजहीं॥
जे परसि मुनिवनिता लही गति रही जो पातकमई।
मकरंद जिन्ह को संभुसिर सुचिताअवध सुर वरनई॥
करि मधुप मुनि मन जोगिजन जे सेइ अभिमत गति लहैं।
ते पद पखारत भाग्यभाजन जनक जय जय सब कहैं।
वर-कुअँरि-करतल जोरि साखोच्चार दोउ कुलगुर करैं।
भयो पानिगहन बिलोकि विधि सुर मनुज मुनि आनँद भरैं॥
सुखमूल दूलह देखि दंपति पुलक तनु हुलस्यौ हियो।
करि लोक-वेद-विधानु कन्यादानु नृपभूपन कियो॥
हिमवंत जिमि गिरिजा महेसहि हरिहि श्री सागर दई।
तिमि जनक रामहि सिय समरपी विस्व कल कीरति नई॥
क्यों करै विनय विदेह कियो विदेह मूरति सावँरी।
करि होम विधिवत गाँठि जोरी होन लागी भावँरी॥
दो०—जयधुनि वंदी-वेद-धुनि मंगलगान निसान।
सुनि हरपहिं बरपहिं विबुध सुर-तरु-सुमन सुजान॥ ३५६॥
चौ०-कुअँर कुअँरि कल भावँरि देहीं। नयनलाभु सब सादर लेहीं।
[जाइ न वरनि मनोहर जोरी। जो उपमा कछु कहउँ सो थोरी।
राम सीय सुंदर प्रतिछाहीं। जगमगाति मनि खंभन्ह माहीं॥*।]
मनहुँ मदन रति धरि बहु रूपा। देखत रामबिआहु अनूपा।

* कोष्टक के भीतर की चौपाइयाँ काशि० प्रति में नहीं हैं। अयो० प्रति में हैं।

दरसलालसा सकुच न थोरी। प्रगटत दुरत बहोरि बहोरी।
भए मगन सब देखनिहारे। जनक समान अपान बिसारे।
प्रमुदित मुनिन्ह भावँरी फेरी। नेगसहित सब रीति निबेरी।
राम सीयसिर सेंदुर देहीं। सोभा कहि न जात बिधि केहीं।
अरुन पराग जलजु भरि नीके। ससिहि भूष अहि लोभ अमी के।
बहुरि बसिष्ठ दीन्ह अनुसासन। बर दुलहिनि बैठे एक आसन।

छंद—बैठे बरासन राम जानकि मुदित मन दसरथ भए।
तनु पुलक पुनि पुनि देखि अपने सुकृत-सुर-तरु-फल नए॥
भरि भुवन रहा उछाहु रामबिबाहु भा सबही कहा।
केहि भाँति बरनि सिरात रसना एक एहु मंगल महा॥
तब जनक पाइ बसिष्ठ आयसु ब्याहसाज सवाँरि कै।
मांडवी श्रुतिकीर्ति उर्मिला कुअँरि लईं हँकारि कै॥
कुस-केतु-कन्या प्रथम जो गुन-सील-सुख-सोभा-मई।
सब-रीति-प्रीति-समेत करि सो ब्याहि नृप भरतहि दई॥
जानकी-लघु-भगिनी सकल सुंदरि- सिरोमनि जानि कै।
सो जनक* दीन्ही ब्याहि लषनहि सकल बिधि सनमानि कै॥
जेहि नाम श्रुतिकीरति सुलोचनि सुमुखि सब गुनआगरी।
सो दई रिपुसूदनहि भूपति रूप-सील-उजागरी॥
अनरूप बर दुलहिन परसपर लखि सकुचि हिय हरषहीं।
सब मुदित सुंदरता सराहहिं सुमन सुरगन बरषहीं॥
सुंदरी सुंदर बरन्ह सह सब एक मंडप राजहीं।
जनु जीवउर चारिउ अवस्था बिभुन सहित बिराजहीं॥

दो०—मुदित अवधपति सकल सुत बधुन्ह समेत निहारि।
जनु पाए महि-पाल-मनि क्रियन्ह सहित फल चारि॥३५७॥

चौ०-जसि रघुबीर-ब्याहबिधि बरनी। सकल कुअँर ब्याहे तेहि करनी।

---

* काशि०, अयो०—तनय।

कहि न जाइ कछु दाइज भूरी। रहा कनकमनि मंडप पूरी॥
कंबल बसन बिचित्र पटारे। भाँति भाँति बहुमोल न थोरे॥
गज रथ तुरग दास अरु दासी। धेनु अलंकृत कामदुहा सी॥
बस्तु अनेक करिअ किमि लेखा। कहि न जाइ जानहिं जिन्ह देखा॥
लोकपाल अवलोक सिहाने। लीन्ह अवधपति सबु सुखु माने॥
दीन्ह जाचकन्हि जो जेहि भावा। उबरा सो जनवासहिं आवा॥
तब कर जोरि जनक मृदुबानी। बोले सब बरात सनमानी॥

छंद—सनमानि सकल बरात आदर दान बिनय बड़ाइ कै।
प्रमुदित महा मुनिबृंद बंदे पूजि प्रेम लड़ाइ कै॥
सिर नाइ देव मनाइ सब सन कहत करसंपुट किए।
सुर साधु चाहत भाव सिंधु कि तोष जलअंजलि दिए॥
कर जोरि जनक बहोरि बंधुसमेत कोसलराय सों।
बोले मनोहर बयन सानि सनेह सील सुभाय सों॥
सनबंध राजन रावरे हम बड़े अब सब बिधि भए॥
एहि राज साज समेत सेवक जानिबी बिनु गथ लए॥
ए दारिका परिचारिका करि पालबी करुनामई।
अपराधु छमिबो बोलि पठए बहुत हौं ढीठ्यो कई॥
पुनि भानु-कुल-भूषन सकल-सनमान-निधि समधी किये।
कहि जात नहिं बिनती परसपर प्रेम परिपूरन हिये॥
बृंदारकागन सुमन बरषहिं राउ जनवासहिं चले।
दुंदुभी जयधुनि बेदधुनि नभ नगर कौतूहल भले॥
तब सखी मंगलगान करत मुनीसआयसु पाइ कै।
दूलह दूलहिनिन्हि सहित सुंदरि चलीं कोहबर ल्याइ कै॥

दो०—पुनि पुनि रामहिं चितव सिय सकुचति मनु सकुचै न।
हरत मनोहर-मीन-छबि प्रेम, पिआसे नैन॥३२८॥

चौ०-स्याम सरीर सुभाय सुहावन। सोभा कोटि-मनोज-लजावन॥
जावकजुत पदकमल सुहाए। मुनि-मन-मधुप रहत जिन्ह छाए॥

पीत पुनीत मनोहर धोती। हरत बाल-रबि-दामिनि-जोती।
कल किंकिनि कटिसूत्र मनोहर। बाहु बिसाल बिभूषन सुंदर।
पीत जनेउ महाछबि देई। करमुद्रिका चोरि चितु लेई।
सोहत ब्याहसाज सब साजे। उर आयत भूषन बर * राजे।
पियर उपरना काँखा सोती। दुहुँ आँचरन्हि लगे मनि मोती।
नयन कमल कल कुंडल काना। बदनु सकल सौंदर्जनिधाना।
सुंदर भृकुटि मनोहर नासा। भालतिलकु रुचिरता निवासा।
सोहत मौर मनोहर माथे। मंगलमय मुकुतामनि गाथे।

छंद—गाथे महामनि मौर मंजुल अंग सब चित चोरहीं।
पुरनारि सुरसुंदरी बरहिं बिलोकि सब तिन तोरहीं॥
मनि बसन भूषन वारि आरति करहिं मंगल गावहीं।
सुर सुमन बरिसहिं सूत मागध बंदि सुजसु सुनावहीं॥
कोहबरहिं आने कुअँर कुअँरि सुआसिनिन्हि सुख पाइ कै।
अति प्रीति लौकिक रीति लागीं करन मंगल गाइ कै॥
लहकौरि गौरि सिखाव रामहिं सीय सन सारद कहैं।
रनिवासु हास-बिलास-रस-बस जनम को फलु सबु लहैं॥
निज-पानि-मनि महुँ देखि प्रतिमूरति सु-रूप-निधान की॥
चालति न भुजबल्ली बिलोकनि-बिरह-भय-बस जानकी।
कौतुक बिनोदु प्रमोदु प्रेमु न जाइ कहि जानहिं अली।
बर कुअँरि सुंदर सकल सखी लवाइ जनवासहिं चली॥
तेहि समय सुनिअ असीस जहँ तहँ नगर नभ आनँद महा।
चिरजिअहु जोरी चारु चार्‌यो मुदित मन सबही कहा॥
जोगींद्र सिद्ध मुनीस देव बिलोकि प्रभु दुंदुभि हनी।
चले हरषि बरषि प्रसून निज निज लोक जय जय जय भनी॥

दो०—सहित बधूटिन्ह कुअँर सब तब आए पितु पास।
सोभा मंगल मोद भरि उमगेउ जनु जनवास॥ ३५६॥

* काशि० अयो०—उर।

चौ०-पुनि जेवनार भई बहु भाँती। पठए जनक बोलाइ बराती।
परत पाँवड़े बसन अनूपा। सुतन्ह समेत गवन कियो भूपा।
सादर सब के पाय पखारे। जथाजोगु पीढ़न्ह बैठारे।
धोए जनक अवध-पति-चरना। सीलु सनेहु जाइ नहिं बरना।
बहुरि राम-पद-पंकज धोए। जे हर-हृदय-कमल महुँ गोए।
तीनिउ भाइ रामसम जानी। धोए चरन जनक निज पानी।
आसन उचित सबहि नृप दीन्हे। बोलि सूपकारी सब लीन्हे।
सादर लगे परन-पनवारे। कनककील मनिपान सवाँरे।

दो०—सूपोदन सुरभी सरपि सुंदर स्वादु पुनीत।
छन महुँ सब के परुसि गे चतुर सुआर बिनीत ॥ ३६० ॥

चौ०-पंच-कवलि करि जेवन लागे। गारि-गान सुनि अति अनुरागे।
भाँति अनेक परे पकवाने। सुधासरिस नहिं जाहिं बखाने।
परुसन लगे सुआर सुजाना। बिंजन बिबिध, नाम को जाना।
चारि भाँति भोजन बिधि गाई। एक एक बिधि बरनि न जाई।
छ रस रुचिर बिंजन बहु जाती। एक एक रस अगनित भाँती।
जेंवत देहिं मधुर धुनि गारी। लै लै नाम पुरुष अरु नारी।
समय-सुहावनि गारि बिराजा। हँसत राउ सुनि सहित समाजा।
एहि बिधि सबही भोजनु कीन्हा। आदरसहित आचमनु दीन्हा।

दो०—देइ पान पूजे जनक दसरथु सहित समाज।
जनवासेहि गवने मुदित सकल-भूप-सिरताज ॥ ३६१ ॥

चौ०-नित नूतन मंगल पुर माहीं। निमिष सरिस दिन जामिनि जाहीं।
बड़े भोर भू-पति-मनि जागे। जाचक गुनगन गावन लागे।
देखि कुअँर बर बधुन्ह समेता। किमि कहि जात मोदु मन जेता।
प्रातक्रिया करि गे गुरु पाहीं। महाप्रमोदु प्रेमु मन माहीं।
करि प्रनामु पूजा कर जोरी। बोले गिरा अमिअ जनु बोरी।
तुम्हरी कृपा सुनहु मुनिराजा। भयेउँ आजु मैं पूरनकाजा।
अब सब बिप्र बोलाइ गोसाईं। देहु धेनु सब भाँति बनाई।

सुनि गुरु करि महिपाल बड़ाई। पुनि पठए मुनिबृंद बोलाई।

दो०—बामदेव अरु देवरिषि बालमीक जाबालि।

आए मुनि-बर-निकर तब कौसिकादि तपसालि ॥ ३६२ ॥

चौ०-दंड प्रनाम सबहि नृप कीन्हे। पूजि सप्रेम बरासन दीन्हे।
चारि लच्छ बर धेनु मँगाई। काम-सुरभि-सम सील सुहाई।
सब बिधि सकल अलंकृत कीन्ही। मुदित महिप महिदेवन्ह दीन्ही।
करत बिनय बहु बिधि नरनाहू। लहेउँ आजु जग जीवनलाहू।
पाइ असीस महीसु अनंदा। लिए बोलि पुनि जाचक-बृंदा।
कनक बसन मनि हय गज स्यंदन। दिए बूझि रुचि रबि-कुल-नंदन।
चले पढ़त गावत गुनगाथा। जय जय जय दिन-कर-कुल-नाथा।
एहि बिधि राम-बिआह-उछाहू। सकै न बरनि सहसमुख जाहू।

दो०—बार बार कौसिकचरन सीसु नाइ कह राउ।

यह सबु सुखु मुनिराज तव कृपा-कटाच्छ-प्रभाउ* ॥ ३६३ ॥

चौ०-जनक सनेहु सीलु करतूती। नृपु सब भाँति सराह बिभूती।
दिन उठि बिदा अवधपति माँगा। राखहिं जनकु सहित अनुरागा।
नित नूतन आदरु अधिकाई। दिनप्रति सहस भाँति पहुनाई।
नित नव नगर अनंद उछाहू। दसरथ गवनु सुहाइ न काहू।
बहुत दिवस बीते एहि भाँती। जनु सनेहरजु बँधे बराती।
कौसिक सतानंद तब जाई। कहा बिदेह नृपहि समुझाई।
अब दसरथ कहँ आयसु देहू। जद्यपि छाँड़ि न सकहु सनेहू।
भलेहि नाथ कहि सचिव बुलाए। कहि जयजीव सीस तिन्ह नाए।

दो०—अवधनाथु चाहत चलन भीतर करहु जनाउ।

भए प्रेमबस सचिव मुनि बिप्र सभासद राउ ॥ ३६४ ॥

चौ०-पुरबासी सुनि चलिहि बराता। बूझत बिकल परसपर बाता।
सत्य गवनु सुनि सब बिलखाने। मनहुँ साँझ सरसिज सकुचाने।

---

* अयो०—पसाउ।

जहँ जहँ आवत बसे बराती। तहँ तहँ सिद्ध* चला बहु भाँती।
बिबिधि भाँति मेवा पकवाना। भोजनसाजु न जाइ बखाना।
भरि भरि बसह† अपार कहारा। पठई जनक अनेक सुसारा।
तुरग लाख रथ सहस पचीसा। सकल सवाँरे नख अरु सीसा।
मत्त सहस दस सिंधुर साजे। जिन्हहिं देखि दिसिकुंजर लाजे।
कनक बसन मनि भरि भरि जाना। महिषी धेनु बस्तु बिधि नाना।

दो०—दाइज अमित न सकिअ कहि दीन्ह बिदेह बहोरि।
जो अवलोकत लोकपति-लोक-संपदा थोरि ॥३६५॥

चौ०-सबु समाजु एहि भाँति बनाई। जनक अवधपुर दीन्ह पठाई।
चलिहि बरात सुनत सब रानी। बिकल-मीनगन जनु लघु पानी।
पुनि पुनि सीय गोद करि लेहीं। देई असीस सिखावनु देहीं।
होयेहु संतत पियहि पियारी। चिरु अहिवात असीस हमारी।
सासु-ससुर-गुरु-सेवा करेहू। पतिरुख लखि आयसु अनुसरेहू।
अति-सनेह-बस सखीं सयानी। नारिधरमु सिखवहिं मृदु बानी।
सादर सकल कुआँरि समुझाई। रानिन्ह बार बार उर लाई।
बहुरि बहुरि भेटहिं महतारी। कहहिं बिरंचि रची कत नारी।

दो०—तेहि अवसर भाइन्ह सहित रामु भानु-कुल-केतु।
चले जनकमंदिर मुदित बिदा करावन हेतु ॥ ३६६ ॥

चौ०-चारिउ भाइ सुभाय सुहाए। नगर-नारि-नर देखन धाए।
कोउ कह चलन चहत हहिं आजू। कीन्ह बिदेह बिदा कर साजू।
लेहु नयन भरि रूप निहारी। प्रिय पाहुने भूप सुत चारी।
को जानै केहि सुकृत सयानी। नयनअतिथि कीन्हें बिधि आनी।
मरनसीलु जिमि पाव पियूषा। सुरतरु लहै जनम कर भूखा।
पाव नारकी हरिपदु जैसे। इन्ह कर दरसनु हम कहँ तैसे।

* सिद्ध = सीधा अर्थात् चावल आदि कच्चा अन्न।
† बसह = वृषभ, बैल।

निरखि रामसोभा उर धरहू। निज-मन-फनि-मूरति-मनि करहू।
एहि विधि सबहि नयनफलु देता। गए कुअँर सब राजनिकेता।

दो०—रूपसिंधु सब बंधु लखि हरषि उठेउ रनिवासु।
करहिं निछावरि आरती महा मुदितमन सासु॥ ३६७॥

चौ०-देखि रामछवि अति अनुरागीं। प्रेम-बिबस पुनि पुनि पद लागीं।
रही न लाज, प्रीति उर छाई। सहज सनेह बरनि किमि जाई।
भाइन्ह सहित उबटि अन्हवाए। छरस असन अति हेतु जेंवाए।
बोले रामु सुअवसर जानी। सील-सनेह-सकुच-मय बानी।
राउ अवधपुर चहत सिधाए। बिदा होन हम इहाँ पठाए।
मातु मुदित मन आयसु देहू। बालक जानि करब नित नेहू।
सुनत बचन बिलखेउ रनिवासू। बोलि न सकहिं प्रेम-बस सासू।
हृदय लगाइ कुअँरि सब लीन्हीं। पतिन्ह सौंपि बिनती अति कीन्हीं।

छंद—करि बिनय सिय रामहि समरपी जोरि कर पुनि पुनि कहै।
बलि जाउँ तात सुजान तुम्ह कहँ बिदित गति सब की अहै॥
परिवार पुरजन मोहि राजहि प्रानप्रिय सिय जानिबी।
तुलसी सुसील सनेह लखि निज किंकरी करि मानिबी॥

सो०—तुम्ह परिपूरनकाम जान-सिरोमनि भाव-प्रिय।
जन-गुन-गाहक राम दोष-दलन करुनायतन॥ ३६८॥

चौ०-अस कहि रही चरन गहि रानी। प्रेमपंक जनु गिरा समानी।
सुनि सनेहसानी बर बानी। बहु बिधि राम सासु सनमानी।
राम बिदा माँगा कर जोरी। कीन्ह प्रनाम बहोरि बहोरी।
पाइ असीस बहुरि सिरु नाई। भाइन्ह सहित चले रघुराई।
मंजु मधुर मूरति उर आनी। भईं सनेह-सिथिल सब रानी।
पुनि धीरज धरि कुअँरि हँकारी। बार बार भेटहिं महतारी।
पहुँचावहिं फिरि मिलहिं बहोरी। बढ़ी परसपर प्रीति न थोरी।
पुनि पुनि मिलति सखिन्ह बिलगाई। बाल बच्छ जिमि धेनु लवाई।

दो०—प्रेम-बिबस नरनारि सब सखिन्ह सहित रनिवास।
मानहुँ कीन्ह बिदेहपुर करुना-बिरह-निवास ॥३६९॥
चौ०—सुक सारिका जानकी ज्याए। कनक पिंजरन्हि राखि पढ़ाए।
ब्याकुल कहहिं कहाँ बैदेही। सुनि धीरजु परिहरै न केही।
भए बिकल खग मृग एहि भाँती। मनुजदसा कैसें कहि जाती।
बंधुसमेत जनकु तब आए। प्रेम उमगि लोचन जल छाए।
सीय बिलोकि धीरता भागी। रहे कहावत परम बिरागी।
लीन्हि राय उर लाइ जानकी। मिटी महामरजाद ग्यान की।
समुझावत सब सचिव सयाने। कीन्ह बिचारु अनवसरु जाने।
बारहिं बार सुता उर लाई। सजि सुंदरि पालकी मँगाई।
दो०—प्रेम-बिबस परिवार सबु जानि सुलगन नरेस।
कुअँरि चढ़ाई पालकिन्ह सुमिरे सिद्ध गनेस ॥ ३७० ॥
चौ०—बहु बिधि भूप सुता समुझाई। नारि धरमु कुलरीति सिखाई।
दासी दास दिए बहुतेरे। सुचि सेवक जे प्रिय सिय केरे।
सीय चलत ब्याकुल पुरबासी। होहिं सगुन सुभ मंगलरासी।
भूसुर सचिव समेत समाजा। संग चले पहुँचावन राजा।
दसरथ बिप्र बोलि सब लीन्हे। दान मान परिपूरन कीन्हे।
चरन-सरोज-धूरि धरि सीसा। मुदित महीपति पाइ असीसा।
सुमिरि गजाननु कीन्ह पयाना। मंगलमूल सगुन भए नाना।
दो०—सुर प्रसून बरषहिं हरषि करहिं अपछरा गान।
चले अवधपति अवधपुर मुदित बजाइ निसान ॥ ३७१ ॥
चौ०—नृप करि बिनय महाजन फेरे। सादर सकल माँगने टेरे।
भूषन बसन बाजि गज दीन्हे। प्रेम पोषि ठाढ़े सब कीन्हे।
बार बार बिरदावलि भाखी। फिरे सकल रामहिं उर राखी।
बहुरि बहुरि कोसलपति कहहीं। जनकु प्रेमबस फिरै न चहहीं।
पुनि कह भूपति बचन सुहाए। फिरिअ महीस दूरि बड़ि आए।
राउ बहोरि उतरि भए ठाढ़े। प्रेमप्रबाह बिलोचन बाढ़े।

तब बिदेहु बोले कर जोरी। बचन सनेहसुधा जनु बोरी।
करौं कवन बिधि बिनय बनाई। महाराज मोहि दीन्हि बड़ाई।
दो०—कोसलपति समधी सजन सनमाने सब भाँति।
मिलनि परसपर बिनय अति प्रीति न हृदय समाति ॥ ३७२ ॥
चौ०—मुनिमंडलिहि जनक सिरु नावा। आसिरबादु सबहि सन पावा।
सादर पुनि भेंटे जामाता। रूप-सील-गुन-निधि सब भ्राता।
जोरि पंक – रुह – पानि सुहाए। बोले बचन प्रेम जनु जाए।
राम करौं केहि भाँति प्रसंसा। मुनि-महेस-मन-मानस-हंसा।
करहिं जोग जोगी जेहि लागी। कोहु मोहु ममता मद त्यागी
ब्यापकु ब्रह्म अलखु अबिनासी। चिदानंदु निरगुन गुनरासी।
मन समेत जेहि जान न बानी। तरकि न सकहिं सकल अनुमानी।
महिमा निगम नेति कहि कहई। जो तिहुँ काल एकरस रहई।
दो०—नयनबिषय मो कहँ भयेउ सो समस्त-सुख-मूल।
सबइ लाभ जगजीव कहँ भए ईसु अनुकूल ॥ ३७३ ॥
चौ०—सबहि भाँति मोहि दीन्हि बड़ाई। निज जन जानि लीन्ह अपनाई।
होहिं सहस दस सारद सेखा। करहिं कलपकोटिक भरि लेखा।
मोर भाग्य राउर गुनगाथा। कहि न सिराहिं सुनहु रघुनाथा।
मैं कछु कहौं एक बल मोरे। तुम्ह रीझहु सनेह सुठि थोरे।
बार बार माँगौं कर जोरें। मनु परिहरै चरन जनि मोरें।
सुनि बर बचन प्रेम जनु पोषे। पूरनकाम राम परितोषे।
बिनती बहुरि भरत सन कीन्ही। मिलि सप्रेम पुनि आसिष दीन्ही।
दो०—मिले लषन रिपुसूदनहि दीन्हि असीस महीस।
भए परसपर प्रेमबस फिरि फिरि नावहिं सीस ॥ ३७४ ॥
चौ०—बार बार करि बिनय बड़ाई। रघुपति चले संग सब भाई।
जनक गहे कौसिकपद जाई। चरनरेनु सिर नयनन्ह लाई।
सुनु मुनीसबर दरसन तोरे। अगमु न कछु प्रतीति मन मोरे।
जो सुखु सुजसु लोकपति चहहीं। करत मनोरथ सकुचत अहहीं।

सो सुखु सुजसु सुलभ मोहि स्वामी। सब सिधि तव-दरसन-अनुगामी।
कीन्हि बिनय पुनि पुनि सिरु नाई। फिरे महीसु आसिषा पाई।
चली बरात निसान- बजाई। मुदित छोट बड़ सब समुदाई।
रामहि निरखि ग्राम-नर-नारी। पाइ नयनफलु होहिं सुखारी।

दो०—बीच बीच बर बास करि मगलोगन्ह सुख देत।
अवध समीप पुनीत दिन पहुँची आइ जनेत॥ ३७५॥

चौ०—हने निसान पनव बर बाजे। भेरि-संख-धुनि हय गय गाजे।
झाँझि* भेरि डिंडिमी सुहाई। सरस राग बाजहिं सहनाई।
पुरजन आवत अकनि बराता। मुदित सकल पुलकावलि गाता।
निज निज सुंदर सदन सवाँरे। हाट बाट चौहट पुर द्वारे।
गली सकल अरगजा सिंचाई। जहँ तहँ चौके चारु पुराई।
बना बजारु न जाइ बखाना। तोरन केतु पताक बिताना।
सफल पूगफल कदलि रसाला। रोपे बकुल कदंब तमाला।
लगे सुभग तरु परसत धरनी। मनिमय आलबाल कल करनी।

दो०—बिबिध भाँति मंगलकलस गृह गृह रचे सवाँरि।
सुर ब्रह्मादि सिहाहिं सब रघुबर-पुरी निहारि॥ ३७६॥

चौ०—भूपभवनु तेहि अवसर सोहा। रचना देखि मदनमनु मोहा।
मंगल सगुन मनोहरताई। रिधि सिधि सुख संपदा सुहाई।
जनु उछाह सब सहज सुहाए। तनु धरि धरि दसरथगृह आए।
देखन हेतु रामबैदेही। कहहु लालसा होहि न केही।
जूथ जूथ मिलि चलीं सुआसिनि। निज छबि निदरहिं मदनबिलासिनि।
सकल सुमंगल सजे आरती। गावहिं जनु बहुबेष भारती।
भूपतिभवन कोलाहलु होई। जाइ न बरनि समउ सुख सोई।
कौसल्यादि राममहतारी। प्रेमबिबस तनुदसा बिसारी।

दो०—दिए दान बिप्रन्ह बिपुल पूजि गनेस पुरारि।
प्रमुदित परम दरिद्र जनु पाइ पदारथ चारि॥ ३७७॥

* पाठा०—बिरव।

चौ०-मोद-प्रमोद-बिबस सब माता । चलहिं न चरन सिथिल भए गाता ।
रामदरस-हित अति अनुरागीं । परिछन साजु सजन सब लागीं ।
बिबिध बिधान बाजने बाजे । मंगल मुदित सुमित्रा साजे ।
हरद दूब दधि पल्लव फूला । पान पूगफल मंगलमूला ।
अच्छत अंकुर रोचन लाजा । मंजुल मंजरि तुलसि बिराजा ।
छुहे पुरटघट सहज सुहाए । मदन-सकुन जनु नीड़ बनाए ।
सगुन सुगंध न जाहिं बखानी । मंगल सकल सजहिं सब रानी ।
रची आरती बहुत बिधाना । मुदित करहिं कल मंगल गाना ।

दो०—कनकथार भरि मंगलन्हि कमल-करन्हि लिये मात ।
चलीं मुदित परिछनि करन पुलकपल्लवित गात ॥ ३७८ ॥

चौ०-धूपधूम नभु मेचकु भयेऊ । सावन घनघमंड जनु ठयेऊ ।
सुरतरु-सुमन-माल सुर बरषहिं । मनहुँ बलाक-अवलि मनु करषहिं ।
मंजुल मनिमय बंदनवारे । मनहुँ पाक-रिपु*-चाप सवाँरे ।
प्रगटहिं दुरहिं अटन्ह पर भामिनि । चारु चपल जनु दमकहिं दामिनि ।
दुंदुभिधुनि घनगरजनि घोरा । जाचक चातक दादुर मोरा ।
सुर सुगंध सुचि बरषहिं बारी । सुखी सकल ससि† पुर-नर-नारी ।
समउ जानि गुरु आयसु दीन्हा । पुर-प्रबेस रघु-कुल-मनि कीन्हा ।
सुमिरि संभु गिरिजा गनराजा । मुदित महीपति सहित समाजा ।

दो०—होहिं सगुन बरषहिं सुमन सुर दुंदुभी बजाइ ।
बिबुधबधू नाचहिं मुदित मंजुल मंगल गाइ ॥ ३७९ ॥

चौ०-मागध सूत बंदि नट नागर । गावहिं जसु तिहुँ लोक उजागर ।
जयधुनि बिमल बेद-बर-बानी । दस दिसि सुनिअ सु-मंगल-सानी ।
बिपुल बाजने बाजन लागे । नभ सुर नगर लोग अनुरागे ।
बने बराती बरनि न जाहीं । महामुदित मन, सुख न समाहीं ।
पुरबासिन्ह तब राय जोहारे । देखत रामहिं भए सुखारे ।

* पाकरिपु = इंद्र । † ससि = सस्य = धान ।

करहिं निछावरि मनिगन चीरा। वारि विलोचन, पुलक सरीरा।
आरति करहिं मुदित पुरनारी। हरषहिं निरखि कुअँर वर चारी।
सिविका सुभग ओहार उघारी। देखि दुलहिनिन्ह होहिं सुखारी।

दो०—एहि विधि सबही देत सुखु आए राजदुआर।
मुदित मातु परिछनि करहिं वधुन्ह समेत कुमार॥ ३८०॥

चौ०-करहिं आरती वारहिं वारा। प्रेमु प्रमोदु कहै को पारा।
भूषन मनि पट नाना जाती। करहिं निछावरि अगनित भाँती।
वधुन्ह समेत देखि सुत चारी। परमानंदमगन महतारी।
पुनि पुनि सीय-राम-छवि देखी। मुदित सुफल जग-जीवनु लेखी।
सखी सीयमुखु पुनि पुनि चाही। गान करहिं निज सुकृत सराही।
बरसहिं सुमन छनहिं छन देवा। नाचहिं गावहिं लावहिं सेवा।
देखि मनोहर चारिउ जोरी। सारद उपमा सकल ढँढोरी।
देत न बनहि निपट लघु लागी। एकटक रहीं रूपअनुरागी।

दो०—निगमनीति कुलरीति करि अरघ पावँड़े देत।
वधुन्ह सहित सुत परिछि सब चलीं लवाइ निकेत॥ ३८१॥

चौ०-चारि सिंघासन सहज सुहाए। जनु मनोज निज हाथ बनाए।
तिन्ह पर कुअँरि कुअँर बैठारे। सादर पाय पुनीत पखारे।
धूप दीप नैवेद वेदविधि। पूजे वरदुलहिनि मंगलनिधि।
बारहिं वार आरती करहीं। व्यजन चारु चामर सिर ढरहीं।
बस्तु अनेक निछावरि होहीं। भरीं प्रमोद मातु सब सोहीं।
पावा परमतत्त्व जनु जोगी। अमृतु लहेउ जनु संतत रोगी।
जनमरंकु जनु पारस पावा। अंधहि लोचनलाभु सुहावा।
मूकबदन जनु सारद छाई। मानहुँ समर सूर जय पाई।

दो०—एहि सुख तें सत-कोटि-गुन पावहिं मातु अनंदु।
भाइन्ह सहित बिआहि घर आए रघु-कुल-चंदु॥ ३८२॥
लोकरीति जननी करहिं वर दुलहिनि सकुचाहिं।
मोदु विनोदु विलोकि बड़ रामु मनहिं मुसुकाहिं॥ ३८३॥

चौ०–देव पितर पूजे बिधि नीकी। पूजीं सकल बासना जी की।
सबहि बंदि माँगहिं बरदाना। भाइन्ह सहित रामकल्याना।
अंतरहित सुर आसिष देहीं। मुदित मातु अंचल भरि लेहीं।
भूपति बोलि बराती लीन्हे। जान बसन मनि भूषन दीन्हे।
आयसु पाइ राखि उर रामहिं। मुदित गए सब निज निज धामहिं।
पुर-नर-नारि सकल पहिराए। घर घर बाजन लगे बधाए।
जाचक जन जाचहिं जोइ जोई। प्रमुदित राउ देहिं सोइ सोई।
सेवक सकल बजनिआ नाना। पूरन किए दान सनमाना।
दो०—देहिं असीस जोहारि सब गावहिं गुन-गन-गाथ।
तब गुर-भूसुर-सहित गृह गवन कीन्ह नरनाथ॥ ३८४॥
चौ०–जो बसिष्ठ अनुसासन दीन्ही। लोक बेद बिधि सादर कीन्ही।
भूसुर-भीर देखि सब रानी। सादर उठीं भाग्य बड़ जानी।
पाय पखारि सकल अन्हवाए। पूजि भली बिधि भूप जेवाँए।
आदर दान प्रेम परिपोषे। देत असीस चले मन तोषे।
बहु बिधि कीन्हि गाधि-सुत-पूजा। नाथ मोहि सम धन्य न दूजा।
कीन्हि प्रसंसा भूपति भूरी। रानिन्ह सहित लीन्हि पगधूरी।
भीतर भवन दीन्ह बर बासू। मन जोगवत रह नृपरनिवासू।
पूजे गुरु-पद-कमल बहोरी। कीन्हि बिनय उर प्रीति न थोरी।
दो०—बधुन्ह समेत कुमार सब रानिन्ह सहित महीसु।
पुनि पुनि बंदत गुरचरन देत असीस मुनीसु॥ ३८५॥
चौ०–बिनय कीन्हि उर अति अनुरागे। सुत संपदा राखि नृप आगे।
नेग माँगि मुनिनायक लीन्हा। आसिरबादु बहुत बिधि दीन्हा।
उर धरि रामहिं सीयसमेता। हरषि कीन्ह गुरु गवनु निकेता।
बिप्रबधू सब भूप बोलाई। चैल चारु भूषन पहिराई।
बहुरि बोलाइ सुआसिनि लीन्ही। रुचि बिचारि पहिरावनि दीन्ही।
नेगी नेग जोग सब लेहीं। रुचि-अनुरूप भूपमनि देहीं।
प्रिय पाहुने पूज्य जे जाने। भूपति भली भाँति सनमाने।

देव देखि रघु-बीर-बियाहू। बरषि प्रसून प्रसंसि उछाहू॥

दो०—चले निसान बजाइ सुर निज निज पुर सुख पाइ।
कहत परसपर रामजस प्रेमु न हृदय समाइ॥ ३८६॥

चौ०-सब बिधि सबहि समदि* नरनाहू। रहा हृदय भरि पूरि उछाहू॥
जहँ रनिवास तहाँ पगु धारे। सहित बधूटिन्ह कुअँर निहारे॥
लिए गोद करि मोद समेता। को कहि सकै भयेउ सुख जेता॥
बधू सप्रेम गोद बैठारी। बार बार हिय हरषि दुलारी॥
देखि समाजु मुदित रनिवासू। सब के उर आनँद कियो बासू॥
कहेउ भूप जिमि भयेउ बियाहू। सुनि सुनि हरष होत सब काहू॥
जनकराज-गुन-सीलु-बड़ाई। प्रीतिरीति संपदा सुहाई॥
बहु बिधि भूप भाट जिमि बरनी। रानी सब प्रमुदित सुनि करनी॥

दो०—सुतन्ह समेत नहाइ नृप बोलि बिप्र गुर ग्याति।
भोजनु कीन्ह अनेक बिधि घरी पंच गइ राति॥ ३८७॥

चौ०-मंगलगान करहिं बर भामिनि। भइ सुखमूल मनोहर जामिनि॥
अँचै पान सब काहू पाए। स्रग-सुगंध-भूषित छबि छाए॥
रामहिं देखि रजायसु पाई। निज निज भवन चले सिर नाई॥
प्रेमु प्रमोदु बिनोदु बड़ाई। समउ समाजु मनोहरताई॥
कहि न सकहिं सत सारद सेसू। बेद बिरंचि महेस गनेसू॥
सो मैं कहौं कवन बिधि बरनी। भूमिनागु सिर धरै कि धरनी॥
नृप सब भाँति सबहि सनमानी। कहि मृदु बचन बोलाई रानी॥
बधू लरिकिनी परघर आई। राखेहु नयन-पलक की नाई॥

दो०—लरिका श्रमित उनींदबस सयन करावहु जाइ।
अस कहि गे बिश्रामगृह रामचरन चितु लाइ॥३८८॥

चौ०-भूपबचन सुनि सहज सुहाए। जँड़ित कनकमनि पलँग डसाए॥
सुभग-सुरभि-पय-फेनु समाना। कोमल कलित सुपेती नाना॥

---

* समदि = समधि = समबुद्धि से आदरकर।

उपबरहन बर बरनि न जाहीं। स्रग सुगंध मनिमंदिर माहीं।
रतन दीप सुठि चारु चँदोवा। कहत न बनइ, जान जेइ जोवा।
सेज रुचिर रचि राम उठाए। प्रेमसमेत पलँग पौढ़ाए।
अग्या पुनि पुनि भाइन्ह दीन्ही। निज निज सेज सयन तिन्ह कीन्ही।
देखि स्याम मृदु मंजुल गाता। कहहिं सप्रेम बचन सब माता।
मारग जात भयावनि भारी। केहि बिधि तात ताड़िका मारी।
दो०—घोर निसाचर बिकट भट समर गनहिं नहिं काहु।
मारे सहित सहाय किमि खल मारीच सुबाहु ॥ ३८९ ॥
चौ०-मुनिप्रसाद बलि तात तुम्हारी। ईस अनेक करवरें* टारी।
मखरखवारी करि दुहुँ भाई। गुरुप्रसाद सब बिद्या पाई।
मुनितिय तरी लगत पगधूरी। कीरति रही भुवन भरि पूरी।
कमठपीठि पबिकूट कठोरा। नृप समाज महँ सिवधनु तोरा।
बिस्व बिजय जसु जानकि पाई। आए भवन ब्याहि सब भाई।
सकल अमानुष करम तुम्हारे। केवल कौसिक कृपा सुधारे।
आजु सुफल जग जनम हमारा। देखि तात बिधुबदन तुम्हारा।
जे दिन गए तुम्हहि बिनु देखे। ते बिरंचि जनि पारहिं लेखे।
दो०—राम प्रतोषी मातु सब कहि बिनीत बर बयन।
सुमिरि संभु-गुर-बिप्र-पद किए नींदबस नयन ॥३९०॥
चौ०-नींदउ बदन सोह सुठि लोना। मनहुँ साँझ सरसीरुह सोना।
घर घर करहिं जागरन नारी। देहिं परस्पर मंगल गारी।
पुरी बिराजति राजति रजनी। रानी कहहिं बिलोकहु सजनी।
सुंदरि बधुन्ह सासु लै सोई। फनिकन्ह जनु सिर-मनि उर गोई।
प्रात पुनीत काल प्रभु जागे। अरुनचूड़ बर बोलन लागे।
बंदि मागधन्हि गुनगन गाए। पुरजन द्वार जोहारन आए।
बंदि बिप्र गुरु सुर पितु माता। पाइ असीस मुदित सब भ्राता।

* करवरें = संकट, आ पड़नेवाला संकट।

जननिन्ह सादर बदन निहारे। भूपति संग द्वार पगु धारे।
दो०—कीन्ह सौच सब सहज सुचि सरित पुनीत नहाइ।
प्रातक्रिया करि तात पहिं आए चारिउ भाइ॥३६१॥
चौ०—भूप बिलोकि लिए उर लाई। बैठे हरषि रजायसु पाई।
देखि राम सब सभा जुड़ानी। लोचन-लाभ-अवधि अनुमानी।
पुनि बसिष्ठ मुनि कौसिक आए। सुभग आसनन्हि मुनि बैठाए।
सुतन्ह समेत पूजि पद लागे। निरखि राम दोउ गुर अनुरागे।
कहहिं बसिष्ठ धरम इतिहासा। सुनहिं महीस सहित रनिवासा।
मुनिमन-अगम गाधि-सुत-करनी। मुदित बसिष्ठ बिपुल बिधि बरनी।
बोले बामदेव सब साँची। कीरति कलित लोक तिहुँ माँची।
सुनि आनंद भयेउ सब काहू। राम-लषन-उर अधिक उछाहू।
दो०—मंगल मोद उछाह नित जाहिं दिवस एहि भाँति।
उमगी अवध अनंद भरि अधिक अधिक अधिकाति॥३६२॥
चौ०—सुदिन सोधि कल कंकन छोरे। मंगल मोद बिनोद न थोरे।
नित नव सुख सुर देखि सिहाहीं। अवध जनम जाचहिं बिधि पाहीं।
बिस्वामित्र चलन नित चहहीं। राम-सनेह-बिनय-बस रहहीं।
दिन दिन सयगुन भूपतिभाऊ। देखि सराह महा-मुनि-राऊ।
माँगत बिदा राउ अनुरागे। सुतन्ह समेत ठाढ़ भे आगे।
नाथ सकल संपदा तुम्हारी। मैं सेवक समेत सुत नारी।
करब सदा लरिकन्ह पर छोहू। दरसन देत रहब मुनि मोहू।
अस कहि राउ सहित सुत रानी। परेउ चरन, मुख आव न बानी।
दीन्हि असीस बिप्र बहु भाँती। चले न प्रीति-रीति कहि जाती।
राम सप्रेम संग सब भाई। आयसु पाइ फिरे पहुँचाई।
दो०—रामरूप भूपतिभगति ब्याह उछाह अनंद।
जात सराहत मनहिं मन मुदित गाधि-कुल-चंद॥३६३॥
चौ०—बामदेव रघु-कुल-गुर ग्यानी। बहुरि गाधिसुत कथा बखानी।
सुनि मुनि सुजस मनहिं मन राऊ। बरनत आपन पुन्यप्रभाऊ।

द्वितीय सोपान

(अयोध्या कांड)

श्लोकाः

यस्याङ्के च विभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके।
भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट्॥
सोऽयं भूतिविभूषणः सुरवरः सर्वाधिपः सर्वदा।
शर्वः सर्वगतः शिवः शशिनिभः श्रीशङ्करः पातु माम्॥१॥

प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले वनवासदुःखतः।
मुखाम्बुजश्रीरघुनन्दनस्य मे सदाऽस्तु सा मञ्जुलमङ्गलप्रदा॥२॥

नीलाम्बुजश्यामलकोमलाङ्गं सीतासमारोपितवामभागम्।
पाणौ महासायकचारुचापं नमामि रामं रघुवंशनाथम्॥३॥

दो०—श्रीगुरु-चरन-सरोज-रज निज-मन-मुकुरु सुधारि।
बरनौं रघुबर-बिमल-जसु जो दायकु फलचारि॥१॥

चौ०—जब तें राम ब्याहि घर आए। नित नवमंगल मोद बधाए।
भुवन चारिदस भूधर भारी। सुकृत मेघ बरषहिं सुख बारी।

जिसकी गोद में पार्वती, मस्तक पर गंगा, ललाट पर बाल चंद, कण्ठ में हलाहल और वक्षःस्थल में नागराज सुशोभित हैं, वे भस्म से विभूषित, देवताओं में प्रधान, सबके ईश्वर, सबके अन्तर्यामी, कल्याणस्वरूप और कल्याण के करनेवाले, चंद से शुक्लवर्ण वाले श्रीमहादेव सदा मेरी रक्षा करें॥१॥

श्रीरामचन्द्रजी के मुखकमल की शोभा जो, राज्याभिषेक से प्रसन्नता को न प्राप्त हुई और न वनवास के खेद से म्लान हुई, वह सदा मेरे लिये सुन्दर मङ्गल की देनेवाली हो॥२॥

नीलकमल के सदृश श्याम और कोमल जिनके अंग हैं, श्रीसीताजी जिनके वाम भाग में सुशोभित हैं और जिनके कर में श्रेष्ठ धनुष और सुन्दर बाण हैं, उन रघुवंशियों के नाथ श्रीरामचन्द्रजी को मैं नमस्कार करता हूँ॥३॥

रिधि सिधि संपति नदी सुहाई। उमगि अवध-अंबुज कहँ आई॥
मनिगन पुर-नर-नारि-सुजाती। सुचि अमोल सुंदर सब भाँती॥
कहि न जाइ कछु नगरबिभूती। जनु एतनिअ बिरंचि करतूती॥
सब बिधि सब पुरलोग सुखारी। रामचंद-मुख-चंदु निहारी॥
मुदित मातु सब सखी सहेली। फलित बिलोकि मनोरथ-बेली॥
राम-रूप – गुन – सील-सुभाऊ। प्रमुदित होहिं देखि सुनि राऊ॥

दो०—सब के उर अभिलाषु अस कहहिं मनाइ महेसु।
आपु अछत जुवराज – पद रामहिं देउ नरेसु॥ २॥

चौ०-एक समय सब सहित समाजा। राजसभा रघुराजु बिराजा॥
सकल-सुकृत-मूरति नरनाहू। रामसुजसु सुनि अतिहि उछाहू*॥
नृप सब रहहिं कृपा अभिलाषे। लोकप करहिं प्रीतिरुख राखे॥
तिभुवन तीनिकाल जग माहीं। भूरि-भाग दसरथ सम नाहीं॥
मंगलमूल रामु सुत जासू। जो कछु कहिअ थोर सबु तासू॥
राय सुभाय मुकुरु कर लीन्हा। बदनु बिलोकि मुकुट सम कीन्हा॥
स्रवनसमीप भए सित केसा। मनहुँ जरठपनु अस उपदेसा॥
नृप जुबराजु राम कहुँ देहू। जीवन-जनम-लाहु किन लेहू॥

दो०—यह बिचारु उर आनि नृप सुदिनु सुअवसरु पाइ।
प्रेम पुलकि तन मुदित मन गुरुहिं सुनायेउ जाइ॥ ३॥

चौ०-कहै भुआलु सुनिअ मुनिनायक। भए राम सब बिधि सब लायक॥
सेवक सचिव सकल पुरबासी। जे हमार अरि मित्र उदासी॥
सबहि रामु प्रिय जेहि बिधि मोही। प्रभु-असीस जनु तनु धरि सोही॥
बिप्र सहित परिवार गोसाईं। करहिं छोहु सब रौरिहि नाईं॥
जे गुरु-चरन-रेनु सिर धरहीं। ते जनु सकल बिभव बस करहीं॥
मोहि सम यहु अनुभयेउ न दूजें। सबु पायेउँ रज पावनि पूजें॥
अब अभिलाषु एकु मन मोरें। पूजिहि नाथ अनुग्रह तोरें॥

---

* राजा० और सद० प्रति में नहीं है।

मुनि प्रसन्न लखि सहज सनेहू। कहेउ नरेस रजायसु देहू॥
दो०—राजन राउर नामु जसु सब अभिमतदातार।
फलअनुगामी महिपमनि मन-अभिलाषु तुम्हार॥ ४॥
चौ०-सब बिधि गुरु प्रसन्न जिय जानी। बोलेउ राउ रहँसि मृदु बानी॥
नाथ रामु करिअहिं जुबराजू। कहिअ कृपा करि करिअ समाजू॥
मोहि अछत यहु होइ उछाहू। लहहिं लोग सब लोचन-लाहू॥
प्रभुप्रसाद सिव सबइ निबाहीं। यह लालसा एक मन माहीं॥
पुनि न सोच तनु रहउ कि जाऊ। जेहि न होइ पाछे पछिताऊ॥
सुनि मुनि दसरथ-बचन सुहाए। मंगल-मोद-मूल मन भाए॥
सुनु नृप जासु बिमुख पछिताहीं। जासु भजन बिनु जरनि न जाहीं॥
भयेउ तुम्हार तनय सोइ स्वामी। रामु पुनीत प्रेम-अनुगामी॥
दो०—बेगि बिलंबु न करिअ नृप साजिअ सबुइ समाजु।
सुदिनु सुमंगलु तबहिं जब रामु होहिं जुबराजु॥ ५॥
चौ०-मुदित महीपति मंदिर आए। सेवक सचिव सुमंत्रु बोलाए॥
कहि जयजीव सीस तिन्ह नाए। भूप सुमंगल बचन सुनाए॥
प्रमुदित मोहि कहेउ गुरु आजू। रामहिं राय देहु जुबराजु*॥
जौं पाँचहि मत लागइ नीका। करहु हरषि हिय रामहिं टीका॥
मंत्री मुदित सुनत प्रिय बानी। अभिमत बिरव परेउ जनु पानी॥
बिनती सचिव करहिं कर जोरी। जिअहु जगतपति बरिस करोरी॥
जगमंगल भल काजु बिचारा। बेगिअ नाथ न लाइअ बारा॥
नृपहिं मोदु सुनि सचिव सुभाखा। बढ़त बौंड़ जनु लही सुसाखा॥
दो०—कहेउ भूप मुनिराज कर जोइ जोइ आयसु होइ।
राम-राज-अभिषेक-हित बेगि करहु सोइ सोइ॥ ६॥
चौ०-हरषि मुनीस कहेउ मृदुबानी। आनहु सकल सु-तीरथ-पानी॥
औषध मूल फूल फल पाना। कहे नाम गनि मंगल नाना॥

---

* यह राजा० और सद० प्रति में नहीं है।

चामर चरम वसन बहु भाँती। रोम पाट पट अगनित जाती।
मनिगन मंगलवस्तु अनेका। जो जग जोगु भूपअभिषेका।
वेदविदित कहि सकल विधाना। कहेउ रचहु पुर विविध विताना।
सफल रसाल पूँगफल केरा। रोपहु बीथिन्ह पुर चहुँ फेरा।
रचहु मंजु मनि-चौकइँ चारू। कहहु बनावन वेगि बजारू।
पूजहु गनपति गुरु कुलदेवा। सब विधि करहु भूमि-सुर-सेवा।
दो०—ध्वज पताक तोरन कलस सजहु तुरग रथ नाग।
सिर धरि मुनिवर वचन सबु निज निज काजहि लाग॥ ७॥
चौ०-जो मुनीस जेहि श्रायसु दीन्हा। सो तेहि काजु प्रथम जनु कीन्हा।
विप्र साधु सुर पूजत राजा। करत रामहित मंगलकाजा।
सुनत रामअभिषेक सुहावा। बाज गहागह अवध बधावा।
राम-सीय-तन सगुन जनाए। फरकहिं मंगल-अंग सुहाए।
पुलकि सप्रेम परसपर कहहीं। भरत-आगमनु-सूचक अहहीं।
भए बहुत दिन अति अवसेरी। सगुन प्रतीति भेंट प्रिय केरी।
भरतसरिस प्रिय को जग माहीं। इहइ सगुनफलु दूसर नाहीं।
रामहि बंधुसोच दिन राती। अंडन्हि कमठ-हृदउ जेहि भाँती*।
दो०—एहि अवसर मंगलु परम सुनि रहँसेउ रनिवासु।
सोभत लखि बिधु बढ़त जनु बारिधि बीचिबिलासु॥ ८॥
चौ०-प्रथम जाइ जिन्ह वचन सुनाए। भूषन बसन भूरि तिन्ह पाए।
प्रेम-पुलकि तन मन अनुरागीं। मंगलकलस सजन सब लागीं।
चौकइँ चारु सुमित्रा पूरीं। मनिमय विविध भाँति अति रूरीं।
आनँद-मगन राममहतारी। दिए दान बहु विप्र हँकारी।
पूजीं ग्रामदेवि सुर नागा। कहेउ बहोरि देन बलिभागा।
जेहि विधि होइ राम-कल्यानू। देहु दया करि सो बरदानू।
गावहिं मंगल कोकिलबयनी। बिधुबदनी मृग-सावक-नयनी।

* अंडों पर जैसे कमठ का ध्यान लगा रहता है, कछुआ अंडे को गाड़कर इधर उधर घूमता है।

दो०—राम-राज-अभिषेकु सुनि हिय हरषे नरनारि।
लगे सुमंगल सजन सब बिधि अनुकूल बिचारि॥ ९॥
चौ०—तब नरनाह बसिष्ठु बोलाए। रामधाम सिख देन पठाए।
गुरु आगमनु सुनत रघुनाथा। द्वार आइ पद नायेउ माथा।
सादर अरघ देइ घर आने। सोरह भाँति पूजि सनमाने।
गहे चरन सियसहित बहोरी। बोले रामु कमल—कर जोरी।
सेवकसदन स्वामिआगमनू। मंगलमूल अमंगलदमनू।
तदपि उचित जनु बोलि सप्रीती। पठइअ काज, नाथ, असि नीती।
प्रभुता तजि प्रभु कीन्ह सनेहू। भयेउ पुनीत आजु यहु गेहू।
आयसु होइ सो करौं गोसाईं। सेवकु लहै स्वामिसेवकाई।
दो०—सुनि सनेहसाने बचन मुनि रघुबरहि प्रसंस।
राम कस न तुम्ह कहहु अस हंस-बंस-अवतंस॥ १०॥
चौ०—बरनि राम-गुन-सील-सुभाऊ। बोले प्रेम पुलकि मुनिराऊ।
भूप सजेउ अभिषेकसमाजू। चाहत देन तुम्हहिं जुबराजू।
राम करहु सब संजम आजू। जौं बिधि कुसल निबाहै काजू।
गुरु सिख देइ राय पहिं गयेऊ। राम-हृदय अस बिसमउ भयेऊ।
जनमे एक संग सब भाई। भोजन सयन केलि लरिकाई।
करनबेध उपबीत बिआहा। संग संग सब भए उछाहा।
बिमलबंस यहु अनुचित एकू। बंधु बिहाइ बड़ेहिं अभिषेकू।
प्रभु सप्रेम पछितानि सुहाई। हरौ भगतमन कै कुटिलाई।
दो०—तेहि अवसर आए लषन मगन प्रेम आनंद।
सनमाने प्रिय बचन कहि रघु-कुल-कैरव-चंद॥ ११॥
चौ०—बाजहिं बाजन बिबिध बिधाना। पुरप्रमोदु नहिं जाइ बखाना।
भरतआगमनु सकल मनावहिं। आवहिं बेगि नयनफल पावहिं।
हाट बाट घर गली अथाई। कहहिं परसपर लोग लोगाई।
कालि लगन भलि केतिक बारा। पूजिहि बिधि अभिलाषु हमारा।
कनकसिंघासन सीयसमेता। बैठहिं रामु होइ चित—चेता।

सफल कहहिं कब होइहिं काली। बिघन मनावहिं देव कुचाली।
तिन्हहिं सुहाइ न अवध बधावा। चोरहिं चंदिनि राति न भावा
सारद बोलि बिनय सुर करहीं। बारहिं बार पाँय लै परहीं।

दो०—बिपति हमारि बिलोकि बड़ि मातु करिअ सोइ आजु।
राम जाहिं बन राजु तजि होइ सकल सुरकाजु ॥१२॥

चौ०-सुनि सुरबिनय ठाढ़ि पछिताती। भइउँ सरोजबिपिन-हिमराती।
देखि देव पुनि कहहिं निहोरी। मातु तोहि नहिं थोरिउ खोरी।
बिसमय-हरष-रहित रघुराऊ। तुम्ह जानहु सब राम-प्रभाऊ।
जीव करमबस सुख-दुख-भागी। जाइअ अवध देवहित लागी।
बार बार गहि चरन सँकोची। चली बिचारि बिबिध*मतिपोची।
ऊँच निवासु नीचि करतूती। देखि न सकहिं पराइ बिभूती।
आगिल काजु बिचारि बहोरी। करिहहिं चाह कुसल कबि मोरी।
हरषि हृदय दसरथपुर आई। जनु ग्रहदसा दुसह-दुखदाई।

दो०—नामु मंथरा मंदमति चेरी कैकेइ केरि।
अजस-पेटारी ताहि करि गई गिरा मति फेरि ॥ १३ ॥

चौ०-दीख मंथरा नगरु-बनावा। मंजुल मंगल बाज बधावा।
पूछेसि लोगन्ह काह उछाहू। रामतिलकु सुनि भा उरदाहू।
करै बिचारु कुबुद्धि कुजाती। होइ अकाजु कवनि बिधि राती।
देखि लागि मधु कुटिल किराती। जिमि गँव तकै लेउँ केहि भाँती।
भरतमातु पहिं गइ बिलखानी। का अनमनि हसि, कह हँसि रानी।
ऊतरु देइ न, लेइ उसासू। नारिचरित करि ढारइ आँसू।
हँसि कह रानि गालु बड़ तोरें। दीन्हि लखन सिख, अस मन मोरें।
तबहुँ न बोल चेरि बड़ि पापिनि। छाँड़ स्वास कारि जनु साँपिनि।

दो०—सभय रानि कह कहसि किन कुसल रामु महिपालु।
लखनु भरतु रिपुदमनु सुनि भा कुबरी उर सालु ॥ १४ ॥

---

* सद्ग्र०—बिबुध।

चौ०-कत सिख देइ हमहिं कोउ भाई। गालु करब केहि कर बलु पाई।
रामहि छाँड़ि कुसल केहि आजू। जेहि जनेसु देइ जुवराजू।
भयेउ कौसिलहि बिधि अति दाहिन। देखत गरब रहत उर नाहिन।
देखहु कस न जाइ सब सोभा। जो अवलोकि मोर मनु छोभा।
पूतु बिदेस, न सोचु तुम्हारें। जानति हहु बस नाहु हमारें।
नींद बहुत, प्रिय सेज तुराई। लखहु न भूप-कपट-चतुराई।
सुनि प्रिय बचन मलिनमनु जानी। झुकी रानि अब रहु अरगानी।
पुनि अस कबहुँ कहसि घरफोरी। तब धरि जीभ कढ़ावौं तोरी।

दो०—काने खोरे कूबरे कुटिल कुचाली जानि।
तिय बिसेषि पुनि चेरि कहि भरतमातु मुसुकानि॥ १५॥

चौ०-प्रियबादिनि सिष दीन्हिउँ तोही। सपनेहु तो पर कोपु न मोही।
सुदिनु सुमंगल-दायकु सोई। तोर कहा फुर जेहि दिन होई।
जेठ स्वामि, सेवक लघु भाई। एहु दिन-कर-कुल-रीति सुहाई।
रामतिलकु जौ साँचेहु काली। देउँ माँगु मन-भावत आली।
कौसल्यासम सब महतारी। रामहि सहज सुभाय पिआरी।
मो पर करहिं सनेहु बिसेखी। मैं करि प्रीति-परीछा देखी।
जौ बिधि जनमु देइ करि छोहू। होहु रामसिय पूतपतोहू।
प्रान तें अधिक रामु प्रिय मोरें। तिन्हके तिलक छोभु कस तोरें।

दो०—भरतसपथ तोहि सत्य कहु परिहरि कपट दुराउ।
हरष समय बिसमउ करसि कारन मोहि सुनाउ॥ १६॥

चौ०—एकहि बार आस सब पूजी। अब कछु कहब जीभ करि दूजी।
फोरै जोगु कपारु अभागा। भलेउ कहत दुख रौरेहि लागा।
कहहिं झूठि फुरि बात बनाई। ते प्रिय तुम्हहिं, करुइ मैं माई।
हमहुँ कहब अब ठकुरसोहाती। नाहिं त मौन रहब दिन राती।
करि कुरूप बिधि परबस कीन्हा। बवा सो लुनिअ, लहिअ जो दीन्हा।
कोउ नृप होउ हमहि का हानी। चेरि छाँड़ि अब होब कि रानी।
जारै जोगु सुभाउ हमारा। अनभल देखि न जाइ तुम्हारा।

ता तें कछुक बात अनुसारी। छमिअ देवि, वड़ि चूक हमारी।

दो०—गूढ़-कपट-प्रिय-वचन सुनि तीय अधरबुधिरानि।
सुरमाया वस वैरिनिहि सुहृदय जानि पतिआनि ॥ १७ ॥

चौ०-सादर पुनि पुनि पूछति ओही। सवरीगान मृगी जनु मोही।
तसि मति फिरी अहै जसि भावी। रहँसी चेरि घात जनु फावी।
तुम्ह पूछहु मैं कहत डेराऊँ। धरेउ मोर घरफोरी नाऊँ।
सजि प्रतीति वहु विधि गढि छोली। अवध साढ़साती तव बोली।
प्रिय सियरामु कहा तुम्ह रानी। रामहि तुम्ह प्रिय सो फुरि वानी।
रहा प्रथम, अव ते दिन वीते। समउ फिरे रिपु मोहिं पिरीते।
भानु कमल-कुल-पोषनि-हारा। विनु जर जारि करै सोइ छारा।
जरि तुम्हारि चह सवति उखारी। रूँधहु करि उपाउ वर वारी।

दो०—तुम्हहिं न सोचु सोहाग-वल निज वस जानहु राउ।
मन मलीन मुहँ मीठ नृपु राउर सरल सुभाउ ॥ १८ ॥

चौ०—चतुर गँभीर राममहतारी। वीचु पाइ निज वात सवाँरी।
पठए भरतु भूप ननिअउरें। राम-मातु-मत जानव रउरें।
सेवहिं सकल सवति मोहि नीकें। गरवित भरतमातु वल पी कें।
सालु तुम्हार कौसिलहि माई। कपट चतुर नहिं होइ जनाई।
राजहि तुम्ह पर प्रेम विसेखी। सवति-सुभाउ सकइ नहिं देखी।
रचि प्रपंचु भूपहि अपनाई। राम-तिलक-हित लगन धराई।
यह कुल उचित राम कहँ टीका। सवहि सुहाइ मोहि सुठि नीका।
आगिलि वात समुझि डर मोही। देउ दैउ फिरि सो फलु ओही।

दो०—रचि पचि कोटिक कुटिलपन कीन्हेसि कपटप्रबोधु।
कहिसि कथा सत सवति कै जेहि विधि वाढ़ विरोधु ॥१९॥

चौ०—भावीवस प्रतीति उर आई। पूँछ रानि पुनि सपथ देवाई।
का पूँछहु तुम्ह अवहुँ न जाना। निज हित अनहित पसु पहिचाना।
भयेउ पाप दिनु सजत समाजू। तुम्ह पाई सुधि मोहि सन आजू।
खाइअ पहिरिअ राज तुम्हारें। सत्य कहें नहिं दोषु हमारें।

जौं असत्य कछु कहव बनाई। तौ विधि देइहि हमहिं सजाई।
रामहि तिलकु कालि जौं भयेऊ। तुम्ह कहँ विपति-बीजु विधि बयेऊ।
रेख खँचाइ कहौं बलु भाखी। भामिनि भइहु दूध कै माखी।
जौं सुत सहित करहु सेवकाई। तौ घर रहहु, न आन उपाई।
दो०—कद्रू विनतहि दीन्ह दुखु, तुम्हहिं कौसिला देव।
भरतु बंदि-गृह सेइहहिं लषनु राम के नेव ॥ २० ॥
चौ०-कैकयसुता सुनत कटु बानी। कहि न सकै कछु सहमि सुखानी।
तन पसेउ, कदली जिमि काँपी। कुबरी दसन जीभ तब चाँपी।
कहि कहि कोटिक कपटकहानी। धीरज धरहु प्रबोधिसि रानी।
कीन्हिसि कठिन पढ़ाइ कुपाठू। *जिमि न नवइ फिरि उकठि कुकाठू*।*
फिरा करमु प्रिय लागि कुचाली। बकिहि सराहै मानि मराली।
सुनु मंथरा बात फुरि तोरी। दहिनि आँखि नित फरकै मोरी।
दिन प्रति देखौं राति कुसपने। कहौं न तोहि मोहवस अपने।
काह करौं सखि सूध सुभाऊ। दाहिन बाम न जानौं काऊ।
दो०—अपने चलत न आजु लगि अनभल काहु क कीन्ह।
केहि अघ एकहि बार मोहि दैव दुसह दुख दीन्ह ॥२१॥
चौ०-नैहर जनमु भरब बरु जाई। जियत न करबि सवति-सेवकाई।
अरिवस दैउ जियावत जाही। मरनु नीक तेहि जीव न चाही।
दीनवचन कह बहु विधि रानी। सुनि कुबरी तियमाया ठानी।
अस कस कहहु मानि मन ऊना। सुखु सोहागु तुम्ह कहँ दिन दूना।
जेहि राउर अति अनभल ताका। सोइ पाइहि एहु फलु परिपाका।
जब तें कुमत सुना मैं स्वामिनि। भूख न बासर नींद न जामिनि।
पूँछेउँ गुनिन्ह रेख तिन्ह खाँची। भरत भुआल होहिं एहु साँची।
भामिनि करहु त कहौं उपाऊ। हैं तुम्हरी सेवाबस राऊ।
दो०—परौं कूप तुअ बचन पर सकौं पूत पति त्यागि।
कहसि मोर दुखु देखि बड़ कस न करब हित लागि ॥२२॥

---

* राजा० प्रति में नहीं है।

चौ०-कुबरीं करि कबुली* कैकेई। कपटछुरी उरपाहन टेई।
लखै न रानि निकट दुखु कैसे। चरै हरित तृन बलिपसु जैसे।
सुनत बात मृदु अंत कठोरी। देति मनहुँ मधु माहुर घोरी।
कहै चेरि सुधि अहै कि नाहीं। स्वामिनि कहिहु कथा मोहि पाहीं।
दुइ बरदान भूप सन थाती। माँगहु आजु, जुड़ावहु छाती।
सुतहि राजु रामहिं बनवासू। देहु, लेहु सब सवतिहुलासू।
भूपति रामसपथ जब करई। तब माँगेहु जेहि बचनु न टरई।
होइ अकाजु आजु निसि बीतें। बचनु मोर प्रिय मानहु जी तें।

दो०—बड़ कुघातु करि पातकिनि कहेसि कोपगृह जाहु।
काजु सवाँरेहु सजग सबु सहसा जनि पतिआहु ॥ २३ ॥

चौ०-कुबरिहि रानि प्रानप्रिय जानी। बार बार बड़ि बुद्धि बखानी।
तोहि सम हितु न मोर संसारा। बहे जात कइ भइसि अधारा।
जौं बिधि पुरब मनोरथु काली। करौं तोहि चखपूतरि आली।
बहु बिधि चेरहि आदरु देई। कोपभवन गवनी कैकेई।
बिपति बीजु, बरषारितु चेरी। भुइँ भै कुमति कैकई केरी।
पाइ कपटजलु अंकुर जामा। बर दोउ दल, दुखफल परिनामा।
कोप-समाजु साजि सबु सोई। राजु करत निज कुमति बिगोई।
राउर – नगर कोलाहलु होई। यहु कुचालि कछु जान न कोई।

दो०—प्रमुदित पुर नरनारि सब सजहिं सुमंगल चार।
एक प्रविसहिं एक निर्गमहिं भीर भूपदरबार ॥ २४ ॥

चौ०-बालसखा सुनि हिय हरषाहीं। मिलि दस पाँच राम पहिं जाहीं।
प्रभु आदरहिं प्रेम पहिचानी। पूँछहिं कुसल खेम मृदु बानी।
फिरहिं भवन प्रियआयसु पाई। करत परसपर रामबड़ाई।
को रघुबीरसरिस संसारा। सीलु—सनेहु—निबाहनि हारा।
जेहि जेहि जोनि करमबस भ्रमहीं। तहँ तहँ ईसु देउ यह हमहीं।

---

* सदल०—कुबलि। कबुली = बलिपशु जो किसी देवता पर चढ़ाने के लिए पहले से कबूल किया जाय या मान दिया जाय।

सेवक हम स्वामी सियनाहू। होउ नात एहु ओर निवाहू।
अस अभिलाषु नगर सब काहू। कैकयसुता – हृदय अतिदाहू।
को न कुसंगति पाइ नसाई। रहै न नीच मतें चतुराई।
दो०—साँझ समय सानंद नृपु गयेउ कैकई गेह।
गवनु निठुरता निकट किए जनु धरि देह सनेह ॥ २५ ॥
चौ०-कोपभवन सुनि सकुचेउ राऊ। भयबस अगहुड़ परै न पाऊ।
सुरपति बसै बाँहबल जाके। नरपति सकल रहहिं रुख ताके।
सो सुनि तियरिस गयेउ सुखाई। देखहु काम-प्रताप—बड़ाई।
सूल कुलिस असि अँगवनिहारे। ते रतिनाथ सुमनसर मारे।
सभय नरेसु प्रिया पहिं गयेऊ। देखि दसा दुखु दारुन भयेऊ।
भूमिसयन पटु मोट पुराना। दिए डारि तन भूषन नाना।
कुमतिहि कसि कुबेसता फाबी। अन-अहिवातु-सूच जनु भाबी।
जाइ निकट नृपु कह मृदुबानी। प्रानप्रिया केहि हेतु रिसानी।
छंद—केहि हेतु रानि रिसानि परसत पानि पतिहि नेवारई।
मानहुँ सरोष भुअंगभामिनि विषम भाँति निहारई॥
दोउ बासना रसना दसन बर मरम ठाहरु देखई।
तुलसी नृपति भवितब्यता-बस काम-कौतुक लेखई॥
सो०—बार बार कह राउ सुमुखि सुलोचनि पिकबचनि।
कारन मोहि सुनाउ गजगामिनि निज कोप कर ॥२६॥
चौ०-अनहित तोर प्रिया केइ कीन्हा। केहि दुइ सिर केहि जम चह लीन्हा।
कहु केहि रंकहि करौं नरेसू। कहु केहि नृपहि निकासौं देसू।
सकौं तोर अरि अमरउ मारी। काह कीट बपुरे नरनारी।
जानसि मोर सुभाउ बरोरू। मन तव आनन-चंद चकोरू।
प्रिया प्रान सुत सरबसु मोरें। परिजन प्रजा सकल बस तोरें।
जौं कछु कहौं कपटु करि तोहीं। भामिनि राम-सपथ-सत मोहीं।
बिहँसि माँगु मनभावति बाता। भूषन सजहि मनोहर गाता।
घरी कुघरी समुझि जिय देखू। बेगि प्रिया परिहरहि कुबेषू।

दो०—यह सुनि मन गुनि सपथ बड़ि बिहँसि उठी मतिमंद।
भूषन सजति बिलोकि मृगु मनहुँ किरातिनिफंद ॥२७॥
चौ०-पुनि कह राउ सुहृद जिअ जानी। प्रेम पुलकि मृदु मंजुल बानी।
भामिनि भयेउ तोर मनभावा। घर घर नगर अनंद बधावा।
रामहिं देउँ कालि जुवराजू। सजहि सुलोचनि मंगलसाजू।
दलकि उठेउ सुनि हृदय कठोरू। जनु छुइ गयेउ पाक बरतोरू।
ऐसेउ पीर बिहँसि तेइ गोई। चोरनारि जिमि प्रगटि न रोई।
लखी न भूप कपट – चतुराई। कोटि-कुटिल-मनि गुरू पढ़ाई।
जद्यपि नीतिनिपुन नरनाहू। नारिचरित जलनिधि अवगाहू।
कपटसनेहु बढ़ाइ बहोरी। बोली बिहँसि नयन मुहुँ मोरी।
दो०—माँगु माँगु पै कहहु पिय कबहुँ न देहु न लेहु।
देन कहेहु बरदान दुइ तेउ पावत संदेहु ॥ २८ ॥
चौ०-जानेउँ मरमु राउ हँसि कहई। तुम्हहि कोहाब परम प्रिय अहई।
थाती राखि न माँगेहु काऊ। बिसरि गयेउ मोहि भोर सुभाऊ।
झूठेहु हमहिं दोषु जनि देहू। दुइ के चारि माँगि मकु लेहू।
रघु-कुल-रीति सदा चलि आई। प्रान जाहु बरु बचनु न जाई।
नहिं असत्यसम पातकपुंजा। गिरिसम होहिं कि कोटिक गुंजा।
सत्यमूल सब सुकृत सुहाए। वेद पुरान विदित मनु * गाए।
तेहि पर राम-सपथ करि आई। सुकृत - सनेह - अवधि रघुराई।
बात दृढ़ाइ कुमति हँसि बोली। कुमत-कुबिहँग-कुलह जनु खोली।
दो०—भूप मनोरथ सुभग बनु सुख सु-बिहंग-समाजु।
भिल्लिनि जिमि छाँड़न चहति बचनु भयंकर बाजु ॥ २९ ॥
चौ०-सुनहुँ प्रानप्रिय भावत जीका। देहु एक बर भरतहि टीका।
मागौं दूसर बर कर जोरी। पुरवहु नाथ मनोरथ मोरी।
तापसबेस बिसेषि उदासी। चौदह बरिस रामु बनबासी।

* कारि०—मुनि।

सुनि मृदुबचन भूपहिय सोकू । ससिकर छुअत बिकल जिमि कोकू ।
गयेउ सहमि नहिं कछु कहि आवा । जनु सचान बन झपटेउ लावा* ।
बिबरन भयेउ निपट नरपालू । दामिनि हनेउ मनहुँ तरुतालू ।
माथे हाथ मूँदि दोउ लोचन । तनु धरि सोचु लाग जनु सोचन ।
मोर मनोरथु सुरतरु-फूला । फरत करिनि जिमि हतेउ समूला ।
अवध उजारि कीन्हि कैकेई । दीन्हिसि अचल बिपति कै नेई ।

दो०—कवने अवसर का भयेउ गयेउँ नारिबिस्वास ।
जोग-सिद्धि-फल-समय जिमि जतिहि अबिद्यानास ॥ ३० ॥

चौ०-एहि बिधि राउ मनहिं मन झाँखा । देखि कुभाँति कुमति मनु माँखा ।
भरतु कि राउर पूत न होहीं । आनेहु मोल बेसाहि कि मोही ।
जो सुनि सरु अस लागु तुम्हारे । काहे न बोलेहु बचनु सँभारे ।
देहु उतरु अनु करहु कि नाहीं । सत्यसंध तुम्ह रघुकुल माहीं ।
देन कहेहु अब जनि बरु देहू । तजहु सत्य जग अपजसु लेहू ।
सत्य सराहि कहेहु बरु देना । जानेहु लेइहि माँगि चबेना ।
सिबि दधीचि बलि जो कछु भाषा । तनु धनु तजेउ बचनपनु राखा ।
अति-कटु-बचन कहति कैकेई । मानहुँ लोन जरे पर देई ।

दो०—धरम-धुरंधर धीर धरि नयन उघारे राय ।
सिर धुनि लीन्हि उसास असि मारेसि मोहि कुठाय ॥ ३१ ॥

चौ०-आगे दीखि जरति रिस भारी । मनहु रोष - तरवारि उघारी ।
मूठि कुबुद्धि धार निठुराई । धरी कूबरी सान बनाई ।
लखी महीप कराल कठोरा । सत्य कि जीवनु लेइहि मोरा ।
बोले राउ कठिन करि छाती । बानी सबिनय तासु सोहाती ।
प्रिया बचन कस कहसि कुभाँती । भीरु प्रतीति प्रीति करि हाँती ।
मोरें भरतु रामु दुइ आँखी । सत्य कहौं करि संकर साखी ।
अवसि दूत मैं पठउब प्राता । ऐहहिं बेगि सुनत दोउ भ्राता ।

* काशि०—प्रति में यह नहीं है ।

सुदिन सोधि सबु साजु सजाई। देउँ भरत कहँ राजु बजाई।
दो०—लोभु न रामहि राजु कर बहुत भरत पर प्रीति।
मैं बड़ छोट बिचारि जिय करत रहेउँ नृपनीति॥ ३२॥
चौ०-राम-सपथ-सत कहौं सुभाऊ। राममातु कछु कहेउ न काऊ।
मैं सबु कीन्ह तोहि बिनु पूँछे। तेहि तें परेउ मनोरथ छूछें।
रिस परिहरु अब मंगल साजू। कछु दिन गए भरत जुबराजू।
एकहि बात मोहि दुखु लागा। बर दूसर असमंजस माँगा।
अजहूँ हृदउ जरत तेहि आँचा। रिस परिहास कि साँचेहु साँचा।
कहु तजि रोषु राम-अपराधू। सबु कोउ कहैं रामु सुठि साधू।
तुहूँ सराहसि करसि सनेहू। अब सुनि मोहि भयेउ संदेहू।
जासु सुभाउ अरिहि-अनुकूला। सो किमि करिहि मातुप्रतिकूला।
दो०—प्रिया हास रिस परिहरहि माँगु बिचारि बिबेकु।
जेहि देखौं अब नयन भरि भरत-राज-अभिषेकु॥ ३३॥
चौ०-जिअइ मीन बरु बारि बिहीना। मनि बिनु फनिकु जिअइ दुखदीना।
कहौं सुभाउ न छलु मन माहीं। जीवन मोर राम बिनु नाहीं।
समुझि देखु जिय प्रिया प्रबीना। जीवनु राम - दरस - आधीना।
सुनि मृदुबचन कुमति असि जरई। मनहुँ अनल आहुति घृत परई।
कहै करहु किन कोटि उपाया। इहाँ न लागिहि राउरि-माया।
देहु कि लेहु अजसु करि नाहीं। मोहि न बहुत प्रपंच सोहाहीं।
रामु साधु तुम्ह साधु सयाने। राममातु भलि सब पहिचाने।
जस कौसिला मोर भल ताका। तस फलु उन्हहिं देउँ करि साका।
दो०—होत प्रातु मुनिबेष धरि जौं न रामु बन जाहिं।
मोर मरनु राउर-अजसु नृप समुझिअ मन माहिं॥ ३४॥
चौ०—अस कहि कुटिल भई उठि ठाढ़ी। मानहु रोष - तरंगिनि बाढ़ी।
पाप - पहार प्रगट भै सोई। भरी क्रोध – जल जाइ न जोई।
दोउ बर कूल कठिन हठ धारा। भवँर कूबरी – बचन – प्रचारा।
ढाहत भूपरूप तरुमूला। चली बिपतिबारिधि अनुकूला।

लखी नरेस बात सब साँची। तियमिसु मीचु सीस पर नाची।
गहि पद विनय कीन्हि बैठारी। जनि दिन-कर-कुल होसि कुठारी।
माँगु माथ अबहीं देउँ तोही। रामबिरह जनि मारसि मोही।
राखु राम कहँ जेहि तेहि भाँती। नाहिं त जरिहि जनम भरि छाती।
दो०—देखी व्याधि असाधि नृपु परेउ धरनि धुनि माथ।
कहत परम आरतबचन राम राम रघुनाथ ॥ ३५ ॥
चौ०-ब्याकुल राउ सिथिल सब गाता। करिनि कलप तरु मनहुँ निपाता।
कंठु सूख मुख आव न बानी। जनि पाठीनु दीनु बिनु पानी।
पुनि कह कटु कठोर कैकेई। मनहु घाय महुँ माहुर देई।
जौं अंतहु अस करतबु रहेऊ। माँगु माँगु तुम्ह केहि बल कहेऊ।
दुइ कि होहि एक समय भुआला। हँसब ठठाइ फुलाउब गाला।
दानि कहाउब अरु कृपनाई। होइ कि खेम कुसल रौताई।
छाँड़हु बचन कि धीरजु धरहू। जनि अबला जिमि करुना करहू।
तनु तिय तनय धामु धनु धरनी। सत्यसंध कहँ तृनसम बरनी।
दो०—मरमबचन सुनि राउ कह कहु कछु दोष न तोर।
लागेउ तोहि पिसाच जिमि कालु कहावत मोर ॥ ३६ ॥
चौ०-चहत न भरत भूपतहिं भोरें। बिधिबस कुमति बसी जिय तोरें।
सो सबु मोर पापपरिनामू। भयेउ कुठाहर जेहि बिधि बामू।
सुबस बसिहिं फिरि अवध सुहाई। सब गुनधाम राम - प्रभुताई।
करिहहिं भाइ सकल सेवकाई। होइहि तिहुँ पुर रामबड़ाई।
तोर कलंकु मोर पछिताऊ। मुयेहु न मिटिहि न जाइहि काऊ।
अब तोहि नीक लाग करु सोई। लोचन-ओट बैठु मुहुँ गोई।
जब लगि जिअउँ कहौं कर जोरी। तब लगि जनु कछु कहसि बहोरी।
फिर पछितैहसि अंत अभागी। मारसि गाइ नहारु लागी।
दो०—परेउ राउ कहि कोटि बिधि काहे करसि निदानु।
कपटसयानि न कहति कछु जागति मनहुँ मसानु ॥ ३७ ॥
चौ०-राम राम रट बिकल भुआलू। जनु बिनु पंख बिहंग बेहालू।

हृदय मनाव भोरु जनि होई। रामहिं जाइ कहै जनि कोई।
उदउ करहु जनि रवि रघुकुलगुर। अवध बिलोकि सूल होइहि उर।
भूपप्रीति कैकइकठिनाई। उभय अवधि बिधि रची बनाई।
बिलपत नृपहि भयेउ भिनुसारा। बीना-बेनु-संख-धुनि द्वारा।
पढ़हिं भाट गुन गावहिं गायक। सुनत नृपहि जनु लागहिं सायक।
मंगल सकल सुहाहिं न कैसें। सहगामिनिहिं बिभूषन जैसें।
तेहि निसि नींद परी नहिं काहू। राम-दरस - लालसा - उछाहू।

दो०—द्वार भीर सेवक सचिव कहहिं उदित रवि देखि।
जागे अजहुँ न अवधपति कारनु कवनु बिसेखि॥ ३८॥

चौ०-पछिले पहर भूपु नित जागा। आजु हमहिं बड़ अचरजु लागा।
जाहु सुमंत्र जगावहु जाई। कीजिअ काज रजायसु पाई।
गए सुमंत्रु तब राउर माहीं। देखि भयावन जात डेराहीं।
धाइ खाइ जनु जाइ न हेरा। मानहुँ बिपति-बिषाद-बसेरा।
पूँछे कोउ न ऊतरु देई। गए जेहि भवन भूप कैकेई।
कहि जयजीव बैठ सिर नाई। देखि भूपगति गयेउ सुखाई।
सोच बिकल बिबरन महि परेऊ। मानहुँ कमलमूलु परिहरेऊ।
सचिव सभीत सकै नहिं पूँछी। बोली असुभभरी सुभछूँछी।

दो०—परी न राजहि नींद निसि हेतु जान जगदीसु।
रामु रामु रटि भोरु किय कहै न मरमु महीसु॥ ३९॥

चौ०-आनहु रामहिं बेगि बोलाई। समाचार तब पूँछेहु आई।
चलेउ सुमंत्रु रायरुख जानी। लखी कुचालि कीन्हि कछु रानी।
सोच बिकल मग परै न पाऊ। रामहिं बोलि कहहिं का राऊ।
उर धरि धीरजु गयेउ दुआरें। पूँछहिं सकल देखि मनुमारें।
समाधान करि सो सबही का। गयेउ जहाँ दिन-कर-कुल-टीका।
राम सुमंत्रहि आवत देखा। आदरु कीन्ह पितासम लेखा।
निरखि बदनु कहि भूपरजाई। रघु-कुल-दीपहिं चलेउ लेवाई।
राम कुभाँति सचिव सँग जाहीं। देखि लोग जहँ तहँ बिलखाहीं।

दो०—जाइ देखि रघु-बंस-मनि नरपति निपट कुसाजु।
सहमि परेउ लखि सिंघिनिहि मनहु बृद्ध गजराजु॥ ४०॥

चौ०-सूखहिं अधर जरै सबु अंगू। मनहुँ दीन मनिहीन भुअंगू।
सरुख समीप देखि कैकेई। मानहुँ मीचु घरी गनि लेई।
करुनामय मृदु राम-सुभाऊ। प्रथम दीख दुखु सुना न काऊ।
तदपि धीर धरि समउ बिचारी। पूँछी मधुरबचन महतारी।
मोहि कहु मातु तात-दुख-कारन। करिअ जतन जेहि होइ निवारन।
सुनहु राम सब कारन एहू। राजहिं तुम्ह पर बहुत सनेहू।
देन कहेन्हि मोहिं दुइ बरदाना। माँगेउँ जो कछु मोहिं सुहाना।
सो सुनि भयेउ भूपउर सोचू। छाँड़ि न सकहिं तुम्हार सँकोचू।

दो०—सुत-सनेहु इत बचनु उत संकट परेउ नरेसु।
सकहु त आयसु धरहु सिर मेटहु कठिन कलेसु॥ ४१॥

चौ०-निधरक बैठि कहै कटु बानी। सुनत कठिनता अति अकुलानी।
जीभ कमान, बचन सर नाना। मनहुँ महिप मृदु-लच्छ-समाना।
जनु कठोरपनु धरें सरीरू। सिखै धनुषविद्या वर बीरू।
सबु प्रसंगु रघुपतिहि सुनाई। बैठि मनहुँ तनु धरि निठुराई।
मन मुसकाइ भानु-कुल-भानू। रामु सहज-आनंद-निधानू।
बोले बचन बिगत सब दूषन। मृदु मंजुल जनु बागबिभूषन।
सुनु जननी सोइ सुतु बड़ भागी। जो पितु-मातु-बचन-अनुरागी।
तनय मातु-पितु-तोषनि-हारा। दुर्लभ जननि सकल संसारा।

दो०—मुनिगन मिलनु बिसेषि बन, सबहि भाँति हित मोर।
तेहि महँ* पितुआयसु बहुरि संमत जननी तोर॥४२॥

चौ०-भरतु प्रानप्रिय पावहिं राजू। बिधि सब बिधि मोहिं सनमुख आजू।
जौं न जाउँ बन ऐसेहु काजा। प्रथम गनिअ मोहि मूढ़समाजा।
सेवहिं अरँडु कलपतरु त्यागी। परिहरि अमृतु लेहिं बिषु माँगी।

---

* काशि:—तेहि पर।

तेउ न पाइ अस समउ चुकाहीं । देखु बिचारि मातु मन माहीं ।
अब एकु दुखु मोहिं बिसेषी । निपट बिकल नरनायकु देखी ।
थोरिहि बात पितहि दुख भारी । होति प्रतीति न मोहिं महतारी ।
राउ धीरु गुन-उदधि-अगाधू । भा मोहि तें कछु बड़ अपराधू ।
जाते मोहि न कहत कछु राऊ । मोरि सपथ तोहि कहु सतिभाऊ ।

दो०—सहज सरल रघुबरबचन कुमति कुटिल करि जान ।
चलइ जोंक जल* बक्रगति जद्यपि सलिल समान ॥ ४३ ॥

चौ०—रहसी रानि रामरुख पाई । बोली कपटसनेह जनाई ।
सपथ तुम्हार, भरत कै आना । हेतु न दूसर मैं कछु जाना ।
तुम्ह अपराधु जोगु नहिं ताता । जननी-जनक-बंधु-सुख-दाता ।
राम सत्य सबु जो कछु कहहू । तुम्ह पितु-मातु-बचन-रत अहहू ।
पितहिं बुझाइ कहहु, बलि, सोई । चौथेपन जेहिं अजसु न होई ।
तुम्ह सम सुअन सुकृत जेहिं दीन्हे । उचित न तासु निरादरु कीन्हे ।
लागहिं कुमुख बचन सुभ कैसे । मगह गयादिक तीरथ जैसे ।
रामहिं मातुबचन सब भाए । जिमि सुरसरिगत सलिल सुहाए ।

दो०—गइ मुरुछा, रामहिं सुमिरि नृप फिरि करवट लीन्ह ।
सचिव रामआगमन कहि बिनय समयसम कीन्ह ॥ ४४ ॥

चौ०-अवनिप अकनि रामु पगु धारे । धरि धीरजु तब नयन उघारे ।
सचिव सँभारि राउ बैठारे । चरनु परत नृप रामु निहारे ।
लिये सनेहबिकल उर लाई । गै मनि मनहुँ फनिक फिरि पाई ।
रामहिं चितै रहेउ नरनाहू । चला बिलोचन बारिप्रबाहू ।
सोकबिबस कछु कहै न पारा । हृदय लगावत बारहिं बारा ।
बिधिहि मनाव राउ मन माहीं । जेहिं रघुनाथ न कानन जाहीं ।
सुमिरि महेसहि कहै निहोरी । बिनती सुनहु सदा सिव मोरी ।
आसुतोष तुम्ह अवढर दानी । आरति हरहु दीन जनु जानी ।

* सदल०—जिमि ।

दो०—तुम्ह प्रेरक सब के हृदय सो मति रामहिं देहु।
बचनु मोर तजि रहहिं घर परिहरि सीलु सनेहु ॥ ४५ ॥

चौ०-अजसु होउ, जग सुजसु नसाऊँ। नरक परौं बरु सुरपुर जाऊँ।
सब दुख दुसह सहावउ मोहीं। लोचनओट रामु जनि होहीं।
अस मन गुनै, राउ नहिं बोला। पीपर-पात-सरिस मनु डोला।
रघुपति पितहि प्रेम-बस जानी। पुनि कछु कहिहि मातु अनुमानी।
देस काल अवसर अनुसारी। बोले बचन बिनीत बिचारी।
तात कहौं कछु करौं ढिठाई। अनुचित छमब जानि लरिकाई।
अति-लघु-बात लागि दुख पावा। काहु न मोहिं कहि प्रथम जनावा।
देखि गोसाँइहि पूछेउँ माता। सुनि प्रसंगु भए सीतल गाता।

दो०—मंगलसमय सनेहबस सोच परिहरिअ तात।
आयसु देइअ हरषि हियँ कहि पुलके प्रभुगात ॥ ४६ ॥

चौ०-धन्य जनमु जगतीतल तासू। पितहि प्रमोदु चरित सुनि जासू।
चारि पदारथ करतल ताकें। प्रिय पितुमातु प्रानसम जाकें।
आयसु पालि जनमफलु पाई। ऐहौं बेगिहि होउ रजाई।
बिदा मातु सन आवौं माँगी। चलिहौं बनहिं बहुरि पग लगी।
अस कहि रामु गवनु तब कीन्हा। भूप सोकबस उतरु न दीन्हा।
नगर ब्यापि गइ बात सुतीछी। छुअत चढ़ी जनु सब तन बीछी।
सुनि भए बिकल सकल नर नारी। बेलि बिटप जिमि देखि दवारी।
जो जहँ सुनइ धुनइ सिर सोई। बड़ बिषादु नहिं धीरजु होई।

दो०—मुख सुखाहिं लोचन स्रवहिं सोकु न हृदय समाइ।
मनहुँ करुन-रस-कटकई उतरी अवध बजाइ ॥ ४७ ॥

चौ०-मिलेहि माँझ बिधि बात बिगारी। जहँ तहँ देहिं कैकइहि गारी।
एहि पापिनिहि बूझि का परेऊ। छाइ भवन पर पावकु धरेऊ।
निज कर नयन काढ़ि चह दीखा। डारि सुधा बिषु चाहति चीखा।
कुटिल कठोर कुबुद्धि अभागी। भइ रघु-बंस-बेनु-बन आगी।
पालव बैठि पेड़ु एहिं काटा। सुख महुँ सोक ठाटु धरि ठाटा।

सदा रामु एहि प्रानसमाना। कारन कवन कुटिलपनु ठाना।
सत्य कहहिं कवि नारिसुभाऊ। सब बिधि अगहु* अगाध दुराऊ।
निज प्रतिबिंबु बरुक गहि जाई। जानि न जाइ नारिगति भाई।

दो०—काह न पावकु जारि सक, का न समुद्र समाइ।
का न करै अबला प्रबल, केहि जग कालु न खाइ॥ ४८॥

चौ०—का सुनाइ बिधि काह सुनावा। का देखाइ चह काह देखावा।
एक कहहिं भल भूप न कीन्हा। बरु बिचारि नहिं कुमतिहि दीन्हा।
जो हठि भयेउ सकल दुख-भाजनु। अबलाबिबस ग्यानु गुनु गा जनु।
एक धरमपरमिति पहिचानें। नृपहि दोसु नहिं देहिं सयानें।
सिबि-दधीचि-हरिचंद-कहानी। एक एक सन कहहिं बखानी।
एक भरत कर संमत कहहीं। एक उदास-भाय सुनि रहहीं।
कान मूँदि कर, रद गहि जीहा। एक कहहिं यह बात अलीहा।
सुकृत जाहिं अस कहत तुम्हारें। राम भरत कहँ प्रान† पियारें।

दो०—चंदु चवइ बरु अनलकन सुधा होइ बिष-तूल।
सपनेहुँ कबहुँ न करहिं किछु भरतु रामप्रतिकूल॥ ४९॥

चौ०—एक बिधातहि दूषनु देहीं। सुधा देखाइ दीन्ह बिषु जेहीं।
खरभरु नगर, सोचु सब काहू। दुसह दाहु, उर मिटा उछाहू।
बिप्रबधू कुलमान्य जठेरी। जे प्रिय परम कैकई केरी।
लगीं देन सिख सीलु सराही। बचन बानसम लागहिं ताही।
भरतु न मोहि प्रिय रामसमाना। सदा कहहु यहु सबु जगु जाना।
करहु राम पर सहजसनेहू। केहि अपराध आजु बनु देहू।
कबहुँ न कियेहु सवति आरेसू। प्रीति प्रतीति जान सबु देसू।
कौसल्या अब काह बिगारा। तुम्ह जेहि लागि बज्र पुर पारा।

दो०—सीय कि पिय सँगु परिहरिहि लषनु कि रहिहहिं धाम।
राजु कि भूँजब भरत पुर नृपु कि जिइहि बिनु राम॥५०॥

* काशि०—अगम। † काशि०—परम।

चौ०-अस विचारि उर छाड़हु कोहू। सोक कलंक कोठि जनि होहू।
भरतहिं अवसि देहु जुवराजू। कानन काह राम कर काजू।
नाहिन रामु राज के भूके। धरमधुरीन विषयरस रूखे।
गुरुगृह वसहु रामु तजि गेहू। नृप सन अस वर दूसर लेहू।
जौं नहिं लगिहहु कहें हमारें। नहिं लागिहि कछु हाथ तुम्हारें।
जौं परिहास कीन्हि कछु होई। तौ कहि प्रगट जनावहु सोई।
रामसरिस सुत कानन जोगू। काह कहहि सुनि तुम्ह कहँ लोगू।
उठहु वेगि सोइ करहु उपाई। जेहि विधि सोकु कलंकु नसाई।
छंद—जेहि भाँति सोकु कलंकु जाइ उपाय करि कुल पालही।
हठि फेरु रामहिं जात वन जनि बात दूसरि चालही॥
जिमि भानु बिनु दिनु, प्रान बिनु तनु, चंदु बिनु जिमि जामिनी।
तिमि अवध तुलसीदासप्रभु बिनु समुझि धौं जिय भामिनी॥
सो०—सखिन्ह सिखावनु दीन्ह सुनत मधुर परिनाम हित।
तेइँ कछु कान न कीन्ह कुटिल प्रबोधी कूबरी॥५१॥
चौ०-उतरु न देइ दुसह रिस रूखी। मृगिन्ह चितव जनु बाघिनि भूखी।
व्याधि असाधि जानि तिन्ह त्यागी। चलीं कहत मतिमंद अभागी।
राजु करत येह दैव बिगोई। कीन्हेसि अस जस करै न कोई।
एहि विधि बिलपहिं पुर-नर-नारी। देहिं कुचालिहि कोटिक गारी।
जरहिं विषमजर, लेहिं उसासा। कवनि राम बिनु जीवन आसा।
विपुल वियोग प्रजा अकुलानी। जनु जल-चर-गन सूखत पानी।
अतिविषाद सब लोग लोगाईं। गए मातु पहिं रामु गोसाईं।
मुखु प्रसन्न चित चौगुन चाऊ। मिटा सोचु जनि राखइ राऊ।
दो०—नवगयंदु रघुवीरमनु राजु अलानसमान।
छूट जानि बनगवनु सुनि उर अनंदु अधिकान॥ ५२॥
चौ०-रघु-कुल-तिलक जोरि दोउ हाथा। मुदित मातु-पद नायेउ माथा।
दीन्हि असीस लाइ उर लीन्हे। भूषनबसन निछावरि कीन्हे।
बार बार मुख चुंबति माता। नयन-नेहजलु पुलकित गाता।

गोद राखि पुनि हृदय लगाए। स्रवत प्रेमरस पयद सुहाए।
प्रेमप्रमोदु न कछु कहि जाई। रंक धनदपदवी जनु पाई।
सादर सुंदर बदनु निहारी। बोली मधुर बचन महतारी।
कहहु तात जननी बलिहारी। कबहिं लगन मुद-मंगल-कारी।
सुकृत सील सुख सींव सुहाई। जनमलाभ कै अवधि अघाई।
दो०—जेहि चाहत नरनारि सब अतिआरत एहि भाँति।
जिमि चातक चातकि तृषित बृष्टिसरद रितु स्वाति॥ ५३॥
चौ०—तात जाउँ बलि बेगि नहाहू। जो मन भाव मधुर कछु खाहू।
पितुसमीप तब जायेहु भैया। भै बड़ि बार जाइ बलि मैया।
मातुबचन सुनि अति अनुकूला। जनु सनेह-सुर-तरु के फूला।
सुखमकरंद भरे स्रियमूला। निरखि राम-मनु-भवँरु न भूला।
धरमधुरीन धरमगति जानी। कहेउ मातु सन अति-मृदु-बानी।
पिता दीन्ह मोहि काननराजू। जहँ सब भाँति मोर बड़ काजू।
आयसु देहि मुदितमन माता। जेहिं मुदमंगल कानन जाता
जनि सनेहबस डरपसि भोरें। आनँदु अंब अनुग्रह तोरें।
दो०—बरष चारि दस बिपिन बसि करि पितु-बचन-प्रमान।
आइ पाय पुनि देखिहौं मन जनि करसि मलान॥ ५४॥
चौ०—बचन बिनीत मधुर रघुबर के। सरसम लगे मातुउर करके।
सहमि सूखि सुनि सीतल बानी। जिमि जवास परे पावस पानी।
कहि न जाइ कछु हृदय-बिषादू। मनहुँ मृगी सुनि केहरिनादू।
नयन सजल तन थरथर काँपी। माँजहि खाइ मीन जनु माँपी।
धरि धीरजु सुतबदनु निहारी। गदगद-बचन कहति महतारी।
तात पितहि तुम्ह प्रानपियारे। देखि मुदित नित चरित तुम्हारे।
राजु देन कहँ सुभ दिन साधा। कहेउ जान बन केहि अपराधा।
तात सुनावहु मोहि निदानू। को दिन-कर-कुल भयेउ कृसानू।
दो०—निरखि रामरुख सचिवसुत कारनु कहेउ बुझाइ।
सुनि प्रसंगु रहि मूक जिमि दसा बरनि नहिं जाइ॥ ५५॥

चौ०-राखि न सकै न कहि सक जाहू। दुहूँ भाँति उर दारुन दाहू।
लिखत सुधाकर गा लिखि राहू। विधिगति वाम सदा सव काहू।
धरम सनेह उभय मति घेरी। भै गति साँप छुछुंदरि केरी।
राखौं सुतहि करौं अनुरोधू। धरम जाइ अरु बंधुविरोधू।
कहौं जान वन तौ वड़ि हानी। संकट-सोच-विवस भै रानी।
वहुरि समुझि तियधरमु सयानी। रामु भरतु दोउ सुत सम जानी।
सरल सुभाउ राममहतारी। वोली वचन धीर धरि भारी।
तात जाउँ वलि कीन्हेहु नीका। पितुआयसु सब धरम क टीका।
दो०—राजु देन कहि दीन्ह बनु मोहि न सो दुखलेसु।
तुम्ह विनु भरतहि भूपतिहि प्रजहि प्रचंड कलेसु॥ ५६॥
चौ०-जौं केवल पितु-आयसु ताता। तौ जनि जाहु जानि वड़ि माता।
जौं पितुमातु कहेउ वन जाना। तौ कानन सत-अवध-समाना।
पितु वनदेव मातु वनदेवी। खग मृग चरनसरोरुह-सेवी।
अंतहु उचित नृपहि वनवासू। वय विलोकि हिय होइ हरासू।
वड़भागी वनु, अवध अभागी। जो रघु-वंस-तिलक तुम्ह त्यागी।
जौं सुत कहौं संग मोहि लेहू। तुम्हरे हृदय होइ संदेहू।
पूत परमप्रिय तुम्ह सवही के। प्रान प्रान के, जीवन जी के।
ते तुम्ह कहहु मातु वन जाऊँ। मैं सुनि वचन वैठि पछिताऊँ।
दो०—यह विचारि नहिं करौं हठ झूठ सनेह वढ़ाइ।
मानि मातु कर नात वलि सुरति विसरि जनि जाइ॥ ५७॥
चौ०-देव पितर सव तुम्हहिं गोसाईं। राखहु पलक नयन की नाईं।
अवधि अंवु, प्रियपरिजन मीना। तुम्ह करुनाकर धरमधुरीना।
अस विचारि सोइ करहु उपाई। सवहि जिअत जेहिं भेंटहु आई।
जाहु सुखेन वनहिं वलि जाऊँ। करि अनाथ जन-परिजन-गाऊँ।
सव कर आजु सुकृतफल वीता। भयेउ करालु कालु विपरीता।
वहु विधि विलपि चरन लपटानी। परमअभागिनि आपुहि जानी *।

* काशि०—प्रति में यह चौपाई नहीं है।

दारुन-दुसह-दाहु उर ब्यापा। बरनि न जाइ बिलापकलापा।
राम उठाइ मातु उर लाई। कहि मृदुवचन बहुरि समुझाई।
दो०—समाचार तेहि समय सुनि सीय उठी अकुलाइ।
जाइ सासु-पद-कमल-जुग बंदि बैठि सिरु नाइ॥ ५८॥
चौ०-दीन्हि असीस सासु मृदुबानी। अतिसुकुमारि देखि अकुलानी
बैठि नमित मुख सोचति सीता। रूपराशि पति-प्रेम-पुनीता
चलन चहत बन जीवननाथू। केहि सुकृती सन होइहि साथू।
की तनु प्रान कि केवल प्राना। बिधि करतब कछु जाइ न जाना।
चारु चरननख लेखति धरनी। नूपुर मुखर मधुर कवि बरनी।
मनहुँ प्रेमबस बिनती करहीं। हमहिं सीयपद जनि परिहरहीं।
मंजुबिलोचन मोचति बारी। बोली देखि राममहतारी।
तात सुनहु सिय अतिसुकुमारी। सासु-ससुर-परिजनहिं पियारी।
दो०—पिता जनक भूपालमनि, ससुर भानु-कुल-भानु।
पति रवि-कुल-कैरव-बिपिन-बिधु गुन-रूप-निधानु॥ ५९॥
चौ०-मैं पुनि पुत्रवधू प्रिय पाई। रूपरासि गुन सील सुहाई।
नयनपुतरि करि प्रीति बढ़ाई। राखेउँ प्रान जानकिहिं लाई।
कलपबेलि जिमि बहु बिधि लाली। सींचि सनेहसलिल प्रतिपाली।
फूलत फलत भयेउ बिधि बामा। जानि न जाइ काह परिनामा।
पलँगपीठ तजि गोद हिंडोरा। सिय न दीन्ह पगु अवनि कठोरा।
जिअनमूरि जिमि जोगवत रहऊँ। दीपबाति नहिं टारन कहऊँ।
सोइ सिय चलन चहति बन साथा। आयसु काह होइ रघुनाथा।
चंद-किरन-रस-रसिक चकोरी। रबिरुख नयन सकै किमि जोरी।
दो०—करि, केहरि, निसिचर चरहिं दुष्ट जंतु बन भूरि।
विषबाटिका कि सोह सुत सुभग सजीवनि मूरि॥ ६०॥
चौ०-बनहित कोल किरात किसोरी। रची बिरंचि बिषय-सुख-भोरी।
पाहन कृमि जिमि कठिन सुभाऊ। तिन्हहिं कलेसु न कानन काऊ।
कै तापसतिय काननजोगू। जिन्ह तपहेतु तजा सब भोगू।

सिय बन बसिहि तात केहि भाँती। चित्रलिखित कपि देखि डेराती।
सुर-सर-सुभग बनज-बन-चारी। डाबर-जोग कि हंसकुमारी।
अस बिचारि जस आयसु होई। मैं सिख देउँ जानकिहि सोई।
जौं सिय भवन रहै कह अंबा। मोहि कहँ होइ बहुत अवलंबा।
सुनि रघुबीर मातु-प्रिय-बानी। सील सनेह सुधा जनु सानी।

दो०—कहि प्रियबचन बिबेकमय कीन्ह मातु-परितोष।
लगे प्रबोधन जानकिहि प्रगटि बिपिन गुन दोष ॥ ६१ ॥

चौ०-मातु समीप कहत सकुचाहीं। बोले समउ समुझि मन माहीं।
राजकुमारि सिखावन सुनहू। आन भाँति जिय जनि कछु गुनहू।
आपन मोर नीक जो चहहू। बचनु हमार मानि गृह रहहू।
आयसु मोरि सासुसेवकाई। सब बिधि भामिनि भवन भलाई।
एहि तें अधिक धरमु नहिं दूजा। सादर सासु-ससुर-पद-पूजा।
जब जब मातु करिहि सुधि मोरी। होइहि प्रेमबिकल मतिभोरी।
तब तब तुम्ह कहि कथा पुरानी। सुंदरि समुझायेहु मृदु बानी।
कहौं सुभाय सपथ सत मोही। सुमुखि मातुहित राखौं तोही।

दो०—गुरु-स्रुति-संमत धरमफलु पाइअ बिनहिं कलेस।
हठबस सब संकट सहे गालव, नहुष नरेस ॥ ६२ ॥

चौ०-मैं पुनि करि प्रवान पितुबानी। बेगि फिरब सुनु सुमुखि सयानी।
दिवस जात नहिं लागिहि बारा। सुंदरि सिखवनु सुनहु हमारा।
जौं हठ करहु प्रेमबस बामा। तौ तुम्ह दुखु पाउब परिनामा।
काननु कठिन भयंकर भारी। घोर घामु, हिम, बारि, बयारी।
कुस कंटक मग काँकर नाना। चलब पयादेहिं बिनु पदत्राना।
चरनकमल मृदु मंजु तुम्हारे। मारग अगम भूमिधर भारे।
कंदर खोह नदी नद नारे। अगम अगाध न जाहिं निहारे।
भालु बाघ बृक केहरि नागा। करहिं नाद सुनि धीरजु भागा।

दो०—भूमिसयन बलकलबसन असनु कंद-फल-मूल।
ते कि सदा सब दिन मिलहिं सबइ समय अनुकूल ॥ ६३ ॥

चौ०-नरअहार रजनीचर चरहीं। कपटवेष विधि कोटिक करहीं।
लागै अति पहार कर पानी। बिपिन-बिपति नहिं जाइ बखानी।
ब्याल कराल बिहँग बन घोरा। निसिचर-निकर नारि-नर-चोरा।
डरपहिं धीर गहन सुधि आएँ। मृगलोचनि तुम्ह भीरु सुभाएँ।
हंसगवनि तुम्ह नहिं बनजोगू। सुनि अपजसु मोहिं देइहि लोगू।
मानस-सलिल-सुधा प्रतिपाली। जिअइ कि लवनपयोधि मराली।
नव-रसाल-बन बिहरनसीला। सोह कि कोकिल बिपिन करीला।
रहहु भवन अस हृदय बिचारी। चंदबदनि दुखु कानन भारी।

दो०—सहज सुहृद-गुरु-स्वामि-सिख जो न करै सिर मानि।
सो पछिताइ अघाइ उर अवसि होइ हितहानि॥६४॥

चौ०-सुनि मृदुबचन मनोहर पिअ के। लोचन ललित भरे जल सिय के।
सीतल सिख दाहक भै कैसें। चकइहि सरदचंद निसि जैसें।
उतरु न आव बिकल बैदेही। तजन चहत सुचि स्वामि सनेही।
बरबस रोकि बिलोचनबारी। धरि धीरजु उर अवनिकुमारी।
लागि सासुपग कह कर जोरी। छमबि देबि बड़ि अबिनय मोरी।
दीन्हि प्रानपति मोहि सिख सोई। जेहि बिधि मोर परमहित होई।
मैं पुनि समुझि दीख मन माहीं। पिय-बियोग-सम दुखु जग नाहीं।

दो०—प्राननाथ करुनायतन सुंदर सुखद सुजान।
तुम्ह बिनु रघु-कुल-कुमुद-बिधु सुरपुर नरकसमान॥६५॥

चौ०-मातु पिता भगिनी प्रिय भाई। प्रिय परिवारु सुहृद-समुदाई।
सासु ससुर गुरु सजन सहाई। सुत सुंदर सुसील सुखदाई।
जहँ लगि नाथ नेह अरु नातें। पिय बिनु तियहि तरनिहुँ ते ताते।
तनु धनु धामु धरनि सुरराजू। पतिबिहीन सबु सोकसमाजू।
भोग रोगसम, भूषन भारू। जम-जातना-सरिस संसारू।
प्राननाथ तुम्ह बिनु जग माहीं। मो कहँ सुखद कतहुँ कछु नाहीं।
जिअ बिनु देह नदी बिनु बारी। तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी।

नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे। सरद-बिमल-बिधु-बदनु निहारे।

दो०—खग मृग परिजन नगर बनु बलकल बिमल दुकूल।
नाथ साथ सुर-सदन-सम परनसाल सुखमूल ॥ ६६ ॥

चौ०-बनदेवी बनदेव उदारा। करिहहिं सासु-ससुर-सम सारा।
कुस-किसलय-साथरी सुहाई। प्रभु सँग मंजु मनोजतुराई।
कंद मूल फल अमिअ अहारू। अवध-सौध-सत-सरिस पहारू।
छिनु छिनु प्रभु-पद-कमल बिलोकी। रहिहौं मुदित दिवस जिमि कोकी।
बनदुख नाथ कहे बहुतेरे। भय बिषाद परिताप घनेरे।
प्रभु - वियोग - लव-लेस-समाना। सब मिलि होहिं न कृपानिधाना।
अस जिय जानि सुजान-सिरोमनि। लेइअ संग मोहि छाँड़िअ जनि।
बिनती बहुत करौं का स्वामी। करुनामय उर - अंतर - जामी।

दो०—राखिअ अवध जो अवधि लगि रहत जानिअहि प्रान*।
दीनबंधु सुंदर सुखद सील – सनेह – निधान ॥६७॥

चौ०-मोहि मग चलत न होइहि हारी। छिनु छिनु चरनसरोज निहारी।
सबहि भाँति पिय-सेवा करिहौं। मारगजनित सकल स्रम हरिहौं।
पाय पखारि बैठि तरुछाहीं। करिहौं बाउ मुदित मन माहीं।
स्रम-कन-सहित स्याम तनु देखें। कहँ दुख समउ प्रानपति पेखें।
सम महि तृन-तरु-पल्लव डासी। पाय पलोटिहि सब निसि दासी।
बार बार मृदुमूरति जोही। लागिहि ताति बयारि न मोही।
को प्रभुसँग मोहि चितवनिहारा। सिंघबधुहि जिमि ससक सिआरा।
मैं सुकुमारि, नाथ बनजोगू। तुम्हहिं उचित तप, मो कहँ भोगू।

दो०—ऐसेउ बचन कठोर सुनि जौं न हृदय बिलगान।
तौ प्रभु-बिषम-बियोग-दुखु सहिहहिं पाँवर प्रान ॥ ६८ ॥

चौ०-अस कहि सीय बिकल भै भारी। बचनबियोग न सकी सँभारी।

---

* राज०—रहत न जानिअ प्रान।

देखि दसा रघुपति-जिय जाना। हठि राखे नहिं राखिहि प्राना।
कहेउ कृपाल भानु-कुल-नाथा। परिहरि सोचु चलहु बन साथा।
नहिं बिषाद कर अवसरु आजू। बेगि करहु बन-गवन-समाजू।
कहि प्रियबचन प्रिया समुझाई। लगे मातुपद आसिष पाई।
बेगि प्रजादुख मेटब आई। जननी निठुर बिसरि जनि जाई।
फिरिहि दसा बिधि बहुरि कि मोरी। देखिहौं नयन मनोहर जोरी।
सुदिन सुघरी तात कब होइहि। जननी जिअत बदनबिधु जोइहि।

दो०—बहुरि बच्छ कहि लालु कहि रघुपति रघुबर तात।
कबहिं बोलाइ लगाइ हिय हरषि निरखिहौं गात॥ ६६॥

चौ०—लखि सनेह कातरि महतारी। बचनु न आव बिकल भै भारी।
राम प्रबोध कीन्ह बिधि नाना। समउ सनेहु न जाइ बखाना।
तब जानकी सासुपग लागी। सुनिय माय मैं परम अभागी।
सेवा समय दैव बन दीन्हा। मोर मनोरथ सुफल न कीन्हा।
तजब छोभु जनि छाँड़िअ छोहू। करमु कठिन कछु दोसु न मोहू।
सुनि सियबचन सासु अकुलानी। दसा कवनि बिधि कहौं बखानी।
बारहिं बार लाइ उर लीन्ही। धरि धीरजु सिख आसिष दीन्ही।
अचल होउ अहिवातु तुम्हारा। जब लगि गंग-जमुन-जल-धारा।

दो०—सीतहि सासु असीस सिख दीन्हि अनेक प्रकार।
चली नाइ पदपदुम सिरु अति हित बारहिं बार॥ ७०॥

चौ०—समाचार जब लछिमन पाए। ब्याकुल बिलप बदन उठि धाए।
कंप पुलक तन नयन सनीरा। गहे चरन अतिप्रेम अधीरा।
कहि न सकत कछु चितवत ठाढ़े। मीनु दीनु जनु जल तें काढ़े।
सोचु हृदय बिधि का होनिहारा। सब सुखु सुकृतु सिरान हमारा।
मो कहँ काह कहब रघुनाथा। रखिहहिं भवन कि लेहहिं साथा।
राम बिलोकि बंधु कर जोरें। देह गेह सब सन तृनु तोरें।
बोले बचनु राम नयनागर। सील-सनेह-सरल-सुख-सागर।
तात प्रेमबस जनि कदराहू। समुझि हृदय परिनाम उछाहू।

दो०—मातु-पिता-गुरु-स्वामि-सिख सिर धरि करहिं सुभायँ।
लहेउ लाभ तिन्ह जनम कर न तरु जनमु जग जाय ॥ ७१ ॥
चौ०-अस जिय जानि सुनहु सिख भाई। करहु मातु-पितु-पद-सेवकाई।
भवन भरत रिपुसूदनु नाहीं। राउ बृद्ध, मम दुख मन माहीं।
मैं बन जाउँ तुम्हहि लेइ साथा। होइ सबहि बिधि अवध अनाथा।
गुरु पितु मातु प्रजा परिवारू। सब कहँ परै दुसह-दुख-भारू।
रहहु करहु सब कर परितोषू। नतरु तात होइहि बड़ दोषू।
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृपु अवसि नरकअधिकारी।
रहहु तात असि नीति बिचारी। सुनत लषनु भए ब्याकुल भारी।
सिअरे* बचन सूखि गए कैसे। परसत तुहिन तामरस जैसे।
दो०—उतरु न आवत प्रेमबस गहे चरन अकुलाइ।
नाथ दासु मैं स्वामि तुम्ह तजहु त काह बसाइ ॥ ७२ ॥
चौ०-दीन्हि मोहि सिख नीकि गोसाईं। लागि अगम अपनी कदराईं।
नरबर धीर धरम - धुर-धारी। निगम नीति कहँ ते अधिकारी।
मैं सिसु प्रभु - सनेह-प्रतिपाला। मंदरु मेरु कि लेहिं मराला।
गुरु पितु मातु न जानौं काहू। कहौं सुभाउ नाथ पतिआहू।
जहँ लगि जगत सनेह सगाई। प्रीतिप्रतीति निगम निजु गाई।
मोरें सबइ एक तुम्ह स्वामी। दीनबंधु उर - अंतरजामी।
धरम नीति उपदेसिअ ताही। कीरति-भूति-सुगति प्रिय जाही।
मन-क्रम-बचन चरनरत होई। कृपासिंधु परिहरिअ कि सोई?
दो०—करुनासिंधु सुबंधु के सुनि मृदु बचन बिनीत।
समुझाए उर लाइ प्रभु जानि सनेह सभीत ॥ ७३ ॥
चौ०-माँगहु बिदा मातु सन जाई। आवहु बेगि चलहु बन भाई।
मुदित भए सुनि रघुबर बानी। भयेउ लाभ बड़, गइ बड़ि हानी।
हरषित हृदय मातु पहिं आए। मनहुँ अंध फिरि लोचन पाए।

---

* सिअरे = शीतल।

जाइ जननि-पग नायेउ माथा। मनु रघुनंदन-जानकि-साथा।
पूँछे मातु मलिन मन देखी। लषन कही सब कथा बिसेखी।
गई सहमि सुनि बचन कठोरा। मृगी देखि दव जनु चहुँ ओरा।
लषन लखेउ भा अनरथ आजू। एहि सनेह बस करब अकाजू।
माँगत बिदा सभय सकुचाहीं। जाइ संग, बिधि, कहहि कि नाहीं।

दो०—समुझि सुमित्रा राम-सिय-रूपु-सुसीलु-सुभाउ।
नृपसनेहु लखि धुनेउ सिरु पापिनि दीन्ह कुदाउ॥ ७४॥

चौ०-धीरजु धरेउ कुअवसर जानी। सहज सुहृद बोली मृदुबानी।
तात तुम्हारि मातु बैदेही। पिता रामु सब भाँति सनेही।
अवध तहाँ जहँ राम-निवासू। तहँइँ दिवसु जहँ भानुप्रकासू।
जौं पै सीय-रामु बन जाहीं। अवध तुम्हार काजु कछु नाहीं।
गुरु पितु मातु बंधु सुर साईं। सेइअहि सकल प्रान की नाईं।
राम प्रानप्रिय जीवन जी के। स्वारथरहित सखा सबही के।
पूजनीय प्रिय परम जहाँ तें। सब मानिअहि राम के नातें।
अस जिय जानि संग बन जाहू। लेहु तात जग जीवनुलाहू।

दो०—भूरि भागभाजनु भयेहु मोहि समेत बलि जाउँ।
जौं तुम्हरे मन छाँड़ि छलु कीन्ह रामपद ठाउँ॥ ७५॥

चौ०-पुत्रवती जुबती जग सोई। रघु-पति-भगतु जासु सुत होई।
नतरु बाँझ भलि, बादि बिआनी। रामबिमुख सुत तें हित-हानी।
तुम्हरेहि भाग रामु बन जाहीं। दूसर हेतु तात कछु नाहीं।
सकल सुकृत कर बड़ फल एहू। राम-सीय-पद सहज सनेहू।
रागु रोषु इरिषा मदु मोहू। जनि सपनेहुँ इन्हके बस होहू।
सकल प्रकार बिकार बिहाई। मन क्रम बचन करेहु सेवकाई।
तुम्ह कहुँ बन सब भाँति सुपासू। सँग पितु मातु रामु-सिय जासू।
जेहि न रामु बन लहहिं कलेसू। सुत सोइ करेहु इहै उपदेसू।

छंद—उपदेसु एहु जेहि तात तुम्हरे रामसिय सुख पावहीं।
पितु-मातु-प्रिय-परिवार-पुर-सुख-सुरति बन बिसरावहीं॥

तुलसि-प्रभुहि* सिख देइ आयसु दीन्ह पुनि आसिष दई।
रति होउ अबिरल अमल सिय-रघु-बीर-पद नित नित नई॥

सो०—मातुचरन सिरु नाइ चले तुरत संकित हृदय।
बागुर बिषम तोराइ मनहुँ भाग मृगु भागबस॥ ७६॥

चौ०-गए लषनु जहँ जानकिनाथू। भे मन मुदित पाइ प्रिय साथू।
बंदि राम-सिय-चरन सुहाए। चले संग नृपमंदिर आए।
कहहिं परसपर पुर-नर-नारी। भलि बनाइ बिधि बात बिगारी।
तन कृस, मन दुखु, बदन मलीने। बिकल मनहुँ माखी मधु छीने।
कर मीजहिं, सिरु धुनि पछिताहीं। जनु बिनु पंख बिहँग अकुलाहीं।
भै बड़ि भीर भूप-दरबारा। बरनि न जाइ बिखादु अपारा।
सचिव उठाइ राउ बैठारे। कहि प्रिय बचन रामु पगु धारे।
सियसमेत दोउ तनय निहारी। ब्याकुल भयेउ भूमिपति भारी।

दो०—सीयसहित सुत सुभग दोउ देखि देखि अकुलाइ।
बारहिं बार सनेहबस राउ लेइ उर लाइ॥ ७७॥

चौ०-सकै न बोलि बिकल नरनाहू। सोकजनित उर दारुन दाहू।
नाइ सीसु पद अति अनुरागा। उठि रघुबीर बिदा तब माँगा।
पितु असीसु आयसु मोहि दीजै। हरषसमय बिसमउ कत कीजै।
तात किएँ प्रिय प्रेमप्रमादू। जसु जग जाइ, होइ अपबादू।
सुनि सनेहबस उठि नरनाहाँ। बैठारे रघुपति गहि बाहाँ।
सुनहु तात तुम्ह कहँ मुनि कहहीं। राम चराचरनायक अहहीं।
सुभ अरु असुभ करम-अनुहारी। ईसु देइ फलु हृदय बिचारी।
करै जो करम पाव फल सोई। निगम-नीति असि कह सबु कोई।

दो०—औरु करै अपराध कोउ और पाव फल भोगु।
अति बिचित्र भगवंतगति को जग जानै जोगु॥ ७८॥

चौ०-राय रामराखन हित लागी। बहुत उपाय किए छल त्यागी।

---

*छक्कन०—सुतहि।

लखी रामरुख, रहत न जाने। धरम-धुरंधर धीर सयाने।
तब नृप सीय लाइ उर लीन्ही। अतिहित बहुत भाँति सिख दीन्ही।
कहि बन के दुख दुसह सुनाए। सासु ससुर पितु सुख समुझाए।
सियमन रामचरन-अनुरागा। घरु न सुगमु, बनु बिषमु न लागा।
औरउ सबहि सीय समुझाई। कहि कहि बिपिन-बिपति-अधिकाई।
सचिवनारि गुरुनारि सयानी। सहित सनेह कहहिं मृदु बानी।
तुम्ह कहँ तौ न दीन्ह बनबासू। करहु जो कहहिं ससुर-गुर-सासू।
दो०—सिख सीतलि हित मधुर मृदु सुनि सीतहि न सोहानि।
सरद-चंद-चंदनि लगत जनु चकई अकुलानि ॥७६॥
चौ०-सीय सकुचबस उतरु न देई। सो सुनि तमकि उठी कैकेई।
मुनि-पट-भूषन-भाजन आनी। आगे धरि बोली मृदु बानी।
नृपहिं प्रानप्रिय तुम्ह रघुबीरा। सील सनेह न छाँड़िहि भीरा।
सुकृत सुजसु परलोक नसाऊ। तुम्हहिं जान बन कहिहि न काऊ।
अस बिचारि सोइ करहु जो भावा। राम जननिसिख सुनि सुखु पावा।
भूपहि बचन बानसम लागे। करहिं न प्रान पयान अभागे।
लोग बिकल, मुरुछित नरनाहू। काह करिअ, कछु सूझ न काहू।
रामु तुरत मुनिबेषु बनाई। चले जनक जननी सिरु नाई।
दो०—सजि बन-साजु-समाजु सब बनिता-बंधु-समेत।
बंदि बिप्र-गुर-चरन प्रभु चले करि सबहि अचेत ॥ ८० ॥
चौ०-निकसि बसिष्ठद्वार भए ठाढ़े। देखे लोग बिरहदव दाढ़े।
कहि प्रिय बचन सकल समुझाए। बिप्रबृंद रघुबीर बोलाए।
गुर सन कहि बरषासन दीन्हे। आदर दान बिनयबस कीन्हे।
जाचक दान मान संतोषे। मीत पुनीत प्रेम परितोषे।
दासी दास बोलाइ बहोरी। गुरहिं सौंपि बोले कर जोरी।
सब कै सार सँभार गोसाईं। करबि जनक जननी की नाईं।
बारहिं बार जोरि जुगपानी। कहत रामु सब सन मृदु बानी।
सोइ सब भाँति मोर हितकारी। जेहि तें रहै भुआल सुखारी।

दो०—मातु सकल मोरे विरह जेहिं न होहिं दुख-दीन।
सोइ उपाउ तुम्ह करेहु सब पुरजन परमप्रवीन ॥ ८१ ॥

चौ०-एहि विधि राम सबहिं समुझावा। गुर-पद-पदुम हरषि सिरु नावा।
गनपति गौरि गिरीसु मनाई। चले असीस पाइ रघुराई।
रामु चलत अति भयेउ विषादू। सुनि न जाइ पुर आरतनादू।
कुसगुन लंक, अवध अति सोकू। हरष-विषाद-विवस सुरलोकू।
गइ मुरुछा तब भूपति जागे। बोलि सुमंत्र कहन अस लागे।
रामु चले वन प्रान न जाहीं। केहि सुख लागि रहत तन माहीं।
एहि तें कवन व्यथा बलवाना। जो दुखु पाइ तजिहि तनु प्राना।
पुनि धरि धीर कहै नरनाहू। लै रथ संग सखा तुम्ह जाहू।

दो०—सुठि सुकुमार कुमार दोउ, जनकसुता सुकुमारि।
रथ चढ़ाइ देखराइ बनु फिरेहु गए दिन चारि ॥ ८२ ॥

चौ०-जौं नहिं फिरहिं धीर दोउ भाई। सत्यसंध दृढ़व्रत रघुराई।
तौ तुम्ह विनय करेहु कर जोरी। फेरिअ प्रभु मिथिलेस-किसोरी।
जब सिय कानन देखि डेराई। कहेहु मोर सिख अवसरु पाई।
सासु ससुर अस कहेउ सँदेसू। पुत्रि फिरिअ बन बहुत कलेसू।
पितुगृह कबहुँ, कबहुँ ससुरारी। रहेहु जहाँ रुचि होइ तुम्हारी।
एहि विधि करेहु उपायकदंबा। फिरइ त होइ प्रानअवलंबा।
नाहिं त मोर मरनु परिनामा। कछु न बसाइ भए बिधि बामा।
अस कहि मुरुछि परा महि राऊ। राम लषनु सिय आनि देखाऊ।

दो०—पाइ रजायसु नाइ सिरु रथु अति बेग बनाइ।
गयेउ जहाँ बाहेर नगर सीयसहित दोउ भाइ ॥ ८३ ॥

चौ०-तब सुमंत्र नृपवचन सुनाए। करि विनती रथ रामु चढ़ाए।
चढ़ि रथ सीयसहित दोउ भाई। चले हृदय अवधहि सिरु नाई।
चलत रामु लखि अवध अनाथा। विकल लोग सब लागे साथा।
कृपासिंधु बहु विधि समुझावहिं। फिरहिं प्रेमबस पुनि फिरि आवहिं।
लागति अवध भयावनि भारी। मानहुँ कालराति अँधियारी।

घोर जंतुसम पुर – नर – नारी। डरपहिं एकहिं एक निहारी।
घर मसान, परिजन जनु भूता। सुत हित मीत मनहुँ जमदूता।
बागन्ह विटप वेलि कुम्हिलाहीं। सरित सरोवर देखि न जाहीं।

दो०—हय गय कोटिन्ह केलिमृग पुरपसु चातक मोर।
पिक रथांग सुक सारिका सारस हंस चकोर॥ ८४॥

चौ०-रामवियोग विकल सब ठाढ़े। जहँ तहँ मनहुँ चित्र लिखि काढ़े।
नगरु सकल वनु गहवर भारी। खग मृग विपुल सकल नरनारी।
विधि कैकेइ किरातिनि कीन्हीं। जेहिं दव दुसह दसहुँ दिसि दीन्ही।
सहि न सके रघु–वर–विरहागी। चले लोग सब ब्याकुल भागी।
सबहिं विचारु कीन्ह मन माहीं। राम लषन सिय विनु सुखु नाहीं।
जहाँ रामु तहँ सबुइ समाजू। विनु रघुवीर अवध नहिं काजू।
चले साथ अस मंत्रु दृढ़ाई। सुरदुर्लभ सुखसदन विहाई।
राम-चरन-पंकज प्रिय जिन्हहीं। विषय भोग वस करहिं कि तिन्हहीं।

दो०—बालक वृद्ध विहाइ गृह लगे लोग सब साथ।
तमसा-तीर निवासु किय प्रथम दिवसु रघुनाथ॥ ८५॥

चौ०-रघुपति प्रजा प्रेमवस देखी। सदय हृदय दुखु भयेउ विसेखी।
करुनामय रघुनाथ गोसाईं। वेगि पाइअहिं पीर पराई।
कहि सप्रेम मृदुवचन सुहाए। बहु विधि राम लोग समुझाए।
किए धरम – उपदेस घनेरे। लोग प्रेमवस फिरहिं न फेरे।
सील सनेह छाँड़ि नहिं जाई। असमंजस वस भे रघुराई।
लोग सोग – श्रम-वस गए सोई। कछुक देवमाया मति मोई।
जबहिं जामजुग जामिनि बीती। रामु सचिव सन कहेउ सप्रीती।
खोज मारि रथ हाँकहु ताता। आन उपाय बनिहि नहिं बाता।

दो०-राम लषन सिय जानु चढ़ि संभुचरन सिरु नाइ।
सचिव चलायेउ तुरत रथु इत उत खोज दुराइ॥ ८६॥

चौ०-जागे सकल लोग भए भोरू। गे रघुनाथ भयेउ अति सोरू।
रथ कर खोज कतहुँ नहिं पावहिं। 'रामराम' कहि चहुँ दिसि धावहिं।

मनहुँ वारिनिधि बूड़ जहाजू। भयेउ विकल बड़ बनिकसमाजू।
एकहिं एक देहिं उपदेसू। तजे राम हम जानि कलेसू।
निंदहिं आपु, सराहहिं मीना। धिग जीवनु रघु-बीर-विहीना।
जौं पै प्रियवियोगु विधि कीन्हा। तौ कस मरनु न माँगे दीन्हा।
एहि विधि करत प्रलापकलापा। आए अवध भरे परितापा।
विषमवियोगु न जाइ बखाना। अवधिआस सब राखहिं प्राना।

दो०—राम-दरस-हित नेम ब्रत लगे करन नरनारि।
मनहुँ कोक कोकी कमल दीन विहीन तमारि॥ ८७॥

चौ०—सीता-सचिव-सहित दोउ भाई। सृंगबेरपुर पहुँचे जाई।
उतरे राम देवसरि देखी। कीन्ह दंडवत हरषु विसेखी।
लषन सचिव सिय किए प्रनामा। सबहिं सहित सुखु पायेउ रामा।
गंग सकल-मुद-मंगल-मूला। सब सुखकरनि, हरनि सब सूला।
कहि कहि कोटिक कथाप्रसंगा। रामु विलोकहिं गंगतरंगा।
सचिवहि अनुजहि प्रियहि सुनाई। विबुध-नदी-महिमा अधिकाई।
मज्जनु कीन्ह पंथस्रम गयेऊ। सुचि जलु पिअत मुदित मन भयेऊ।
सुमिरत जाहि मिटै स्रमभारू। तेहि स्रम, यह लौकिक ब्यवहारू।

दो०—सुद्ध सच्चिदानंदमय कंद भानु-कुल-केतु।
चरित करत नर अनुहरत संसृति-सागर-सेतु॥ ८८॥

चौ०-यह सुधि गुह निषाद जब पाई। मुदित लिए प्रिय बंधु बोलाई।
लिए फल मूल भेंट भरि भारा। मिलन चलेउ हिय हरषु अपारा।
करि दंडवत भेंट धरि आगें। प्रभुहि विलोकत अति अनुरागें।
सहज-सनेह-विवस रघुराई। पूँछी कुसल निकट बैठाई।
नाथ कुसल पदपंकज देखें। भयेउँ भागभाजन जन लेखें।
देव धरनि-धनु-धाम तुम्हारा। मैं जनु नीचु सहित परिवारा।
कृपा करिअ पुर धारिअ पाऊ। थापिअ जनु सबु लोगु सिहाऊ।
कहेहु सत्य सब सखा सुजाना। मोहि दीन्ह पितु आयसु आना।

दो०—बरष चारिदस बासु बन मुनि-व्रत-बेषु-अहारु।
ग्रामवास नहिं उचित सुनि गुहहि भयेउ दुखभारु ॥८९॥
चौ०-राम-लषन-सिय-रूप निहारी। कहहिं सप्रेम ग्राम-नर-नारी।
ते पितु मातु कहहु सखि कैसे। जिन्ह पठए बन बालक ऐसे।
एक कहहिं भल भूपति कीन्हा। लोयनलाहु हमहिं बिधि दीन्हा।
तब निषादपति उर अनुमाना। तरु सिंसुपा मनोहर जाना।
लै रघुनाथहि ठाउँ देखावा। कहेउ राम सब भाँति सुहावा।
पुरजन करि जोहारु घर आए। रघुबर संध्या करन सिधाए।
गुह सवाँरि साथरी डसाई। कुस-किसलय-मय मृदुल सुहाई।
सुचि फल मूल मधुर मृदु जानी। दोना भरि भरि राखेसि आनी*।
दो०—सिय-सुमंत्र-भ्राता-सहित कंद मूल फल खाइ।
सयन कीन्ह रघु-बंस-मनि पाय पलोटत भाइ ॥ ९० ॥
चौ०-उठे लषन प्रभु सोवत जानी। कहि सचिवहि सोवन मृदु बानी।
कछुक दूरि सजि बानसरासन। जागन लगे बैठि बीरासन।
गुह बोलाइ पाहरू प्रतीती। ठावँ ठावँ राखे अति प्रीती।
आपु लषन पहिं बैठेउ जाई। कटि भाथी सरचाप चढ़ाई।
सोवत प्रभुहि निहारि निषादू। भयेउ प्रेमबस हृदय बिषादू।
तनु पुलकित जलु लोचन बहई। बचन सप्रेम लषन सन कहई।
भू-पति-भवन सुभाय सुहावा। सुर-पति-सदनु न पटतर पावा†।
मनि-मय-रचित चारु चौबारे। जनु रतिपति निज हाथ सवाँरे।
दो०—सुचि सुबिचित्र सु-भोग-मय सुमन सुगंध सुबास।
पलँग मंजु मनिदीप जहँ सब बिधि सकल सुपास ॥९१॥
चौ०-बिबिध बसन उपधान तुराई। छीरफेन मृदु बिसद सुहाई।
तहँ सियरामु सयन निसि करहीं। निज छबि रति-मनोज-मृदु हरहीं।
ते सिय रामु साथरी सोए। स्रमित बसन बिनु जाहिं न जोए।

* राजा०—पानी। † राजा०—भावा।

मातु पिता परिजन पुरवासी। सखा सुसील दास अरु दासी।
जोगवहिं जिन्हहिं प्रान की नाईं। महि सोवत तेइ राम गोसाईं।
पिता जनक जग विदित प्रभाऊ। ससुर सुरेससखा रघुराऊ।
रामचंदु पति सो वैदेही। सोवति महि, विधि बाम न केही ?
सिय रघुबीर कि कानन जोगू। करम प्रधान सत्य कह लोगू।

दो०—कैकयनंदिनि मंदमति कठिन कुटिलपनु कीन्ह।
जेहि रघुनंदन जानकिहिं सुखअवसर दुख दीन्ह ॥ ६२ ॥

चौ०-भइ दिन-कर-कुल-बिटप-कुठारी। कुमति कीन्ह सब बिस्व दुखारी।
भयेउ बिषाद निषादहि भारी। रामसीय-महिसयन निहारी।
बोले लषन मधुर-मृदु-बानी। ग्यान-बिराग-भगति-रस सानी।
काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत करम भोग सबु भ्राता।
जोग बियोग भोग भल मंदा। हित अनहित मध्यम भ्रम फंदा।
जनमु मरनु जहँ लगि जगजालू। संपति बिपति करम अरु कालू।
धरनि धामु धनु पुर परिवारू। सरगु नरकु जहँ लगि ब्यवहारू।
देखिअ सुनिअ गुनिअ मन माहीं। मोह-मूल परमारथ नाहीं।

दो०—सपने होइ भिखारि नृपु रंकु नाकपति होइ।
जागे लाभु न हानि कछु तिमि प्रपंच जिय जोइ ॥ ६३ ॥

चौ०-अस बिचारि नहिं कीजिअ रोषू। काहुहि बादि न देइय दोषू।
मोहनिसा सबु सोवनिहारा। देखिअ सपन अनेक प्रकारा।
एहि जग-जामिनि जागहिं जोगी। परमारथी प्रपंचबियोगी।
जानिअ तबहिं जीव जग जागा। जब सब बिषय बिलास बिरागा।
होइ बिबेकु मोहभ्रम भागा। तब रघु-नाथ-चरन अनुरागा।
सखा परम परमारथु एहू। मन-क्रम - बचन रामपद-नेहू।
राम ब्रह्म परमारथरूपा। अबिगत, अलख, अनादि, अनूपा।
सकल-बिकार-रहित गतभेदा। कहि नित नेति निरूपहिं बेदा।

दो०—भगत भूमि भूसुर सुरभि सुर हित लागि कृपाल।
करत चरित धरि मनुज तन सुनत मिटहिं जगजाल ॥ ६४ ॥

चौ०-सखा समुझि अस परिहरि मोहू। सिय-रघुबीर-चरन रत होहू।
कहत रामगुन भा भिनुसारा। जागे जगमंगल-दातारा *।
सकल सौच करि राम नहावा। सुचि सुजान बटछीर मँगावा।
अनुजसहित सिर जटा बनाए। देखि सुमंत्र नयनजल छाए।
हृदय दाहु अति बदन मलीना। कह कर जोरि बचन अति दीना।
नाथ कहेउ अस कोसलनाथा। लै रथ जाहु राम के साथा।
बन देखाइ सुरसरि अन्हवाई। आनेहु फेरि बेगि दोउ भाई।
लखनु रामु सिय आनेहु फेरी। संसय सकल सँकोच निबेरी।

दो०—नृप अस कहेउ गोसाइँ जस कहैं करौं बलि सोइ।
करि बिनती पायन्ह परेउ दीन्ह बाल जिमि रोइ॥ ९५॥

चौ०-तात कृपा करि कीजिअ सोई। जातें अवध अनाथ न होई।
मंत्रिहि राम उठाइ प्रबोधा। तात धरममतु† तुम्ह सब सोधा।
सिबि दधीच हरिचंद नरेसा। सहे धरमहित कोटि कलेसा।
रंतिदेव बलि भूप सुजाना। धरमु धरेउ सहि संकट नाना।
धरमु न दूसर सत्यसमाना। आगम निगम पुरान बखाना।
मैं सोइ धरमु सुलभ करि पावा। तजें तिहूँपुर अपजसु छावा।
संभावित कहँ अपजसलाहू। मरन-कोटि-सम दारुन दाहू।
तुम्ह सन तात बहुत का कहऊँ। दिएँ उतरु फिरि पातकु लहऊँ।

दो०—पितुपद गहि कहि कोटि नति बिनय करब कर जोरि।
चिंता कवनिहुँ बात कै तात करिय जनि मोरि॥ ९६॥

चौ०-तुम्ह पुनि पितुसम अति हित मोरें। बिनती करौं तात कर जोरें।
सब बिधि सोइ करतब्य तुम्हारे। दुख न पाव पितु सोच हमारे।
सुनि रघु-नाथ-सचिव-संबादू। भयेउ सपरिजन बिकल निषादू।
पुनि कछु लषन कही कटु बानी। प्रभु बरजे बड़ अनुचित जानी।

* रामा०, काशि०—सुखदारा।
† सदल० मनु।

सकुचि राम निज सपथ देवाई। लषनसँदेसु कहिअ जनि जाई।
कह सुमंत्रु पुनि भूपसँदेसू। सहि न सकिहि सिय बिपिन कलेसू।
जेहि बिधि अवध आव फिरि सीया। सोइ रघुबरहिं तुम्हहिं करनीया।
न तरु निपट अवलंबबिहीना। मैं न जिअब जिमि जल बिनु मीना।
दो०—मइके ससुरे सकल सुख जबहिं जहाँ मनु मान।
तहँ तब रहिहि सुखेन सिय जब लगि बिपति-बिहान ॥९७॥
चौ०–बिनती भूप कीन्ह जेहि भाँती। आरति प्रीति न सो कहि जाती।
पितुसँदेसु सुनि कृपानिधाना। सियहि दीन्हि सिख कोटि बिधाना।
सासु ससुर गुर प्रिय परिवारू। फिरहु त सब कर मिटै खभारू।
सुनि पतिबचन कहति बैदेही। सुनहु प्रानपति परमसनेही।
प्रभु करुनामय परम बिबेकी। तनु तजि रहत छाँह किमि छेंकी।
प्रभा जाइ कहँ भानु बिहाई। कहँ चंद्रिका चंदु तजि जाई।
पतिहि प्रेममय बिनय सुनाई। कहति सचिव सन गिरा सुहाई।
तुम्ह पितु-ससुर-सरिस हितकारी। उतरु देउँ फिरि अनुचित भारी।
दो०—आरतिबस सनमुख भइउँ बिलगु न मानब तात।
आरज-सुत-पद-कमल बिनु बादि जहाँ लगि नात ॥ ९८ ॥
चौ०–पितु-बैभव-बिलासु मैं डीठा। नृप-मनि-मुकुट-मिलित पदपीठा।
सुखनिधान अस पितुगृह* मोरें। पियबिहीन मन भाव न भोरें।
ससुर चक्कवइ कोसलराऊ। भुवन चारिदस प्रगट प्रभाऊ।
आगे होइ जेहि सुरपति लेई। अरधसिंघासन आसनु देई।
ससुरु एतादृस अवधनिवासू। प्रिय परिवारु मातुसम सासू।
बिनु रघुपति-पद-पदुम-परागा। मोहि कोउ सपनेहु सुखद न लागा।
अगम पंथ बन भूमि पहारा। कार केहरि सर सरित अपारा।
कोल किरात कुरंग बिहंगा। मोहि सब सुखद प्रान-पति-संगा।
दो०—सासु ससुर सन मोरि हुँति बिनय करबि परि पायँ।
मोरि सोचु जनि करिअ कछु मैं बन सुखी सुभायँ ॥ ९९॥

* काशि०–माइक।

चौ०-प्राननाथ प्रिय देवर साथा। बीर-धुरीण धरें धनु भाथा।
नहिं मग-स्रमु, भ्रमु दुख मन मोरें। मोहि लगि सोच करिअ जनि भोरें।
सुनि सुमंत्र सीय-सीतलि-बानी। भयेउ बिकल जनु फनि मनिहानी।
नयन सूझ नहिं सुनै न काना। कहि न सकै कछु अति अकुलाना।
राम प्रबोधु कीन्ह बहु भाँती। तदपि होति नहिं सीतलि छाती।
जतन अनेक साथहित कीन्हे। उचित उतर रघुनंदन दीन्हे।
मेटि जाइ नहिं रामरजाई। कठिन करमगति कछु न बसाई।
राम-लषन-सिय-पद सिरु नाई। फिरेउ बनिकु जिमि मूर गवाँई।
दो०—रथ हाँकेउ, हय रामतन हेरि हेरि हिहिनाहिं।
देखि निषाद बिषादबस धुनहिं सीस पछिताहिं॥ १००।
चौ०-जासु बियोग बिकल पसु ऐसे। प्रजा मातु पितु जीहहिं * कैसे।
बरबस राम सुमंत्रु पठाए। सुरसरितीर आप तब आए।
माँगी नाव, न केवट आना। कहै तुम्हार मरमु मैं जाना।
चरन-कमल-रज कहँ सबु कहई। मानुषकरनि मूरि कछु अहई।
छुअत सिला भइ नारि सुहाई। पाहन तें न काठ कठिनाई।
तरनिउँ मुनिघरनी होइ जाई। बाट परै मोरि नाव उड़ाई।
एहि प्रतिपालौं सबु परिवारू। नहिं जानौं कछु और कबारू।
जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू। मोहि पदपदुम पखारन कहहू।
छंद—पदकमल धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं।
मोहि राम राउरि आन दसरथ सपथ सब साँची कहौं॥
बरु तीर मारहु लषनु पै जब लगि न पाय पखारिहौं।
तब लगि न तुलसीदास-नाथ कृपालु पार उतारिहौं॥
सो०—सुनि केवट के बयन प्रेम लपेटे अटपटे।
बिहँसे करुना-अयन चितै जानकी-लषन-तन॥१०१॥
चौ०-कृपासिंधु बोले मुसुकाई। सोइ करु जेहि तव नाव न जाई।

* राजा०—जिइहहिं।

बेगि आनु जल पाय पखारू। होत बिलंब, उतारहि पारू।
जासु नाम सुमिरत एक बारा। उतरहिं नर भवसिंधु अपारा।
सोइ कृपालु केवटहि निहोरा। जेहि जगु किए तिहुँ पगहुँ तें थोरा।
पदनख निरखि देवसरि हरषी। सुनि प्रभुबचन मोह मति करषी।
केवट रामरजायसु पावा। पानि कठवता भरि लेइ आवा।
अति आनंद उमगि अनुरागा। चरनसरोज पखारन लागा।
बरषि सुमन सुर सकल सिहाहीं। एहि सम पुन्यपुंज कोउ नाहीं।
दो०—पद पखारि जलु पान करि आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभुहिं पुनि मुदित गयेउ लेइ पार ॥१०२॥
चौ०-उतरि ठाढ़ भए सुरसरिरेता। सीय रामु गुह लषन समेता।
केवट उतरि दंडवत कीन्हा। प्रभुहि सकुच एहि नहिं कछु दीन्हा।
पियहिय की सिय जाननिहारी। मनिमुँदरी मन-मुदित उतारी।
कहेउ कृपाल लेहि उतराई। केवट चरन गहे अकुलाई।
नाथ आजु मैं काह न पावा। मिटे दोष-दुख-दारिद-दावा।
बहुत काल मैं कीन्हि मजूरी। आजु दीन्हि बिधि बनि भलि भूरी।
अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें। दीनदयाल अनुग्रह तोरें।
फिरती बार मोहि जो देवा। सो प्रसादु मैं सिर धरि लेवा।
दो०—बहुत कीन्ह प्रभु लषन सिय नहिं कछु केवट लेइ।
बिदा कीन्ह करुनायतन भगति बिमल बरु देइ ॥१०३॥
चौ०-तब मज्जनु करि रघुकुलनाथा। पूजि पारथिव नायेउ माथा।
सिय सुरसरिहिं कहेउ कर जोरी। मातु मनोरथ पुरउबि मोरी।
पति-देवर-सँग कुसल बहोरी। आइ करौं जेहिं पूजा तोरी।
सुनि सियबिनय प्रेम-रस-सानी। भइ तब बिमल बारि बरबानी।
सुनु रघु-बीर-प्रिया बैदेही। तव प्रभाउ जग बिदित न केही।
लोकप होहिं बिलोकत तोरें। तोहि सेवहिं सब सिधि कर जोरें।
तुम्ह जो हमहिं बड़ि बिनय सुनाई। कृपा कीन्हि, मोहि दीन्हि बड़ाई।
तदपि, देबि मैं देबि असीसा। सफल होन हित निज बागीसा।

दो०—प्राननाथ देवरसहित कुसल कोसला आइ।
पूजिहि सब मनकामना सुजसु रहिहि जग छाइ ॥१०४॥

चौ०—गंगवचन सुनि मंगलमूला। मुदित सीय सुरसरि अनुकूला।
तब प्रभु गुहहिं कहेउ घर जाहू। सुनत सूख मुखु भा उर दाहू।
दीन वचन गुह कह कर जोरी। विनय सुनहु रघु-कुल-मनि मोरी।
नाथ साथ रहि पंथु देखाई। करि दिन चारि चरनसेवकाई।
जेहि बन जाइ रहब रघुराई। परनकुटी मैं करबि सुहाई।
तब मोहि कहँ जसि देब रजाई। सोइ करिहौं रघु-बीर-दोहाई।
सहज सनेह राम लखि तासू। संग लीन्ह गुह हृदय हुलासू।
पुनि गुह ग्याति बोलि सब लीन्हे। करि परितोषु बिदा तब कीन्हे।

दो०—तब गनपति सिव सुमिरि प्रभु नाइ सुरसरिहि माथ।
सखा-अनुज-सिय-सहित बन गवनु कीन्ह रघुनाथ ॥१०५॥

चौ०—तेहि दिन भयेउ बिटप तर बासू। लषन सखा सब कीन्ह सुपासू।
प्रात प्रातकृत करि रघुराई। तीरथराजु दीख प्रभु जाई।
सचिव सत्य श्रद्धा प्रिय नारी। माधवसरिस मीतु हितकारी।
चारि पदारथ भरा भँडारू। पुन्य प्रदेस देस अति चारू।
छेत्रु अगम गढ़ु गाढ़ सुहावा। सपनेहुँ नहिं प्रतिपच्छिन्ह पावा।
सेन सकल तीरथ बर बीरा। कलुष-अनीक-दलन रनधीरा।
संगमु-सिंहासन सुठि सोहा। छत्रु अखयबट मुनिमनु मोहा।
चवँर जमुन अरु गंग तरंगा। देखि होहिं दुख दारिद भंगा।

दो०—सेवहिं सुकृती साधु सुचि पावहिं सब मन-काम।
बंदी बेद-पुरान-गन कहहिं बिमल गुनग्राम ॥१०६॥

चौ०—को कहि सकै प्रयागप्रभाऊ। कलुष-पुंज-कुंजर-मृग-राऊ।
अस तीरथपति देखि सुहावा। सुखसागर रघुबर सुखु पावा।
कहि सिय लषनहि सखहि सुनाई। श्रीमुख तीरथ-राज-बड़ाई।
करि प्रनामु देखत बन बागा। कहत महातम अति अनुरागा।
एहि बिधि आइ बिलोकी बेनी। सुमिरत सकल-सुमंगल-देनी।

मुदित नहाइ कीन्हि सिवसेवा। पूजि जथाबिधि तीरथदेवा।
तब प्रभु भरद्वाज पहिं आए। करत दंडवत मुनि उर लाए।
मुनि-मन-मोद न कछु कहि जाई। ब्रह्मानंदरासि जनु पाई।
दो०—दीन्हि असीस, मुनीस उर अति अनंदु अस जानि।
लोचनगोचर सुकृतफल मनहुँ किए बिधि आनि॥ १०७॥
चौ०-कुसल प्रश्न करि आसन दीन्हे। पूजि प्रेम परिपूरन कीन्हे।
कंद मूल फल अंकुर नीके। दिए आनि मुनि मनहुँ अमी के।
सीय-लषन-जन-सहित सुहाए। अति रुचि राम मूल फल खाए।
भए बिगतस्रम राम सुखारे। भरद्वाज मृदु बचन उचारे।
आजु सुफल तपु तीरथ त्यागू। आजु सुफल जपु जोग बिरागू।
सफल सकल-सुभ-साधन-साजू। राम तुम्हहिं अवलोकत आजू।
लाभ-अवधि सुभ-अवधि न दूजी। तुम्हरें दरस आस सब पूजी।
अब करि कृपा देहु बर एहू। निज-पद-सरसिज सहज सनेहू।
दो०—करम बचन मन छाँड़ि छल जब लगि जनु न तुम्हार।
तब लगि सुखु सपनेहुँ नहीं किए कोटि उपचार॥१०८॥
चौ०-सुनु मुनिबचन रामु सकुचाने। भाव भगति आनंद अघाने।
तब रघुबर मुनि सुजस सुहावा। कोटि भाँति कहि सबहि सुनावा।
सो बड़ सो सब-गुन-गन-गेहू। जेहि मुनीस तुम्ह आदर देहू।
मुनि रघुबीर परसपर नवहीं। बचन-अगोचर सुख अनुभवहीं।
यह सुधि पाइ प्रयागनिवासी। बटु तापस मुनि सिद्ध उदासी।
भरद्वाजआश्रम सब आए। देखन दसरथसुअन सुहाए।
राम प्रनाम कीन्ह सब काहू। मुदित भए लहि लोयनलाहू।
देहिं असीस परम सुखु पाई। फिरे सराहत सुंदरताई।
दो०—राम कीन्ह बिश्राम निसि प्रात प्रयाग नहाइ।
चले सहित सिय लषन जनु मुदित मुनिहिं सिरु नाइ॥१०९॥
चौ०-राम सप्रेम कहेउ मुनि पाहीं। नाथ कहिअ हम केहि मग जाहीं।
मुनि मन बिहँसि राम सन कहहीं। सुगम सकल मग तुम्ह कहँ अहहीं।

साथ लागि मुनि सिष्य बोलाए। सुनि मन मुदित पचासक आए।
सबन्हि राम पर प्रेम अपारा। सकल कहहिं मगु दीख हमारा।
मुनि बटु चारि संग तब दीन्हे। जिन्ह बहु जनम सुकृत सब कीन्हे।
करि प्रनामु रिषि आयसु पाई। प्रमुदित हृदय चले रघुराई।
ग्राम निकट जब निकसहिं जाई। देखहिं दरसु नारिनर धाई।
होहिं सनाथ जनमफलु पाई। फिरहिं दुखित मनु संग पठाई।
दो०—बिदा किए बटु बिनय करि फिरे पाइ मनकाम।
उतरि नहाए जमुनजल जो सरीरसम स्याम ॥ ११० ॥
चौ०—सुनत तीरवासी नरनारी। धाए निज निज काज बिसारी।
लषन – राम – सिय – सुंदरताई। देखि करहिं निज भाग्य बड़ाई।
अति लालसा बसहि मन माहीं। नाउँ गाउँ बूझत सकुचाहीं।
जे तिन्ह महुँ बयबिरिध सयाने। तिन्ह करि जुगुति रामु पहिचाने।
सकलकथा तिन्ह सबहिं सुनाई। बनहि चले पितुआयसु पाई।
सुनि सबिषाद सकल पछिताहीं। रानी राय कीन्ह भल नाहीं।
*तेहि अवसर एकु तापस आवा। तेजपुंज लघुबसन सुहावा।
कवि – अलखित गति बेष बिरागी। मन-क्रम-बचन रामअनुरागी।
दो०—सजल नयन तन पुलकि निज इष्टदेव पहिचानि।
परेउ दंड जिमि धरनितल दसा न जाइ बखानि ॥ १११॥
चौ०—राम सप्रेम पुलकि उर लावा। परम रंक जनु पारस पावा।
मनहुँ प्रेम परमारथ दोऊ। मिलत धरें तन कह सब कोऊ।
बहुरि लषन पायन्ह सोइ लागा। लीन्ह उठाइ उमगि अनुरागा।
पुनि सिय-चरन-धूरि धरि सीसा। जननि जानि सिसु दीन्हि असीसा।
कीन्ह निषाद दंडवत तेही। मिलेउ मुदित लखि रामसनेही।
पिअत नयनपुट रूपु-पियूषा। मुदित सुअसनु पाइ जिमि भूखा*।

---

* कुछ लोग यहां से लेकर "जिमि भूखा" तक क्षेपक मानते हैं। प्रसंग अवश्य बीच में घुसा हुआ सा है पर मिलता सब प्राचीन प्रतियों में है।

ते पितु मातु कहहु सखि कैसे। जिन्ह पठए बन बालक ऐसे।
राम-लषन-सिय-रूप निहारी। होहिं सनेह* बिकल नरनारी।

दो०—तब रघुबीर अनेक बिधि सखहि सिखावन दीन्ह।
रामरजायसु सीस धरि भवन गवनु तेइ कीन्ह ॥ ११२ ॥

चौ०-पुनि सिय राम लषन कर जोरी। जमुनहिं कीन्ह प्रनामु बहोरी।
चले ससीय मुदित दोउ भाई। रबितनुजा कै करत बड़ाई।
पथिक अनेक मिलहिं मगु जाता। कहहिं सप्रेम देखि दोउ भ्राता।
राजलषन सब अंग तुम्हारे। देखि सोचु अति हृदय हमारे।
मारग चलहु पयादेहिं पाएँ। ज्योतिषु झूठ हमारेहि भाएँ।
अगमु पंथ गिरि कानन भारी। तेहि महँ साथ नारि सुकुमारी।
करि केहरि बन जाइ न जोई। हम सँग चलहिं जो आयसु होई।
जाब जहाँ लगि तहँ पहुँचाई। फिरब बहोरि तुम्हहिं सिरु नाई।

दो०—एहि बिधि पूँछहिं प्रेम बस पुलकगात जलु नैन।
कृपासिंधु फेरहिं तिन्हहिं कहि बिनीत मृदु बैन ॥ ११३ ॥

चौ०-जे पुर गाँव बसहिं मग माहीं। तिन्हहिं नाग-सुर-नगर सिहाहीं।
केहि सुकृती केहि घरी बसाए। धन्य पुन्यमय परम सुहाए।
जहँ जहँ रामचरन चलि जाहीं। तिन्ह समान अमरावति नाहीं।
पुन्यपुंज मग-निकट-निवासी। तिन्हहिं सराहहिं सुर-पुर-बासी।
जे भरि नयन बिलोकहिं रामहि। सीता-लषन-सहित घनस्यामहि।
जे सर सरित राम अवगाहहिं। तिन्हहिं देव-सर-सरित सराहहिं।
जेहि तरुतर प्रभु बैठहिं जाई। करहि कलपतरु तासु बड़ाई।
परसि राम-पद-पदुम-परागा। मानति भूमि भूरि निज भागा।

दो०—छाँह करहिं घन बिबुधगन बरषहिं सुमन सिहाहिं।
देखत गिरि बन बिहँग मृग रामु चले मग जाहिं ॥ ११४ ॥

चौ०-सीता-लषन-सहित रघुराई। गाँव निकट जब निकसहिं जाई।

---

* काशि०, सदल०, छकन०—सोच।

सुनि सब बाल वृद्ध नर नारी। चलहिं तुरत गृह-काज बिसारी।
राम-लषन- सिय - रूप निहारी। पाइ नयनफलु होहिं सुखारी।
सजल बिलोचन पुलक सरीरा। सब भए मगन देखि दोउ बीरा।
बरनि न जाइ दसा तिन्ह केरी। लहि जनु रंकन्हि सुर-मनि-ढेरी।
एकन्हि एक बोलि सिख देहीं। लोचन - लाहु लेहु छन एहीं।
रामहिं देखि एक अनुरागे। चितवत चले जाहिं सँग लागे।
एक नयनमग छवि उर आनी। होहिं सिथिल तन मन बरबानी

दो०—एक देखि बटछाँह भलि डासि मृदुल तृन पात।
कहहिं गवाँइअ छिनुक श्रम गवनब अबहि कि प्रात॥ ११५॥

चौ०-एक कलस भरि आनहिं पानी। अँचइअ नाथ कहहिं मृदुबानी।
सुनि प्रिय बचन प्रीति अति देखी। राम कृपालु सुसील बिसेखी।
जानी श्रमित सीय मन माहीं। घरिक बिलंबु कीन्ह बटछाहीं।
मुदित नारिनर देखहिं सोभा। रूपअनूप नयन मनु लोभा।
एकटक सब सोहहिं चहुँ ओरा। रामचंद्र – मुख-चंद – चकोरा।
तरुन-तमाल-बरन तनु सोहा। देखत कोटि-मदन-मनु मोहा।
दामिनि-बरन लषनु सुठि नीके। नखसिख सुभग भावते जी के।
मुनिपट कटिन्ह कसे तूनीरा। सोहहिं कर कमलनि धनु तीरा।

दो०—जटा मुकुट सीसनि सुभग उर भुज नयन बिसाल।
सरद-परब-बिधु-बदन बर लसत स्वेद-कन-जाल॥ ११६॥

चौ०-बरनि न जाइ मनोहर जोरी। सोभा बहुत, थोरि मति मोरी।
राम - लषन - सिय - सुंदरताई। सब चितवहिं चित मन मति लाई।
थके नारि नर प्रेम - पिआसे। मनहुँ मृगी मृग देखि दिआसे।
सीयसमीप ग्रामतिय जाहीं। पूँछत अति सनेह सकुचाहीं।
बार बार सब लागहिं पाएँ। कहहिं बचन मृदु सरल सुभाएँ।
राजकुमारि बिनय हम करहीं। तिय सुभाय कछु पूँछत डरहीं।
स्वामिनि अबिनय छमबि हमारी। बिलगु न मानब जानि गवाँरी।
राजकुँअर दोउ सहज सलोने। इन्ह तें लहि दुति मरकत सोने।

दो०—स्यामल गौर किसोर बर सुंदर सुखमा अयन।
सरद-सर्बरी-नाथ-मुख सरदसरोरुह नयन॥ ११७॥
चौ०-कोटि-मनोज-लजावनिहारे। सुमुखि कहहु को आहिं तुम्हारे।
सुनि सनेहमय मंजुल बानी। सकुची सिय, मन महुँ मुसुकानी।
तिन्हहिं बिलोकि बिलोकति धरनी। दुहुँ सकोच सकुचति बरबरनी।
सकुचि सप्रेम बाल-मृग-नयनी। बोली मधुरबचन पिकबयनी।
सहज सुभाय सुभग तन गोरे। नामु लषनु लघुदेवर मोरे।
बहुरि बदनुबिधु अंचल ढाँकी। पियतन चितै भौंह करि बाँकी।
खंजन मंजु तिरीछे नैननि। निज पति कहेउ तिन्हहिं सिय सैननि।
भईं मुदित सब ग्रामबधूटीं। रंकन्ह रायरासि जनु लूटीं।
दो०—अतिसप्रेम सिय पायँ परि बहु बिधि देहिं असीस।
सदा सोहागिनि होहु तुम्ह जब लगि महि अहिसीस॥ ११८॥
चौ०-पारबतीसम पतिप्रिय होहू। देवि न हम पर छाँड़ब छोहू।
पुनि पुनि बिनय करिअ कर जोरी। जौं एहि मारग फिरिअ बहोरी।
दरसनु देब जानि निज दासी। लखीं सीय सब प्रेमपिआसी।
मधुरबचन कहि कहि परितोषीं। जनु कुमुदिनीं कौमुदीं पोषीं।
तबहिं लषन रघुबररुख जानी। पूँछेउ मगु लोगन्हि मृदुबानी।
सुनत नारिनर भए दुखारी। पुलकित गात, बिलोचन बारी।
मिटा मोद, मन भए मलीने। बिधि निधि दीन्हि लेत जनु छीने।
समुझि करम-गति धीरजु कीन्हा। सोधि सुगम मगु तिन्ह कहि दीन्हा।
दो०—लषन-जानकी-सहित तब गवनु कीन्ह रघुनाथ।
फेरे सब प्रिय बचन कहि लिए लाइ मन साथ॥ ११९॥
चौ०-फिरत नारिनर अति पछिताहीं। दैअहि दोषु देहिं मन माहीं।
सहित बिषाद परसपर कहहीं। बिधिकरतब उलटे सब अहहीं।
निपट निरंकुस, निठुर निसंकू। जेहिं ससि कीन्ह सरुज सकलंकू।
रूख कलपतरु, सागरु खारा। तेहिं पठए बन राजकुमारा।
जौं पै इन्हहिं दीन्ह बनबासू। कीन्ह बादि बिधि भोगबिलासू।

ए बिचरहिं मग बिनु पदत्राना। रचे बादि बिधि बाहन नाना।
ए महि परहिं डासि कुसपाता। सुभग सेज कत सृजत बिधाता।
तरु-बर-बास इन्हहिं बिधि दीन्हा। धवलधाम रचि रचि श्रमु कीन्हा।

दो०—जौं ए मुनि-पट-धर जटिल सुंदर सुठि सुकुमार।
बिबिध भाँति भूषन बसन बादि किए करतार॥ १२०॥

चौ०-जौं ए कंद मूल फल खाहीं। बादि सुधादि असन जग माहीं।
एक कहहिं ए सहज सुहाए। आप प्रगट भए बिधि न बनाए।
जहँ लगि बेद कही बिधिकरनी। श्रवन नयन मन गोचर बरनी।
देखहु खोजि भुवन दसचारी। कहँ अस पुरुष, कहाँ असि नारी।
इन्हहिं देखि बिधि मनु अनुरागा। पटतर जोग बनावै लागा।
कीन्ह बहुत श्रम एक न आए। तेहि इरिषा बन आनि दुराए।
एक कहहिं हम बहुत न जानहिं। आपुहिं परम धन्य करि मानहिं।
ते पुनि पुन्यपुंज हम लेखे। जे देखहिं, देखिहहिं, जिन्ह देखे।

दो०—एहि बिधि कहि कहि बचन प्रिय लेहिं नयन भरि नीर।
किमि चलिहहिं मारग अगम सुठि सुकुमार सरीर॥१२१॥

चौ०-नारि सनेह-बिकल बस होहीं। चकई साँझ समय जनु सोहीं।
मृदु-पद-कमल कठिन मगु जानी। गहबरि हृदय कहैं बर बानी।
परसत मृदुल चरन अरुनारे। सकुचति महि जिमि हृदय हमारे।
जौं जगदीस इन्हहिं बनु दीन्हा। कस न सुमनमय मारगु कीन्हा।
जौं माँगा पाइअ बिधि पाहीं। ए रखिअहि सखि आँखिन्ह माहीं।
जे नरनारि न अवसर आए। तिन्ह सिय रामु न देखन पाए।
सुनि सुरूप बूझहिं अकुलाई। अब लगि गए कहाँ लगि, भाई।
समरथ धाइ बिलोकहिं जाई। प्रमुदित फिरहिं जनमफलु पाई।

दो०—अबला बालक बृद्धजन कर मीजहिं पछिताहिं।
होहिं प्रेमबस लोग इमि रामु जहाँ जहँ जाहिं॥१२२॥

चौ०-गाँव गाँव अस होइ अनंदू। देखि भानु-कुल-कैरव-चंदू।
जे कछु समाचार सुनि पावहिं। ते नृपरानिहिं दोसु लगावहिं।

कहहिं एक अति भल नरनाहू। दीन्ह हमहिं जेइ लोचनलाहू।
कहहिं परसपर लोग लोगाई। बातैं सरल सनेह सुहाई।
ते पितु मातु धन्य जिन्ह जाए। धन्य सो नगरु जहाँ तें आए।
धन्य सो देसु सैलु बन गाऊँ। जहँ जहँ जाहिं धन्य सोइ ठाऊँ।
सुख पायेउ बिरंचि रचि तेही। ए जेहि के सब भाँति सनेही।
राम-लषन-पथि-कथा सुहाई। रही सकल मग-कानन छाई।

दो०—एहि बिधि रघु-कुल-कमल-रवि मग-लोगन्ह सुख देत।
जाहिं चले देखत बिपिन सिय-सौमित्रि-समेत ॥१२३॥

चौ०-आगे रामु लषन बने पाछें। तापसबेष बिराजत काछें।
उभय बीच सिय सोहति कैसें। ब्रह्म-जीव-बिच माया जैसें।
बहुरि कहौं छबि जसि मन बसई। जनु मधु-मदन-मध्य रति लसई।
उपमा बहुरि कहौं जिअ जोही। जनु बुध बिधु बिच रोहिनि सोही।
प्रभु-पद-रेख बीच बिच सीता। धरति चरन मग चलति सभीता।
सीय-राम-पद-अंक बराएँ। लषन चलहिं मगु दाहिन लाएँ।
राम-लषन-सिय-प्रीति सुहाई। बचनअगोचर, किमि कहि जाई।
खग मृग मगन देखि छबि होहीं। लिए चोरि चित राम-बटोही।

दो०—जिन्ह जिन्ह देखे पथिक प्रिय सियसमेत दोउ भाइ।
भव-मगु-अगमु अनंदु तेइ बिनु श्रम रहे सिराइ ॥१२४॥

चौ०-अजहुँ जासु उर सपनेहु काऊ। बसहिं लषन-सिय-राम बटाऊ।
राम-धाम-पथ पाइहि सोई। जो पथ पाव कबहुँ मुनि कोई।
तब रघुबीर श्रमित सिय जानी। देखि निकट बटु सीतल पानी।
तहँ बसि कंद मूल फल खाई। प्रात नहाइ चले रघुराई।
देखत बन सर सैल सुहाए। बालमीकि आश्रम प्रभु आए।
रामु दीख मुनिबास सुहावन। सुंदर गिरि काननु जलु पावन।
सरनि सरोज बिटप बन फूले। गुंजत मंजु मधुप रस-भूले।
खग मृग बिपुल कोलाहल करहीं। बिरहित-बैर मुदित मन चरहीं।

दो०—सुचि सुंदर आश्रमु निरखि हरपे राजिवनैन।
सुनि रघु-बर-आगमनु मुनि आगे आयेउ लैन ॥१२५॥

चौ०—मुनि कहँ राम दंडवत कीन्हा। आसिरबादु बिप्रवर दीन्हा।
देखि रामछबि नयन जुड़ाने। करि सनमानु आश्रमहिं आने।
मुनिबर अतिथि प्रानप्रिय पाए। कंद मूल फल मधुर मँगाए।
सिय सौमित्रि राम फल खाए। तब मुनि आसन दिए सुहाए।
बालमीकि मन आनँदु भारी। मंगलमूरति नयन निहारी।
तब करकमल जोरि रघुराई। बोले बचन श्रवन-सुख-दाई।
तुम्ह त्रि-काल-दरसी मुनिनाथा। बिस्व बदर जिमि तुम्हरें हाथा।
अस कहि प्रभु सब कथा बखानी। जेहि जेहि भाँति दीन्ह बनु रानी।

दो०—तात-बचन पुनि मातुहित भाइ भरत अस राउ।
मो कहँ दरस तुम्हार प्रभु सबु मम पुन्यप्रभाउ ॥ १२६ ॥

चौ०—देखि पायँ मुनिराय तुम्हारे। भए सुकृत सब सुफल हमारे।
अब जहँ राउर आयसु होई। मुनि उदवेगु न पावै कोई।
मुनि तापस जिन्ह तें दुखु लहहीं। ते नरेस बिनु पावक दहहीं।
मंगलमूल बिप्रपरितोषू। दहै कोटि कुल भू-सुर-रोषू।
अस जिय जानि कहिअ सोइ ठाऊँ। सिय-सौमित्रि-सहित जहँ जाऊँ।
तहँ रचि रुचिर परन-तृन-साला। बास करौं कछु काल कृपाला।
सहज सरल सुनि रघुबरबानी। साधु साधु बोले मुनि ग्यानी।
कस न कहहु अस रघु-कुल-केतू। तुम्ह पालक संतत श्रुतिसेतू।

छंद—श्रुति-सेतु-पालक राम तुम्ह जगदीसमाया जानकी।
जो सृजति जगु पालति हरति रुख पाइ कृपानिधान की ॥
जो सहससीसु अहीसु महि-धरु लपनु स-चराचर-धनी।
सुरकाज धरि नरराज-तनु चले दलन खल-निसिचर-अनी ॥

सो०—राम सरूप तुम्हार बचनअगोचर बुद्धिपर।
अबिगत अकथ अपार नेति नेति नित निगम कह ॥ १२७ ॥

चौ०—जगु पेखन तुम्ह देखनिहारे। बिधि - हरि-संभु - नचावनिहारे।

सेउ न जानहिं मरमु तुम्हारा। अउरु तुम्हहिं को जाननिहारा।
सोइ जानइ जेहि देहु जनाई। जानत तुम्हहि तुम्हहि होइ जाई।
तुम्हरिहि कृपा तुम्हहि रघुनंदन। जानहिं भगत भगत-उर-चंदन।
चिदानंदमय देह तुम्हारी। विगतविकार जान अधिकारी।
नरतनु धरेहु संत-सुर-काजा। कहहु करहु जस प्राकृत राजा।
राम देखि सुनि चरित तुम्हारे। जड़ मोहहिं बुध होहिं सुखारे।
तुम्ह जो कहहु करहु सबु साँचा। जस काछिअ तस चाहिअ नाँचा।

दो०—पूछेहु मोहिं कि रहौं कहँ मैं पूछत सकुचाउँ।
जहँ न होहु तहँ देहुँ कहि तुम्हहि देखावौं ठाउँ ॥ १२८ ॥

चौ०-सुनि मुनिबचन प्रेमरस-साने। सकुचि राम मनमहुँ मुसुकाने।
बालमीकि हँसि कहहिं बहोरी। बानी मधुर अमिअरस-बोरी।
सुनहु राम अब कहौं निकेता। जहाँ बसहु सिय-लषन-समेता।
जिन्ह के श्रवन समुद्रसमाना। कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना।
भरहिं निरंतर होहिं न पूरे। तिन्ह के हिय तुम्ह कहँ गृह रूरे।
लोचन चातक जिन्ह करि राखे। रहहिं दरसजलधर अभिलाषे।
निदरहिं सरित सिंधु सर भारी। रूपबिंदु - जल होहिं सुखारी।
तिन्ह के हृदयसदन सुखदायक। बसहु बंधु-सिय-सह रघुनायक।

दो०—जस तुम्हार मानस बिमल हंसिनि जीहा जासु।
मुकुताहल गुनगन चुनै राम बसहु हिय * तासु ॥ १२९ ॥

चौ०-प्रभुप्रसाद सुचि सुभग सुबासा। सादर जासु लहै नित नासा।
तुम्हहिं निवेदित भोजन करहीं। प्रभुप्रसाद पट भूषन धरहीं।
सीस नवहिं सुर-गुरु-द्विज देखी। प्रीतिसहित करि बिनय बिसेखी।
कर नित करहिं रामपद-पूजा। रामभरोस हृदय नहिं दूजा।
चरन रामतीरथ चलि जाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं।
मंत्रराजु नित जपहिं तुम्हारा। पूजहिं तुम्हहिं सहित परिवारा।

---

* काशि०—मन।

तरपन होम करहिं विधि नाना। विप्र जेवाँइ देहिं बहु दाना।
तुम्ह तें अधिक गुरहिं जिअ जानी। सकल भाय सेवहिं सनमानी।

दो०—सबु करि माँगहिं एकु फलु राम-चरन-रति होउ।
तिन्ह के मनमंदिर बसहु सिय रघुनंदन दोउ॥ १३०॥

चौ०—काम कोह मद मान न मोहा। लोभ न छोभ न राग न द्रोहा।
जिन्ह के कपट दंभ नहिं माया। तिन्ह के हृदय बसहु रघुराया।
सब के प्रिय, सब के हितकारी। दुख-सुख-सरिस प्रसंसा गारी।
कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी। जागत सोवत सरन तुम्हारी।
तुम्हहिं छाँड़ि गति दूसरि नाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं।
जननीसम जानहिं परनारी। धनु पराव बिष तें बिष भारी।
जे हरषहिं परसंपति देखी। दुखित होहिं परबिपति बिसेखी।
जिन्हहिं राम तुम्ह प्रान पिआरे। तिन्ह के मन सुभसदन तुम्हारे।

दो०—स्वामि सखा पितु मातु गुर जिन्ह के सब तुम्ह तात।
मनमंदिर तिन्ह के बसहु सीयसहित दोउ भ्रात॥१३१॥

चौ०-अवगुन तजि सबके गुन गहहीं। बिप्र-धेनु-हित संकट सहहीं।
नीतिनिपुन जिन्ह कइ जग लीका। घर तुम्हार तिन्ह कर मनु नीका।
गुन तुम्हार समुझै निज दोसा। जेहि सब भाँति तुम्हार भरोसा।
रामभगत प्रिय लागहिं जेही। तेहि उर बसहु सहित बैदेही।
जाति पाँति धनु धरमु बड़ाई। प्रिय परिवार सदन सुखदाई।
सब तजि तुम्हहिं रहै लउ* लाई। तेहि के हृदय रहहु रघुराई।
सरगु नरकु अपबरगु समाना। जहँ तहँ देख धरे धनुबाना।
करम-बचन—मन राउर चेरा। राम करहु तेहि के उर डेरा।

दो०—जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु तुम्ह सन सहज सनेहु।
बसहु निरंतर तासु मन सो राउर निज गेहु॥१३२॥

चौ०-एहि बिधि मुनिबर भवन देखाए। बचन सप्रेम राममत भाए।

* राजा०—उर।

कह मुनि सुनहु भानु-कुल-नायक। आश्रमु कहौं समय-सुखदायक।
चित्रकूट गिरि करहु निवासू। तहँ तुम्हार सब भाँति सुपासू।
सैलु सुहावन, कानन चारू। करि-केहरि-मृग-बिहँग-बिहारू।
नदी पुनित पुरान बखानी। अत्रिप्रिया निज-तप-बल आनी।
सुरसरिधार नाउँ मंदाकिनि। जो सब-पातक-पोतक-डाकिनि।
अत्रि आदि मुनि-बर बहु बसहीं। करहिं जोग जप तप तन कसहीं।
चलहु सफल श्रम सब कर करहू। राम देहु गौरव गिरिबरहू।
दो०—चित्र-कूट-महिमा अमित कही महामुनि गाइ।
आइ नहाए सरित बर सिय समेत दोउ भाइ॥१३३॥
चौ०-रघुबर कहेउ लषन भल घाटू। करहु कतहुँ अब ठाहर ठाटू।
लषनु दीख पय उतर करारा। चहुँ दिसि फिरेउ धनुष जिमि नारा।
नदी पनच-सर सम दम दाना। सकल कलुष कलिसाउज नाना।
चित्रकूट जनु अचल अहेरी। चुकै न घात मार मुठभेरी।
अस कहि लषन ठाँव देखरावा। थल बिलोकि रघुबर सुख पावा।
रमेउ राममनु देवन्ह जाना। चले सहित सुरथपति* प्रधाना।
कोल-किरात-बेष सब आए। रचे परन-तृन-सदन सुहाए।
बरनि न जाहिं मंजु दुइ साला। एक ललित लघु एक बिसाला।
दो०—लषन-जानकी-सहित प्रभु राजत रुचिर निकेत।
सोह मदन मुनिबेष जनु रति-रितुराज-समेत॥१३४॥
चौ०-अमर नाग किन्नर दिसिपाला। चित्रकूट आए तेहि काला।
राम प्रनामु कीन्ह सब काहू। मुदित देव लहि लोचन लाहू।
बरषि सुमन कह देव-समाजू। नाथ सनाथ भए हम आजू।
करि बिनती दुख दुसह सुनाए। हरषित निज निज सदन सिधाए।
चित्रकूट रघुनंदनु छाए। समाचार सुनि सुनि मुनि आए।
आवत देखि मुदित मुनिबृंदा। कीन्ह दंडवत रघु-कुल-चंदा।

* थपति = स्थपति, थवई या राजगीर, विश्वकर्मा आदिक।

मुनि रघुवरहिं लाइ उर लेहीं। सुफल होन हित आसिष देहीं।
सिय-सौमित्रि-राम-छवि देखहिं। साधन सकल सफल करि लेखहिं।
दो०—जथाजोग सनमानि प्रभु विदा किए मुनिवृंद।
करहिं जोग जप जाग तप निज आश्रमनि सुछंद ॥१३५॥
चौ०-यह सुधि कोल किरातन्ह पाई। हरषे जनु नवनिधि घर आई।
कंद मूल फल भरि भरि दोना। चले रंक जनु लूटन सोना।
तिन्ह महँ जिन्ह देखे दोउ भ्राता। अपर तिन्हहिं पूँछहिं मगु जाता।
कहत सुनत रघुबीर-निकाई। आइ सबन्हि देखे रघुराई।
करहिं जोहारु भेंट धरि आगे। प्रभुहि विलोकहिं अति अनुरागे।
चित्र लिखे जनु जहँ तहँ ठाढ़े। पुलक सरीर, नयन जल बाढ़े।
राम सनेह-मगन सब जाने। कहि प्रिय वचन सकल सनमाने।
प्रभुहि जोहारि बहोरि बहोरी। बचन बिनीत कहहिं कर जोरी।
दो०—अब हम नाथ सनाथ सब भए देखि प्रभु पाय।
भाग हमारे आगमनु राउर कोसलराय ॥ १३६ ॥
चौ०-धन्य भूमि बन पंथ पहारा। जहँ जहँ नाथ पाउ तुम धारा।
धन्य विहँग मृग काननचारी। सफल जनम भए तुम्हहिं निहारी।
हम सब धन्य सहित परिवारा। दीख दरसु भरि नयन तुम्हारा।
कीन्ह बासु भल ठाउँ विचारी। इहाँ सकल रितु रहब सुखारी।
हम सब भाँति करब सेवकाई। करि केहरि अहि बाघ बराई।
बन बेहड़ गिरि कंदर खोहा। सब हमार प्रभु पग पग जोहा।
जहँ तहँ तुमहि अहेर खेलाउब। सर निरझर भल ठाउँ देखाउब।
हम सेवक परिवार समेता। नाथ न सकुचब आयसु देता।
दो०—वेदवचन-मुनिमन-अगम ते प्रभु करुनाअयन।
बचन किरातन्ह के सुनत जिमि पितु बालक-बयन ॥१३७॥
चौ०-रामहिं केवल प्रेमु पियारा। जानि लेउ जो जाननिहारा।
राम सकल-बन-चर तब तोषे। कहि मृदु बचन प्रेम परिपोषे।
बिदा किए सिर नाइ सिधाए। प्रभुगुन कहत सुनत घर आए।

एहि विधि सिय समेत दोउ भाई। बसहिं बिपिन सुर-मुनि-सुखदाई।
जब तें आइ रहे रघुनायकु। तब तें भयेउ बनु मंगल-दायकु।
फूलहिं फलहिं बिटप बिधि नाना। मंजु-बलित-बर-बेलि-बिताना।
सुर-तरु-सरिस सुभाय सुहाए। मनहुँ बिबुधगन परिहरि आए।
गुंज मंजुतर मधुकर-स्रेनी। त्रिबिध बयारि बहै सुखदेनी।
दो०—नीलकंठ कलकंठ सुक चातक चक्क चकोर।
भाँति भाँति बोलहिं बिहँग श्रवनसुखद चितचोर ॥१३८॥
चौ०-करि केहरि कपि कोल कुरंगा। बिगत-बैर बिचरहिं सब संगा।
फिरत अहेर रामछबि देखी। होहिं मुदित मृगबृंद बिसेखी।
बिबुधबिपिन जहँ लगि जग माहीं। देखि रामबनु सकल सिहाहीं।
सुरसरि सरसइ दिनकर-कन्या। मेकलसुता गोदावरि धन्या।
सब सर सिंधु नदी नद नाना। मंदाकिनि कर करहिं बखाना।
उदय-अस्त-गिरि अरु कैलासू। मंदर मेरु सकल – सुर – बासू।
सैल हिमाचल आदिक जेते। चित्रकूटजसु गावहिं तेते।
बिंधि मुदित मन सुख न समाई। श्रम बिनु बिपुल बड़ाई पाई।
दो०—चित्रकूट के बिहँग मृग बेलि बिटप तृन जाति।
पुन्यपुंज सब धन्य अस कहहिं देव दिन राति ॥ १३९ ॥
चौ०-नयनवंत रघुबरहि बिलोकी। पाइ जनम-फल होहिं बिसोकी।
परसि चरनरज अचर सुखारी। भए परमपद के अधिकारी।
सो बनु सैल सुभाय सुहावन। मंगलमय अति – पावन-पावन।
महिमा कहिअ कवनि बिधि तासू। सुखसागर जहँ कीन्ह निवासू।
पयपयोधि तजि अवध बिहाई। जहँ सिय-लषनु-राम रहे आई।
कहि न सकहिं सुषमा जसि कानन। जौं सत सहस होहिं सहसानन।
सो मैं बरनि कहौं बिधि केही। डाबरकमठ कि मंदर लेही।
सेवहिं लषनु करम-मन-बानी। जाइ न सीलु सनेहु बखानी।
दो०—छिनु छिनु लखि सिय-राम-पद जानि आपु पर नेहु।
करत न सपनेहुँ लषनु चितु बंधु-मातु-पितु-गेहु ॥१४०॥

चौ०-रामसंग सिय रहति सुखारी। पुर-परिजन-गृह-सुरति बिसारी।
छिनु छिनु पिय-बिधु-बदनु निहारी। प्रमुदित मनहुँ चकोर-कुमारी।
नाह-नेहु नित बढ़त बिलोकी। हरषित रहति दिवस जिमि कोकी।
सियमनु रामचरन अनुरागा। अवध-सहस-सम बन प्रिय लागा।
परनकुटी प्रिय प्रियतम संगा। प्रिय परिवारु कुरंग बिहंगा।
सासु-ससुर-सम मुनितिय मुनिवर। असन अमिअ सम कंद मूल फर।
नाथ-साथ साँथरी सुहाई। मयन-सयन-सय-सम सुखदाई।
लोकप होहिं बिलोकत जासू। तेहि कि मोहि सक बिषय-बिलासू।
दो०—सुमिरत रामहिं तजहिं जन तृनसम बिषय-बिलासु।
रामप्रिया जग-जननि सिय कछु न आचरजु तासु ॥१४१॥
चौ०-सीय लषनु जेहि बिधि सुखु लहहीं। सोइ रघुनाथ करहिं सोइ कहहीं।
कहहिं पुरातन कथा कहानी। सुनहिं लखनु सिय अतिसुखु मानी।
जब जब रामु अवध-सुधि करहीं। तब तब बारि बिलोचन भरहीं।
सुमिरि मातु पितु परिजन भाई। भरत-सनेहु-सीलु-सेवकाई।
कृपासिंधु प्रभु होहिं दुखारी। धीरजु धरहिं कुसमउ बिचारी।
लखि सिय लषनु बिकल होइ जाहीं। जिमि पुरुषहिं अनुसर परिछाहीं।
प्रिया-बंधु-गति लखि रघुनंदनु। धीर कृपाल भगत-उर-चंदनु।
लगे कहन कछु कथा पुनीता। सुनि सुखु लहहिं लषनु अरु सीता।
दो०—रामु-लषन-सीता-सहित सोहत परननिकेत।
जिमि बासव बस अमरपुर सची-जयंत-समेत ॥१४२॥
चौ०-जोगवहिं प्रभु सियलषनहिं कैसें। पलक बिलोचनगोलक जैसें।
सेवहिं लषनु सीय रघुबीरहिं। जिमि अबिबेकी पुरुष सरीरहिं।
एहि बिधि प्रभु बन बसहिं सुखारी। खग-मृग-सुर-तापस-हित-कारी।
कहेउँ राम-बन-गवनु सुहावा। सुनहु सुमंत्र अवध जिमि आवा।
फिरेउ निषादु प्रभुहि पहुँचाई। सचिवसहित रथ देखेसि आई।
मंत्री बिकल बिलोकि निषादू। कहि न जाइ जस भयेउ बिषादू।
'राम राम सिय लषन' पुकारी। परेउ धरनितल ब्याकुल भारी।

देखि दखिन दिसि हय हिहिनाहीं। जनु बिनु पंख बिहँग अकुलाहीं।

दो०—नहिं तृन चरहिं न पिअहिं जलु मोचहिं लोचनबारि।
ब्याकुल भयेउ निषाद सब रघु-बर-बाजि निहारि॥१४३॥

चौ०-धरि धीरजु तब कहै निषादू। अब सुमंत्र परिहरहु बिषादू।
तुम्ह पंडित परमारथज्ञाता। धरहु धीर लखि बिमुख बिधाता।
बिबिध कथा कहि कहि मृदु बानी। रथ बैठारेउ बरबस आनी।
सोकसिथिल रथु सकै न हाँकी। रघु-बर-बिरह-पीर उर बाँकी।
चरफराहिं मग चलहिं न घोरे। बनमृग मनहुँ आनि रथ जोरे।
अढुकि परहिं फिरि हेरहिं पीछे। रामबियोगि, बिकल दुख तीछे।
जो कह रामु लखनु बैदेही। हिंकरि हिंकरि हित हेरहिं तेही।
बाजि-बिरहगति कहि किमि जाती। बिनु मनि फनिक बिकल जेहि भाँती।

दो०—भयेउ निषादु बिषादबस देखत सचिव तुरंग।
बोलि सुसेवक चारि तब दिए सारथी संग॥१४४॥

चौ०-गुह सारथिहि फिरे पहुँचाई। बिरहु बिषादु बरनि नहिं जाई।
चले अवध लेइ रथहि निषादा। होहिं छनहि छन मगन-बिषादा।
सोच सुमंत्र बिकल दुखदीना। धिग जीवन रघु-बीर-बिहीना।
रहिहि न अंतहु अधमु सरीरू। जसु न लहेउ बिछुरत रघुबीरू।
भए अजस-अघ-भाजन प्राना। कवन हेतु नहिं करत पयाना।
अहह मंद मनु अवसर चूका। अजहुँ न हृदय होत दुइ टूका।
मींजि हाथ सिरु धुनि पछिताई। मनहुँ कृपन धनरासि गवाँई।
बिरद बाँधि बर बीरु कहाई। चलेउ समर जसु सुभट पराई।

दो०—बिप्र बिबेकी बेदबिद संमत साधु सुजाति।
जिमि धोखें मदपान कर सचिव सोच तेहि भाँति॥१४५॥

चौ०-जिमि कुलीन तिय साधु सयानी। पतिदेवता करम-मन-बानी।
रहै करमबस परिहरि नाहू। सचिवहृदय तिमि दारुन दाहू।
लोचन सजल, डीठि भइ थोरी। सुनै न श्रवन, बिकल मति भोरी।
सूखहिं अधर लागि मुँह लाटी। जिउ न जाइ उर अवधिकपाटी।

बिबरन भयेउ, न जाइ निहारी। मारेसि मनहुँ पिता महतारी।
हानि गलानि बिपुल मन ब्यापी। जम-पुर-पंथ सोच जिमि पापी।
बचन न आव हृदय पछिताई। अवध काह मैं देखब जाई।
रामरहित रथ देखिहि जोई। सकुचिहि मोहि बिलोकत सोई।

दो०—धाइ पूँछिहहिं मोहि जब बिकल नगर-नरनारि।
उतरु देब मैं सबहिं तब हृदय बज्रु बैठारि॥ १४६॥

चौ०-पुँछिहहिं दीन दुखित सब माता। कहब काह मैं तिन्हहिं, बिधाता।
पूँछिहि जबहिं लषनमहतारी। कहिहउँ कवनु सँदेस सुखारी।
रामजननि जब आइहि धाई। सुमिरि बच्छु जिमि धेनु लवाई।
पूँछत उतर देब मैं तेही। गे बनु राम लषनु बैदेही।
जोइ पूँछिहि तेहि ऊतरु देबा। जाइ अवध अब यहु सुखु लेबा।
पूँछिहि जबहिं राउ दुखदीना। जिवनु जासु रघुनाथअधीना।
देहौं उतरु कवनु मुँहु लाई। आयेउँ कुसल कुअँर पहुँचाई।
सुनत लषन-सिय-राम-सँदेसू। तृन जिमि तनु परिहरिहि नरेसू।

दो०—हृदउ न बिदरेउ पंक जिमि बिछुरत प्रीतम-नीर।
जानत हौं मोहि दीन्ह बिधि यहु जातना सरीरु॥ १४७॥

चौ०-एहि बिधि करत पंथ पछितावा। तमसातीर तुरत रथु आवा।
बिदा किए करि बिनय निषादा। फिरे पाँय परि बिकल-बिषादा।
पैठत नगर सचिव सकुचाई। जनु मारेसि गुरु-बाँभन-गाई।
बैठि बिटपतर दिवसु गवाँवा। साँझ समय तब अवसरु पावा।
अवधप्रबेसु कीन्ह अँधियारें। पैठ भवन रथु राखि दुआरें।
जिन्ह जिन्ह समाचार सुनि पाए। भूपद्वार रथु देखन आए।
रथु पहिचानि बिकल लखि घोरे। गरहिं गात जिमि आतप ओरे।
नगर-नारि-नर ब्याकुल कैसे। निघटत नीर मीनगन जैसे।

दो०—सचिव आगमनु सुनत सबु बिकल भयेउ रनिवासु।
भवनु भयंकरु लाग तेहि मानहुँ प्रेतनिवासु॥ १४८॥

चौ०-अति आरति सब पूँछहिं रानी। उतरु न आव बिकल भइ बानी।

सुनै न श्रवन नयन नहिं सूझा। कहहु कहाँ नृप तेहि तेहि * बूझा।
दासिन्ह दीख सचिव-बिकलाई। कौसल्यागृह गईं लेवाई।
जाइ सुमंत्र दीख कस राजा। अमियरहित जनु चंदु बिराजा।
आसन-सयन-बिभूषन-हीना। परेउ भूमितल† निपट मलीना।
लेइ उसास सोच एहि भाँती। सुरपुर तें जनु खँसेउ जजाती।
लेत सोचभरि छिनु छिनु छाती। जनु जरि पंख परेउ संपाती।
राम राम कह रामसनेही। पुनि कह राम लषन बैदेही।

दो०—देखि सचिव जयजीव कहि कीन्हेउ दंड प्रनामु।
सुनत उठेउ ब्याकुल नृपति कहु सुमंत्र कहँ रामु ॥ १४९ ॥

चौ०-भूप सुमंत्रु लीन्ह उर लाई। बूडत कछु अधार जनु पाई।
सहित सनेह निकट बैठारी। पूछत राउ नयन भरि बारी।
रामकुसल कहु सखा सनेही। कहँ रघुनाथ लषनु बैदेही।
आने फेरु कि बनहि सिधाए। सुनत सचिवलोचन जल छाए।
सोक-बिकल पुनि पूँछ नरेसू। कहु सिय-राम-लषन-संदेसू।
राम-रूप-गुन-सील-सुभाऊ। सुमिरि सुमिरि उर सोचत राऊ।
राज सुनाइ दीन्ह बनबासू। सुनि मन भयेउ न हरष हराँसू।
सो सुत बिछुरत गए न प्राना। को पापी बड़ मोहि समाना।

दो०—सखा रामु-सिय-लषनु जहँ तहाँ मोहि पहुँचाउ।
नाहिं त चाहत चलन अब प्रान कहौं सति भाउ ॥ १५० ॥

चौ०-पुनि पुनि पूँछत मंत्रिहि राऊ। प्रियतम-सुअन-सँदेस सुनाऊ।
करहि सखा सोइ बेगि उपाऊ। रामु-लषन-सिय नयन देखाऊ।
सचिउ धीर धरि कह मृदुबानी। महाराज तुम्ह पंडित ग्यानी।
बीर सुधीर धुरंधर देवा। साधुसमाज सदा तुम्ह सेवा।
जनम मरन सब दुख-सुख-भोगा। हानि लाभ, प्रियमिलन बियोगा।

---

* तेहि तेहि बूझा = जो जो रानी पूछती है उससे उससे (उलटा) यह पूँछता है। †काशि०-तनु।

काल करम बस होहिं गोसाईं। बरबस राति दिवस की नाईं।
सुख हरषहिं जड़, दुख बिलखाहीं। दोउ सम धीर धरहिं मन माहीं।
धीरज धरहु बिबेक बिचारी। छाँड़िय सोचु सकल-हितकारी।
दो०—प्रथम बासु तमसा भयेउ दूसर सुरसरि-तीर।
न्हाइ रहे जलपान करि सियसमेत दोउ बीर॥ १५१॥
चौ०-केवट कीन्हि बहुत सेवकाई। सो जामिनि सिंगरौर गवाँई।
होत प्रात बटछीरु मँगावा। जटामुकुट निज सीस बनावा।
रामसखा तब नाव मँगाई। प्रिया चढ़ाइ चढ़े रघुराई।
लषन बानधनु धरे बनाई। आपु चढ़े प्रभु आयसु पाई।
बिकल बिलोकि मोहि रघुबीरा। बोले मधुरबचन धरि धीरा।
तात प्रनामु तात सन कहेहु। बार बार पदपंकज गहेहु।
करबि पायँ परि बिनय बहोरी। तात करिअ जनि चिंता मोरी।
बनमग मंगल कुसल हमारें। कृपा अनुग्रह पुण्य तुम्हारें।
छंद—तुम्हरे अनुग्रह तात कानन जात सब सुख पाइहौं।
प्रतिपालि आयसु कुसल देखन पायँ पुनि फिरि आइहौं॥
जननी सकल परितोषि परि परि पायँ करि बिनती घनी।
तुलसी करेहु सोइ जतन जेहि कुसली रहहिं कोसलधनी॥
सो०—गुर सन कहब सँदेस बार बार पदपदुम गहि।
करब सोइ उपदेस जेहि न सोच मोहि अवधपति॥१५२॥
चौ०-पुरजन परिजन सकल निहोरी। तात सुनायेउ बिनती मोरी।
सोइ सब भाँति मोर हितकारी। जातें रह नरनाह सुखारी।
कहब सँदेसु भरत के आएँ। नीति न तजिअ राजपदु पाएँ।
पालेहु प्रजहि करम-मन-बानी। सेवहु मातु सकल सम जानी
अउर निबाहेहु भायप भाई। करि पितु-मातु-सुजन-सेवकाई
तात भाँति तेहि राखब राऊ। सोच मोर जेहिं करै न काऊ।
लषन कहे कछु बचन कठोरा। बरजि राम पुनि मोहि निहोरा।
बार बार निज सपथ दिवाई। कहबि न तात लषनलरिकाई।

दो०—कहि प्रनामु कछु कहन लिय सिय भइ सिथिल सनेह।
थकित बचन लोचन सजल पुलक पल्लवित देह॥१५३॥
चौ०—तेहि अवसर रघुबर रुख पाई। केवट पारहिं नाव चलाई॥
रघु-कुल-तिलक चले एहि भाँती। देखेउँ ठाढ़ कुलिस धरि छाती॥
मैं आपन किमि कहौं कलेसू। जिअत फिरेउँ लेइ रामसँदेसू॥
अस कहि सचिव बचन रहि गयेऊ। हानि-गलानि-सोच-बस भयेऊ॥
सूत-बचन सुनतहि नरनाहू। परेउ धरनि उर दारुनदाहू॥
तलफत बिषम मोह मन मापा। माँजा मनहुँ मीन कहुँ ब्यापा॥
करि बिलाप सब रोवहिं रानी। महा बिपति किमि जाइ बखानी॥
सुनि बिलाप दुखहू दुखु लागा। धीरजहू कर धीरजु भागा॥
दो०—भयेउ कोलाहल अवध अति सुनि नृप राउर सोर।
बिपुल बिहँगबन परेउ निसि मानहुँ कुलिस कठोर॥१५४॥
चौ०—प्रान कंठगत भयेउ भुआलू। मनिबिहीन जनु ब्याकुल ब्यालू॥
इंद्रीं सकल बिकल भईं भारी। जनु सर-सरसिज-बनु बिनु बारी॥
कौसिल्याँ नृपु दीख मलाना। रबि-कुल-रबि अथएउ जिअ जाना॥
उर धरि धीर राम महतारी। बोली बचन समय अनुसारी॥
नाथ समुझि मन करिअ बिचारू। राम-बियोग - पयोधि अपारू॥
करनधार तुम्ह अवध जहाजू। चढ़ेउ सकल-प्रिय-पथिक-समाजू॥
धीरजु धरिअ त पाइअ पारू। नाहिं त बूड़िहि सबु परिवारू॥
जौं जिय धरिअ बिनय पिय मोरी। रामु लखनु सिय मिलिहिं बहोरी॥
दो०—प्रिया बचन मृदु सुनत नृप चितयेउ आँखि उघारि।
तलफत मीन मलीन जनु सींचत* सीतल बारि॥१५५॥
चौ०—धरि धीरजु उठि बैठ भुआलू। कहु सुमंत्र कहँ राम कृपालू॥
कहाँ लखन कहँ रामु सनेही। कहँ प्रिय पुत्र - बधू बैदेही॥
बिलपत राउ बिकल बहु भाँती। भइ जुगसरिस सिराति न राती॥

* पाठा०—सींचेउ।

तापस-अंध-साप सुधि पाई। कौसल्यहि सब कथा सुनाई
भयेउ विकल बरनत इतिहासा। रामरहित धिग जीवनआसा
सो तनु राखि करवि मैं काहा। जेहि न प्रेमपनु मोर निबाहा
हा रघुनंदन प्रानपिरीते। तुम्ह बिनु जियत बहुत दिन बीते
हा जानकी लखन, हा रघुवर। हा पितु-हित-चित-चातक-जलधर

दो०—राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम।
तनु परिहरि रघुवरबिरह राउ गए सुरधाम ॥ १५६ ॥

चौ०-जिअन-मरन-फलु दसरथ पावा। अंड अनेक अमल जसु छावा
जियत राम-विधु-बदनु निहारा। रामबिरह करि मरनु सवाँरा।
सोकविकल सब रोवहिं रानी। रूपु सील बलु तेज बखानी।
करहिं विलाप अनेक प्रकारा। परहिं भूमि तल बारहिं बारा।
बिलपहिं विकल दास अरु दासी। घर घर रुदन करहिं पुरवासी।
अथएउ आजु भानु-कुल-भानू। धरमअवधि गुन-रूप-निधानू।
गारी सकल कैकेइहि देहीं। नयनबिहीन कीन्ह जग जेहीं।
एहि बिधि बिलपत रैनि बिहानी। आए सकल महामुनि ग्यानी।

दो०—तब बसिष्ठ मुनि समयसम कहि अनेक इतिहास।
सोक निवारेउ सबहिं कर निज बिग्यान-प्रकास ॥ १५७ ॥

चौ०-तेल नाव भरि नृपतन राखा। दूत बोलाइ बहुरि अस भाखा।
धावहु बेगि भरत पहिं जाहू। नृप-सुधि कतहुँ कहहु जनि काहू।
एतनेइ कहेउ भरत सन जाई। गुर बोलाइ पठयेउ दोउ भाई।
सुनि मुनि-आयसु धावन धाए। चले बेगि बरबाज लजाए
अनरथु अवध अरंभे जब तें। कुसगुन होहिं भरत कहुँ तब तें
देखहिं राति भयानक सपना। जागि करहिं कटु कोटि कलपना
बिप्र जेवाँइ देहिं दिन दाना। सिव-अभिषेक करहिं बिधि नाना
माँगहिं हृदय महेस मनाई। कुसल मातु पितु परिजन भाई

दो०—एहि बिधि सोचत भरत मन धावन पहुँचे आइ।
गुर-अनुसासन श्रवन सुनि चले गनेसु मनाइ ॥ १५८ ॥

चौ०-चले समीरबेग हय हाँके। नाँघत सरित सैल बन बाँके।
हृदय सोचु बड़ कछु न सोहाई। अस जानहिं जिय जाउँ उड़ाई।
एक निमेष बरषसम जाई। एहि बिध भरत नगर नियराई।
असगुन होहिं नगर पैठारा। रटहिं कुभाँति कुखेत करारा*।
खर सियार बोलहिं प्रतिकूला। सुनि सुनि होइ भरतमन सूला।
श्रीहत सर सरिता बन बागा। नगर बिसेषि भयावनु लागा।
खग मृग हय गय जाहिं न जोए। राम-वियोग-कुरोग बिगोए।
नगर-नारि-नर निपट दुखारी। मनहुँ सबन्हि सब संपति हारी।
दो०—पुरजन मिलहिं न कहहिं कछु गवहिं जोहारहिं जाहिं।
भरत कुसल पूँछि न सकहिं भय बिषाद मन माहिं ॥१५६॥
चौ०-हाट बाट नहिं जाहिं निहारी। जनु पुर दहँ दिसि लागि दवारी।
आवत सुत सुनि कैकयनंदिनि। हरषी रबि-कुल-जलरुह-चंदिनि।
सजि आरती मुदित उठि धाई। द्वारहिं भेंटि भवन लेइ आई।
भरत दुखित परिवारु निहारा। मानहुँ तुहिन बनजबनु मारा।
कैकेई हरषित एहि भाँती। मनहुँ मुदित दव लाइ किराती।
सुतहि ससोच देखि मनु मारें। पूछति नैहर कुसल हमारें।
सकल कुसल कहि भरत सुनाई। पूँछी निज-कुल-कुसल भलाई।
कहु कहँ तात कहाँ सब माता। कहँ सिय रामु लषन प्रिय भ्राता।
दो०—सुनि सुतवचन सनेहमय कपटनीर भरि नयन।
भरत-श्रवन-मन-सूल-सम पापिनि बोली बयन ॥१६०॥
चौ०-तात बात मैं सकल सवाँरी। भइ मंथरा सहाय बिचारी।
कछुक काज बिधि बीच बिगारेउ। भूपति सुर-पति-पुर पगु धारेउ।
सुनत भरत भयबिबस बिषादा। जनु सहमेउ करि केहरिनादा।
तात तात हा तात पुकारी। परे भूमितल ब्याकुल भारी।

---

* रारा०, करि०—करारा। इस पाठ से एक तो तुकांत में दोष आता है, दूसरे अर्थ भी नहीं बनता।

चलत न देखन पायेउँ तोही। तात न रामहिं सौंपेहु मोही।
वहुरि धीर धरि उठे सँभारी। कहु पितुमरन-हेतु महतारी।
सुनि सुतवचन कहति कैकेई। मरमु पाँछि जनु माहुर देई।
आदिहु तें सव आपनि करनी। कुटिल कठोर मुदितमन बरनी।

दो०—भरतहि विसरेउ पितुमरन सुनत राम-वन-गौनु।
हेतु अपनपउ जानि जिअ थकित रहे धरि मौनु ॥१६१॥

चौ०-विकल विलोकि सुतहि समुझावति। मनहुँ जरे पर लोनु लगावति।
तात राउ नहिं सोचइ जोगू। विढ़इ सुकृत जसु कीन्हेउ भोगू।
जीवत सकल जनम-फल पाए। अंत अमर-पति-सदन सिधाए।
अस अनुमानि सोचु परिहरहू। सहित समाज राज पुर करहू।
सुनि सुठि सहमेउ राजकुमारू। पाकें छतु जनु लाग अँगारू।
धीरजु धरि भरि लेहिं उसासा। पापिनि सवहिं भाँति कुल नासा।
जौं पै कुरुचि रही अति तोही। जनमत काहे न मारेसि मोहि।
पेड़ काटि तैं पालउ सींचा। मीनजिअन निति बारि उलीचा।

दो०—हंसवंसु दशरथु जनकु राम लखन से भाइ।
जननी तू जननी भई विधि सन कछु न बसाइ ॥१६२॥

चौ०-जब तैं कुमति कुमत जिअ ठयेऊ। खंड खंड होइ हृदय न गयेऊ।
वर माँगत मन भइ नहिं पीरा। गरि न जीह, मुँह परेउ न कीरा।
भूप प्रतीति तोरि किमि कीन्ही। मरनकाल विधि मति हरि लीन्ही।
बिधिहु न नारि हृदयगति जानी। सकल-कपट-अघ-अवगुन-खानी।
सरल-सुसील धरमरत राऊ। सो किमि जानै तीयसुभाऊ।
अस को जीव जंतु जग माहीं। जेहि रघुनाथ प्रान-प्रिय नाहीं।
भे अति अहित राम तेउ तोही। को तूँ अहसि सत्य कहु मोही।
जो हसि सो हसि मुँह मसि लाई। आँखि ओट उठि बैठहि जाई।

दो०—राम-विरोधी हृदय तें प्रगट कीन्ह विधि मोहि।
मो समान को पातकी बादि कहौं कछु तोहि ॥१६३॥

चौ०—सुनि सत्रुघुन मातुकुटिलाई। जरहिं गात रिस, कछु न बसाई।

तेहि अवसर कुबरी तहँ आई। बसन बिभूपन विविध बनाई।
लखि रिस भरेउ लपन-लघु-भाई। बरत अनल घृतआहुति पाई।
हुमगि लात तकि कूबर मारा। परि मुँह भरि महि करत पुकारा।
कूबर टूटेउ, फूट कपारू। दलित दसन मुख रुधिरप्रचारू।
आह दइअ मैं काह नसावा। करत नीक फलु अनइस पावा।
सुनि रिपुहन लखि नख-सिख खोटी। लगे घसीटन धरि धरि झोंटी।
भरत दयानिधि दीन्ह छुड़ाई। कौसल्या पहिं गे दोउ भाई।

दो०—मलिन बसन बिबरन बिकल कृस सरीर दुखभारु।
कनक-कलप-बर-बेलि-बन मानहुँ हनी तुसारु॥१६४॥

चौ०-भरतहिं देखि मातु उठि धाई। मुरुछित अवनि परी झईँ आई।
देखत भरतु बिकल भए भारी। परे चरन तनदसा बिसारी।
मातु तात कहँ देहि देखाई। कहँ सिय रामु लपनु दोउ भाई।
कइकइ कत जनमी जग माँझा। जौं जनमि त भइ काहे न बाँझा।
कुलकलंकु जेहि जनमेउ मोही। अपजसभाजन प्रिय-जन-द्रोही।
को त्रिभुवन मोहि सरिस अभागी। गति असि तोरि मातु जेहि लागी।
पितु सुरपुर, बन रघु-बर-केतू। मैं केवल सब अनरथहेतू।
धिग मोहि भयेउँ बेनु-बन-आगी। दुसह-दाह-दुख-दूपन-भागी।

दो०—मातु भरत के बचन मृदु सुनि पुनि उठी सँभारि।
लिये उठाइ लगाइ उर लोचन मोचति बारि॥१६५॥

चौ०-सरल सुभाय माय हिय लाए। अतिहित मनहुँ राम फिरि आए।
भैंटेउ बहुरि लपन-लघु-भाई। सोकु सनेहु न हृदय समाई।
देखि सुभाउ कहत सब कोई। राममातु अस काहु न होई।
माता भरतु गोद बैठारे। आँसु पोंछि मृदु बचन उचारे।
अजहुँ बच्छु, बलि, धीरज धरहू। कुसमउ समुझि सोक परिहरहू।
जनि मानहु हिय हानि गलानी। काल-करम-गति अघटित जानी।
काहुहि दोस देहु जनि ताता। भा मोहि सब बिधि बाम बिधाता।
जो एतेहु दुख मोहि जिआवा। अजहुँ को जानइ का तेहि भावा।

दो०—पितुआयसु भूषन बसन तात तजे रघुबीर।
विसमउ हरप न हृदय कछु पहिरे बलकल चीर॥ १६६॥

चौ०-मुखप्रसन्न मन रंग न रोषू। सब कर सब विधि करि परितोषू।
चले विपिन सुनि सिय सँग लागी। रहै न राम-चरन-अनुरागी।
सुनतहि लषनु चले उठि साथा। रहहिं न जतन किए रघुनाथा।
तब रघुपति सबही सिरु नाई। चले संग सिय अरु लघु भाई।
रामु लषनु सिय बनहिं सिधाए। गइउँ न संग न प्रान पठाए।
यहु सबु भा इन्ह आँखिन्ह आगे। तउ न तजा तनु जीव अभागे।
मोहि न लाज निज नेहु निहारी। रामसरिस सुत मैं महतारी।
जिअइ मरइ भल भूपति जाना। मोर हृदय सत-कुलिस-समाना।

दो०—कौसल्या के बचन सुनि भरतसहित रनिवासु।
ब्याकुल विलपत राजगृह मानहुँ सोकनिवासु॥ १६७॥

चौ०-विलपहिं विकल भरत दोउ भाई। कौसल्या लिए हृदय लगाई।
भाँति अनेक भरतु समुझाए। कहि बिबेकमय* बचन सुनाए।
भरतहु मातु सकल समुझाई। कहि पुरान श्रुति कथा सुहाई।
छलविहीन सुचि सरल सुबानी। बोले भरत जोरि जुग पानी।
जे अघ मातु-पिता-सुत मारें। गाइगोठ महि-सुर-पुर जारें।
जे अघ तिय-बालक-बध कीन्हे। मीत महीपति माहुर दीन्हे।
जे पातक उपपातक अहहीं। करम-बचन-मन-भव कवि कहहीं।
ते पातक मोहि होहु बिधाता। जौं एहु होइ मोर मत माता।

दो०—जे परिहरि हरि-हर-चरन भजहिं भूतगन घोर।
तेहि कै गति मोहि देउ बिधि जौं जननी मत मोर॥ १६८॥

चौ०-बेचहिं बेदु धरम दुहि लेहीं। पिसुन पराय पाप कहि देहीं।
कपटी कुटिल कलहप्रिय क्रोधी। बेदविदूषक बिस्वबिरोधी।
लोभी लंपट लोलुपचारा। जे ताकहिं परधनु परदारा।

* काशि०—बिवेकपर।

पावौं मैं तिन्ह कै गति घोरा। जौं जननी यहु संमत मोरा।
जे नहिं साधुसंग अनुरागे। परमारथपथ बिमुख अभागे।
जे न भजहिं हरि नरतनु पाई। जिन्हहिं न हरि-हर-सुजसु सुहाई।
तजि श्रुतिपंथ बामपथ चलहीं। बंचक बिरचि बेषु जगु छलहीं।
तिन्ह कै गति मोहिं संकर देऊ। जननी जौं यहु जानौं भेऊ।
दो०—मातु भरत के बचन सुनि साँचे सरल सुभाय।
कहति रामप्रिय तात तुम्ह सदा बचन मन काय ॥ १६६ ॥
चौ०-राम प्रान* तें प्रान तुम्हारे। तुम्ह रघुपतिहिं प्रान तें प्यारे।
बिधु बिष चवै† स्रवै हिमु आगी। होइ बारिचर बारिबिरागी।
भए ज्ञान बरु मिटै न मोहू। तुम्ह रामहिं प्रतिकूल न होहू।
मत तुम्हार यह जो जग कहहीं। सो सपनेहुँ सुखु सुगति न लहहीं।
अस कहि मातु भरतु हिय लाए। थनपय स्रवहिं नयनजल छाए।
करत बिलाप बहुत यहि भाँती। बैठेहि बीति गई सब राती।
बामदेउ बसिष्ठ तब आए। सचिव महाजन सकल बोलाए।
मुनि बहु भाँति भरत उपदेसे। कहि परमारथ बचन सुदेसे।
दो०—तात हृदय धीरजु धरहु करहु जो अवसर आजु।
उठे भरत गुरबचन सुनि करन कहेउ सब साजु ॥१७०॥
चौ०-नृपतनु बेद-बिहित अन्हवावा। परम बिचित्र बिमान बनावा।
गहि पग भरत मातु सब राखीं। रहीं राम दरसन अभिलाषीं।
चंदन-अगर-भार बहु आए। अमित अनेक सुगंध सुहाए।
सरजुतीर रचि चिता बनाई। जनु सुर-पुर-सोपान सुहाई।
यहि बिधि दाहक्रिया सब कीन्ही। बिधिवत न्हाइ तिलांजुलि दीन्ही।
सोधि सुमृति सब बेद पुराना। कीन्ह भरत दसगात-बिधाना।

---

* पाठ सब प्राचीन पुस्तकों में 'प्रानहु' मिलता है, पर उससे एक मात्रा बढ़ती है।

† काशि०—स्रवइ।

जहँ अस मुनिवर आयसु दीन्हा। तहँ तस सहस भाँति सबु कीन्हा।
भए विसुद्ध दिए सब दाना। धेनु बाजि गज वाहन नाना।

दो०—सिंघासन भूषन बसन अन्न धरनि धन धाम।
दिए भरत लहि भूमिसुर भे परिपूरन काम ॥१७१॥

चौ०-पितुहित भरत कीन्हि जसि करनी। सो मुख लाख जाइ नहिं बरनी।
सुदिनु सोधि मुनिवर तब आए। सचिव महाजन सकल बोलाए।
बैठे राजसभा सब जाई। पठए बोलि भरत दोउ भाई।
भरतु बसिष्ठ निकट बैठारे। नीति-धरम-मय बचन उचारे।
प्रथम कथा सब मुनिवर बरनी। कइकइ कुटिल कीन्हि जसि करनी।
भूप धरमव्रतु सत्य सराहा। जेहि तनु परिहरि प्रेमु निबाहा।
कहत राम-गुन-सीलु-सुभाऊ। सजल नयन पुलकेउ मुनिराऊ।
बहुरि लषन-सिय-प्रीति बखानी। सोक-सनेह-मगन मुनिग्यानी।

दो०—सुनहु भरत भावी प्रबल बिलखि कहेउ मुनिनाथ।
हानि लाभु जीवनु मरनु जसु अपजसु बिधि हाथ ॥१७२॥

चौ०-अस बिचारि केहि देइअ दोषू। ब्यरथ काहि पर कीजिअ रोषू।
तात बिचारु करहु मन माहीं। सोचुजोगु दसरथु नृपु नाहीं।
सोचिअ बिप्र जो बेद बिहीना। तजि निज धरमु बिषय-लयलीना।
सोचिअ नृपति जो नीति न जाना। जेहि न प्रजा प्रिय प्रानसमाना।
सोचिअ बयसु कृपन धनवानू। जो न अतिथि सिवभगति सुजानू।
सोचिअ सूद्र बिप्र-अवमानी। मुखरु मानप्रिय ग्यानगुमानी।
सोचिअ पुनि पतिबंचक नारी। कुटिल कलहप्रिय इच्छाचारी।
सोचिअ बटु निज ब्रतु परिहरई। जो नहिं गुर आयसु अनुसरई।

दो०—सोचिअ गृही जो मोहबस करै करमपथ त्याग।
सोचिअ जती प्रपंचरत बिगत बिबेक बिराग ॥१७३॥

चौ०-बैखानस सोइ सोचन जोगू। तपु बिहाइ जेहि भावै भोगू।
सोचिय पिसुन अकारन क्रोधी। जननि-जनक-गुरु-बंधु-बिरोधी।
सब बिधि सोचिअ पर-अपकारी। निज तनुपोषक निरदय भारी।

सोचनीय सबही बिधि सोई। जो न छाँड़ि छलु हरिजन होई॥
सोचनीय नहिं कोसलराऊ। भुवन चारिदस प्रगट प्रभाऊ॥
भयेउ, न अहै, न अब होनिहारा। भूप भरत जस पिता तुम्हारा॥
बिधि हरि हर सुरपति दिसिनाथा। बरनहिं सब दसरथ-गुन-गाथा॥
दो०—कहहु तात केहि भाँति कोउ करिहि बड़ाई तासु।
राम लषन तुम सत्रुहन सरिस सुअन सुचि जासु॥१७४॥
चौ०-सब प्रकार भूपति बड़भागी। बादि बिषादु करिअ तेही लागी॥
एहु सुनि समुझि सोचु परिहरहू। सिर धरि राजरजायसु करहू॥
राय राजपदु तुम्ह कहुँ दीन्हा। पितावचनु फुर चाहिअ कीन्हा॥
तजे रामु जेहि बचनहिं लागी। तनु परिहरेउ रामबिरहागी॥
नृपहि बचन प्रिय,नहिं प्रिय प्राना। करहु तात पितुबचन प्रवाना॥
करहु सीस धरि भूपरजाई। है तुम्ह कहँ सब भाँति भलाई॥
परसुराम पितुअग्याँ राखी। मारी मातु, लोग सब साखी॥
तनय जजातिहि जौबनु दयेऊ। पितुअग्या अघ अजसु न भयेऊ॥
दो०—अनुचित उचित बिचारु तजि जे पालहिं पितु बयन।
ते भाजन सुख सुजस के बसहिं अमरपति-अयन॥१७५॥
चौ०-अवसि नरेस-बचन फुर करहू। पालहु प्रजा, सोक परिहरहू॥
सुरपुर नृपु पाइहि परितोषू। तुम्ह कहँ सुकृतु सुजसु, नहिं दोषू॥
बेदबिदित* संमत सबही का। जेहि पितु देइ सो पावै टीका॥
करहु राजु परिहरहु गलानी। मानहु मोर बचन हित जानी॥
सुनि सुखु लहब रामबैदेही। अनुचित कहब न पंडित केही॥
कौसल्यादि सकल महतारी। तेउ प्रजासुख होहिं सुखारी॥
परम† तुम्हार राम कर जानिहि। सो सब बिधि तुम्ह सन भल मानिहि॥
सौंपेहु राजु राम के आएँ। सेवा करेहु सनेह सुहाएँ॥

* छक्का०, छक्कन०—बेदबिहित।

† राजा०, काशि०—परम। इन दोनों प्राचीन प्रतियों में यही पाठ है। सदल मिश्र ने 'मरम' पाठ दिया है जो अर्थ की दृष्टि से अच्छा है।

दो०—कीजिअ गुर-आयसु अवसि कहहिं सचिव कर जोरि।
रघुपति आएँ उचित जस तस तब करब बहोरि ॥१७६॥
चौ०—कौसिल्या धरि धीरजु कहई। पूत पथ्य गुरु-आयसु अहई।
सो आदरिअ करिअ हित मानी। तजिअ बिषादु कालगति जानी।
बन रघुपति, सुरपुर नरनाहू। तुम्ह एहि भाँति तात कदराहू।
परिजन प्रजा सचिव सब अंबा। तुम्हही सुत सब कहँ अवलंबा।
लखि बिधि बाम कालुकठिनाई। धीरजु धरहु मातु बलि जाई।
सिर धरि गुरआयसु अनुसरहू। प्रजा पालि परि-जन-दुख हरहू।
गुर के बचन सचिव अभिनंदनु। सुने भरत हिय हित जनु चंदनु।
सुनी बहोरि मातु मृदुबानी। सील-सनेह-सरल - रस सानी।
छंद—सानी सरल रस मातुबानी सुनि भरतु ब्याकुल भए।
लोचनसरोरुह स्रवत सींचत बिरह उर अंकुर नए॥
सो दसा देखत समय तेहि बिसरी सबहि सुधि देह की।
तुलसी सराहत सकल सादर सींव सहज सनेह की॥
सो०—भरत कमलकर जोरि धीर-धुरंधर धीर धरि।
बचनु अमिअ जनु बोरि देत उचित उत्तर सबहिं ॥१७७॥
चौ०—मोहि उपदेसु दीन्ह गुर नीका। प्रजा सचिव संमत सबही का।
मातु उचित धरि आयसु दीन्हा। अवसि सीस धरि चाहौं कीन्हा।
गुर-पितु-मातु-स्वामि-हित-बानी। सुनि मन मुदित करिअ भलि जानी।
उचित कि अनुचित किए बिचारू। धरमु जाइ सिर पातक भारू।
तुम्ह तौ देउ सरल सिख सोई। जो आचरत मोर भल होई।
जद्यपि यह समुझत हौं नीके। तदपि होत परितोषु न जी के।
अब तुम्ह बिनय मोरि सुनि लेहू। मोहि अनुहरत सिखावनु देहू।
उत्तर देउँ छमब अपराधू। दुखित-दोष-गुन गनहिं न साधू।
दो०—पितु सुरपुर, सिय-राम बन, करन कहहु मोहि राजु।
एहि ते जानहु मोर हित कै आपन बड़ काजु ॥१७८॥
चौ०—हित हमार सिय-पति-सेवकाई। सो हरि लीन्हि मातु कुटिलाई।

मैं अनुमानि दीख मन माहीं। आन उपाय मोर हित नाहीं।
सोकसमाजु राजु केहि लेखे। लषन-राम-सिय-पद बिनु देखे।
बादि बसन बिनु भूषन-भारू। बादि बिरति बिनु ब्रह्मबिचारू।
सरुज सरीर बादि बहु भोगा। बिनु हरिभगति जाय जप जोगा।
जायँ जीव बिनु देह सुहाई। बादि मोर सबु बिनु रघुराई।
जाउँ राम पहिं आयसु देहू। एकहि आँक मोर हित एहू।
मोहि नृपु करि भल आपन चहहू। सोउ सनेह जड़ताबस कहहू।
दो०—कैकेइसुअन कुटिल मति रामबिमुख गतलाज।
तुम्ह चाहत सुखु मोहबस मोहि से अधमु के राज ॥१७६॥
चौ०-कहौं साँच सब सुनि पतियाहू। चाहिअ धरमसील नरनाहू।
मोहि राजु हठि देइहहु जबहीं। रसा* रसातल जाइहि तबहीं।
मोहि समान को पापनिवासू। जेहि लगि सीयराम बनबासू।
राय राम कहुँ कानन दीन्हा। बिछुरत गमनु अमरपुर कीन्हा।
मैं सठ सब अनरथ कर हेतू। बैठ बात सब सुनौं सचेतू।
बिनु रघुबीर बिलोकिय बासू। रहे प्रान सहि जग उपहासू।
राम पुनीत बिषयरस रूखे। लोलप भूमिभोग के भूखे।
कहँ लगि कहौं हृदय-कठिनाई। निदरि कुलिसु जेहि लही बड़ाई।
दो०—कारन तें कारजु कठिन होइ दोसु नहिं मोर।
कुलिस अस्थि तें उपल तें लोह कराल कठोर ॥ १८० ॥
चौ०-कैकेईभव तनु अनुरागे। पावन प्रान अघाइ अभागे।
जौं प्रियबिरह प्रान प्रिय लागे। देखब सुनब बहुत अब आगे।
लषन-राम-सिय कहुँ बनु दीन्हा। पठै अमरपुर पतिहित कीन्हा।
लीन्ह बिधवपन अपजसु आपू। दीन्हेउ प्रजहिं सोकु संतापू।
मोहि दीन्ह सुखु सुजसु सुराजू। कीन्ह कैकईं सब कर काजू।
एहि तें मोर काह अब नीका। तेहि पर देन कहहु तुम्ह टीका।

---

* रसा—राम।

कैकइजठर जनमि जग माहीं। यह मोहि कहँ कछु अनुचित नाहीं।
मोरि बात सब बिधिहि बनाई। प्रजा पाँच कत करहु सहाई।
दो०—ग्रहग्रहीत पुनि बातबस तेहि पुनि बीछी मार।
तेहि पिआइअ बारुनी कहहु कवन उपचार ॥ १८१ ॥
चौ०—कैकइसुअन-जोग जग जोई। चतुर बिरंचि दीन्ह मोहि सोई।
दसरथतनय राम-लघु-भाई। दीन्हि मोहि बिधि बादि बड़ाई।
तुम्ह सबु कहहु कढ़ावन टीका। रायरजायसु सब कहँ नीका।
उतरु देउँ केहि बिधि केहि केही। कहहु सुखेन जथारुचि जेही।
मोहि कुमातुसमेत बिहाई। कहहु कहिहि के कीन्हि भलाई।
मो बिनु को सचराचर माहीं। जेहि सियरामु प्रानप्रिय नाहीं।
परम हानि सबु कहँ बड़ लाहू। अदिन मोर नहिं दूषन काहू।
संसय सील प्रेमबस अहहू। सबुइ उचित सबु जो कछु कहहू।
दो०—राममातु सुठि सरलचित मो पर प्रेमु बिसेखि।
कहै सुभाय सनेहबस मोरि दीनता देखि ॥ १८२ ॥
चौ०—गुर बिबेकसागर जग जाना। जिन्हहिं बिस्व कर-बदर-समाना।
मो कहँ तिलकसाज सज सोऊ। भए बिधि-बिमुख बिमुख सब कोऊ।
परिहरि रामुसीय जग माहीं। कोउ न कहिहि मोर मत नाहीं।
सो मैं सुनब सहब सुख मानी। अंतहु कीच तहाँ जहँ पानी।
डर न मोहि जग कहिहि कि पोचू। परलोकहु कर नाहिंन सोचू।
एकै उर बस दुसह दवारी। मोहि लगि भे सियराम दुखारी।
जीवनलाहु लषन भल पावा। सबु तजि रामचरनु मन लावा।
मोर जनम रघुबरबन लागी। झूठ काह पछिताउँ अभागी।
दो०—आपन दारुन दीनता कहौं सबहि सिर नाइ।
देखे बिनु रघु-नाथ-पद जिय कै जरनि न जाइ ॥ १८३ ॥
चौ०-आन उपाउ मोहि नहिं सूझा। को जिय कै रघुबर बिनु बूझा।
एकहि आँक इहै मन माहीं। प्रातकाल चलिहौं प्रभु पाहीं।
जद्यपि मैं अनभल अपराधी। भइ मोहि कारन सकल उपाधी।

तदपि सरन सनमुख मोहि देखी। छमि सब करिहहिं कृपा बिसेखी।
सीलु सकुचि सुठि सरल सुभाऊ। कृपा - सनेह - सदन रघुराऊ।
अरिहु क अनभल कीन्ह न रामा। मैं सिसु सेवकु जद्यपि बामा।
तुम्ह पै पाँच मोर भल मानी। आयसु आसिष देहु सुबानी।
जेहि सुनि बिनय मोहि जनु जानी। आवहिं बहुरि राम रजधानी।

दो०—जद्यपि जनमु कुमातु तें मैं सठ सदा सदोस।
आपन जानि न त्यागिहहिं मोहि रघु-बीर-भरोस॥ १८४॥

चौ०-भरतवचन सब कहँ प्रिय लागे। राम - सनेह-सुधा जनु पागे।
लोग बियोग-बिषम - बिष दागे। मंत्र सबीज सुनत जनु जागे।
मातु सचिव गुर पुर-नर-नारी। सकल सनेह बिकल भए भारी।
भरतहिं कहहिं सराहि सराही। राम-प्रेम-मूरति-तनु आही।
तात भरत अस काहे न कहहू। प्रान समान रामप्रिय अहहू।
जो पावँरु अपनी जड़ताई। तुम्हहिं सुगाइ मातुकुटिलाई।
सो सठु कोटिक-पुरुष-समेता। बसहिं कलपसत नरकनिकेता।
अहि-अघ-अवगुन नहिं मनि गहई। हरै गरल दुख दारिद दहई।

दो०—अवसि चलिअ बन राम जहँ भरत मंत्रु भल कीन्ह।
सोकसिंधु बूड़त सबहिं तुम्ह अवलंबनु दीन्ह॥१८५॥

चौ०-भा सब के मन मोदु न थोरा। जनु घनधुनि सुनि चातक मोरा।
चलत प्रात लखि निरनउ नीके। भरतु प्रानप्रिय भे सबही के।
मुनिहिं बंदि भरतहिं सिरु नाई। चले सकल घर बिदा कराई।
धन्य भरत-जीवनु जग माहीं। सीलु सनेहु सराहत जाहीं।
कहहिं परसपर भा बड़ काजू। सकल चलै कर साजहिं साजू।
जेहि राखहिं रहु घर रखवारी। सो जानै जनु गरदनि मारी।
कोउ कह रहन कहिअ नहिं काहू। को न चहै जग जीवनु-लाहू।

दो०—जरउ सो संपति-सदन-सुखु सुहृद मातु पितु भाइ।
सनमुख होत जो रामपद करै न सहस सहाइ॥१८६॥

चौ०-घर घर साजहिं बाहन नाना। हरषु हृदय परभात पयाना।

भरत जाइ घर कीन विचारू। नगरु बाजि गज भवन भँडारू॥
संपति सब रघुपति कै आही। जौं बिनु जतन चलौं तजि ताही॥
तौ परिनाम न मोरि भलाई। पापसिरोमनि साइँ दोहाई॥
करै स्वामिहित सेवक सोई। दूषन कोटि देइ किन कोई॥
अस बिचारि सुचि सेवक बोले। जे सपनेहुँ निज धरमु न डोले॥
कहि सब मरमु धरमु सब भाखा। जो जेहि लायक सो तेहि राखा॥
करि सबु जतनु राखि रखवारे। राममातु पहिं भरत सिधारे॥

दो०—आरत जननी जानि सब भरत सनेह सुजान।
कहेउ बनावन पालकी सजन सुखासन जान॥१८७॥

चौ०—चक्क चक्कि जिमि पुर-नर-नारी। चलत प्रात उर आरत भारी॥
जागत सब निसि भयेउ बिहाना। भरत बोलाए सचिव सुजाना॥
कहेउ लेहु सब तिलकसमाजू। बनहिं देव मुनि रामहिं राजू॥
बेगि चलहु सुनि सचिव जोहारे। तुरत तुरग रथ नाग सँवारे॥
अरुंधती अरु अगिनिसमाऊ। रथ चढ़ि चले प्रथम मुनिराऊ॥
बिप्रबृंद चढ़ि वाहन नाना। चले सकल तप-तेज-निधाना॥
नगर लोग सब सजि सजि जाना। चित्रकूट कहँ कीन्ह पयाना॥
सिबिका सुभग न जाहिं बखानी। चढ़ि चढ़ि चलत भईं सब रानी॥

दो०—सौंपि नगरु सुचि सेवकनि सादर सबहिं चलाइ।
सुमिरि राम-सिय-चरन तब चले भरतु दोउ भाइ॥१८८॥

चौ०-राम-दरस-बस सब नरनारी। जनु करि करिनि चले तकि बारी॥
बन सिय रामु समुझि मन माहीं। सानुज भरत पयादेहि जाहीं॥
देखि सनेह लोग अनुरागे। उतरि चले हय गय रथ त्यागे॥
जाइ समीप राखि निज डोली। राममातु मृदुबानी बोली॥
तात चढ़हु रथ बलि महतारी। होइहि प्रिय परिवारु दुखारी॥
तुम्हरे चलत चलिहि सब लोगू। सकल सोक-कृस नहिं मग जोगू॥
सिर धरि बचन चरन सिरु नाई। रथ चढ़ि चलत भए दोउ भाई॥
तमसा प्रथम दिवस करि बासू। दूसर गोमतितीर निवासू॥

दो०—पय अहार फल असन एक निसि भोजन एक लोग।
करत रामहित नेम ब्रत परिहरि भूषन भोग ॥१८९॥
चौ०-सई तीर बसि चले बिहाने। शृंगबेरपुर सब नियराने।
समाचार सब सुने निषादा। हृदय बिचारु करै सबिषादा।
कारन कवनु भरतु बन जाहीं। है कछु कपट भाउ मन माहीं।
जौं पै जिअ न होति कुटिलाई। तौ कत लीन्हि संग कटकाई।
जानहिं सानुज रामहि मारी। करौं अकंटक राजु सुखारी।
भरत न राजनीति उर आनी। तब कलंकु अब जीवनुहानी।
सकल सुरासुर जुरहिं जुझारा। रामहिं समर न जीतनिहारा।
का आचरजु भरतु अस करहीं। नहिं बिषबेलि अमिअफल फरहीं।
दो०—अस बिचारि गुह ग्याति सन कहेउ सजग सब होहु।
हथवाँसहु बोरहु तरनि कीजिअ घाटारोहु ॥१९०॥
चौ०–होहु सँजोइल रोकहु घाटा। ठाटहु सकल मरै के ठाटा।
सनमुख लोह भरत सन लेऊँ। जिअत न सुरसरि उतरन देऊँ।
समरु मरन पुनि सुर-सरि-तीरा। रामकाजु छनभंगु सरीरा।
भरत भाइ नृप मैं जन नीचू। बड़े भाग असि पाइअ मीचू
स्वामिकाज करिहउँ रन रारी। जस धवलिहउ भुवन दस चारी।
तजौं प्रान रघु-नाथ-निहोरें। दुहूँ हाथ मुद मोदक मोरें।
साधुसमाज न जा कर लेखा। राम भगत महँ जासु न रेखा।
जायँ जिअत जग सो महि भारू। जननी-जौबन-बिटप-कुठारू।
दो०—बिगतबिषाद निषादपति सबहि बढ़ाइ उछाहु।
सुमिरि राम माँगेउ तुरत तरकस धनुष सनाहु ॥ १९१ ॥
चौ०-बेगहु भाइहु सजहु सँजोऊ। सुनि रजाइ कदराइ न कोऊ।
भलेहिं नाथ सब कहहिं सहरषा। एकहिं एक बढ़ावै करषा।
चले निषाद जोहारि जोहारी। सूर सकल रन रूचै रारी।
सुमिरि राम-पद-पंकज-पनहीं। भाथी बाँधि चढ़ाइन्हि धनहीं।
अँगरी पहिरि कूँड़ि सिर धरहीं। फरसा बाँस सेल सम करहीं।

एक कुसल अति ओड़न खाँड़े। कूदहिं गगन मनहुँ छिति छाँड़े।
निज निज साजु समाजु बनाई। गुहराउतहिं जोहारे जाई।
देखि सुभट सब लायक जाने। लै लै नाम सकल सनमाने।
दो०—भाइहु लावहु धोख जनि आजु काज बड़ मोहि।
सुनि सरोष बोले सुभट बीर अधीर न होहिं ॥१९२॥
चौ०-रामप्रताप नाथ बल तोरें। करहिं कटकु बिनु भट बिनु घोरें।
जीवत पाउ न पाछे धरहीं। रुंड-मुंड-मय मेदिनि करहीं।
दीख निषादनाथ भल टोलू। कहेउ बजाउ जुझाऊ ढोलू।
एतना कहत छींक भइ बाएँ। कहेउ सगुनिअन्ह खेत सुहाएँ।
बूढ़ एक कह सगुन बिचारी। भरतहि मिलिअ न होइहि रारी।
रामहिं भरत मनावन जाहीं। सगुन कहै अस बिग्रहु नाहीं।
सुनि गुह कहै नीक कह बूढ़ा। सहसा करि पछिताहिं बिमूढ़ा।
भरत-सुभाव-सील बिनु बूझे। बड़ि हितहानि जानि बिनु जूझे।
दो०—गहहु घाट भट सिमिटि सब लेउँ मरम मिलि जाइ।
बूझि मित्र अरि मध्य गति तब तस करिहौं आइ ॥१९३॥
चौ०—लखब सनेहु सुभाय सुहाएँ। बैर प्रीति नहिं दुरै दुराएँ।
अस कहि भेंट सँजोवन लागे। कंद मूल फल खग मृग माँगे।
मीन पीन पाठीन पुराने। भरि भरि भार कहारन्ह आने।
मिलन-साजु सजि मिलन सिधाए। मंगलमूल सगुन सुभ पाए।
देखि दूरि ते कहि निज नामू। कीन्ह मुनीसहिं दंडप्रनामू।
जानि रामप्रिय दीन्हि असीसा। भरतहिं कहेउ बुझाइ मुनीसा।
रामसखा सुनि स्यंदनु त्यागा। चले उतरि उमगत अनुरागा।
गाउँ जाति गुह नाउँ सुनाई। कीन्ह जोहारु माथ महि लाई।
दो०—करत दंडवत देखि तेहि भरत लीन्ह उर लाइ।
मनहुँ लखन सन भेंट भइ प्रेमु न हृदय समाइ ॥ १९४ ॥
चौ०-भेंटत भरत ताहि अति प्रीती। लोग सिहाहिं प्रेम कै रीती।
धन्य धन्य धुनि मंगलमूला। सुर सराहि तेहि बरिसहिं फूला।

लोक बेद सब भाँतिहि नीचा । जासु छाँह छुइ लेइअ सींचा ।
तेहि भरि अंक राम-लघु-भ्राता । मिलत पुलकपरिपूरित गाता ।
राम राम कहि जे जमुहाहीं । तिन्हहिं न पापपुंज समुहाहीं ।
एहि तौ राम लाइ उर लीन्हा । कुलसमेत जगु पावन कीन्हा ।
करमनास-जल सुरसरि परई । तेहि को कहहु सीस नहिं धरई ।
उलटा नाम जपत जग जाना । बालमीकि भए ब्रह्म समाना ।

दो०—स्वपच सबर खस जमन जड़ पाँवर कोल किरात ।
राम कहत पावन परम होत भुवन विख्यात ॥१९५॥

चौ०-नहिं अचिरिजु जुग जुग चलि आई । केहि न दीन्हि रघुबीर बड़ाई ।
रामनाम-महिमा सुर कहहीं । सुनि सुनि अवधलोग सुखु लहहीं ।
रामसखहिं मिलि भरत सप्रेमा । पूँछी कुसल सुमंगल खेमा ।
देखि भरत कर सीलु सनेहू । भा निषाद तेहि समय बिदेहू ।
सकुच सनेहु मोदु मन बाढ़ा । भरतहिं चितवत एकटक ठाढ़ा ।
धरि धीरजु पद बंदि बहोरी । बिनय सप्रेम करत कर जोरी ।
कुसलमूल पदपंकज पेखी । मैं तिहुँ काल कुसल निज लेखी ।
अब प्रभु परम अनुग्रह तोरें । सहित कोटि कुल मंगल मोरें ।

दो०—समुझि मोरि करतूति कुलु प्रभु महिमा जिअ जोइ ।
जो न भजै रघु-बीर-पद जग बिधिबंचित सोइ ॥१९६॥

चौ०-कपटी कायर कुमति कुजाती । लोक बेद बाहेर सब भाँती ।
राम कीन्ह आपन जबही तें । भयेउँ भुवन-भूषन तबही तें ।
देखि प्रीति सुनि बिनय सुहाई । मिलेउ बहोरि भरत-लघु-भाई ।
कहि निषाद निज नाम सुबानी । सादर सकल जोहारीं रानी ।
जानि लषनसम देहिं असीसा । जिअहु सुखी सय लाख बरीसा ।
निरखि निषादु नगर-नरनारी । भए सुखी जनु लषनु निहारी ।
कहहिं लहेउ एहि जीवन-लाहू । भेंटेउ रामभद्र भरि बाहू ।
सुनि निषादु निज-भाग-बड़ाई । प्रमुदित मन लै चलेउ लेवाई ।

दो०—सनकारे सेवक सकल चले स्वामि-रुख पाइ।
घर तरु तर सर बाग बन बास बनाएन्हि जाइ ॥१९७॥
चौ०-शृंगबेरपुर भरत दीख जब। भे सनेह सब अंग सिथिल तब।
सोहत दिए निषादहि लागू। जनु धनु * धरे बिनय अनुरागू।
एहि बिधि भरत सेन सब संगा। दीख जाइ जगपावनि गंगा।
रामघाट कहँ कीन्ह प्रनामू। भा मनु मगनु मिले जनु रामू।
करहिं प्रनाम नगर-नर नारी। मुदित ब्रह्ममय बारि निहारी।
करि मज्जनु माँगहि कर जोरी। रामचंद्र - पद - प्रीति न थोरी।
भरत कहेउ सुरसरि तव रेनू। सकल-सुखद-सेवक- सुर - धेनू।
जोरि पानि बर माँगहु एहू। सीय-राम-पद - सहज - सनेहू।
दो०—एहि बिधि मज्जनु भरतु करि गुर अनुसासन पाइ।
मातु नहानीं जानि सब डेरा चले लवाइ ॥१९८॥
चौ०-जहँ तहँ लोगन्ह डेरा कीन्हा। भरत सोध सबहीं कर लीन्हा।
सुरसेवा † करि आयसु पाई। रामुमातु पहिं गे दोउ भाई।
चरन चाँपि कहि कहि मृदुबानी। जननी सकल भरत सनमानी।
भाइहि सौंपि मातुसेवकाई। आपु निषादहि लीन्ह बोलाई।
चले सखा कर सों कर जोरें। सिथिल सरीरु सनेहु न थोरें।
पूछत सखहि सो ठाउँ देखाऊ। नेकु नयन-मन-जरनि जुड़ाऊ।
जहँ सिय रामु लषनु निसि सोये। कहत भरे जल लोचनकोये।
भरतवचन सुनि भयेउ बिषादू। तुरत तहाँ लै गयेउ निषादू।
दो०—जहँ सिंसुपा पुनीत तरु रघुबर किय बिस्रामु।
अति सनेह सादर भरत कीन्हेउ दंड प्रनामु ॥१९९॥
चौ०-कुस साथरी निहारि सुहाई। कीन्ह प्रनाम प्रदच्छिन जाई।
चरन-रेख-रज आँखिन्ह लाई। बचन न कहत प्रीति अधिकाई।
कनकबिंदु दुइ चारिक देखे। राखे सीस सीयसम लेखे।

---

* सदल०—तनु।
† काशि० गुरसेवा।

सजल बिलोचन हृदय गलानी। कहत सखा मन बचन सुबानी॥
श्रीहत सीयबिरह दुतिहीना। जथा अवध नरनारि मलीना*॥
पिता जनक देउँ पटतर केही। करतल भोगु जोगु जग जेही॥
ससुर भानु-कुल-भानु भुआलू। जेहि सिहात अमरावतिपालू॥
प्राननाथु रघुनाथ गोसाईं। जे बड़ होत सो रामबड़ाई॥
दो०—पतिदेवता सुतीय-मनि सीय साथरी देखि।
बिहरत हृदउ न हहरि हर पबि तें कठिन बिसेखि॥२००॥
चौ०-लालनजोगु लषन लघु लोने। भे न भाइ अस अहहिं न होने॥
पुरजन प्रिय पितु मातु दुलारे। सिय-रघुबीरहिं प्रानपिआरे॥
मृदुमूरति सुकुमार सुभाऊ। ताति बाउ तन लाग न काऊ॥
ते बन सहहिं बिपति सब भाँती। निदरे कोटि कुलिस एहि छाती॥
राम जनमि जगु कीन्ह उजागर। रूप सील सुख सब गुनसागर॥
पुरजन परिजन गुर पितु माता। रामसुभाउ सबहि सुखदाता॥
बैरिउ रामबड़ाई करहीं। बोलनि मिलनि बिनय मन हरहीं॥
सारद कोटि कोटि सत सेखा। करि न सकहिं प्रभु-गुन-गन-लेखा॥
दो०—सुखसरूप रघु-बंस-मनि मंगल-मोद-निधानु।
ते सोवत कुस डासि महि बिधिगति अति बलवानु॥२०१॥
चौ०-राम सुना दुखु कान न काऊ। जीवनतरु जिमि जोगवै राऊ॥
पलक नयन फनिमनि जेहि भाँती। जोगवहिं जननि सकल दिन राती॥
ते अब फिरत बिपिन पदचारी। कंद-मूल-फल-फूल अहारी॥
धिग कैकई अमंगल-मूला। भइसि प्रान-प्रियतम-प्रतिकूला॥
मैं धिग धिग अघउदधि अभागी। सबु उतपातु भयेउ जेहि लागी॥
कुलकलंकु करि सृजेउ बिधाता। साइँ द्रोह मोहि कीन्ह कुमाता॥
सुनि सप्रेम समुझाव निषादू। नाथ करिअ कत बादि बिषादू॥
राम तुम्हहिं प्रिय तुम्ह प्रिय रामहि। यह निरजोसु दोसु बिधि बामहि॥

---

* राजा०, काशि०—बिलीना।

छंद—विधि वाम की करनी कठिन जेहि मातु कीन्ही बावरी।
तेहि राति पुनि पुनि करहिं प्रभु सादर सराहन रावरी॥
तुलसी न तुम्ह सों राम प्रीतमु कहत हौं सौंहें किए।
परिनाम मंगलु जानि अपने आनिए धीरज हिए॥

सो०—अंतरजामी राम सकुच सप्रेम कृपायतन।
चलिअ करिअ बिश्राम यह बिचार दृढ़ आनि मन॥२०२॥

चौ०—सखाबचन सुनि उर धरि धीरा। बास चले सुमिरत रघुबीरा।
यह सुधि पाइ नगर-नर-नारी। चले बिलोकन आरत भारी।
परदखिना करि करहिं प्रनामा। देहिं कैकइहि खोरि निकामा।
भरि भरि बारि बिलोचन लेहीं। बाम बिधातहिं दूषन देहीं।
एक सराहहिं भरतसनेहू। कोउ कह नृपति निबाहेउ नेहू।
निंदहिं आपु सराहि निषादहि। को कहि सकै बिमोहबिषादहि।
एहि बिधि राति लोगु सबु जागा। भा भिनुसार गुदारा लागा।
गुरहिं सुनाव चढ़ाइ सुहाई। नई नाव सब मातु चढ़ाई।
दंड चारि महँ भा सबु पारा। उतरि भरत तब सबहिं सँभारा।

दो०—प्रातक्रिया करि मातुपद बंदि गुरहि सिर नाइ।
आगें किए निषादगन दीन्हेउ कटक चलाइ॥ २०३॥

चौ०-कियेउ निषादनाथ अगुआईं। मातु पालकी सकल चलाईं।
साथ बोलाइ भाइ लघु दीन्हा। बिप्रन्ह सहित गमनु गुर कीन्हा।
आपु सुरसरिहिं कीन्ह प्रनामू। सुमिरे लषनसहित सियरामू।
गवने भरत पयादेहि पाए। कोतल संग जाहिं डोरिआए।
कहहिं सुसेवक बारहिं बारा। होइअ नाथ अस्व असवारा।
रामु पयादेहि पाय सिधाए। हम कहँ रथ गज बाजि बनाए।
सिरभर जाउँ उचित अस मोरा। सब तें सेवकधरमु कठोरा।
देखि भरतगति, सुनि मृदुबानी। सब सेवकगन गरहिं* गलानी।

* काशि०, सरल०—करहिं।

दो०—भरत तीसरे पहर कहँ कीन्ह प्रबेसु प्रयाग।
कहत राम सिय राम सिय उमगि उमगि अनुराग ॥२०४॥
चौ०-झलका झलकत पायन्ह कैसें। पंकजकोस ओसकन जैसें।
भरत पयादेहि आए आजू। भयेउ दुखित सुनि सकल समाजू।
खबरि लीन्ह सब लोग नहाए। कीन्ह प्रनामु त्रिबेनिहि आए।
सबिधि सितासित नीर नहाने। दिए दान महिसुर सनमाने।
देखत स्यामल - धवल - हलोरे। पुलकि सरीर भरत कर जोरे।
सकल - काम - प्रद तीरथराऊ। बेदबिदित जग प्रगट प्रभाऊ।
माँगौं भीख त्यागि निज धरमू। आरत काह न करै कुकरमू।
अस जिय जानि सुजान सुदानी। सफल करहिं जग जाचकबानी।
दो०—अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहौं निरवान।
जनम जनम रति रामपद यह बरदान, न आन ॥२०५॥
चौ०-जानहु रामु कुटिल करि मोही। लोग कहेउ गुरु-साहिब-द्रोही।
सीता - राम - चरन रति मोरें। अनुदिन बढ़ै अनुग्रह तोरें।
जलदु जनम-भरि सुरति बिसारेउ। जाँचत जलु पबि पाहन डारेउ।
चातक रटनि घटे घटि जाई। बढ़े प्रेम सब भाँति भलाई।
कनकहि बान* चढ़ै जिमि दाहें। तिमि प्रिय-तम-पद नेम निबाहें।
भरतबचन सुनि माँझ त्रिबेनी। भइ मृदुबानि सु - मंगल - देनी।
तात भरत तुम्ह सब बिधि साधू। राम - चरन - अनुराग - अगाधू।
बादि गलानि करहु मन माहीं। तुम्ह सम रामहि कोउ प्रिय नाहीं।
दो०—तनु पुलकेउ हिय हरषु सुनि बेनिबचन अनुकूल।
भरत धन्य कहि धन्य सुर हरषित बरषहिं फूल ॥ २०६ ॥
चौ०-प्रमुदित तीरथ-राज-निवासी। बैखानस बटु गृही उदासी।
कहहिं परसपर मिलि दस पाँचा। भरत सनेहु सीलु सुचि साँचा।
सुनत राम-गुन-ग्राम सुहाए। भरद्वाज मुनिबर पहिं आए।
दंडप्रनामु करत मुनि देखे। मूरतिमंत भाग निज लेखे।

---

* बान = वर्ण, आब।

धाइ उठाइ लाइ उर लीन्हे। दीन्हि असीस कृतारथ कीन्हे।
आसनु दीन्ह नाइ सिरु बैठे। चहत सकुच-गृह जनु भजि पैठे।
मुनि पूछब कछु यह बड़ सोचू। बोले रिषि लखि सीलु सँकोचू।
सुनहु भरत हम सब सुधि पाई। विधिकरतब पर कछु न बसाई।

दो०—तुम्ह गलानि जिय जनि करहु समुझि मातुकरतूति।
तात कैकेइहि दोषु नहिं गई गिरा मति धूति ॥२०७॥

चौ०-यहउ कहत भल कहिहि न कोऊ। लोकु बेद बुधसंमत दोऊ।
तात तुम्हार बिमल जसु गाई। पाइहि लोकउ बेदु बड़ाई।
लोक-बेद-संमत सबु कहई। जेहि पितु देइ राजु सो लहई।
राउ सत्यब्रत तुमहिं बोलाई। देत राजु सबु धरमु बड़ाई।
रामगवनु बन अनरथमूला। जो सुनि सकल बिस्व भइ सूला।
सो भावीबस रानि सयानी। करि कुचालि अंतहु पछितानी।
तहउँ तुम्हार अलप अपराधू। कहै सो अधम अयान असाधू।
करतेहु राज त तुम्हहिं न दोषू। रामहिं होत सुनत संतोषू।

दो०—अब अति कीन्हेहु भरत भल तुम्हहिं उजित मत एहु।
सकल-सुमंगल-मूल जग रघुबर-चरन-सनेहु ॥२०८॥

चौ०-सो तुम्हार धनु जीवनप्राना। भूरि भाग को तुम्हहिं समाना।
यह तुम्हार आचरज न ताता। दसरथसुअन राम-प्रिय भ्राता।
सुनहु भरत रघु-बर मन माहीं। प्रेमपात्रु तुम सम कोउ नाहीं।
लषन राम सीतहिं अति प्रीती। निसि सब तुम्हहिं सराहत बीती।
जाना मरमु नहात प्रयागा। मगन होहिं तुम्हरे अनुरागा।
तुम्ह पर अस सनेहु रघुबर के। सुख जीवन जग जस जड़ नर के।
यह न अधिक रघुबीर बड़ाई। प्रनत-कुटुंब-पाल रघुराई।
तुम्ह तौ भरत मोर मत एहू। धरे देह जनु रामसनेहू।

दो०—तुम्ह कहँ भरत कलंक यह हम सब कहँ उपदेसु।
राम-भगति-रस-सिद्धि-हित भा यह समउ गनेसु ॥२०९॥

चौ०-नवबिधु बिमल तात जसु तोरा। रघुबरकिंकर-कुमुद-चकोरा।

उदित सदा अथइहि कबहूँ ना। घटिहि न जग-नभ दिन दिन दूना।
कोक-तिलोक प्रीति अति करिहीं। प्रभुप्रतापु-रबि छबिहि न हरिहीं।
निसि दिन सुखद सदा सब काहू। ग्रसिहि न कैकइ-करतब-राहू।
पूरन रामु-सु-प्रेम-पियूषा। गुर-अपमान दोख नहिं दूषा।
रामभगत अब अमिय अघाहू। कीन्हेहु सुलभ सुधा बसुधाहू।
भूप भगीरथ सुरसरि आनी। सुमिरत सकल-सु-मंगल-खानी।
दसरथ गुन-गन बरनि न जाहीं। अधिकु कहा जेहि सम जग नाहीं।

दो०—जासु सनेह-सकोच-बस राम प्रगट भए आइ।
जे हर हिय-नयननि कबहुँ निरखे नहीं अघाइ॥ २१०॥

चौ०—कीरति बिधु तुम्ह कीन्हि अनूपा। जहँ बस राम प्रेम-मृग-रूपा।
तात गलानि करहु जिय जाएँ। डरहु दरिद्रहिं पारस पाएँ।
सुनहु भरत हम झूठ न कहहीं। उदासीन तापस बन रहहीं।
सब साधन कर सुलभ सुहावा। लखन-राम-सिय-दरसनु पावा।
तेहि फल कर फलु दरस तुम्हारा। सहित प्रयाग सुभाग हमारा।
भरत धन्य तुम्ह जग जसु जयेऊ। कहि अस प्रेम-मगन मुनि भयेऊ।
सुनि मुनिबचन सभासद हरषे। साधु सराहि सुमन सुर बरषे।
धन्य धन्य धुनि गगन पयागा। सुनि सुनि भरत मगन अनुरागा।

दो०—पुलकगात हिय राम सिय सजल सरोरुह नयन।
करि प्रनाम मुनिमंडलिहि बोले गदगद बयन॥ २११॥

चौ०—मुनिसमाजु अरु तीरथराजू। साँचिहु सपथ अघाइ अकाजू।
एहि थल जौं कुछ कहिअ बनाई। एहि सम अधिक न अघ अधमाई।
तुम्ह सर्वग्य कहौं सतिभाऊ। उर-अंतर-जामी रघुराऊ।
मोहि न मातु करतब कर सोचू। नहिं दुख जिय जग जानहिं पोचू।
नाहिन डरु बिगरहि परलोकू। पितहु मरन कर मोहि न सोकू।
सुकृत सुजस भरि भुवन सुहाए। लछिमन-राम-सरिस सुत पाए।
रामबिरह तजि तनु छनभंगू। भूप सोच कर कवन प्रसंगू।
राम-लखन-सिय बिनु पग पनहीं। करि मुनिबेष फिरहिं बन बनहीं।

दो०—अजिन बसन, फल असन, महि सयन डासि कुस पात।
बसि तरुतर नित सहत हिम आतप बरषा बात ॥ २१२ ॥
चौ०-एहि दुखदाह दहै दिन छाती। भूख न बासर, नींद न राती।
एहि कुरोग कर औषधु नाहीं। सोधेउँ सकल बिस्व मन माहीं।
मातु कुमत बढ़ई अघमूला। तेहि हमार हित कीन्ह बसूला।
कलि* कुकाठ कर कीन्ह कुजंत्रू। गाड़ि अवधि† पढ़ि कठिन कुमंत्रू।
मोहि लगि यह कुठाटु तेहि ठाटा। घालेसि सब जग बारह बाटा।
मिटै कुजोग राम फिरि आए। बसै अवध नहिं आन उपाए।
भरतवचन सुनि मुनि सुख पाई। सबहिं कीन्हि बहु भाँति बड़ाई।
तात करहु जनि सोचु बिसेखी। सब दुखु मिटिहि रामपग देखी।
दो०—करि प्रबोधु मुनिबर कहेउ अतिथि पेमप्रिय होहु।
कंद मूल फल फूल हम देहिं लेहु करि छोहु ॥ २१३ ॥
चौ०-सुनि मुनिबचन भरत हिय सोचू। भयेउ कुअवसर कठिन सँकोचू।
जानि गरुइ गुरगिरा बहोरी। चरन बंदि बोले कर जोरी।
सिर धरि आयसु करिअ तुम्हारा। परमधरम यहु नाथ हमारा।
भरतवचन मुनिबर मन भाए। सुचि सेवक सिष निकट बुलाए।
चाहिअ कीन्हि भरत पहुनाई। कंद मूल फल आनहु जाई।
भलेहि नाथ कहि तिन्ह सिर नाए। प्रमुदित निज निज काज सिधाए।
मुनिहि सोचु पाहुन बड़ नेवता। तसि पूजा चाहिअ जस देवता।
सुनि रिधिसिधि अनिमादिक आई। आयेसु होइ सो करहिं गोसाईं।
दो०—रामबिरह ब्याकुल भरतु सानुज सहित समाज।
पहुनाई करि हरहु श्रम कहा मुदित मुनिराज ॥२१४॥
चौ०-रिधि सिधि सिर धरि मुनि-बर-बानी। बड़ भागिनि आपुहि अनुमानी।
कहहिं परसपर सिधिसमुदाई। अतुलित अतिथि राम-लघु-भाई।

---

* कलि = मिलावाँ और पाप।
†कारि०—अवध।

मुनिपद बंदि करिअ सोइ आजू। होइ सुखी सब राजसमाजू।
अस कहि रचेउ रुचिर गृह नाना। जेहि बिलोकि बिलखाहिं बिमाना।
भोग बिभूति भूरि भरि राखे। देखत जिन्हहि अमर अभिलाखे।
दासी दास साजु सब लीन्हे। जोगवत रहहिं मनहिं मनु दीन्हे।
सब समाजु सजि सिधि पल माहीं। जे सुख सुरपुर सपनेहुँ नाहीं।
प्रथमहिं बास दिए सब केही। सुंदर सुखद जथारुचि जेही।
दो०—बहुरि सपरिजन भरत कहुँ रिषि अस आयेसु दीन्ह।
बिधि-बिसमय-दायकु बिभव मुनिबर तपबल कीन्ह ॥२१५॥
चौ०-मुनिप्रभाउ जब भरत बिलोका। सब लघु लगे लोकपति लोका।
सुख समाजु नहिं जाइ बखानी। देखत बिरति बिसारहिं ज्ञानी।
आसन सयन सुबसन बिताना। बन बाटिका बिहँग मृग नाना।
सुरभि फूल फल अमिअसमाना। बिमल जलासय बिबिध बिधाना।
असन पान सुचि अमिअ अमी से। देखि लोक सकुचात जमी* से।
सुरसुरभी सुरतरु सबही के। लखि अभिलाष सुरेस सची के।
रितु बसंत बह त्रिबिध बयारी। सब कहँ सुलभ पदारथ चारी।
स्रक चंदन बनितादिक भोगा। देखि हरष बिसमयबस लोगा।
दो०—संपति चकई भरतु चक मुनिआयेसु खेलवार।
तेहि निसि आस्रमपिंजरा राखे भा भिनुसार ॥२१६॥
चौ०- कीन्ह निमज्जनु तीरथराजा। नाइ मुनिहिं सिरु सहित समाजा।
रिषिआयसु असीस सिर राखी। करि दंडवत बिनय बहु भाखी।
पथ-गति-कुसल साथ सब लीन्हे। चले चित्रकूटहि चितु दीन्हे।
रामसखा कर दीन्हे लागू। चलत देह धरि जनु अनुरागू।
नहिं पदत्रान सीस नहिं छाया। पेमु नेमु ब्रतु धरमु अमाया।
लखन - राम-सिय - पंथ- कहानी। पूछत सखहि कहत मृदुबानी।
राम-बास-थल-बिटप बिलोकें। उरअनुराग रहत नहिं रोकें।
देखि दसा सुर बरसहिं फूला। भइ मृदु महि मगु मंगलमूला।

* जमी=यमी, संयमी।

दो०—किए जाहिं छाया जलद सुखद बहै बर बात।
तस मगु भयेउ न राम कहँ जस भा भरतहिं जात ॥२१७॥
चौ०—जड़ चेतन मग जीव घनेरे। जे चितए प्रभु जिन्ह प्रभु हेरे।
ते सब भए परम-पद-जोगू। भरतदरस मेटा भवरोगू।
येह बड़ि बात भरत कै नाहीं। सुमिरत जिनहिं रामु मन माहीं।
बारक राम कहत जग जेऊ। होत तरन-तारन नर तेऊ।
भरतु राम प्रिय पुनि लघुभ्राता। कस न होइ मगु मंगलदाता।
सिद्ध साधु मुनिबर अस कहहीं। भरतहिं निरखि हरषु हिय लहहीं।
देखि प्रभाउ सुरेसहि सोचू। जगु भल भलेहि,पोच कहुँ पोचू।
गुर सन कहेउ करिअ प्रभु सोई। रामहि भरतहि भेंट न होई।
दो०—राम सँकोची प्रेमबस भरत सुपेम-पयोधि।
बनी बात बिगरन चहति करिअ जतनु छलु सोधि ॥२१८॥
चौ०-बचन सुनत सुरगुर मुसुकाने। सहसनयन बिनु लोचन जाने।
कह गुरु बादि छोभु छलु छाड़ू। इहाँ कपट कर होइहि भाँड़ू*।
माया-पति-सेवक सन माया। करै त उलटि परै सुरराया।
तब किछु कीन्ह रामरुख जानी। अब कुचालि करि होइहि हानी।
सुनु सुरेस रघु-नाथ-सुभाऊ। निजअपराध रिसाहि न काऊ।
जो अपराध भगत कर करई। राम-रोष-पावक सो जरई।
लोकहु बेद बिदित इतिहासा। येह महिमा जानहिं दुरबासा।
भरतसरिस को रामसनेही। जगु जप राम, राम जप जेही।
दो०—मनहुँ न आनिअ अमरपति रघुबर-भरत-अकाजु।
अजसु लोक, परलोक दुख, दिन दिन सोकसमाजु ॥२१९॥
चौ०-सुनु सुरेस! उपदेसु हमारा। रामहिं सेवक परम पिआरा।
मानत सुख सेवकसेवकाई। सेवकबैर बैरु अधिकाई।
जद्यपि सम, नहिं राग न रोषू। गहहिं न पापपूनु गुन दोषू।

* यह अर्द्धाली रामा० प्रति में नहीं है।

करम प्रधान बिस्व करि राखा। जो जस करै सो तस फलु चाखा।
तदपि करहिं सम-बिषम-बिहारा। भगत अभगत हृदय अनुसारा *।
अगुन अलेप अमान एकरस। रामु सगुन भए भगत-पेम-बस।
राम सदा सेवकरुचि राखी। बेद-पुरान साधु सुर साखी।
अस जिय जानि तजहु कुटिलाई। करहु भरत-पद-प्रीति सुहाई।
दो०—राम-भगत पर-हित-निरत, परदुख दुखी दयाल।
भगतसिरोमनि भरत तें जनि डरपहु सुरपाल ॥२२०॥
चौ०-सत्यसंध प्रभु सुर-हित-कारी। भरत राम-आयसु-अनुसारी।
स्वारथबिबस बिकल तुम्ह होहू। भरतदोसु नहिं राउर मोहू।
सुनि सुरबर सुर-गुर-बर-बानी। भा प्रमोदु मन मिटी गलानी।
बरषि प्रसून हरषि सुरराऊ। लगे सराहन भरतसुभाऊ।
एहि बिधि भरत चले मग जाहीं। दसा देखि मुनि सिद्ध सिहाहीं।
जबहिं रामु कहि लेहिं उसासा। उमगत पेम मनहुँ चहुँ पासा।
द्रवहिं बचन सुनि कुलिस पषाना। पुरजन-पेम न जाइ बखाना।
बीच बास करि जमुनहिं आए। निरखि नीरु लोचन जल छाए।
दो०—रघु-बर-बरन बिलोकि बर बारि समेत समाज।
होत मगन बारिधि-बिरह चढ़े बिबेक-जहाज ॥ २२१ ॥
चौ०-जमुनतीर तेहि दिन करि बासू। भयेउ समयसम सबहिं सुपासू।
रातिहिं घाट घाट की तरनी। आईं अगनित जाहिं न बरनी।
प्रात पार भए एकहि खेवा। तोषे रामसखा की सेवा।
चले नहाइ नदिहि सिर नाई। साथ निषादनाथ दोउ भाई।
आगें मुनि-बर-बाहन आछे। राजसमाज जाइ सब पाछे।
तेहि पाछे दोउ बंधु पयादे। भूषन बसन बेष सुठि सादे।
सेवक सुहृद सचिवसुत साथा। सुमिरत लषनु सीय रघुनाथा।
जहँ जहँ राम- बास – बिश्रामा। तहँ तहँ करहिं सप्रेम प्रनामा।

* काशि०—भरत भगत हृदय अनुसारा। सदल०—भक्त हृदय अनुसर अनुसारा।

दो०—मगबासी नरनारि सुनि धामकाम तजि धाइ।
देखि सरूप सनेह सब मुदित जनमफलु पाइ ॥२२२॥

चौ०-कहहिं सप्रेम एक एक पाहीं। राम लषनु सखि होहिं कि नाहीं।
बय बपु बरन रूपु सोइ आली। सीलु सनेहु सरिस सम चाली।
बेषु न सो, सखि! सीय न संगा। आगें अनी चली चतुरंगा।
नहिं प्रसन्नमुख मानस खेदा। सखि संदेह होइ एहि भेदा।
तासु तरक तियगन मन मानी। कहहिं सकल 'तोहि सम न सयानी'।
तेहि सराहि बानी फुरि पूजी। बोली मधुर बचन तिय दूजी।
कहि सप्रेम सब कथाप्रसंगू। जेहि बिधि राम-राज-रस-भंगू।
भरतहि बहुरि सराहन लागी। सील सनेह सुभाय सुभागी।

दो०—चलत पयादे खात फल पिता दीन्ह तजि राजु।
जात मनावन रघुबरहिं भरतसरिस को आजु ॥ २२३॥

चौ०-भायप भगति भरत-आचरनू। कहत सुनत दुख-दूषन-हरनू।
जो किछु कहब थोर सखि सोई। रामबंधु अस काहे न होई।
हम सब सानुज भरतहि देखे। भइन्ह धन्य जुबतीजन लेखे।
सुनि गुन देखि दसा पछिताहीं। कैकइ-जननि-जोगु सुतु नाहीं।
कोउ कह दूषनु रानिहि नाहिन। बिधि सबु कीन्ह हमहिं जो दाहिन।
कहँ हम लोक – बेद-बिधि-हीनी। लघुतिय कुल-करतूति-मलीनी।
बसहिं कुदेस कुगावँ कुबामा। कहँ येह दरसु पुन्यपरिनामा।
अस अनंदु अचिरिजु प्रति ग्रामा। जनु मरुभूमि कलपतरु जामा।

दो०—भरतदरसु देखत खुलेउ मग-लोगन्ह कर भागु।
जनु सिंहलबासिन्ह भयेउ बिधिबस सुलभ प्रयागु ॥ २२४॥

चौ०-निज-गुन-सहित राम-गुन-गाथा। सुनत जाहिं सुमिरत रघुनाथा।
तीरथ मुनि आश्रम सुरधामा। निरखि निमज्जहिं करहिं प्रनामा।
मिलहिं किरात कोल बनबासी। बैखानस बटु जती उदासी।
करि प्रनामु पूछहिं जेहि तेही। केहि बन लषनु राम बैदेही।
ते प्रभुसमाचार सब कहहीं। भरतहि देखि जनमफलु लहहीं।

जे जन कहहिं कुसल हम देखे। ते प्रिय राम-लषन-सम लेखे।
एहि बिधि बूझत सबहि सुबानी। सुनत राम बन - बास-कहानी।

दो०—तेहि बासर बसि प्रातही चले सुमिरि रघुनाथ।
रामदरस की लालसा भरत सरिस सब साथ ॥ २२५ ॥

चौ०-मंगल सगुन होहिं सब काहू। फरकहिं सुखद बिलोचन बाहू।
भरतहि सहित समाज उछाहू। मिलिहहिं रामु मिटिहि दुखदाहू*।
करत मनोरथ जस जिय जाके। जाहिं सनेहसुरा सब छाके।
सिथिल अंग पग मग डगि डोलहिं। बिहबल बचन पेमबस बोलहिं।
रामसखा तेहि समय देखावा। सैलसिरोमनि सहज सुहावा।
जासु समीप सरित-पय-तीरा। सीयसमेत बसहिं दोउ बीरा।
देखि करहिं सब दंड प्रनामा। कहि जय जानकिजीवन रामा।
प्रेममगन अस राजसमाजू। जनु फिरि अवध चले रघुराजू।

दो०—भरत प्रेमु तेहि समय जस तस कहि सकै न सेषु।
कबिहि अगम जिमि ब्रह्मसुखु अह-मम-मलिन-जनेषु ॥२२६॥

चौ०-सकल सनेह सिथिल रघुबर कें। गए कोस दुइ दिनकर ढरकें।
जल थल देखि बसे, निसि बीते। कीन्ह गवनु रघु - नाथ-पिरीते।
उहाँ रामु रजनी अवसेखा। जागे सीय सपन अस देखा।
सहित समाज भरत जनु आए। नाथबियोग - ताप तन - ताए।
सकल मलिनमन दीन दुखारी। देखीं सासु आन - अनुहारी।
सुनि सियसपन भरे जल लोचन। भए सोचबस सोचबिमोचन।
लषन सपन यह नीक न होई। कठिन कुचाह सुनाइहि कोई।
अस कहि बंधु समेत नहाने। पूजि पुरारि साधु सनमाने।

छंद—सनमानि सुर मुनि बंदि बैठे उतर दिसि देखत रहे।
नभ धूरि खग मृग भूरि भागे सकल प्रभु आश्रम गए ॥
तुलसी उठे अवलोकि कारनु काह चित सचकित भए।
सब समाचार किरात कोलन्हि आइ तेहि अवसर कहे ॥

* काशि०-प्रति में यह नहीं है।

सो०—सुनत सुमंगल बैन मन प्रमोद तन पुलक भर।
सरदसरोरुह नैन तुलसी भरे सनेह-जल ॥ २२७ ॥

चौ०—बहुरि सोच बस भे सियरवनू। कारन कवन भरतआगवनू।
एक आइ अस कहा बहोरी। सेन संग चतुरंग न थोरी।
सो सुनि रामहिं भा अति सोचू। इत पितुबच उत बंधुसँकोचू।
भरतसुभाउ समुझि मन माहीं। प्रभुचित हिततिथि पावत नाहीं।
समाधान तब भा यह जाने। भरतु कहे महँ साधु सयाने।
लषनु लखेउ प्रभु-हृदय-खँभारू। कहत समयसम नीतिविचारू।
बिनु पूँछे कछु कहौं गोसाइँ। सेवकुसमय न ढीठ ढिठाईं।
तुम्ह सर्बज्ञ सिरोमनि स्वामी। आपनि समुझि कहौं अनुगामी।

दो०—नाथ सुहृद सुठि सरलचित सील सनेह-निधान।
सब पर प्रीति प्रतीति जिय जानिअ आपु समान ॥ २२८ ॥

चौ०—बिषयी जीव पाइ प्रभुताई। मूढ़ मोहबस होहिं जनाई।
भरतु नीतिरत साधु सुजाना। प्रभु-पद-प्रेम सकल जगु जाना।
तेऊ आजु राजपदु पाई। चले धरममरजाद मेटाई।
कुटिल कुबंधु कुअवसरु ताकी। जानि राम बनवास एकाकी।
करि कुमंत्रु मन साजि समाजू। आए करै अकंटक राजू।
कोटि प्रकार कलपि कुटिलाई। आए दलु बटोरि दोउ भाई।
जौं जिय होति न कपट कुचाली। केहि सोहाति रथ-बाजि-गजाली।
भरतहि दोष देइ को जाए। जग बौराइ राजपद पाए।

दो०—ससि गुर-तिय-गामी, नहुषु चढ़ेउ भूमि-सुर-जान।
लोकबेद तें बिमुख भा अधम न बेनसमान ॥ २२९ ॥

चौ०—सहसबाहु सुरनाथ त्रिसंकू। केहि न राजमद दीन्ह कलंकू।
भरत कीन्ह यह उचित उपाऊ। रिपु-रिन रंच न राखब काऊ।
एक कीन्हि नहिं भरत भलाई। निदरे राम जानि असहाई।
समुझि परिहि सोउ आजु बिसेखी। समर सरोष राममुख पेखी।
एतना कहत नीतिरस भूला। रन-रस-बिटप पुलक मिस फूला।

प्रभुपद बंदि सीसरज राखी। बोले सत्य सहज बलु भाखी।
अनुचित नाथ न मानब मोरा। भरत हमहिं उपचरा * न थोरा।
कहँ लगि सहिअ रहिअ मन मारें। नाथसाथ धनु हाथ हमारें।
दो०—छत्रिजाति रघु-कुल-जनमु रामअनुग जगु जान।
लातहुँ मारें चढ़ति सिर नीच को धूरिसमान॥ २३०॥
चौ०-उठि कर जोरि रजायसु मागा। मनहुँ बीररस सोवत जागा।
बाँधि जटा सिर कसि कटि भाथा। साजि सरासनु सायकु हाथा।
आजु रामसेवक जसु लेऊँ। भरतहिं समर सिखावन देऊँ।
रामनिरादर कर फलु पाई। सोवहु समरसेज दोउ भाई।
आइ बना भल सकल समाजू। प्रगट करौं रिस पाछिलि आजू।
जिमि करिनिकर दलै मृगराजू। लेइ लपेटि लवा जिमि बाजू।
तैसेहि भरतहि सेनसमेता। सानुज निदरि निपातौं खेता।
जौं सहाय कर संकरु आई। तउ मारउँ रन रामदोहाई।
दो०—अतिसरोष माखे लषनु लखि सुनि सपथप्रवान।
सभय लोक सब लोकपति चाहत भभरि भगान॥ २३१॥
चौ०-जगु भयमगन गगन भइ बानी। लषन-बाहु-बलु बिपुल बखानी।
तात प्रतापप्रभाउ तुम्हारा। को कहि सकै, को जाननिहारा।
अनुचित उचित काज किछु होऊ। समुझि करिअ भल कह सब कोऊ।
सहसा करि पाछें पछिताहीं। कहहिं बेद बुध ते बुध नाहीं।
सुनि सुरबचन लषन सकुचाने। राम सीय सादर सनमाने।
कही तात तुम्ह नीति सुहाई। सब तें कठिन राजमदु भाई।
जो अँचवत माँतहिं नृप तेई। नाहिन साधु-सभा जेहि सेई।
सुनहु लषन भल, भरतसरीसा। बिधिप्रपंच महँ सुना न दीसा।
दो०—भरतहि होइ न राजमदु बिधि-हरि-हर-पद पाइ।
कबहुँ कि काँजीसीकरनि छीरसिंधु बिनसाइ॥ २३२॥

* उपचरा= (कु) व्यवहार किया। पाठ० "उपचार" सब में है केवल काशि० प्रति और बाँकीपुरवाले संस्करण में 'उपचरा' है जो अधिक संगत है।

चौ०-तिमिर तरुन तरनिहि मकु गिलई। गगन मगन मकु मेघहि मिलई।
गोपद जल बूड़हिं घटजोनी। सहज छमा बरु छाड़इ छोनी।
मसकफूँक मकु मेरु उड़ाई। होइ न नृपमद भरतहि भाई।
लषन तुम्हार सपथ पितुआना। सुचि सुबंधु नहिं भरतसमाना।
सगुनु पीरु अवगुनजल ताता। मिलइ रचै परपंच बिधाता।
भरत हंस रबि-बंस-तड़ागा। जनमि कीन्ह गुन-दोष-बिभागा।
गहि गुन पय तजि अवगुन बारी। निज जस जगत कीन्हि उँजियारी।
कहत भरत-गुन-सीलु-सुभाऊ। पेमपयोधि-मगन रघुराऊ।
दो०—सुनि रघुबरबानी बिबुध देखि भरत पर हेतु।
सकल सराहत राम सो प्रभु को कृपानिकेतु ॥२३३॥
चौ०-जौं न होत जग जनम भरत को। सकल-धरम-धुर धरनि धरत को।
कबि-कुल-अगम भरत-गुन-गाथा। को जानै तुम्ह बिनु रघुनाथा।
लषन राम सिय सुनि सुरबानी। अति सुखु लहेउ न जाइ बखानी।
इहाँ भरतु सब सहित सहाए। मंदाकिनी पुनीत नहाए।
सरितसमीप राखि सब लोगा। माँगि मातु-गुर-सचिव-नियोगा।
चले भरत जहँ सियरघुराई। साथ निषादनाथ-लघुभाई।
समुझि मातुकरतब सकुचाहीं। करत कुतरक कोटि मन माहीं।
राम-लषनु-सिय सुनि मम नाऊँ। उठि जनि अनत जाहिं तजि ठाऊँ।
दो०—मातु मते महुँ मानि मोहि जो कछु कहहिं सो थोर।
अघअवगुन छमि आदरहिं समुझि आपनी ओर ॥२३४॥
चौ०-जौं परिहरहिं मलिन मनु जानी। जौं सनमानहिं सेवक मानी।
मोरे सरन रामहि की पनहीं। राम सुस्वामि दोष सब जनहीं।
जग जसभाजन चातक मीना। नेम पेम निज निपुन नबीना।
अस मन गुनत चले मग जाता। सकुच सनेह सिथिल सब गाता।
फेरति मनहिं मातुकृत खोरी। चलत भगतिबल धीरजधोरी।
जब समुझत रघुनाथसुभाऊ। तब पथ परत उताइल पाऊ।
भरतदसा तेहि अवसर कैसी। जलप्रवाह जल-अलि-गति जैसी।

देखि भरत कर सोचु सनेहू। भा निषाद तेहि समय बिदेहू।

दो०—लगे होन मंगल सगुन सुनि गुनि कहत निषादु।
मिटिहि सोच होइहि हरषु पुनि परिनाम बिषादु ॥ २३५ ॥

चौ०-सेवक बचन सत्य सब जाने। आश्रमनिकट जाइ नियराने।
भरत दीख बन-सैल-समाजू। मुदित छुधित जनु पाइ सुनाजू।
ईति भीति जनु प्रजा दुखारी। त्रिबिध ताप पीड़ित ग्रह मारी।
जाइ सुराज सुदेस सुखारी। होहि भरतगति तेहि अनुहारी।
रामबास बनसंपति भ्राजा। सुखी प्रजा जनु पाइ सुराजा।
सचिव बिरागु बिबेकु नरेसू। बिपिन सुहावन पावन देसू।
भट जम-नियम सैल रजधानी। सांति सुमति सुचि सुंदरि रानी।
सकल अंग संपन्न सुराऊ। रामचरन-आश्रित चित चाऊ।

दो०—जीति मोह-महिपालु-दल सहित बिबेक भुआलु।
करत अकंटक राजु पुर सुख संपदा सुकालु ॥ २३६ ॥

चौ०-बनप्रदेस मुनिबास घनेरे। जनु पुर नगर गाउँगन खेरे।
बिपुल बिचित्र बिहँग मृग नाना। प्रजासमाजु न जाइ बखाना।
खँगहा, करि, हरि, बाघ, बराहा। देखि महिष बृष साजु सराहा।
बयरु बिहाय चरहिं एक संगा। जहँ-तहँ मनहुँ सेन चतुरंगा।
झरना झरहिं, मत्तगज गाजहिं। मनहुँ निसान बिबिध बिधि बाजहिं।
चक चकोर चातक सुक पिक गन। कूजत मंजु मराल मुदितमन।
अलिगन गावत नाचत मोरा। जनु सुराज मंगल चहुँ ओरा।
बेलि बिटप तृन सफल सफूला। सबु समाजु मुद-मंगल-मूला।

दो०—रामसैल-सोभा निरखि भरतहृदय अतिप्रेमु।
तापस तपफल पाइ जिमि सुखी सिराने नेमु ॥ २३७ ॥

चौ०-तब केवट ऊँचे चढ़ि धाई। कहेउ भरत सन भुजा उठाई।
नाथ देखिअहि बिटपबिसाला। पाकरि जंबु रसाल तमाला।
तिन्ह तरुबरन्ह मध्य बटु सोहा। मंजुबिसाल देखि मन मोहा।
नील सघन पल्लव फल लाला। अबिरल छाँह सुखद सब काला।

मानहुँ तिमिर-अरुन-मय रासी। बिरची बिधि सकेलि सुखमा सी॥
ए तरु सरितसमीप गोसाईं। रघुबर परनकुटी जहँ छाई॥
तुलसी तरुबर बिबिध सुहाए। कहुँ कहुँ सिय कहुँ लपन लगाए॥
बटछाया बेदिका बनाई। सिय निज-पानि-सरोज सुहाई॥

दो०—जहाँ बैठि मुनि-गन-सहित नित सिय राम सुजान।
सुनहिं कथा इतिहास सब आगम निगम पुरान॥ २३८॥

चौ०-सखावचन सुनि बिटप निहारी। उमगे भरत बिलोचन बारी॥
करत प्रनाम चले दोउ भाई। कहत प्रीति सारद सकुचाई॥
हरषहिं निरखि राम-पद-अंका। मानहुँ पारसु पायेउ रंका॥
रजसिर धरि हिय नयनन्हि लावहिं। रघुबर-मिलन-सरिस सुख-पावहिं॥
देखि भरतगति अकथ अतीवा। प्रेममगन मृग खग जड़ जीवा॥
सखहिं सनेहबिबस मग भूला। कहि सुपंथ सुर बरषहिं फूला॥
निरखि सिद्ध साधक अनुरागे। सहज सनेहु सराहन लागे॥
होत न भूतल भाउ भरत को। अचर सचर, चर अचर करत को॥

दो०—पेम अमिअ मंदरु बिरहु भरतु पयोधि गँभीर।
मथि प्रगटेउ सुर-साधु-हित कृपासिंधु रघुबीर॥ २३९॥

चौ०-सखासमेत मनोहर जोटा। लखेउ न लपन सघन बन ओटा॥
भरत दीख प्रभु-आश्रम पावन। सकल-सु-मंगल-सदन सुहावन॥
करत प्रवेस मिटे दुखदावा। जनु जोगी परमारथु पावा॥
देखे भरत लपन प्रभु आगे। पूछे बचन कहत अनुरागे॥
सीस जटा कटि मुनिपट बाँधे। तून कसे, कर सर, धनु काँधे॥
बेदी पर मुनि-साधु-समाजू। सीयसहित राजत रघुराजू॥
बलकल बसन जटिल तनु स्यामा। जनु मुनिबेष कीन्ह रतिकामा॥
करकमलनि धनुसायकु फेरत। जिय की जरनि हरत हँसि हेरत॥

दो०—लसत मंजु मुनि-मंडली-मध्य सीय रघुचंदु।
ग्यानसभा जनु तनु धरे भगति सच्चिदानंदु॥ २४०॥

चौ०-सानुज सखा समेत मगन मन। बिसरे हरष-सोक-सुख-दुख-गन॥

पाहि नाथ कहि पाहि गोसाईं। भूतल परे लकुट की नाईं।
बचन सप्रेम लषन पहिचाने। करत प्रनामु भरत जिय जाने।
बंधुसनेह सरस एहि ओरा। इत साहिबसेवा बस जोरा*।
मिलि न जाइ नहिं गुदरत बनई। सुकवि लषनमन की गति भनई।
रहे राखि सेवा पर भारू। चढ़ी चंग जनु खैंच खेलारू।
कहत सप्रेम नाइ महि माथा। भरत प्रनाम करत रघुनाथा।
उठे राम सुनि प्रेम अधीरा। कहुँ पट कहुँ निषंग धनु तीरा।
दो०—बरबस लिये उठाइ उर लाये कृपानिधान।
भरत राम की मिलनि लखि बिसरे सबहि अपान॥ २४१॥
चौ०-मिलनि प्रीति किमि जाइ बखानी। कबिकुल-अगम करम मन बानी।
परम-प्रेम-पूरन दोउ भाई। मन बुधि चित अहमिति बिसराई।
कहहु सपेम प्रगट को करई। केहि छाया कबि-मति अनुसरई।
कबिहिं अरथ-आखर-बलु साँचा। अनुहरि ताल गतिहि नटु नाचा।
अगमसनेह भरत-रघुबर को। जहँ न जाइ मनु बिधि-हरि-हर को।
सो मैं कुमति कहौं केहि भाँती। बाजु सुराग कि गाँड़रताँती।
मिलनि बिलोकि भरत-रघुबर की। सुरगन सभय धकधकी धरकी।
समुझाए सुरगुरु जड़ जागे। बरषि प्रसून प्रसंसन लागे।
दो०—मिलि सप्रेम रिपुसूदनहिं केवट भेंटेउ राम।
भूरि भाय भेंटे भरत लछिमन करत प्रनाम॥ २४२॥
चौ०-भेंटेउ लषन ललकि लघु भाई। बहुरि निषादु लीन्ह उर लाई।
पुनि मुनिगन दुहुँ भाइन्ह बंदे। अभिमत आसिष पाइ अनंदे।
सानुज भरत उमगि अनुरागा। धरि सिर सियपद-पदुम-परागा।
पुनि पुनि करत प्रनाम उठाए। सिर करकमल परसि बैठाए।
सीय असीस दीन्हि मन माहीं। मगन-सनेह देहसुधि नाहीं।
सब बिधि सानुकूल लखि सीता। भे निसोच उर अपडर बीता।

---

* काशि०—बरजोरा।

कोउ किछु कहै न कोउ किछु पूछा। प्रेम भरा मन निज-गति-छूछा।
तेहि अवसर केवटु धीरजु धरि। जोरि पानि बिनवत प्रनामु करि।

दो०—नाथ साथ मुनिनाथ के मातु सकल पुरलोग।
सेवक सेनप सचिव सब आए बिकल-बियोग॥२४३॥

चौ०—सीलसिंधु सुनि गुरुआगवनू। सियसमीप राखे रिपुदवनू।
चले सबेग राम तेहि काला। धीर-धरम-धुर दीनदयाला।
गुरहि देखि सानुज अनुरागे। दंडप्रनाम करन प्रभु लागे।
मुनिवर धाइ लिए उर लाई। प्रेम उमगि भेंटे दोउ भाई।
प्रेम पुलकि केवट कहि नामू। कीन्ह दूरि तें दंडप्रनामू।
रामसखा रिषि बरबस भेंटा। जनु महि लुठत सनेह समेटा।
रघुपति-भगति सुमंगल मूला। नभ सराहिं सुर बरषहिं फूला।
एहि सम निपट नीच कोउ नाहीं। बड़ बसिष्ठसम को जग माहीं।

दो०—जेहि लखि लषनहुँ तें अधिक मिले मुदित मुनिराउ।
सो सीता-पति-भजन को प्रगट प्रतापप्रभाउ॥२४४॥

चौ०—आरत लोग राम सबु जाना। करुनाकर सुजान भगवाना।
जो जेहि भाय रहा अभिलाषी। तेहि तेहि कै तसि तसि रुख राखी।
सानुज मिलि पल महुँ सब काहू। कीन्ह दूरि दुखु-दारुन-दाहू।
येहि बड़ि बात राम कै नाहीं। जिमि घट कोटि एक रबि छाहीं।
मिलि केवटहि उमगि अनुरागा। पुरजन सकल सराहहिं भागा।
देखी राम दुखित महतारीं। जनु सुबेलिअवली हिम मारीं।
प्रथम राम भेंटी कैकेई। सरल सुभाय भगति-मति भेई।
पग पड़ि कीन्ह प्रबोधु बहोरी। काल करम बिधि सिर धरि खोरी।

दो०—भेंटी रघुबर मातु सब करि प्रबोधु परितोषु।
अंब ईसआधीन जगु काहु न देइअ दोषु॥२४५॥

चौ०—गुर-तिय-पद बंदे दुहुँ भाई। सहित बिप्रतिय जे सँग आईं।
गंग-गौरि-सम सब सनमानीं। देहिं असीस मुदित मृदुबानीं।
गहि पद लगे सुमित्राअंका। जनु भेंटी संपति अति रंका।

पुनि जननीचरननि दोउ भ्राता। परे पेम-ब्याकुल सब गाता।
अति अनुराग अंब उर लाए। नयन सनेह सलिल अन्हवाए।
तेहि अवसर कर हरष विषादू। किमि कवि कहै मूक जिमि स्वादू।
मिलि जननिहिं सानुज रघुराऊ। गुरुसन कहेउ कि धारिअ पाऊ।
पुरजन पाइ मुनीसनियोगू। जल थल तकि तकि उतरे लोगू।
दो०—महिसुर मंत्री मातु गुरु गने लोग लिये साथ।
पावन आश्रम गवनु किए भरत लषन रघुनाथ ॥२४६॥
चौ०-सीय आइ मुनि-बर-पग लागी। उचित असीस लही मनमाँगी।
गुरपतिनिहिं मुनि तियन्ह समेता। मिली प्रेम कहि जाइ न जेता।
बंदि बंदि पग सिय सबही के। आसिरबचन लहे प्रिय जी के।
सासु सकल जब सीय निहारीं। मूँदे नयन सहमि सुकुमारीं।
परी बधिकबस मनहुँ मराली। काह कीन्ह करतार कुचाली।
तिन्ह सिय निरखि निपट दुख पावा। सो सब सहिअ जो दैउ सहावा।
जनकसुता तब उर धरि धीरा। नील-नलिन-लोयन भरि नीरा।
मिली सकल सासुन्ह सिय जाई। तेहि अवसर करुना महि छाई।
दो०—लागि लागि पग सबनि सिय भेंटति अति अनुराग।
हृदय असीसहिं पेमबस रहिअहु भरी सोहाग ॥२४७॥
चौ०-बिकल सनेह सीय सब रानी। बैठन सबहिं कहेउ गुर ज्ञानी।
कहि जगगति मायिक मुनिनाथा। कहे कछुक परमारथगाथा।
नृप कर सुर-पुर-गवनु सुनावा। सुनि रघुनाथ दुसह दुखु पावा।
मरनहेतु निजनेहु बिचारी। भे अति बिकल धीर-धुर-धारी।
कुलिसकठोर सुनत कटु बानी। बिलपत लषन सीय सब रानी।
सोक बिकल अति सकल समाजू। मानहुँ राजु अकाजेउ आजू।
मुनिवर बहुरि राम समुझाए। सहित समाज सुसरित नहाए।
ब्रतु निरंबु तेहि दिन प्रभु कीन्हा। मुनिहु कहे जलु काहु न लीन्हा।
दो०—भोरु भए रघुनंदनहिं जो मुनि आयेसु दीन्ह।
श्रद्धा-भगति-समेत प्रभु सो सब सादर कीन्ह ॥२४८॥

चौ०-करि पितुक्रिया वेद जसि बरनी। भे पुनीत पातक-तम-तरनी।
जासु नाम पावक अघतूला। सुमिरत सकल-सु-मंगल-मूला।
सुद्ध सो भयेउ साधु संमत अस। तीरथआवाहन सुरसरि जस।
सुद्ध भएँ दुइ वासर बीते। बोले गुर सन राम पिरीते।
नाथ लोग सब निपट दुखारी। कंद-मूल-फल-अंबु-अहारी।
सानुज भरतु सचिव सब माता। देखि मोहि पल जिमि जुग जाता।
सब समेत पुर धारिअ पाऊ। आपु इहाँ अमरावति राऊ।
बहुत कहेउँ सब कियेउँ ढिठाई। उचित होइ तस करिअ गोसाईं।

दो०—धर्मसेतु करुनायतन कस न कहहु अस राम।
लोग दुखित दिन दुइ दरस देखि लहहुँ बिश्राम ॥२४६॥

चौ०-रामबचन सुनि सभय समाजू। जनु जलनिधि महुँ बिकल जहाजू।
सुनि गुरगिरा सु-मंगल-मूला। भयेउ मनहुँ मारुत अनुकूला।
पावनि पय तिहुँ काल नहाहीं। जो बिलोकि अघओघ नसाहीं।
मंगलमूरति लोचन भरि भरि। निरखहिं हरषि दंडवत करि करि।
राम-सैल-बन देखन जाहीं। जहँ सुख सकल सकल दुख नाहीं।
झरना झरहिं सुधासम बारी। त्रि-बिध-ताप-हर त्रिबिध बयारी।
बिटप बेलि तृन अगनित जाती। फल प्रसून पल्लव बहु भाँती।
सुंदर सिला सुखद तरु छाहीं। जाइ बरनि बन छबि केहि पाहीं।

दो०—सरनि सरोरुह जल-बिहँग कूजत गुंजत भृंग।
बैरबिगत बिहरत बिपिन मृग बिहंग बहुरंग ॥२५०॥

चौ०-कोल किरात भिल्ल बनवासी। मधु सुचि सुंदर स्वादु सुधा सी।
भरि भरि परनपुटी रचि रूरी। कंद मूल फल अंकुर जूरी।
सबहिं देहिं करि बिनय प्रनामा। कहि कहि स्वादुभेदु गुन नामा।
देहिं लोग बहु मोल न लेहीं। फेरत राम दोहाई देहीं।
कहहिं सनेहमगन मृदुबानी। मानत साधु पेम पहिचानी।
तुम्ह सुकृती हम नीच निषादा। पावा दरसनु रामप्रसादा।
हमहिं अगम अति दरसु तुम्हारा। जस मरुधरनि देव-धुनि-धारा।

रामकृपाल निषाद नेवाजा। परिजन प्रजउ चहिय जस राजा।
दो०—येह जिय जानि सँकोचु तजि करिअ छोहु लखि नेहु।
हमहिं कृतारथ करन लगि फल तृन अंकुर लेहु ॥२५१॥
चौ०-तुम्ह प्रिय पाहुन बन पग धारे। सेवाजोगु न भाग हमारे।
देव काह हम तुम्हहिं गोसाईं। ईंधनु पात किरात मिताईं।
यह हमारि अति बड़ि सेवकाई। लेहिं न बासन बसन चोराई।
हम जड़ जीव जीव-गन-घाती। कुटिल कुचाली कुमति कुजाती।
पाप करत निसि बासर जाहीं। नहिं पट कटि, नहिं पेट अघाहीं।
सपनेहुँ धरम बुद्धि कस काऊ। यह रघु-नंदन-दरस प्रभाऊ।
जब तें प्रभु-पद-पदुम निहारे। मिटे दुसह-दुख-दोष हमारे।
बचन सुनत पुरजन अनुरागे। तिन्ह के भाग सराहन लागे।
छंद—लागे सराहन भाग सब अनुराग बचन सुनावहीं।
बोलनि मिलनि सिय-राम-चरन-सनेहु लखि सुखु पावहीं॥
नरनारि निदरहिं नेहु निज सुनि कोल भिल्लनि की गिरा।
तुलसी कृपा रघु-बंस-मनि की लोह लै लौका तिरा॥
सो०—बिहरहिं बन चहुँ ओर प्रतिदिन प्रमुदित लोग सब।
जल ज्यों दादुर मोर भए पीन पावस प्रथम ॥२५२॥
चौ०-पुरजन नारि मगन अति प्रीती। बासर जाहिं पलकसम बीती।
सीय सासु प्रति बेष बनाई। सादर करै सरिस सेवकाई।
लखा न मरमु राम बिनु काहू। माया सब सियमाया माहू।
सीय सासु सेवा-बस कीन्ही। तिन्ह लहि सुख सिख आसिष दीन्ही।
लखि सियसहित सरल दोउ भाई। कुटिल रानि पछितानि अघाई।
अवनि जमहि जाँचति कैकेई। महि न बीचु बिधि* मीचु न देई।
लोकहु बेद बिदित कवि कहहीं। राम-बिमुख थलु नरक न लहहीं।
यह संसउ सब के मन माहीं। रामगवँन बिधि अवध कि नाहीं।

---

*बिधि=काल।

दो०—निसि न नींद नहिं भूख दिन भरतु बिकल सुचि सोच।
नीच कीच बिच मगन जस मीनहिं सलिल सँकोच ॥२५३॥

चौ०-कीन्हि मातुमिस काल कुचाली। ईति-भीति जस पाकत साली॥
केहि बिधि होइ रामअभिषेकू। मोहि अवकलत उपाउ न एकू॥
अवसि फिरहिं गुरु आयेसु मानी। मुनि पुनि कहब रामरुचि जानी॥
मातु कहेहुँ बहुरहिं रघुराऊ। रामजननि हठ करबि कि काऊ॥
मोहि अनुचर कर केतिक बाता। तेहि महँ कुसमउ बाम बिधाता॥
जौं हठ करौं त निपट कुकरमू। हरगिरि तें गुरु सेवकधरमू॥
एकउ जुगुति न मन ठहरानी। सोचत भरतहिं रैनि बिहानी॥
प्रात नहाइ प्रभुहिं सिर नाई। बैठत पठए रिषय बोलाई॥

दो०—गुर-पद-कमल प्रनामु करि बैठे आयसु पाइ।
बिप्र महाजन सचिव सब जुरे सभासद आइ ॥२५४॥

चौ०-बोले मुनिबरु समय समाना। सुनहु सभासद भरत सुजाना॥
धरमधुरीन भानु-कुल-भानू। राजा रामु स्वबस भगवानू॥
सत्यसंध पालक श्रुतिसेतू। रामजनमु जग-मंगलहेतू॥
गुर-पितु-मातु-बचन-अनुसारी। खल-दलु-दलन देव-हित-कारी॥
नीति प्रीति परमारथ स्वारथु। कोउ न रामसम जान जथारथु॥
बिधि हरि हरु ससि रबि दिसिपाला। माया जीव करम कुलि काला॥
अहिप महिप जहँ लगि प्रभुताई। जोग सिद्धि निगमागम गाई॥
करि बिचार जिय देखहु नीकें। रामरजाइ सीस सबही कें॥

दो०—राखें राम रजाइ रुख हम सब कर हित होइ।
समुझि सयाने करहु अब सब मिलि संमत सोइ ॥२५५॥

चौ०-सब कहुँ सुखद रामअभिषेकू। मंगल-मोद-मूल मग एकू॥
केहि बिधि अवध चलहिं रघुराऊ। कहहु समुझि सोइ करिअ उपाऊ॥
सब सादर सुनि मुनि-बर-बानी। नय-परमारथ-स्वारथ-सानी॥
उतरु न आव लोग भए भोरे। तब सिरु नाइ भरत कर जोरे॥
भानुबंस भए भूप घनेरे। अधिक एक तें एक बड़ेरे॥

जनम हेतु सब कहँ पितु माता। करम सुभासुभ देइ बिधाता।
दलि दुख सजै सकल कल्याना। अस असीस राउरि जगु जाना।
सोइ गोसाइँ बिधि गति जेहि छेकी। सकै को टारि टेक जो टेकी।
दो०—बूझिअ मोहि उपाउ अब सो सब मोर अभागु।
सुनि सनेह-मय-बचन गुर उर उमगा अनुराग ॥२५६॥
चौ०-तात बात फुरि राम कृपाहीं। रामबिमुख सिधि सपनेहु नाहीं।
सकुचौं तात कहत एक बाता। [अरध तजहिं बुध सरबस जाता।
तुम्ह कानन गवँनहु दोउ भाई। फेरिअहि लषन सीय रघुराई।
सुनि सुबचन हरषे दोउ भ्राता]*। भे प्रमोद - परि - पूरन गाता।
मन प्रसन्न तन तेजु बिराजा। जनु जिय राउ राम भए राजा।
बहुत लाभ लोगन्ह लघु हानी। सम दुखसुख सब रोवहिं रानी।
कहहिं भरतु मुनि कहा सो कीन्हे। फलु जग जीवन्ह अभिमत दीन्हे।
कानन करौं जनम भरि बासू। एहि तें अधिक न मोर सुपासू।
दो०—अंतरजामी रामुसिय तुम्ह सरबग्य सुजान।
जौं फुर कहहु त नाथ निज कीजिअ बचनु प्रमान† ॥२५७॥
चौ०-भरतबचन सुनि देखि सनेहू। सभासहित मुनि भयेउ बिदेहू।
भरत-महा-महिमा जलरासी। मुनिमति ठाढ़ि तीर अबला सी।
गा चह पार जतनु हिय हेरा। पावति नाव न बोहित बेरा।
अउर करहि को भरत बड़ाई। सरसी सीपि कि सिंधु समाई‡।
भरत मुनिहिं मनभीतर भाए। सहित समाज राम पहिं आए।
प्रभु प्रनामु करि दीन्ह सुआसनु। बैठे सब सुनि मुनि-अनुसासनु।
बोले मुनिबरु बचन बिचारी। देस - काल - अवसर- अनुहारी।
सुनहु राम सरबग्य सुजाना। धरम-नीति-गुन - ग्यान - निधाना।

---

* कोष्ठकांतर्गत चार चरण राजा० प्रति नहीं हैं।

† बहुत पुस्तकों में 'प्रवान' पाठ है।

‡ पाठा०—सर सीपि की सिंधु समाई।

दो०—सब के उर अंतर बसहु, जानहु भाउ कुभाउ।
पुरजन-जननी-भरत-हित होइ सो कहिअ उपाउ ॥२५८॥
चौ०-आरत कहहिं बिचारि न काऊ। सूझ जुआरिहि आपुन दाऊ
सुनि मुनिबचन कहत रघुराऊ। नाथ तुम्हारेहि हाथ उपाऊ
सब कर हित रुख राउरि राखे। आयसु किए मुदित फुर भाखे
प्रथम जो आयसु मो कहुँ होई। माथे मानि करौं सिख सोई
पुनि जेहि कहँ जस कहब गोसाईं। सो सब भाँति घटिहि सेवकाई
कह मुनि राम सत्य तुम्ह भाखा। भरत-सनेह-बिचारु न राखा
तेहि तें कहौं बहोरि बहोरी। भरत-भगति-बस भइ मति मोरी।
मोरे जान भरत रुचि राखी। जो कीजिअ सो सुभ सिव साखी।
दो०—भरतबिनय सादर सुनिअ करिअ बिचारु बहोरि।
करब साधुमत लोकमत नृपनय निगम निचोरि ॥२५९॥
चौ०–गुरअनुरागु भरत पर देखी। रामहृदय आनंदु बिसेखी।
भरतहिं धरम-धुरंधर जानी। निज सेवक तन-मानस-बानी।
बोले गुर-आयसु-अनुकूला। बचन मंजु मृदु मंगलमूला।
नाथ-सपथ पितु-चरन-दोहाई। भयेउ न भुवन भरतसम भाई।
जे गुर-पद-अंबुज-अनुरागी। ते लोकहुँ बेदहुँ बड़भागी।
राउर जा पर अस अनुरागू। को कहि सकै भरत कर भागू।
लखि लघुबंधु बुद्धि सकुचाई। करत बदन पर भरतबड़ाई।
भरतु कहहिं सोइ किएँ भलाई। अस कहि राम रहे अरगाई*।
दो०—तब मुनि बोले भरत सन सब सँकोचु तजि तात।
कृपासिंधु प्रियबंधु सन कहहु हृदय कइ बात ॥२६०॥
चौ०-सुनि मुनिबचन रामरुख पाई। गुरु साहिब अनुकूल अघाई।
लखि अपने सिर सबु छरुभारू। कहि न सकहिं कछु करहिं बिचारू।
पुलकि सरीर सभा भए ठाढ़े। नीरजनयन नेहजल बाढ़े।

* अरगाई=अलगाई=चुप।

उर उमगेउ अंबुधि अनुरागू। भयेउ भूपमनु मनहुँ पयागू।
सियसनेह बटु बाढ़त जोहा। तापर राम-पेम-सिसु सोहा।
चिरजीवी मुनि ग्यान बिकल जनु। बूड़त लहेउ बालअवलंबनु।
मोह-मगन मति नहिं बिदेह की। महिमा सिय-रघुबर-सनेह की।
दो०—सिय पितु-मातु-सनेह-बस बिकल न सकी सँभारि।
धरनिसुता धीरजु धरेउ समउ सुधरमु बिचारि ॥२८७॥
चौ०—तापसबेष जनक सिय देखी। भयेउ पेमु परितोषु बिसेषी।
पुत्रि पबित्र किए कुल दोऊ। सुजस धवल जगु कह सब कोऊ।
जिति सुरसरि कीरतिसरि तोरी। गवनु कीन्ह बिधि-अंड करोरी।
गंग अवनिथल तीनि बड़ेरे। एहि किए साधुसमाज घनेरे।
पितु कह सत्य सनेह सुबानी। सीय सकुच महुँ मनहुँ समानी।
पुनि पितु मातु लीन्हि उर लाई। सिख आसिष हित दीन्हि सुहाई।
कहति न सीय सकुचि मन माहीं। इहाँ बसब रजनी भल नाहीं।
लखि रुख रानि जनायेउ राऊ। हृदय सराहत सीलु सुभाऊ।
दो०—बार बार मिलि भेंटि सिय बिदा कीन्हि सनमानि।
कही समय सिर*भरतगति रानि सुबानि सयानि ॥२८८॥
चौ०—सुनि भूपाल भरतब्यवहारू। सोन सुगंध सुधा ससिसारू।
मूँदे सजल नयन पुलके तन। सुजसु सराहन लगे मुदित मन।
सावधान सुनु सुमुखि सुलोचनि। भरतकथा भव-बंध-बिमोचनि।
धरम राजनय ब्रह्मबिचारू। इहाँ जथामति मोर प्रचारू।
सो मति मोरि भरत महिमाहीं। कहै काह,छलि छुअति न छाहीं।
बिधि गनपति अहिपति सिव नारद। कबि कोबिद बुध बुद्धिबिसारद।
भरत चरित कीरति करतूती। धरम सील गुन बिमल बिभूती।
समुझत सुनत सुखद सब काहू। सुचि सुरसरि रुचि निदर सुधाहू।
दो०—निरवधि गुन निरुपम पुरुषु भरतु भरतसम जानि।
कहिअ सुमेरु कि सेर सम कबि-कुल-मति सकुचानि ॥२८९॥

---

* समय सिर = ठीक समय के अनुकूल।

दो०—तेइ रघुनंदनु लषनु सिय अनहित लागे जाहि।
तासु तनय तजि दुसह दुख दैव सहावै काहि ॥२६३॥
चौ०-सुनि अति बिकल भरत-बर-बानी। आरति-प्रीति-विनय-नय-सानी।
सोकमगन सब सभा खभारू। मनहुँ कमलवन परेउ तुषारू।
कहि अनेक बिधि कथा पुरानी। भरतप्रबोधु कीन्ह मुनि ग्यानी।
बोले उचित बचन रघुनंदू। दिन-कर-कुल-कैरव-बन-चंदू।
तात जायँ जिअ करहु गलानी। ईसअधीन जीवगति जानी।
तीनि काल तिभुवन मत मोरें। पुन्यसिलोक * तात तर तोरें।
उर आनत तुम्ह पर कुटिलाई। जाइ लोक-परलोकु नसाई।
दोषु देहिं जननिहि जड़ तेई। जिन्ह गुर-साधु सभा नहिं सेई।
दो०—मिटिहहिं पाप प्रपंच सब अखिल अमंगल भार।
लोक-सुजसु परलोक-सुखु सुमिरत नामु तुम्हार ॥२६४॥
चौ०—कहौं सुभाउ सत्य सिव साखी। भरत भूमि रह राउरि राखी।
तात कुतरक करहु जनि जाएँ। बैर पेम नहिं दुरै दुराएँ।
मुनिगन निकट बिहँग मृग जाहीं। बाधक बधिक बिलोकि पराहीं।
हित अनहित पसु पंछिउ जाना। मानुषतनु गुन-ग्यान-निधाना।
तात तुम्हहिं मैं जानौं नीके। करौं काह असमंजस जी के।
राखेउ राय सत्य मोहि त्यागी। तनु परिहरेउ प्रेमपन लागी।
तासु बचन मेटत मन सोचू। तेहि तें अधिक तुम्हार सँकोचू।
ता पर गुर मोहि आयसु दीन्हा। अवसि जो कहहु चहौं सोइ कीन्हा।
दो०—मनु प्रसन्न करि सकुच तजि कहहु करौं सोइ आजु।
सत्य-संध-रघुबर-बचन सुनि भा सुखी समाजु ॥२६५॥
चौ०—सुर-गन-सहित सभय सुरराजू। सोचहिं चाहत होन अकाजू।
बनत उपाउ करत कछु नाहीं। रामसरन सब गे मन माहीं।
बहुरि बिचारि परसपर कहहीं। रघुपति भगत-भगति-बस अहहीं।
सुधि करि अंबरीष, दुरबासा। भे सुर, सुरपति निपट निरासा।

* पुण्यश्लोक।

सहे सुरन्ह बहु काल बिषादा। नरहरि किए प्रगट प्रहलादा।
लगि लगि कान कहहिं धुनि माथा। अब सुर-काज भरत के हाथा।
आन उपाउ न देखिय देवा। मानत रामु सु-सेवक-सेवा।
हिय सपेम सुमिरहु सब भरतहि। निज-गुन-सील रामबस करतहि।

दो०—सुनि सुरमत सुरगुर कहेउ भल तुम्हार बड़भागु।
सकल सु-मंगल-मूल जग भरत-चरन-अनुरागु ॥२६६॥

चौ०-सीतापति-सेवक-सेवकाई। कामधेनु-सय-सरिस सुहाई।
भरतभगति तुम्हरें मन आई। तजहु सोचु बिधि बात बनाई।
देखु देवपति भरतप्रभाऊ। सहज-सुभाय-बिबस रघुराऊ।
मन थिर करहु देव डरु नाहीं। भरतहिं जानि रामपरिछाहीं।
सुनि सुरगुर-सुर-संमत सोचू। अंतरजामी प्रभुहिं सँकोचू।
निज सिर भार भरतु जिय जाना। करत कोटि बिधि उर अनुमाना।
करि बिचारु मन दीन्ही ठीका। रामरजायसु आपन नीका।
निजपन तजि राखेउ पनु मोरा। छोहु सनेहु कीन्ह नहिं थोरा।

दो०—कीन्ह अनुग्रह अमित अति सब बिधि सीतानाथ।
करि प्रनामु बोले भरतु जोरि जलज-जुग-हाथ ॥२६७॥

चौ०-कहौं कहावौं का अब स्वामी। कृपा-अंबु-निधि अंतरजामी।
गुर प्रसन्न साहिब अनुकूला। मिटी मलिन मनकलपित सूला।
अपडर डरेउँ न सोच समूले। रबिहि न दोषु देव दिसि भूले।
मोर अभागु मातुकुटिलाई। बिधि गति बिषम कालकठिनाई।
पाउँ रोपि सब मिलि मोहि घाला। प्रनतपाल पन आपन पाला।
यह नइ रीति न राउरि होई। लोकहु बेदबिदित नहिं गोई।
जगु अनभल भल एकु गोसाईं। कहिअ होइ भल कासु भलाईं।
देउ देव-तरु-सरिस सुभाऊ। सनमुख बिमुख न काहुहि काऊ।

दो०—जाइ निकट पहिचानि तरु छाँह समनि सब सोच।
माँगत अभिमत पाव जग राउ रंक भल पोच ॥२६८॥

चौ०-लखि सब बिधि-गुर-स्वामि-सनेहू। मिटेउ छोभ नहिं मन संदेहू।

अब करुनाकर कीजिअ सोई। जन-हित प्रभुचित छोभ न होई।
जो सेवकु साहिबहिं सँकोची। निज हित चहै तासु मति पोची।
सेवकहित साहिबसेवकाई। करै सकल सुख-लोभ बिहाई।
स्वारथु नाथ फिरें सबही का। किएँ रजाइ कोटि बिधि नीका।
यह स्वारथ-परमारथ-सारू। सकल-सुकृत-फल सुगति-सिंगारू।
देव एक बिनती सुनि मोरी। उचित होइ तस करब बहोरी।
तिलक समाजु साजि सबु आना। करिअ सुफल प्रभु जौं मन माना।

दो०—सानुज पठइअ मोहिं बन कीजिअ सबहिं सनाथ।
नतरु फेरिअहिं बंधु दोउ नाथ चलौं मैं साथ ॥२६९॥

चौ०-नतरु जाहिं बन तीनिउँ भाई। बहुरिअ सीयसहित रघुराई।
जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई। करुनासागर कीजिअ सोई।
देव दीन्ह सब मोहि अभारू। मोरें नीति न धरम बिचारू।
कहौं बचन सब स्वारथहेतू। रहत न आरत के चित चेतू।
उतरु देइ सुनि स्वामिरजाई। सो सेवकु लखि लाज लजाई।
अस मैं अवगुन-उदधि-अगाधू। स्वामि-सनेह सराहत साधू।
अब कृपाल मोहि सो मत भावा। सकुच स्वामि मन जाइ न पावा।
प्रभु-पद-सपथ कहौं सतिभाऊ। जग-मंगल-हित एक उपाऊ।

दो०—प्रभु प्रसन्न मन सकुच तजि जो जेहि आयसु देब।
सो सिर धरि धरि करिहि सबु मिटिहि अनट अवरेब ॥२७०॥

चौ०-भरतबचन सुचि सुनि सुर हरषे। साधु सराहि सुमन सुर बरषे।
असमंजसबस अवधनिवासी। प्रमुदित मन तापस-बनबासी।
चुपहि रहे रघुनाथ सँकोची। प्रभुगति देखि सभा सब सोची।
जनक-दूत तेहि अवसर आए। मुनि बसिष्ठ सुनि बेगि बोलाए।
करि प्रनाम तिन्ह रामु निहारे। बेषु देखि भए निपट दुखारे।
दूतन्ह मुनिबर बूझी बाता। कहहु बिदेह भूप कुसलाता।
सुनि सकुचाइ नाइ महि माथा। बोले चर बर जोरें हाथा।
बूझब राउर सादर साईं। कुसलहेतु सो भयेउ गोसाईं।

दो०—नाहिं त कोसलनाथ के साथ कुसल गइ नाथ।
मिथिला अवध बिसेष तें जगु सब भयेउ अनाथ ॥२७१॥

चौ०-कोसलपति-गति सुनि जनकौरा। भे सब लोक सोकबस बौरा।
जेहि देखे तेहि समय बिदेहू। नामु सत्य अस लाग न केहू।
रानि-कुचालि सुनत नरपालहि। सूझ न कछु जस मनि बिनु ब्यालहि।
भरतराज रघुबर-बन-बासू। भा मिथिलेसहि हृदय हराँसू।
नृप बूझे बुध-सचिव-समाजू। कहहु बिचारि उचित का आजू।
समुझि अवध असमंजस दोऊ। चलिअ कि रहिअ न कह कछु कोऊ।
नृपहि धीर धरि हृदय बिचारी। पठए अवध चतुर चर चारी।
बूझि भरत सतिभाउ कुभाऊ। आयेहु बेगि न होइ लखाऊ।

दो०—गए अवध चर भरतगति बूझि देखि करतूति।
चले चित्रकूटहि भरतु चार चले तिरहूति ॥२७२॥

चौ०-दूतन्ह आइ भरत कै करनी। जनकसमाज जथामति बरनी।
सुनि गुर परिजन सचिव महीपती। भे सब सोच सनेह बिकल अति।
धरि धीरजु करि भरत बड़ाई। लिए सुभट साहनी बोलाई।
घर पुर देस राखि रखवारे। हय गय रथ बहु जान सँवारे।
दुघरी साधि चले ततकाला। किअ बिश्रामु न मग महिपाला।
भोरहिं आजु नहाइ प्रयागा। चले जमुन उतरन सबु लागा।
खबरि लेन हम पठए नाथा। तिन्ह कहि अस महि नायेउ माथा।
साथ किरात छ सातक दीन्हे। मुनिबर तुरत बिदा चर कीन्हे।

दो०—सुनत जनक-आगवनु सबु हरषेउ अवधसमाजु।
रघुनंदनहि सकोचु बड़ सोचबिबस सुरराजु ॥२७३॥

चौ०-गरै गलानि कुटिल कैकेई। काहि कहै केहि दूषनु देई।
अस मन आनि मुदित नरनारी। भयेउ बहोरि रहब दिन चारी।
एहि प्रकार गत बासर सोऊ। प्रात नहान लाग सब कोऊ।
करि मज्जन पूजहिं नरनारी। गनपति गौरि तिपुरारि तमारी।
रमा-रमन-पद बंदि बहोरी। बिनवहिं अंजुलि अंचल जोरी।

राजा राम जानकी रानी। आनँदअवधि अवध रजधानी।
सुबस बसउ फिरि सहित समाजा। भरतहिं रामु करहु जुवराजा।
एहि सुखसुधा सींचि सब काहू। देव देहु जग-जीवन-लाहू।
दो०—गुरसमाज भाइन्ह सहित रामराजु पुर होउ।
अछत राम राजा अवध मरिअ माँग सब कोउ ॥२७४॥
चौ०–सुनि सनेहमय पुर-जन-बानी। निंदहिं जोग बिरति मुनि ग्यानी।
एहि बिधि नित्य करम करि पुरजन। रामहिं करहिं प्रनामु पुलकि तन।
ऊँच नीच मध्यम नर नारी। लहहिं दरसु निज निज अनुहारी।
सावधान सबही सनमानहिं। सकल सराहत कृपानिधानहिं।
लरिकाइहि तें रघुबरबानी। पालत नीति प्रीति पहिचानी।
सील-सँकोच-सिंधु रघुराऊ। सुमुख सुलोचन सरल सुभाऊ।
कहत राम-गुन-गन अनुरागे। सब निज भाग सराहन लागे।
हम सम पुन्यपुंज जग थोरें। जिन्हहिं राम जानत करि मोरें।
दो०—प्रेममगन तेहि समय सब सुनि आवत मिथिलेसु।
सहित सभा संभ्रम उठेउ रबि-कुल-कमल-दिनेसु ॥२७५॥
चौ०–भाइ-सचिव-गुर-पुरजन साथा। आगे गवनु कीन्ह रघुनाथा।
गिरिबरु दीख जनकपति जबहीं। करि प्रनामु रथ त्यागेउ तबहीं।
राम – दरस – लालसा – उछाहू। पथश्रम लेस कलेसु न काहू।
मन तहँ जहँ रघुबरबैदेही। बिनु मन तन दुख सुख सुधि केही।
आवत जनकु चले एहि भाँती। सहित समाज प्रेम मति माँती।
आए निकट देखि अनुरागे। सादर मिलन परसपर लागे।
लगे जनक मुनि-जन-पद बंदन। रिषिन्ह प्रनामु कीन्ह रघुनंदन।
भाइन्ह सहित राम मिलि राजहिं। चले लवाइ समेत समाजहिं।
दो०—आश्रम-सागर सांतरस पूरन पावन पाथ।
सेन मनहुँ करुना-सरित लिए जाहिं रघुनाथ ॥ २७६ ॥
चौ०–बोरति ग्यान बिराग करारे। बचन ससोक मिलत नद नारे।
सोच उसास समीर तरंगा। धीरज-तट-तरु-बर कर भंगा।

बिषम बिषाद तोरावति धारा। भय भ्रम भँवर अवर्त अपारा।
केवट बुध बिद्या बड़ि नावा। सकहिं न खेइ एक नहिं आवा।
बनचर कोल किरात बिचारे। थके बिलोकि पथिक हिय हारे।
आश्रम-उदधि मिली जब जाई। मनहुँ उठेउ अंबुधि अकुलाई।
सोक बिकल दोउ राज समाजा। रहा न ग्यानु न धीरजु लाजा।
भूप-रूप-गुन - सील सराही। रोवहिं सोकसिंधु अवगाही।
छंद—अवगाहि सोक समुद्र सोचहिं नारि नर ब्याकुल महा।
दै दोष सकल सरोष बोलहिं बाम बिधि कीन्हो कहा॥
सुर सिद्ध तापस जोगिजन मुनि देखि दसा बिदेह की।
तुलसी न समरथु कोउ जा तरि सकै सरित सनेह की॥
सो०—किए अमित उपदेस जहँ तहँ लोगन्ह मुनिबरन्ह।
धीरजु धरिअ नरेस कहेउ बसिष्ठ बिदेह सन॥२७७॥
चौ०-जासु ग्यानुरबि भवनिसि नासा। बचनकिरन मुनि-कमल-बिकासा।
तेहि कि मोह ममता निअराई। यह सिय - राम-सनेह बड़ाई।
बिषयी साधक सिद्ध सयाने। त्रिबिध जीव जग बेद बखाने।
राम-सनेह सरस मन जासू। साधुसभा बड़ आदर तासू।
सोह न राम पेम बिनु ग्यानू। करनधार बिनु जिमि जलजानू।
मुनि बहु बिधि बिदेह समुझाए। रामघाट सब लोग नहाए।
सकल-सोक - संकुल नरनारी। सो बासरु बीतेउ बिनु बारी।
पसु खग मृगन्ह न कीन्ह अहारू। प्रिय परिजन कर कवन बिचारू।
दो०—दोउ समाज निमिराज रघु-राज नहाने प्रात।
बैठे सब बट-बिटप-तर मन मलीन कृसगात॥२७८॥
चौ०-जे महिसुर दसरथ-पुर-बासी। जे मिथिला-पति-नगर-निवासी।
हंस-बंस-गुर जनकपुरोधा। जिन्ह जगु मगु परमारथु सोधा।
लगे कहन उपदेस अनेका। सहित धरम नय बिरति बिबेका।
कौसिक कहि कहि कथा पुरानी। समुझाई सब सभा सुबानी।
तब रघुनाथ कौसिकहिं कहेऊ। नाथ कालि जल-बिनु सब रहेऊ।

मुनि कह उचित कहत रघुराई। गयेउ बीति दिन पहर अढ़ाई।
रिषि-रुख लखि कह तिरहुतिराजू। इहाँ उचित नहिं असन अनाजू।
कहा भूप भल सबहिं सुहाना। पाइ रजायसु चले नहाना।
दो०—तेहि अवसर फल फूल दल मूल अनेक प्रकार।
लै आए बनचर बिपुल भरि भरि काँवरि भार॥२७६॥
चौ०—कामद भे गिरि रामप्रसादा। अवलोकत अपहरत बिषादा।
सर सरिता बन भूमि बिभागा। जनु उमगत आनँद अनुरागा।
बेलि बिटप सब सफल सफूला। बोलत खग मृग अलि अनुकूला।
तेहि अवसर बन अधिक उछाहू। त्रिबिधि समीर सुखद सब काहू।
जाइ न बरनि मनोहरताई। [जनु महि करति जनक पहुनाई।
तब सब लोग नहाइ नहाई]* । राम जनक मुनि-आयसु पाई
देखि देखि तरुवर अनुरागे। जहँ तहँ पुरजन उतरन लागे।
दल फल मूल कंद बिधि नाना। पावन सुंदर सुधासमाना।
दो०—सादर सब कहँ रामगुर पठए भरि भरि भार।
पूजि पितर सुर अतिथि गुर लगे करन फलहार॥२८०॥
चौ०—एहि बिधि बासर बीते चारी। रामु निरखि नरनारि सुखारी।
दुहुँ समाज असि रुचि मन माहीं। बिनु सियराम फिरब भल नाहीं।
सीताराम संग बनबासू। कोटि अमर-पुर-सरिस सुपासू।
परिहरि लषन - राम - बैदेही। जेहि घरु भाव बाम बिधि तेही।
दाहिन दइउ होइ जब सबहीं। रामसमीप बसिअ बन तबहीं।
मंदाकिनिमज्जनु तिहुँ काला। रामदरसु मुद - मंगल - माला।
अटनु राम गिरि बन तापस थल। असनु अमियसम कंद मूल फल।
सुखसमेत संबत दुइ साता। पलसम होहिं न जनिअहिं जाता।
दो०—एहि सुख जोग न लोग सब कहहिं कहाँ अस भागु।
सहज सुभाय समाज दुहुँ राम-चरन-अनुरागु॥२८१॥

* कोष्टक के भीतर का अंश राजा० प्रति में नहीं है।

चौ०-एहि बिधि सकल मनोरथ करहीं। बचन सप्रेम सुनत मन हरहीं।
सीयमातु तेहि समय पठाईं। दासी देखि सुअवसरु आईं।
सावकास सुनि सब सिय सासू। आयेउ जनक-राज-रनिवासू।
कौसल्या सादर सनमानी। आसन दिए समय सम आनी।
सीलु सनेह सकल दुहुँ ओरा। द्रवहिं देखि सुनि कुलिस कठोरा।
पुलक सिथिल तनु बारि बिलोचन। महि नख लिखन लगीं सब सोचन।
सब सिय-राम-प्रीति किसि मूरति। जनु करुना बहु बेष बिसूरति।
सीयमातु कह बिधि बुधि बाँकी। जो पयफेनु फोर पबि टाँकी।
दो०—सुनिय सुधा देखियहि गरल सब करतूति कराल।
जहँ तहँ काक उलूक बक मानस सकृत मराल॥२८२॥
चौ०-सुनि ससोच कह देबि सुमित्रा। बिधिगति बड़ि बिपरीत बिचित्रा।
जो सृजि पालै हरै बहोरी। बाल-केलि-सम बिधिमति भोरी।
कौसल्या कह दोसु न काहू। करमबिबस दुख सुख छति लाहू।
कठिन करमगति जान बिधाता। जो सुभ असुभ सकल फलदाता।
ईस-रजाइ सीस सबही के। उतपति थिति लय बिषहु अमी के।
देबि मोहबस सोचिअ बादी। बिधिप्रपंच अस अचल अनादी।
भूपति जियब मरब उर आनी। सोचिअ सखि लखि निज-हित-हानी।
सीयमातु कह सत्य सुबानी। सुकृतीअवधि अवधपति-रानी।
दो०—लखनु रामु सिय जाहु बन भल परिनाम न पोचु।
गहबरि हिय कह कौसिला मोहि भरत कर सोचु॥२८३॥
चौ०-ईसप्रसाद असीस तुम्हारी। सुत-सुतबधू देव-सरि-बारी।
रामसपथ मैं कीन्हि न काऊ। सो करि कहौं सखी सतिभाऊ।
भरत सील गुन बिनय बड़ाई। भायप भगति भरोस भलाई।
कहत सारदहु कर मति हीचे। सागर सीप कि जाहिं उलीचे।
जानौं सदा भरत कुलदीपा। बार बार मोहि कहेउ महीपा।
कसे कनक मनि पारिखि पाए। पुरुष परिखिअहि समय सुभाए।
अनुचित आजु कहब अस मोरा। सोक सनेह सयानप थोरा।

सुनि सुरसरि-सम पावनि बानी। भईं सनेह-बिकल सब रानी।
दो०—कौसल्या कह धीर धरि सुनहु देवि मिथिलेसि।
को बिबेक-निधि-बल्लभहि तुम्हहिं सकै उपदेसि ॥२८४॥
चौ०—रानि राय सन अवसरु पाई। अपनी भाँति कहब समुझाई।
रखिअहिं लषन भरत गवनहिं बन। जौं यह मत मानै महीपमन।
तौ भल जतन करब सुबिचारी। मोरे सोच भरत कर भारी।
गूढ़ सनेह भरत मन माहीं। रहें नीक मोहि लागत नाहीं।
लखि सुभाउ सुनि सरल सुबानी। सब भईं मगन करुनरस रानी।
नभ प्रसून झरि धन्य धन्य धुनि। सिथिल सनेह सिद्ध जोगी मुनि।
सबु रनिवासु बिथकि लखि रहेऊ। तब धरि धीर सुमित्रा कहेऊ।
देवि दंडजुग जामिनि बीती। राममातु सुनि उठी सप्रीती।
दो०—बेगि पाउ धारिअ थलहिं कह सनेह सतिभाय।
हमरे तौ अब ईसगति कै मिथिलेस सहाय ॥२८५॥
चौ०-लखि सनेह सुनि बचन बिनीता। जनकप्रिया गहि पाय पुनीता।
देवि उचित असि बिनय तुम्हारी। दसरथ-घरनि, राम-महतारी।
प्रभु अपने नीचहु आदरहीं। अगिनि धूमगिरि सिर तिनु धरहीं।
सेवक राउ करम-मन-बानी। सदा सहाय महेस भवानी।
रउरे अंग जोगु जग को है। दीप सहाय कि दिनकर सोहै।
रामु जाइ बन करि सुरकाजू। अचल अवधपुर करिहहिं राजू।
अमर नाग नर राम-बाहु-बल। सुख बसिहहिं अपने अपने थल।
यह सब जागबलिक कहि राखा। देबि न होइ मुधा मुनि भाखा।
दो०—अस कहि पग परि पेम अति सियहित बिनय सुनाइ।
सियसमेत सियमातु तब चली सुआयसु पाइ ॥२८६॥
चौ०—प्रिय परिजनहिं मिली बैदेही। जो जेहि जोगु भाँति तेहि तेही।
तापसबेष जानकी देखी। भा सबु बिकल बिषाद बिसेखी।
जनक राम-गुरु-आयसु पाई। चले थलहिं सिय देखी आई।
लीन्हि लाइ उर जनक जानकी। पाहुनि पावन पेम प्रान की।

कहब मोर मुनिनाथ निबाहा। एहि तें अधिक कहौं मैं काहा।
मैं जानौं निज नाथ सुभाऊ। अपराधिहु पर कोह न काऊ।
मो पर कृपा सनेहु बिसेखी। खेलत खुनिस न कबहूँ देखी।
सिसुपन तें परिहरेउँ न संगू। कबहुँ न कीन्ह मोर मन भंगू।
मैं प्रभु कृपारीति जिय जोही। हारेहु खेल जितावहिं मोही।
दो०—महूँ सनेह-सकोच-बस सनमुख कहे न बयन।
दरसन तृपित न आजु लगि पेम-पियासे नयन ॥२६१॥
चौ०-बिधि न सकेउ सहि मोर दुलारा। नीच बीचु जननी मिस पारा।
यहउ कहत मोहि आजु न सोभा। अपनी समुझि साधु सुचि को भा।
मातु मंद मैं साधु सुचाली। उर अस आनत कोटि कुचाली।
फरै कि कोदव बालि सुसाली। मुकता प्रसव कि संबुक ताली*।
सपनेहु दोस कलेसु न काहू। मोर अभाग उदधि अवगाहू।
बिनु समुझें निज-अघ-परिपाकू। जारिउँ जाय जननि कहि काकू।
हृदय हेरि हारेउँ सब ओरा। एकहि भाँति भलेहि भल मोरा।
गुर गोसाइँ साहिब सियरामू। लागत मोहि नीक परिनामू।
दो०—साधु-सभा गुर-प्रभु-निकट कहौं सुथल सतिभाउ।
प्रेम-प्रपंचु कि झूठ फुर जानहिं मुनि रघुराउ ॥२६२॥
चौ०—भूपतिमरन पेम पनु राखी। जननी कुमति जगत सब साखी।
देखि न जाहिं बिकल महतारी। जरहिं दुसह जर पुर-नर-नारी।
महीं सकल अनरथ कर मूला। सो सुनि समुझि सहिउँ सब सूला।
सुनि बनगवनु कीन्ह रघुनाथा। करि मुनिबेष लषन-सिय-साथा।
बिनु पानहिन्ह पयादेहि पाएँ। संकरु साखि रहेउँ एहि घाएँ।
बहुरि निहारि निषादसनेहू। कुलिस कठिन उर भयेउ न बेहू।
अब सबु आँखिन्ह देखेउँ आई। जिअत जीव जड़ सबइ सहाई।
जिन्हहि निरखि मग साँपिनि बीछी। तजहिं बिषमबिष तामस तीछी।

---

* काशि०, रामा०—काली।

चौ०-अगम सबहिं बरनत बरबरनी। जिमि जलहीन मीन गमु धरनी।
भरत अमित महिमा सुनु रानी। जानहिं रामु न सकहिं बखानी।
बरनि सप्रेम भरत अनुभाऊ। तियजिय की रुचि लखि कह राऊ।
बहुरहिं* लषनु, भरतु, बन जाहीं। सब कर भल सब के मन माहीं।
देबि! परंतु भरत रघुबर की। प्रीति प्रतीति जाइ नहिं तरकी।
भरतु अवधि सनेह ममता की। जद्यपि राम सींव† समता की।
परमारथ स्वारथ सुख सारे। भरत न सपनेहुँ मनहुँ निहारे।
साधन सिद्धि रामपग-नेहू। मोहि लखि परत भरतमत एहू।

दो०—भोरेहुँ भरत न पेलिहहिं मनसहुँ रामरजाइ।
करिअ न सोच सनेहबस कहेउ भूप बिलखाइ ॥२९०॥

चौ०-राम-भरत-गुन गनत सप्रीती। निसि दंपतिहिं पलकसम बीती।
राजसमाज प्रात जुग जागे। न्हाइ न्हाइ सुर पूजन लागे।
गे नहाइ गुरु पहिं रघुराई। बंदि चरन बोले रुख पाई।
नाथ भरतु पुरजन महतारीं। सोकबिकल बनबास दुखारीं।
सहितसमाज राउ मिथिलेसू। बहुत दिवस भए सहत कलेसू।
उचित होइ सोइ कीजिअ नाथा। हित सबही कर रउरे हाथा।
अस कहि अति सकुचे रघुराऊ। मुनि पुलके लखि सीलु सुभाऊ।
तुम्ह बिनु राम सकल सुख साजा। नरकसरिस दुहुँ राजसमाजा।

दो०—प्रान प्रान के, जीव के जिव, सुख के सुख राम।
तुम्ह तजि तात सुहात गृह जिन्हहिं तिन्हहिं बिधि बाम ॥२९१॥

चौ०-सो सुख धरमु करमु जरि जाऊ। जहँ न राम-पद-पंकज भाऊ।
जोगु कुजोगु ग्यान अग्यानू। जहँ नहिं रामपेम परधानू।
तुम्ह बिनु दुखी सुखी तुम्ह तेही। तुम्ह जानहु जिय जो जेहि केही।
राउर आयसु सिर सबही के। बिदित कृपालहिं गति सब नीके।
आपु आश्रमहिं धारिअ पाऊ। भयेउ सनेहसिथिल मुनिराऊ।
करि प्रनामु तब राम सिधाए। [रिषि धरि धीर जनक पहिं आए।

* राजा०—बरनहिं। † राजा०—सीय।

रामबचन गुरु नृपहि सुनाए]*। सील सनेह सुभाय सुहाए।
महाराज अब कीजिअ सोई। सब कर धरमसहित हित होई।
दो०—ग्यान-निधान सुजान सुचि धरमधीर नरपाल।
तुम्ह बिनु असमंजस-समन को समरथ एहि काल ॥२६२॥
चौ०-सुनि मुनिबचन जनक अनुरागे। लखि गति ग्यानु बिरागु बिरागे।
सिथिल सनेह गुनत मन माहीं। आए इहाँ कीन्ह भल नाहीं।
रामहिं राय कहेउ बन जाना। कीन्ह आपु प्रिय प्रेमपयाना।
हम अब बन तें बनहिं पठाई। प्रमुदित फिरब बिबेक बड़ाई।
तापस मुनि महिसुर सुनि देखी। भए प्रेमबस बिकल बिसेखी।
समउ समुझि धरि धीरजु राजा। चले भरत पहिं सहित समाजा।
भरत आइ आगें भइ लीन्हे। अवसर-सरिस सुआसन दीन्हे।
तात भरत कह तिरहुतिराऊ। तुम्हहिं बिदित रघुबीरसुभाऊ।
दो०—राम सत्यब्रत धरमरत सब कर सीलु सनेहु।
संकट सहत सँकोचबस कहिअ जो आयसु देहु ॥ २६३ ॥
चौ०-सुनि तन पुलकि नयन भरि बारी। बोले भरतु धीर धरि भारी।
प्रभु प्रिय पूज्य पितासम आपू। कुल-गुरु-सम हित माय न बापू।
कौसिकादि मुनि सचिवसमाजू। ग्यान-अंबु-निधि आपुन आजू।
सिसु सेवकु आयसु-अनुगामी। जानि मोहि सिख देइअ स्वामी।
एहि समाज थल बूझब राउर। मौन मलिन मैं बोलब बाउर।
छोटे बदन कहौं बड़ि बाता। छमब तात लखि बाम बिधाता।
आगम निगम प्रसिद्ध पुराना। सेवाधरमु कठिन जगु जाना।
स्वामि-धरम स्वारथहिं बिरोधू। बैरु अंध प्रेमहि न प्रबोधू।
दो०—राखि रामरुख धरमुब्रतु पराधीन मोहि जानि।
सब के संमत सर्बहित करिअ पेम पहिचानि ॥ २६४ ॥
चौ०-भरत बचन सुनि देखि सुभाऊ। सहित समाज सराहत राऊ।
सुगम अगम मृदु मंजु कठोरे। अरथ अमित अति आखर थोरे।

* कोष्ठांतर्गत अर्द्धाली राजा० प्रति में नहीं है।

ज्यों मुखु मुकुर, मुकुरु निजपानी। गहि न जाइ अस अदभुत बानी।
भूपु भरतु मुनि साधुसमाजू। गे जहँ बिबुध-कुमुद-द्विजराजू।
सुनि सुधि सोच बिकल सब लोगा। मनहुँ मीनगन नवजल-जोगा।
देव प्रथम कुल-गुर-गति देखी। निरखि बिदेह सनेह बिसेखी।
राम-भगति-मय भरतु निहारे। सुर स्वारथी हहरि हिय हारे।
सब कोउ राम पेममय पेखा। भए अलेख सोचबस लेखा।

दो०—रामु सनेह-सकोच-बस कह ससोच सुरराजु।
रचहु प्रपंचहिं पंच मिलि नाहिं त भयेउ अकाजु॥ २९५॥

चौ०—सुरन्ह सुमिरि सारदा सराही। देवि! देव सरनागत पाही।
फेरि भरतमति करि निज माया। पालु बिबुधकुल करि छलछाया।
बिबुधबिनय सुनि देवि सयानी। बोली सुर स्वारथ जड़ जानी।
मो सन कहहु भरत-मति फेरू। लोचन सहस न, सूझ सुमेरू।
बिधि-हरि-हर माया बड़ि भारी। सोउ न भरतमति सकै निहारी।
सो मति मोहि कहत करु भोरी। चंदिनि कर कि चंडकर चोरी।
भरतहृदय सिय-राम-निवासू। तहँ कि तिमिर जहँ तरनिप्रकासू।
अस कहि सारद गइ बिधिलोका। बिबुध बिकल निसि मानहुँ कोका।

दो०—सुर स्वारथी मलीन मन कीन्ह कुमंत्र कुठाटु।
रचि प्रपंचु माया प्रबल भय भ्रम अरति उचाटु॥ २९६॥

चौ०—करि कुचालि सोचत सुरराजू। भरतहाथ सबु काजु अकाजू।
गए जनक रघुनाथ समीपा। सनमाने सब रबि-कुल दीपा*।
समय समाज धरम अबिरोधा। बोले तब रघु-वंस-पुरोधा।
जनक भरत संवाद सुनाई। भरत कहाउति कही सुहाई।
तात राम जस आयसु देहू। सो सबु करै मोर मत एहू।
सुनि रघुनाथ जोरि जुग पानी। बोले सत्य सरल मृदु बानी।
बिद्यमान आपुन मिथिलेसू। मोर कहब सब भाँति भदेसू।
राउर राय रजायसु होई। राउरि सपथ सही सिर सोई।

* काशि० प्रति में यह अर्द्धाली नहीं है।

दो०—रामसपथ सुनि मुनि जनकु सकुचे सभासमेत।
सकल बिलोकत भरतमुखु बनै न ऊतरु देत॥२९७॥
चौ०—सभा सकुच बस भरत निहारी। रामबंधु धरि धीरज भारी॥
कुसमउ देखि सनेहु सँभारा। बढ़त बिंधि जिमि घटज निवारा॥
सोक कनकलोचन मति छोनी। हरी बिमल गुनगन जगजोनी॥
भरतबिबेक बराह बिसाला। अनायास उधरी तेहि काला॥
करि प्रनामु सब कहँ कर जोरे। रामु राउ गुर साधु निहोरे॥
छमब आजु अति अनुचित मोरा। कहौं बदन मृदु बचन कठोरा॥
हिय सुमिरी सारदा सुहाई। मानस तें मुखपंकज आई॥
बिमल-बिबेक-धरम-नय-साली। भरतभारती मंजु मराली॥
दो०—निरखि बिबेक बिलोचनन्हि सिथिल सनेह समाजु।
करि प्रनामु बोले भरतु सुमिरि सीय रघुराजु॥२९८॥
चौ०-प्रभु पितु मातु सुहृद गुर स्वामी। पूज्य परमहित अंतरजामी॥
सरल सुसाहिबु सील-निधानू। प्रनतपाल सर्बग्य सुजानू॥
समरथ सरनागत हितकारी। गुनगाहकु अवगुन-अघ-हारी॥
स्वामि गोसाइँहि सरिस गोसाईं। मोहि समान मैं साइँ दोहाईं॥
प्रभु-पितु-बचन मोहबस पेली। आयेउँ इहाँ समाज सकेली॥
जग भल पोच ऊँच अरु नीचू। अमिअ अमरपद, माहुर मीचू॥
रामरजाइ मेट मन माहीं। देखा सुना कतहुँ कोउ नाहीं॥
सो मैं सब बिधि कीन्हि ढिठाई। प्रभु मानी सनेह सेवकाई॥
दो०—कृपा भलाई आपनी नाथ कीन्ह भल मोर।
दूषन भे भूषनसरिस सुजसु चारु चहुँ ओर॥२९९॥
चौ०—राउरि रीति सुबानि बड़ाई। जगत बिदित निगमागम गाई॥
कूर कुटिल खल कुमति कलंकी। नीच निसील निरीस निसंकी॥
तेउ सुनि सरन सामुहें आए। सकृत प्रनाम किहें अपनाए॥
देखि दोष कबहुँ न उर आने। सुनि गुन साधुसमाज बखाने॥
को साहिब सेवकहि नेवाजी। आपु समाज साज सब साजी॥

निज करतूति न समुझिअ सपने। सेवक सकुच सोचु उर अपने।
सो गोसाइँ नहिं दूसर कोपी। भुजा उठाइ कहौं पन रोपी।
पसु नाचत सुक पाठ-प्रवीना। गुनगति नट पाठक आधीना।
दो०—यौं सुधारि सनमानि जन किए साधु सिरमोर।
को कृपाल बिनु पालिहै बिरदावलि बरजोर ॥३००॥
चौ०-सोकसनेह कि बाल सुभाएँ। आयेउँ लाइ रजायसु बाएँ।
तबहुँ कृपालु हेरि निज ओरा। सबहि भाँति भल मानेउ मोरा।
देखेउँ पाय सु - मंगल - मूला। जानेउँ स्वामि सहज अनुकूला।
बड़े समाज बिलोकेउँ भागू। बड़ी चूक साहिबअनुरागू।
कृपा अनुग्रहु अंग अघाई। कीन्हि कृपानिधि सब अधिकाई
राखा मोर दुलार गोसाईं। अपने सील सुभायँ भलाई
नाथ निपट मैं कीन्हि ढिठाई। स्वामि समाज सकोच बिहाई
अबिनय बिनय जथारुचि बानी। छमिहि देउ अति आरति जानी
दो०—सुहृद सुजान सुसाहिबहि बहुत कहब बड़ि खोरि।
आयसु देइअ देव अब सबइ सुधारिअ मोरि ॥३०१॥
चौ०-प्रभु-पद-पदुम-परागु दोहाई। सत्य सुकृत सुखसीवँ सुहाई।
सो करि कहौं हिये अपने की। रुचि जागत सोवत सपने की।
सहज सनेह स्वामिसेवकाई। स्वारथ छल फल चारि बिहाई।
अग्यासम न सुसाहिबसेवा। सो प्रसादु जन पावै देवा।
अस कहि प्रेमबिबस भए भारी। पुलक सरीर, बिलोचन बारी।
प्रभु-पद-कमल गहे अकुलाई। समउ सनेहु न सो कहि जाई।
कृपासिंधु सनमानि सुबानी। बैठाए समीप गहि पानी।
भरतबिनय सुनि देखि सुभाऊ। सिथिल सनेह सभा रघुराऊ।
छंद०—रघुराउ सिथिल सनेहु साधु समाज मुनि मिथिलाधनी।
मन महुँ सराहत भरत-भायप-भगति की महिमा घनी॥
भरतहि प्रसंसत बिबुध बरषत सुमन मानस-मलिन से।
तुलसी बिकल सब लोग सुनि सकुचे निसागम नलिन से॥

सो०—देखि दुखारी दीन दुहुँ समाज नरनारि सब।
मघवा महामलीन मुए मारि मंगल चहत॥ ३०२॥
चौ०-कपट-कुचालि-सीवँ सुरराजू। पर-अकाज-प्रिय आपन काजू।
काकसमान पाक- रिपु-रीती। छली मलीन कतहुँ न प्रतीती।
प्रथम कुमत करि कपटु सँकेला। सो उचाटु सबके सिर मेला।
सुरमाया सब लोग बिमोहे। रामप्रेम अतिसय न बिछोहे।
भए उचाटबस मन थिर नाहीं। छन बन रुचि,छन सदन सुहाहीं।
दुबिध मनोगति प्रजा दुखारी। सरित-सिंधु-संगम जनु बारी।
दुचित कतहुँ परितोषु न लहहीं। एक एक सन मरमु न कहहीं।
लखि हिय हँसि कह कृपानिधानू। सरिस स्वान मघवान जुबानू।
दो०—भरतु जनकु मुनिजन सचिव साधु सचेत बिहाइ।
लागि देवमाया सबहि जथाजोगु जनु पाइ॥ ३०३॥
चौ०-कृपासिंधु लखि लोग दुखारे। निजसनेह सुर-पति-छल भारे।
सभा राउ गुर महिसुर मंत्री। भरतभगति सब कै मति जंत्री।
रामहि चितवत चित्र लिखे से। सकुचत बोलत बचन सिखे से।
भरत-प्रीति-नति-बिनय-बड़ाई। सुनत सुखद बरनत कठिनाई।
जासु बिलोकि भगति लवलेसू। प्रेममगन मुनिगन मिथिलेसू।
महिमा तासु कहै किमि तुलसी। भगति सुभाय सुमति हिय हुलसी।
आपु छोटि महिमा बड़ि जानी। कबिकुल कानि मानि सकुचानी।
कहि न सकति गुन रुचि अधिकाई। मतिगति बालबचन की नाईं।
दो०—भरत-बिमल-जसु बिमल बिधु सुमति चकोर-कुमारि।
उदित बिमल जनहृदय नभ एकटक रही निहारि॥३०४॥
चौ०-भरतसुभाउ न सुगम निगमहूँ। लघुमति चापलता कबि छमहूँ।
कहत सुनत सतिभाउ भरत को। सीय-राम-पद होइ न रत को।
सुमिरत भरतहि प्रेमु राम को। जेहि न सुलभु तेहि सरिस बाम को।
देखि दयालु दसा सबही की। राम सुजान जानि जन जी की।
धरमधुरीन धीर नयनागर। सत्य-सनेह-सील-सुख-सागर।

देखु कालु लखि समउ समाजू। नीति–प्रीति–पालक रघुराजू
बोले बचन बानि सरबसु से। हित परिनाम सुनत ससिरसु से
तात भरत तुम्ह धरम धुरीना। लोक–बेद–बिद परमप्रबीना।

दो०—करम बचन मानस बिमल तुम समान तुम्ह तात।
गुरसमाज लघु-बंधु-गुन कुसमय किमि कहि जात॥ ३०५॥

चौ०–जानहु तात तरनि-कुल-रीती। सत्यसंध पितु – कीरति-प्रीती।
समउ समाजु लाज गुरजन की। उदासीन हित अनहित मन की।
तुम्हहिं बिदित सबही कर करमू। आपन मोर परम हित धरमू।
मोहि सब भाँति भरोस तुम्हारा। तदपि कहौं अवसर-अनुसारा।
तात तात बिनु बात हमारी। केवल गुर-कुल-कृपा सँभारी।
नतरु प्रजा पुरजन परिवारू। हमहिं सहित सबु होत खुआरू।
जौं बिनु अवसर अथव दिनेसू। जग केहि कहहु न होइ कलेसू।
तस उतपातु तात बिधि कीन्हा। मुनि मिथिलेस राखि सबु लीन्हा।

दो०—राजकाज सब लाज पति धरम धरनि धन धाम।
गुरप्रभाउ पालिहि सबहिं भल होइहि परिनाम॥ ३०६

चौ०–सहित समाज तुम्हार हमारा। घर बन गुरप्रसाद रखवा
मातु–पिता–गुरु–स्वामि – निदेसू। सकलधरम धरनीधरु से
सो तुम्ह करहु - करावहु मोहू। तात तरनि – कुल-पालक हो
साधक एक सकल सिधि देनी। कीरति सुगति भूतिमय बेनी
सो बिचारि सहि संकट भारी। करहु प्रजा परिवार सुखारी
बाँटी बिपति सबहिं मोहि भाई। तुमहिं अवधि भरि बड़ि कठिनाई
जानि तुम्हहिं मृदु कहहुँ कठोरा। कुसमय तात न अनुचित मोरा
होहिं कुठाँय सुबंधु सहाये। ओड़ियहि हाथ असनिहु के घाये

दो०—सेवक कर पद नयन से मुख सो साहिबु होइ।
तुलसी प्रीति की रीति सुनि सुकबि सराहहिं सोइ॥३०७॥

चौ०–सभा सकल सुनि रघुबर-बानी। प्रेम-पयोधि-अमिअ जनु सानी
सिथिल समाजु सनेह समाधी। देखि दसा चुप सारद साधी।

भरतहिं भयेउ परम संतोषू। सनमुख स्वामि बिमुख दुखु दोषू।
मुखु प्रसन्न मन मिटा बिषादू। भा जनु गूँगेहि गिरा-प्रसादू।
कीन्ह सप्रेम प्रनाम बहोरी। बोले पानिपंकरुह जोरी।
नाथ भयेउ सुखु साथ गए को। लहेउँ लाहु जग जनमु भये को।
अब कृपाल जस आयसु होई। करौं सीस धरि सादर सोई।
सो अवलंब देउ मोहिं देई। अवधि-पारु पावौं जेहि सेई।

दो०—देव देवअभिषेक हित गुरअनुसासन पाइ।
आनेउँ सब तीरथसलिलु तेहि कहँ काह रजाइ॥३०८॥

चौ०-एकु मनोरथ बड़ मन माहीं। सभय सकोच जात कहि नाहीं।
कहहु तात प्रभुआयसु पाई। बोले बानि सनेह सुहाई।
चित्रकूट सुचि* थल तीरथ बन। खग मृग सरि सर निर्झर गिरिगन।
प्रभु-पद-अंकित अवनि बिसेखी। आयसु होइ त आवौं देखी।
अवसि अत्रि आयसु सिर धरहू। तात बिगत भय कानन चरहू।
मुनिप्रसादु बन मंगलदाता। पावन परम सुहावन भ्राता।
रिषिनायकु जहँ आयसु देहीं। राखेहु तीरथजलु थल तेहीं।
सुनि प्रभुबचन भरत सुख पावा। मुनि-पद-कमल मुदित सिरु नावा।

दो०—भरत राम-संबाद सुनि सकल-सुमंगल-मूल।
सुर स्वारथी सराहि कुल बरषत सुर-तरु-फूल॥३०९॥

चौ०-धन्य भरत जय राम गोसाईं। कहत देव हरषत बरिआईं।
मुनि मिथिलेस सभा सब काहू। भरत-बचन सुनि भयेउ उछाहू।
भरत – राम – गुन-ग्राम-सनेहू। पुलकि प्रसंसत राउ बिदेहू।
सेवक स्वामि सुभाउ सुहावन। नेमु पेमु अति पावन पावन।
मतिअनुसार सराहन लागे। सचिव सभासद सब अनुरागे।
सुनि सुनि राम-भरत-संबादू। दुहुँ समाज हिय हरखु बिषादू।
राममातु दुखु-सुखु-सम जानी। कहि गुन राम† प्रबोधी रानी।

---

* काशि०—पुनि।
† काशि०—दोष।

एक कहहिं रघुबीरबड़ाई। एक सराहत भरतभलाई।
दो०—अत्रि कहेउ तब भरत सन सैलसमीप सुकूप।
राखिअ तीरथतोय तहँ पावन अमिअ अनूप ॥३१०॥
चौ०-भरत अत्रिअनुसासन पाई। जलभाजन सब दिए चलाई।
सानुज आपु अत्रि मुनि साधू। सहित गए जहँ कूप अगाधू।
पावन पाथ पुन्य-थल राखा। प्रमुदित प्रेम अत्रि अस भाखा।
तात अनादि सिद्ध थल एहू। लोपेउ काल बिदित नहिं केहू।
तब सेवकन्ह सरस थलु देखा। कीन्ह सुजल हित कूप बिसेखा।
बिधिबस भयेउ बिस्व-उपकारू। सुगम अगम अति धरम-बिचारू।
भरतकूप अब कहिहहिं लोगा। अति पावन तीरथ जलजोगा।
प्रेम सनेम निमज्जत प्रानी। होइहहिं बिमल करम मन बानी।
दो०—कहत कूपमहिमा सकल गए जहाँ रघुराउ।
अत्रि सुनायेउ रघुबरहिं तीरथ-पुन्य-प्रभाउ ॥३११॥
चौ०-कहत धरम इतिहास सप्रीती। भयेउ भोर निसि सो सुख बीती।
नित्य निबाहि भरतु दोउ भाई। राम-अत्रि-गुर-आयसु पाई।
सहित समाज साज सब सादे। चले राम-बन-अटन पयादे।
कोमल चरन चलत बिनु पनहीं। भइ मृदु भूमि सकुचि मन मनहीं।
कुस कंटक काँकरी कुराई। कटुक* कठोर कुबस्तु दुराई।
महि मंजुल मृदु मारग कीन्हे। बहत समीर त्रिबिध सुख लीन्हे।
सुमन बरषि सुर घन करि छाँही। बिटप फूलि फल तृन मृदुताहीं।
मृग बिलोकि खग बोलि सुबानी। सेवहिं सकल रामप्रिय जानी।
दो०—सुलभ सिद्धि सब प्राकृतहु राम कहत जमुहात।
राम-प्रान-प्रिय भरत कहुँ यह न होइ बड़ि बात ॥३१२॥
चौ०-एहि बिधि भरतु फिरत बन माँहीं। नेमु प्रेमु लखि मुनि सकुचाहीं।
पुन्य जलाश्रय भूमि बिभागा। खग मृग तरु तृन गिरि बन बागा।
चारु बिचित्र पवित्र बिसेखी। बूझत भरतु दिब्य सब देखी।

* रामा० काशि०—कटु।

सुनि मन मुदित कहत रिषिराऊ। हेतु नाम गुन पुन्य प्रभाऊ।
कतहुँ निमज्जन, कतहुँ प्रनामा। कतहुँ बिलोकत मन अभिरामा।
कतहुँ बैठि मुनिआयेसु पाई। सुमिरत सीय सहित दोउ भाई।
देखि सुभाउ सनेहु सुसेवा। देहिं असीस मुदित बनदेवा।
फिरहिं गए दिनु पहर अढ़ाई। प्रभु-पद कमल बिलोकहिं आई।
दो०—देखे थल तीरथ सकल भरत पाँच दिन माँझ।
कहत सुनत हरिहर सुजसु गयेउ दिवसु भइ साँझ ॥३१३॥
चौ०-भोर न्हाइ सब जुरा समाजू। भरत भूमिसुर तिरहुति-राजू।
भल दिन आजु जानि मन माहीं। रामु कृपाल कहत सकुचाहीं।
गुर-नृप-भरत-सभा अवलोकी। सकुचि राम फिरि अवनि बिलोकी।
सील सराहि सभा सब सोची। कहुँ न राम सम स्वामि सँकोची।
भरत सुजान रामरुख देखी। उठि सपेम धरि धीर बिसेखी।
करि दंडवत कहत कर जोरी। राखी नाथ सकल रुचि मोरी।
मोहि लगि सबहि सहेउ संतापू। बहुत भाँति दुखु पावा आपू।
अब गोसाइँ मोहि देउ रजाई। सेवौं अवध अवधि भरि जाई।
दो०—जेहि उपाय पुनि पायँ जनु देखै दीनदयाल।
सो सिख देइअ अवधि लगि कोसलपाल कृपाल ॥३१४॥
चौ०-पुरजन परिजन प्रजा गोसाईं। सब सुचि सरस सनेह सगाईं।
राउर बदि भल भव-दुख-दाहू। प्रभु बिनु बादि परम-पद-लाहू।
स्वामि सुजानु जानि सब ही की। रुचि लालसा रहनि जन जी की।
प्रनतपालु पालहिं सब काहू। देव दुहूँ दिसि ओर निबाहू।
अस मोहि सब बिधि भूरि भरोसो। किए बिचारु न सोच खरो सो।
आरति मोर नाथ कर छोहू। दुहुँ मिलि कीन्ह ढीठ हठि मोहू।
यह बड़ दोष दूरि करि स्वामी। तजि सकोच सिखइअ अनुगामी।
भरतबिनय सुनि सबहि प्रसंसी। खीर-नीर-बिबरन-गति हंसी।
दो०—दीनबंधु सुनि बंधु के बचन दीन छलहीन।
देस-काल-अवसर-सरिस बोले रामु प्रबीन ॥३१५॥

चौ०—तात तुम्हारि मोरि परिजन की। चिंता गुरहिं नृपहिं घर बन की।
माथे पर गुर मुनि मिथिलेसू। हमहिं तुम्हहिं सपनेहुँ न कलेसू।
मोर तुम्हार परमपुरुशारथु। स्वारथु सुजसु धरमु परमारथु।
पितुआयसु पालिअ दुहुँ भाई। लोक वेद भल भूप भलाई।
गुर-पितु-मातु-स्वामि-सिख पाले। चलेहु कुमग पग परहिं न खाले।
अस विचारि सब सोच बिहाई। पालहु अवध अवधि भरि जाई।
देसु कोसु पुरजन परिवारू। गुरपद-रजहिं लाग छरुभारू।
तुम्ह मुनि-मातु-सचिव-सिख मानी। पालेहु पुहुमि प्रजा रजधानी।
दो०—मुखिआ मुखु सो चाहिए खान पान कहुँ एक।
पालै पोषै सकल अँग तुलसी सहित विवेक॥३१६॥
चौ०—राज-धरम-सरवसु एतनोई। जिमि मन माँह मनोरथ गोई।
बंधुप्रबोधु कीन्ह बहु भाँती। बिनु अधार मन तोषु न साँती।
भरत-सीलु गुर-सचिव-समाजू। सकुच सनेह-बिबस रघुराजू।
प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्ही। सादर भरत सीस धरि लीन्ही।
चरनपीठ करुनानिधान के। जनु जुग जामिक* प्रजा प्रान के।
संपुट भरतसनेह—रतन के। आखर जुग जनु जीवजतन के।
कुलकपाट कर कुसल करम के। बिमल नयन सेवा-सु-धरम के।
भरत मुदित अवलंब लहे तें। अस सुख जस सिय-राम रहे तें।
दो०—माँगेउ बिदा प्रनामु करि राम लिए उर लाइ।
लोग उचाटे अमरपति कुटिल कुअवसर पाइ॥३१७॥
चौ०—सो कुचालि सब कहँ भइ नीकी। अवधिआस सम जीवन जी की।
नतरु लषन-सिय-राम-बियोगा। हहरि मरत सबु लोग कुरोगा।
रामकृपा अवरेब सुधारी। बिबुधधारि भइ गुनद गोहारी।
भेंटत भुज भरि भाइ भरत सो। राम-प्रेम-रसु कहि न परत सो।
तन मन बचन उमग अनुरागा। धीर-धुरंधर धीरज त्यागा।
बारिजलोचन मोचत बारी। देखि दसा सुरसभा दुखारी।

* कारि०—आमनि। अर्थ—ज़ामिन, ज़मानतदार।

मुनिगन गुर धुर धीर जनक से । ग्यानअनल मन कसे कनक से ।
जे बिरंचि निरलेप उपाये । पदुमपत्र जिमि जग जलजाये ।

दो०—तेउ बिलोकि रघुवर-भरत-प्रीति अनूप अपार ।
भए मगन मन तन बचन सहित बिराग बिचार ॥३१८॥

चौ०-जहाँ जनक-गुर-गति-मति भोरी । प्राकृत प्रीति कहत बड़ि खोरी ।
बरनत रघुबर - भरत - वियोगू । सुनि कठोर कबि जानिहि लोगू ।
सो सकोच रस अकथ सुबानी । समउसनेह सुमिरि सकुचानी ।
भेंटि भरतु रघुबर समुझाए । पुनि रिपुदवन हरषि हिय लाए ।
सेवक सचिव-भरत-रुख पाई । निज निज काज लगे सब जाई ।
सुनि दारुन दुखु दुहूँ समाजा । लगे चलन के साजन साजा ।
प्रभु-पद-पदुम बंदि दोउ भाई । चले सीस धरि रामरजाई ।
मुनि तापस बन देव निहोरी । सब सनमानि बहोरि बहोरी ।

दो०—लषनहिं भेंटि प्रनामु करि सिर धरि सिय-पद-धूरि ।
चले सप्रेम असीस सुनि सकल-सुमंगल-मूरि ॥ ३१९ ॥

चौ०-सानुज राम नृपहिं सिर नाई । कीन्हि बहुत बिधि बिनय बड़ाई ।
देव दयाबस बड़ दुख पायेउ । सहित समाज काननहिं आयेउ ।
पुर पगु धारिअ देइ असीसा । कीन्ह धीर धरि गवनु महीसा ।
मुनि महिदेव साधु सनमाने । बिदा किए हरि-हर-सम जाने ।
सासुसमीप गए दोउ भाई । फिरे बंदि पग आसिष पाई ।
कौसिक बामदेव जाबाली । परिजन पुरजन सचिव सुचाली ।
जथाजोगु करि बिनय प्रनामा । बिदा किए सब सानुज रामा ।
नारि पुरुष लघु मध्य बड़ेरे । सब सनमानि कृपानिधि फेरे ।

दो०—भरत-मातु-पद बंदि प्रभु सुचि सनेह मिलि भेंटि ।
बिदा कीन्हि सजि पालकी सकुच सोच सब मेंटि ॥ ३२० ॥

चौ०-परिजन मातु पितहिं मिलि सीता । फिरी प्रान-प्रिय-प्रेम-पुनीता ।
करि प्रनामु भेंटी सब सासू । प्रीति कहत कबि हिय न हुलासू ।
सुनि सिख अभिमत आसिष पाई । रही सीय दुहुँ प्रीति समाई ।

रघुपति पटु पालकी मँगाई। करि प्रबोधु सब मातु चढ़ाई।
बार बार हिलि मिलि दुहुँ भाई। सम सनेह जननी पहुँचाई।
साजि बाजि गज बाहन नाना। भूप-भरतदल कीन्ह पयाना।
हृदय राम सिय लखन समेता। चले जाहिं सब लोग अचेता।
बसह बाजि गज पसु हिय हारे। चले जाहिं परबस मन मारे।

दो०—गुर-गुरतिय-पद बंदि प्रभु सीता लषन समेत।
फिरे हरष-बिसमय-सहित आए परननिकेत॥ ३२१॥

चौ०-बिदा कीन्ह सनमानि निषादू। चलेउ हृदय बड़ बिरह बिषादू।
कोल किरात भिल्ल बनचारी। फेरे फिरे जोहारि जोहारी।
प्रभु सिय लषन बैठि बट छाहीं। प्रिय-परिजन-वियोग बिलखाहीं।
भरत-सनेह-सुभाउ सुबानी। प्रिया अनुज सन कहत बखानी।
प्रीति प्रतीति बचन मन करनी। श्रीमुख राम प्रेमबस बरनी।
तेहि अवसर खग मृग जल मीना। चित्रकूट चर अचर मलीना।
बिबुध बिलोकि दसा रघुबर की। बरषि सुमन कहि गति घर घर की।
प्रभु प्रनामु करि दीन्ह भरोसो। चले मुदित मन डर न खरो सो।

दो०—सानुज सीयसमेत प्रभु राजत परनकुटीर।
भगति ग्यान बैराग्य जनु सोहत धरे सरीर॥३२२॥

चौ०-मुनि महिसुर गुर भरत भुआलू। रामबिरह सबु साजु बिहालू।
प्रभु-गुन-ग्राम गुनत मन माहीं। सब चुपचाप चले मग जाहीं।
जमुना उतरि पार सबु भयेऊ। सो बासरु बिनु भोजन गयेऊ।
उतरि देवसरि दूसर बासू। रामसखा सब कीन्ह सुपासू।
सई उतरि गोमती नहाए। चौथे दिवस अवधपुर आए।
जनक रहे पुर बासर चारी। राज काज सब साज सँभारी।
सौंपि सचिव गुर भरतहि राजू। तिरहुति चले साजि सब साजू।
नगर-नारि-नर गुर-सिख मानी। बसे सुखेन राम-रजधानी।

दो०—रामदरस लगि लोग सब करत नेम उपवास।
तजि तजि भूषन भोग सुख जिअत अवधि की आस॥३२३॥

चौ०-सचिव सुसेवक भरत प्रबोधे। निज निज काज पाइ सिख ओधे।
पुनि सिख दीन्हि बोलि लघु भाई। सौंपी सकल मातुसेवकाई।
भूसुर बोलि भरत कर जोरे। करि प्रनाम बरबिनय निहोरे।
ऊँच नीच कारजु भल पोचू। आयसु देब न करब सँकोचू।
परिजन पुरजन प्रजा बुलाए। समाधानु करि सुबस बसाए।
सानुज गे गुरगेह बहोरी। करि दंडवत कहत कर जोरी।
आयसु होइ त रहउँ सनेमा। बोले मुनि तन पुलकि सपेमा।
समुझब कहब करब तुम्ह जोई। धरमसारु जग होइहि सोई।

दो०—सुनि सिख पाइ असीस बड़ि गनक बोलि दिनु साधि।
सिंघासन प्रभुपादुका बैठारे निरुपाधि॥३२४॥

चौ०-राममातु गुरपद सिरु नाई। प्रभु-पद-पीठ-रजायसु पाई।
नंदिगाँव करि परनकुटीरा। कीन्ह निवास धरम-धुर-धीरा।
जटाजूट सिर मुनिपट धारी। महि खनि कुससाथरी सवाँरी।
असन बसन बासन ब्रत नेमा। करत कठिन रिषिधरम सपेमा।
भूषन बसन भोग सुख भूरी। मन तन बचन तजे तिनु तूरी।
अवधराजु सुरराजु सिहाई। दसरथ-धन सुनि धनदु लजाई।
तेहि पुर बसत भरत बिनु रागा। चंचरीक जिमि चंपक-बागा।
रमाबिलासु रामअनुरागी। तजत बमन जिमि जन बड़भागी।

दो०—राम-पेम-भाजन भरत बड़े न येहि करतूति।
चातक हंस सराहिअत टेक बिबेक बिभूति॥३२५॥

चौ०-देह दिनहुँ दिन दूबरि होई। घटै तेजु बल मुखछबि सोई।
नित नव राम-पेम-पनु पीना। बढ़त धरमदलु मन न मलीना।
जिमि जल निघटत सरद प्रकासे। बिलसत बेतस बनज बिकासे।
सम दम संजम नियम उपासा। नखत भरत हिय बिमल अकासा।
ध्रुव बिस्वासु अवधि राका सी। स्वामिसुरति सुरबीथि बिकासी।
राम-पेम-बिधु अचल अदोखा। सहित समाज सोह नित चोखा।

रघुपति पटु पालकी मँगाई। करि प्रवोधु सब मातु चढ़ाई।
बार बार हिलि मिलि दुहुँ भाई। सम सनेह जननी पहुँचाई।
साजि वाजि गज वाहन नाना। भूप-भरतदल कीन्ह पयाना।
हृदय राम सिय लखन समेता। चले जाहिं सब लोग अचेता।
बसह बाजि गज पसु हिय हारे। चले जाहिं परवस मन मारे।

दो०—गुर-गुरतिय-पद वंदि प्रभु सीता लषन समेत।
फिरे हरष-बिसमय-सहित आए परननिकेत ॥ ३२१॥

चौ०-विदा कीन्ह सनमानि निषादू। चलेउ हृदय बड़ विरह विषादू।
कोल किरात भिल्ल बनचारी। फेरे फिरे जोहारि जोहारी।
प्रभु सिय लपन वैठि वट छाहीं। प्रिय-परिजन-वियोग विलखाहीं।
भरत-सनेह-सुभाउ सुवानी। प्रिया अनुज सन कहत बखानी।
प्रीति प्रतीति वचन मन करनी। श्रीमुख राम प्रेमवस बरनी।
तेहि अवसर खग मृग जल मीना। चित्रकूट चर अचर मलीना।
विबुध बिलोकि दसा रघुवर की। बरषि सुमन कहि गति घर घर की।
प्रभु प्रनामु करि दीन्ह भरोसो। चले मुदित मन डर न खरो सो।

दो०—सानुज सीयसमेत प्रभु राजत परनकुटीर।
भगति ग्यान वैराग्य जनु सोहत धरे सरीर ॥३२२॥

चौ०-मुनि महिसुर गुर भरत भुआलू। रामविरह सबु साजु बिहालू।
प्रभु-गुन-ग्राम गुनत मन माहीं। सब चुपचाप चले मग जाहीं।
जमुना उतरि पार सबु भयेऊ। सो वासरु विनु भोजन गयेऊ।
उतरि देवसरि दूसर बासू। रामसखा सब कीन्ह सुपासू।
सई उतरि गोमती नहाए। चौथे दिवस अवधपुर आए।
जनक रहे पुर वासर चारी। राज काज सब साज सँभारी।
सौंपि सचिव गुर भरतहि राजू। तिरहुति चले साजि सब साजू।
नगर-नारि-नर गुर-सिख मानी। बसे सुखेन राम-रजधानी।

दो०—रामदरस लगि लोग सब करत नेम उपवास।
तजि तजि भूषन भोग सुख जिअत अवधि की आस ॥३२३॥

चौ०-सचिव सुसेवक भरत प्रबोधे। निज निज काज पाइ सिख ओधे।
पुनि सिख दीन्हि बोलि लघु भाई। सौंपी सकल मातुसेवकाई।
भूसुर बोलि भरत कर जोरे। करि प्रनाम बरबिनय निहोरे।
ऊँच नीच कारजु भल पोचू। आयसु देब न करब सँकोचू।
परिजन पुरजन प्रजा बुलाए। समाधानु करि सुबस बसाए।
सानुज गे गुरगेह बहोरी। करि दंडवत कहत कर जोरी।
आयसु होइ त रहउँ सनेमा। बोले मुनि तन पुलकि सपेमा।
समुझब कहब करब तुम्ह जोई। धरमसारु जग होइहि सोई।

दो०—सुनि सिख पाइ असीस बड़ि गनक बोलि दिनु साधि।
सिंघासन प्रभुपादुका बैठारे निरुपाधि ॥३२४॥

चौ०-राममातु गुरपद सिरु नाई। प्रभु-पद-पीठ-रजायसु पाई।
नंदिगाँव करि परनकुटीरा। कीन्ह निवास धरम-धुर-धीरा।
जटाजूट सिर मुनिपट धारी। महि खनि कुससाथरी सवाँरी।
असन बसन बासन ब्रत नेमा। करत कठिन रिषिधरम सपेमा।
भूषन बसन भोग सुख भूरी। मन तन बचन तजे तिनु तूरी।
अवधराजु सुरराजु सिहाई। दसरथ-धन सुनि धनदु लजाई।
तेहि पुर बसत भरत बिनु रागा। चंचरीक जिमि चंपक-बागा।
रमाबिलासु रामअनुरागी। तजत बमन जिमि जन बड़भागी।

दो०—राम-पेम-भाजन भरत बड़े न येहि करतूति।
चातक हंस सराहिअत टेक बिबेक बिभूति ॥३२५॥

चौ०-देह दिनहुँ दिन दूबरि होई। घटै तेजु बल मुखछबि सोई।
नित नव राम-पेम-पनु पीना। बढ़त धरमदलु मन न मलीना।
जिमि जल निघटत सरद प्रकासे। बिलसत बेतस बनज बिकासे।
सम दम संजम नियम उपासा। नखत भरत हिय बिमल अकासा।
ध्रुव बिस्वासु अवधि राका सी। स्वामिसुरति सुरबीथि बिकासी।
राम-पेम-बिधु अचल अदोखा। सहित समाज सोह नित चोखा।

भरत-रहनि-समुझनि-करतूती । भगति बिरति गुन बिमल बिभूती*।
बरनत सकल सुकवि सकुचाहीं। सेस-गनेस-गिरा-गमु नाहीं।

दो०—नित पूजत प्रभुपावँरी प्रीति न हृदय समाति।
मॉंगि मॉंगि आयसु करत राजकाज बहु† भाँति ॥३२६॥

चौ०-पुलक गात हिय सिय रघुबीरू। जीह नाम जप लोचन नीरू।
लषन राम सिय कानन बसहीं। भरतु भवन बसि तप तनु कसहीं।
दोउ दिसि समुझि कहत सब लोगू। सब बिधि भरत सराहन-जोगू।
सुनि ब्रत नेम साधु सकुचाहीं। देखि दसा मुनिराज लजाहीं।
परम पुनीत भरतआचरनू। मधुर मंजु मुद-मंगल-करनू।
हरन कठिन कलि-कलुष-कलेसू। महा-मोह-निसि-दलन दिनेसू।
पाप—पुंज—कुंजर—मृग—राजू। समन सकल—संताप—समाजू।
जगरंजन भंजन भवभारू। रामसनेह सुधारकसारू।

छंद—सिय-राम-पेम-पियूष-पूरन होत जनम न भरत को।
मुनि-मन-अगम जम नियम सम दम बिषम ब्रत आचरत को॥
दुखदाह दारिद दंभ दूषन सुजस मिस अपहरत को।
कलिकाल तुलसी से सठन्हि हठि रामसनमुख करत को॥

सो०—भरतचरित करि नेमु तुलसी जो सादर सुनहिं।
सीय-राम-पद पेम अवसि होइ भव-रस-बिरति ॥३२७॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने
द्वितीयः सोपानः समाप्तः॥



---

* काशि प्रति में यह अर्द्धाली नहीं है।
† काशि०—चहुँ। अर्थात् राजनीति के चारों अंग।

चौ०-सचिव सुसेवक भरत प्रबोधे। निज निज काज पाइ सिख ओधे।
पुनि सिख दीन्हि बोलि लघु भाई। सौंपी सकल मातुसेवकाई।
भूसुर बोलि भरत कर जोरे। करि प्रनाम बरबिनय निहोरे।
ऊँच नीच कारजु भल पोचू। आयसु देब न करब सँकोचू।
परिजन पुरजन प्रजा बुलाए। समाधानु करि सुबस बसाए।
सानुज गे गुरगेह बहोरी। करि दंडवत कहत कर जोरी।
आयसु होइ त रहउँ सनेमा। बोले मुनि तन पुलकि सपेमा।
समुझब कहब करब तुम्ह जोई। धरमसारु जग होइहि सोई।

दो०—सुनि सिख पाइ असीस बड़ि गनक बोलि दिनु साधि।
सिंघासन प्रभुपादुका बैठारे निरुपाधि ॥३२४॥

चौ०-राममातु गुरपद सिरु नाई। प्रभु-पद-पीठ-रजायसु पाई।
नंदिगाँव करि परनकुटीरा। कीन्ह निवास धरम-धुर-धीरा।
जटाजूट सिर मुनिपट धारी। महि खनि कुससाथरी सवाँरी।
असन बसन बासन ब्रत नेमा। करत कठिन रिषिधरम सपेमा।
भूषन बसन भोग सुख भूरी। मन तन बचन तजे तिनु तूरी।
अवधराजु सुरराजु सिहाई। दसरथ-धन सुनि धनदु लजाई।
तेहि पुर बसत भरत बिनु रागा। चंचरीक जिमि चंपक-बागा।
रमाबिलासु रामअनुरागी। तजत बमन जिमि जन बड़भागी।

दो०—राम-पेम-भाजन भरत बड़े न येहि करतूति।
चातक हंस सराहिअत टेक बिबेक बिभूति ॥३२५॥

चौ०-देह दिनहुँ दिन दूबरि होई। घटै तेजु बल मुखछबि सोई।
नित नव राम-पेम-पनु पीना। बढ़त धरमदलु मन न मलीना।
जिमि जल निघटत सरद प्रकासे। बिलसत बेतस बनज बिकासे।
सम दम संजम नियम उपासा। नखत भरत हिय बिमल अकासा।
ध्रुव बिस्वासु अवधि राका सी। स्वामिसुरति सुरबीथि बिकासी।
राम-पेम-बिधु अचल अदोखा। सहित समाज सोह नित चोखा।

चौ०—पुरनर-भरत-प्रीति मैं गाई। मति-अनुरूप अनूप सुहाई।
अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन। करत जे बन सुर-नर-मुनि-भावन।
एक बार चुनि कुसुम सुहाए। निज कर भूषन राम बनाए।
सीतहि पहिराए प्रभु सादर। बैठे फटिकसिला पर सुंदर*।
सुर-पति-सुत धरि बायस बेखा। सठ चाहत रघुपति-बल देखा।
जिमि पिपीलिका सागर थाहा। महा-मंद-मति पावन चाहा।
सीता-चरन चोंच हति भागा। मूढ़ मंदमति कारन कागा।
चला रुधिर रघुनायक जाना। सीक-धनुप-सायक संधाना†।
दो०—अति कृपालु रघुनायक सदा दीन पर नेह।
तासनु आइ कीन्ह छलु मूरख अवगुनगेह ॥२॥
चौ०—प्रेरितमंत्र ब्रह्म सर धावा। चला भाजि बायस भयपावा।
धरि निजरूप गयेउ पितु पाहीं। रामबिमुख राखा तेहि नाहीं।
भा निरास उपजी मन त्रासा। जथा चक्रभय रिषि दुर्वासा।
ब्रह्मधाम सिवपुर सब लोका। फिरा श्रमित ब्याकुल भयसोका।
काहू बैठन कहा न ओही। राखि को सकै राम कर द्रोही।
मातु मृत्यु पितु समनसमाना। सुधा होइ बिप सुनु हरिजाना।
मित्र करै सत रिपु कै करनी। ता कहुँ बिबुधनदी बैतरनी।
सब जग तेहि अनलहु तें ताता। जो रघुबीर-बिमुख सुनु भ्राता।
दो०—जिमि जिमि भाजत सक्रसुत ब्याकुल अति दुखदीन।
तिमि तिमि धावत रामसर पाछे परम प्रबीन‡ ॥ ३॥

---

* हस्त०—परभाधर।

† काशी की प्रति में यह चौपाई अधिक है परंतु काशीराज की छपाई हुई सटीक रामायण, सदल मिश्र तथा छक्कनलाल आदि की प्राचीन पुस्तकों में यह चौपाई नहीं है—

"बिनु पराध प्रभु हतै न काहू। अवसर परे ग्रसै ससि राहू।
जब प्रभु लीन्ह सीक-धनु-बाना। क्रोध जानि भा अनल समाना।

‡ छक्कन० प्रति में यह दोहा नहीं है।

तृतीय सोपान

(अरण्य कांड)

श्लोकौ

मूलं धर्मतरोर्विवेकजलधेः पूर्णेन्दुमानन्ददं
वैराग्याम्बुजभास्करं ह्यघघनध्वान्तापहं तापहम्।
मोहाम्भोधरपूगपाटनविधौ श्वासं भवं शङ्करं
वन्दे ब्रह्मकुलं कलङ्कशमनं श्रीरामभूपप्रियम् ॥ १ ॥
सान्द्रानन्दपयोदसौभगतनुं पीताम्बरं सुन्दरं
पाणौ बाणशरासनं कटिलसत्तूणीरभारं वरम्।
राजीवायतलोचनं धृतजटाजूटेन संशोभितं
सीतालक्ष्मणसंयुतं पथिगतं रामाभिरामं भजे ॥ २ ॥

सो०—उमा रामगुन गूढ़ पंडित मुनि पावहिं विरति।
पावहिं मोह विमूढ़ जे हरि विमुख, न धरमरति ॥१॥

धर्मरूपी तरु के मूल, विवेकरूपी समुद्र के आनंद देनेवाले पूर्णचंद, वैराग्यरूपी कमल के लिये सूर्य, पापरूपी घोरांधकार के दूर करनेवाले, तापहारी, मोहरूपी घनपटल के विच्छिन्न करने के लिये पवनस्वरूप, कल्याणकारी, ब्रह्मसम्भूत, कलंक के दूर करनेवाले, और श्रीराजा रामचंद्र के प्यारे श्रीमहादेव जी को मैं प्रणाम करता हूँ ॥१॥

सघन और सुंदर जलदसमान तनु, पीतांबर को धारण किए हुए, हाथ में धनुर्बाण को लिए, कटि में सुंदर तूणीर बाँधे, कमल-दललोचन, जटाजूट से शोभायमान, सीता और लक्ष्मण के सहित मार्ग में विचरते हुए, अभिराम अर्थात् हृदयानंदकारी श्रीरामचंद्र जी को मैं भजता हूँ ॥२॥

प्रलंब - बाहु - विक्रमं प्रभोऽप्रमेयवैभवम् ।
निषंग-चाप-सायकं धरं त्रि-लोक-नायकम् ॥
दिनेश - वंश - मंडनं महेश - चाप - खंडनम् ।
मुनींद्र-संत - रंजनं सुरारि - वृंद - भंजनम् ॥
मनोज-वैरि - वंदितं अजादि - देव - सेवितम् ।
विशुद्ध-बोध-विग्रहं समस्तदूषणापहम् ॥
नमामि इंदिरापतिं सुखाकरं सतां गतिम् ।
भजे सशक्ति सानुजं शची - पति - प्रियानुजम् ॥
त्वदंघ्रिमूल ये नरा भजंति हीनमत्सराः ।
पतंति नो भवार्णवे वितर्क - वीचि - संकुले ॥
विविक्तवासिनस्सदा भजंति मुक्तये मुदा ।
निरस्य इंद्रियादिकं प्रयांति ते गतिं स्वकम् ॥
त्वमेकमद्भुतं प्रभुं निरीहमीश्वरं विभुम् ।
जगद्गुरुं च शाश्वतं तुरीयमेव केवलम् ॥
भजामि भाववल्लभं कुयोगिनां सुदुर्लभम् ।
स्वभक्त-कल्प-पादपं समं सुसेव्यमन्वहम् ॥
अनूप - रूप - भूपतिं नतोऽहमुर्विजापतिम् ।
प्रसीद मे नमामि ते पदाब्जभक्ति देहि मे ॥
पठंति ये स्तवं इदं नरादरेण ते पदम् ।
व्रजंति नात्र संशयः त्वदीयभक्तिसंयुताः ॥

दो०—बिनती करि मुनि नाइ सिरु कह कर जोरि बहोरि ।
चरन सरोरुह नाथ जनि कबहुँ तजै मति मोरि ॥ ६ ॥

चौ०-जनम जनम तव पद सुखकंदा । चढ़ै प्रेम चकोर जिमि चंदा ।
देखि राम मुनिविनय प्रनामा । विविध भाँति पायेउ बिश्रामा ।
अनसूया के पद गहि सीता । मिली बहोरि सुसील बिनीता ।
जो सिय सकल लोक सुखदाता । अखिल लोक ब्रह्मांड कि माता
तेउ पाइ मुनिवर मुनिभामिनि । सुखी भई कुमुदिनि जिमि जामिनि

चौ०—बचहि उरग बद ग्रसे खगेसा। रघुबर-सर त्रुटि बचब अँदेसा॥*
नारद देखा विकल जयंता। लागि दया कोमलचित संता।
दूरिहि ते कहि प्रभु-प्रभुताई। भजे जात बहु बिधि समुझाई॥*
पठवा तुरत राम पहिं ताही। कहेसि पुकारि प्रनतहित पाही।
आतुर सभय गहेसि पद जाई। त्राहि त्राहि दयालु रघुराई।
अतुलित बल अतुलित प्रभुताई। मैं मतिमंद जानि नहिं पाई।
निज कृत करमजनित फल पायेउँ। अब प्रभु पाहि सरन तकि आयेउँ।
सुनि कृपाल अति आरत बानी। एक नयन करि तजा भवानी।

सो०—कीन्ह मोह बस द्रोह जद्यपि तेहि कर बध उचित।
प्रभु छाँड़ेउ करि छोह को कृपाल रघुबीर-सम॥ ४॥

चौ०-रघुपति चित्रकूट बसि नाना। चरित किए अति सुधा समाना।
बहुरि राम अस मन अनुमाना। होइहि भीर सबहि मोहि जाना।
सकल मुनिन्ह सन बिदा कराई। सीतासहित चले दोउ भाई।
अत्रि के आश्रम जब प्रभु गयेऊ। सुनत महामुनि हरषित भयेऊ।
पुलकित गात अत्रि उठि धाए। देखि रामु आतुर चलि आए।
करत दंडवत मुनि उर लाए। प्रेमबारि दोउ जन अन्हवाए।
देखि रामछबि नयन जुड़ाने। सादर निज आश्रम तब आने।
करि पूजा कहि बचन सुहाए। दिए मूल फल प्रभु मन भाए।

सो०—प्रभु आसन-आसीन भरि लोचन सोभा निरखि।
मुनिबर परम प्रबीन जोरि पानि अस्तुति करत॥ ५॥

छंद—नमामि भक्तवत्सलं कृपालु-शील कोमलम्।
भजामि ते पदाम्बुजं अकामिनां सधामदम्॥
निकाम-श्याम-सुंदरं भवाम्बु-नाथ-मंदरम्।
प्रफुल्ल-कंज-लोचनं मदादि-दोष-मोचनम्॥

---

* ये दो अर्द्धालियाँ छक्कन० प्रति में नहीं हैं।

चौ०-सुनि जानकी परम सुख पावा। सादर तासु चरन सिरु नावा।
तब मुनि सन कह कृपानिधाना। आयसु होइ जाउँ बन आना।
संतत मो पर कृपा करेहू। सेवक जानि तजेहु जनि नेहू।
धरम-धुरंधर प्रभु कै बानी। सुनि सप्रेम बोले मुनि ग्यानी।
जासु कृपा अज सिव सनकादी। चहत सकल परमारथवादी।
ते तुम्ह राम अकाम-पिआरे। दीनबंधु मृदु बचन उचारे।
अब जानी मैं श्रीचतुराई। भजिअ तुम्हहिं सब देव बिहाई।
जेहि समान अतिसय नहिं कोई। ता कर सील कस न अस होई।
केहि बिधि कहौं जाहु अब स्वामी। कहहु नाथ तुम्ह अंतरजामी।
अस कहि प्रभु बिलोकि मुनि धीरा। लोचन जल बह पुलक सरीरा।

छंद—तन पुलकनिर्भर प्रेमपूरन नयन मुख-पंकज दिए।
मन-ग्यान-गुन-गोतीत प्रभु मैं दीख जप तप का किए॥
जप जोग धरम समूह ते नर भगति अनुपम पावई।
रघुबीर-चरित पुनीत निसि दिनु दास तुलसी गावई॥

दो०—कलि-मल-समन दमन दुख रामसुजसु सुखमूल।
सादर सुनहिं जे तिन्हहिं पर राम रहहिं अनुकूल॥ ११॥

सो०—कठिन काल मल कोस धरम न ग्यान न जाग जप।
परिहरि सकल भरोस रामहिं भजहिं ते चतुर नर॥ १२॥

दो०—मुनिहु कि अस्तुति कीन्ह प्रभु दीन्ह सुभग बरदान।
सुमनवृष्टि नभ संकुल जय जय कृपानिधान *॥ १३॥

चौ०-मुनि-पद-कमल नाइ करि सीसा। चले बनहिं सुर-नर-मुनि-ईसा।
आगे राम अनुज पुनि पाछे। मुनि-बर-बेष बने अति काछे।
उभय बीच सिय सोहै कैसी। ब्रह्म जीव बिच माया जैसी।
सरिता बन गिरि अवघट घाटा। पति पहिचानि देहिं बर बाटा।
जहँ जहँ जाहिं देव रघुराया। करहिं मेघ तहँ तहँ नभ छाया।
आश्रम बिपुल देखि मग माहीं। देवसदन तेहि पटतर नाहीं।

* यह दोहा छक्कन० और हस्त० प्रतियों में नहीं है।

रिषि-पतिनी-मन सुख अधिकाई। आसिष देइ निकट बैठाई।
दिव्य बसन भूषन पहिराए। जे नित नूतन अमल सुहाए।
जाहि निरखि दुख दूरि पराहीं। गरुड़ जानि जिमि पन्नग जाहीं।
दो०—ऐसे बसन बिचित्र सुठि दिए सीय कहँ आनि।
सनमानी प्रियबचन कहि प्रीति न जाइ बखानि ॥ ७ ॥
चौ०-कह रिषिबधू सरस मृदु बानी। नारिधरम कछु ब्याज बखानी।
मातु, पिता, भ्राता हितकारी। मितप्रद सब सुनु राजकुमारी।
अमितदानि भर्ता बैदेही। अधम सो नारि जो सेव न तेही।
धीरजु धरम मित्र अरु नारी। आपदकाल परखियहि चारी।
बृद्ध रोगबस जड़ धनहीना। अंध बधिर क्रोधी अति दीना।
ऐसेहु पति कर किए अपमाना। नारि पाव जमपुर दुख नाना।
एकइ धरम एक ब्रत नेमा। काय बचन मन पतिपद-प्रेमा।
जग पतिब्रता चारि बिधि अहहीं। बेद पुरान संत सब कहहीं।
दो०—उत्तम मध्यम नीच लघु सकल कहौं समुझाइ।
आगे सुनहिं ते भव तरहिं सुनहु सीय चितु लाइ ॥ ८ ॥
चौ०-उत्तम के अस बस मन माहीं। सपनेहुँ आन पुरुष जग नाहीं।
मध्यम परपति देखै कैसे। भ्राता पिता पुत्र निज जैसे।
धरम बिचारि समुझि कुल रहई। सो निकृष्ट तिय श्रुति अस कहई।
बिनु अवसर भय तें रह जोई। जानेहु अधम नारि जग सोई।
पतिबंचक पर-पति-रति करई। रौरव नरक कलप सत परई।
छन सुख लागि जनम सत कोटी। दुख न समुझ तेहि सम को खोटी।
बिनु श्रम नारि परम गति लहई। पति-ब्रत-धरम छाँड़ि छल गहई।
पति प्रतिकूल जनम जहँ जाई। बिधवा होइ पाइ तरुनाई।
सो०—सहज अपावनि नारि पति सेवत सुभ गति लहै।
जसु गावत श्रुति चारि अजहुँ तुलसिका हरिहि प्रिय ॥ ६ ॥
सुनु सीता तव नाम सुमिरि नारि पतिब्रत करहिं।
तोहि प्रानप्रिय राम कहेउँ कथा संसारहित ॥१०॥

उरगसमान जोरि सर साता। आवत ही रघुवीर निपाता।
तुरतहिं रुचिर रूप तेहिं पावा। देखि दुखी निज धाम पठावा।
तासु अस्थि गाड़ेउ प्रभु खनी। देवन्ह मुदित दुंदुभी हनी।
सीता आइ चरन लपटानी। अनुज सहित तब चले भवानी*।
पुनि आए जहँ मुनि सरभंगा। सुंदर अनुज जानकी संगा।

दो०--देखि राम-मुख-पंकज मुनि-वर-लोचन भृंग।
सादर पान करत अति धन्य जनम सरभंग॥ १६॥

चौ०-कह मुनि सुनु रघुवीर कृपाला। संकर - मानस-राज-मराला।
जात रहेउँ बिरंचि के धामा। सुनेउँ श्रवन बन अइहहिं रामा।
चितवत पंथ रहेउँ दिन राती। अब प्रभु देखि जुड़ानी छाती।
नाथ सकल साधन मैं हीना। कीन्ही कृपा जानि जन दीना।
सो कछु देव न मोहि निहोरा। निज पन राखेहु जन-मन-चोरा।
तब लगि रहहु दीनहित लागी। जब लगि मिलौं तुम्हहिं तनु त्यागी।
जोग जग्य जप तप व्रत कीन्हा। प्रभु कहँ देइ भगतिबर लीन्हा।
एहि विधि सर रचि मुनि सरभंगा। बैठे हृदय छाँड़ि सब संगा।

---

* इसके आगे काशि० प्रति में यह प्रसंग है जो सदल० और छक्कन० प्रतियों में नहीं है।

इहां सक्र जहँ मुनि सरभंगा। आएउ सकल देव निज संगा।
गए कहन प्रभु देन सिखावन। दिसि बल भेद बसत जहँ रावन।

दो०—सुर-पति-संसय-तम-सघन रघुबर-तेज दिनेश।
रावन-जीवन-निसि सम बीते छुटहिं कलेस।

चौ०—सुनासीर प्रभु तेहि छन देखा। तेजनिधान सुभ अति बेखा।
तुरग चारि बल मरुतसमाना। रथ रविसम नहिं जाइ बखाना।
छिति न परस अंतरहित रहई। स्वेत छत्र चामर सिर ढरई।
अनुजहि सियहि कहा समुझाई। सुर-पति-महिमा-गुन प्रभुताई।
जेहि कारन बासव तहँ आए। सो कछु बचन कहे नहिं पाए।
बीचहि मुनि आवब प्रभु केरा। कहि सारथिहि तुरत रथ फेरा।
दूरिहि तें करि प्रभुहि मनामा। हरषि सुरेस गयेउ निज धामा।

बहु तड़ाग सुंदरि अवँराई। भाँति भाँति सब मुनिन्ह लगाई।
तेहि दिन तहँ प्रभु कीन्ह निवासा। सकल मुनिन्ह मिलि कीन्ह सुपासा।
दो०—[आनि सुआसन मुदित मन पूजि पहुनई कीन्ह।
कंद मूल फल अमियसम आनि राम कहँ कीन्ह ॥ १४ ॥
चौ०-अनुज-सीय-सह भोजन कीन्हा। जो जेहि भाव सुभग बर दीन्हा*]।
होत प्रभात मुनिन्ह सिरु नावा। आसिरवाद सबन्हि सन पावा।
सुमिरि उमा सिव सिद्धि गनेसा। पुनि प्रभु चले सुनहु उरगेसा।
बन अनेक सुंदर गिरि नाना। नाँघत चले जाहिं भगवाना।
मिला असुर बिराध मग जाता। गरजत घोर कठोर रिसाता।
रूप भयंकर मानहुँ काला। बेगवंत धायेउ जिमि ब्याला।
गगन देव मुनि किन्नर नाना। तेहि छन हृदय हारि कछु माना।
तुरतहि सो सीतहि लै चलेऊ। राम-हृदय कछु बिसमउ भयेऊ।
समुझा हृदय केकईकरनी। कहा अनुज सन बहु बिधि बरनी।
बहुरि लषन रघुबरहि प्रबोधा। पाँच बान छाँड़े करि क्रोधा।
छंद—भए क्रुद्ध लषन सँधानि धनु मारि तेहि ब्याकुल कियो।
पुनि उठा निसिचर राखि सीतहि सूल लै छाँड़त भयो॥
जनु कालदंड कराल धावा बिकल सब खग मृग भए।
धनु तानि श्री-रघु-बंस-मनि पुनि मारि तन जर्जर किए॥
दो०—बहुरि एक सर मारा परा धरनि धुनि माथ।
उठेउ प्रबल पुनि गरजेउ चलेउ जहाँ रघुनाथ ॥ १५ ॥
चौ०-ऐसै कहत निसाचर धावा। अब नहिं बचहु तुम्हहिं मैं खावा।
आव प्रबल एहि बिधि जनु भूधर। होइहि काह कहहिं ब्याकुल सुर।
तासु तेज सत मरुत समाना। टूटहिं तरु, उड़ाहिं पाषाना।
जीव जंतु जहँ लगि रहे जेते। ब्याकुल भाजि चले तहँ तेते।

* कोष्ठक के भीतर का अंश सदल० में नहीं है। हस्त० में कोष्ठक के अंश के पहले यह दोहा और है—जिन जिन आश्रम बेदिका तेहि पर तुलसि बिराज। अनुज जानकी सहित तहँ राजत भे रघुराज॥

चौ०-होइहहिं सुफल आजु मम लोचन। देखि बदनपंकज भवमोचन।
निर्भर प्रेम मगन मुनि ग्यानी। कहि न जाइ सो दसा भवानी।
दिसि अरु बिदिसि पंथ नहिं सूझा। को मैं चलेउँ कहाँ नहिं बूझा।
कबहुँक फिरि पाछे पुनि जाई। कबहुँक नृत्य करै गुन गाई।
अबिरल प्रेम भगति मुनि पाई। प्रभु देखहिं तरुओट लुकाई।
अतिसय प्रीति देखि रघुबीरा। प्रगटे हृदय हरन भवभीरा।
मुनि मग माँझ अचल होइ बैसा। पुलकसरीर पनसफल जैसा।
तब रघुनाथ निकट चलि आए। देखि दसा निज जन मन भाए*।
मुनिहिं राम बहु भाँति जगावा। जाग न, ध्यानजनित सुख पावा।
भूपरूप तब राम दुरावा। हृदय चतुर्भुजरूप देखावा।
मुनि अकुलाइ उठा तब कैसे। बिकल हीनमनि फनिबर जैसे।
आगे देखि रामतनु स्यामा। सीता-अनुज-सहित सुखधामा।
परेउ लकुट इव चरनन्हि लागी। प्रेममगन मुनिवर बड़भागी।
भुज बिसाल गहि लिए उठाई। परम प्रीति राखे उर लाई।
मुनिहिं मिलत अस सोह कृपाला। कनकतरुहिं जनु भेंट तमाला।
रामबदन बिलोकि मुनि ठाढ़ा। मानहुँ चित्र माँझ लिखि काढ़ा।
दो०—तब मुनि हृदय धीर धरि गहि पद बारहिं बार।
निज आश्रम प्रभु आन करि पूजा बिबिध प्रकार ॥२०॥
चौ०-कह मुनि प्रभु सुनु बिनती मोरी। अस्तुति करौं कवनि बिधि तोरी।
महिमा अमित मोरि मति थोरी। रबिसनमुख खद्योत अँजोरी।
स्याम-तामरस-दाम-सरीरं। जटा-मुकुट-परिधन-मुनि-चीरं।

---

* इसके आगे यह सोरठा केवल काशि० प्रति में मिलता है।
सो०—राम सुसाहिब संतप्रिय सेवक-दुख-दारिद-दवन।
मुनि सन प्रभु कह आइ उठु उठु द्विज मम प्रान सम ॥
इसका उत्तम पाठ दस्त० प्रति में इस प्रकार है—
राम सुसाहिब संत सेवक-दुख-दारिद-दवन।
बिहँसि कहेउ श्रीकंत उठु उठु द्विज मम प्रान प्रिय ॥

दो०—सीता-अनुज-समेत प्रभु नील-जलद-तनु-स्याम।
मम हिय बसहु निरंतर सगुनरूप श्रीराम ॥ १७ ॥

चौ०-अस कहि जोगअगिनि तनु जारा। रामकृपा बैकुंठ सिधारा।
ता तें मुनि हरिलीन न भयेऊ। प्रथमहिं भेद भगतिबर लयेऊ।
रिषिनिकाय मुनि-बर-गति देखी। सुखी भए सब हृदय बिसेखी।
अस्तुति करहिं सकल मुनिबृंदा। जयति प्रनतहित करुनाकंदा।
पुनि रघुनाथ चले बन आगे। मुनि-बर-बृंद बिपुल सँग लागे।
अस्थिसमूह देखि रघुराया। पूछा मुनिन्ह लागि अति दाया।
जानतहू पूछिय कस स्वामी। समदरसी तुम्ह अंतरजामी।
निसिचर-निकर सकल मुनि खाए। सुनि रघुबीर नयन जल छाए।

दो०—निसिचर-हीन करौं महि भुज उठाइ पन कीन्ह।
सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाइ जाइ सुख दीन्ह ॥ १८ ॥

चौ०-मुनि अगस्त्य कर सिष्य सुजाना। नाम सुतीछन रति भगवाना।
मन-क्रम-बचन राम-पद-सेवक। सपनेहु आन भरोस न देवक।
प्रभु-आगवनु श्रवन सुनि पावा। करत मनोरथ आतुर धावा।
हे बिधि दीनबंधु रघुराया। मो से सठ पर करिहहिं दाया।
सहित अनुज मोहि राम गोसाईं। मिलिहहिं निज सेवक की नाईं।
मोरे जिय भरोस दृढ़ नाहीं। भगति बिरति न ग्यान मन माहीं।
नहिं सतसंग जोग जप जागा। नहिं दृढ़ चरनकमल अनुरागा।
एक बानि करुनानिधान की। सो प्रिय जाके गति न आन की।

छंद—सोउ प्रिय अति पातकी जिन्ह कबहुँ प्रभु सुमिरन कर्‌यो।
ते आजु मैं निज नयन देखिहौं पुरित पुलकित हिय भर्‌यो ॥
जे पदसरोज अनेक मुनि कर ध्यान कबहुँ न आवहीं।
ते राम श्री-रघु-बंस-मनि प्रभु प्रेम तें सुख पावहीं ॥

दो०—पन्नगारि सुनु प्रेमसम भजन न दूसर आन।
यह बिचारि मुनि पुनि पुनि करत राम-गुन-गान ॥ १९ ॥

दो०—अनुज-जानकी-सहित प्रभु चाप-बान-धर राम।
मम हियगगन इंदु इव बसहु सदा निःकाम ॥ २२ ॥

चौ०-एवमस्तु कहि रमानिवासा। हरषि चले कुंभज रिषि पासा।
मुनि प्रनाम करि कह कर जोरी। सुनहु नाथ कछु बिनती मोरी।
बहुत दिवस गुरुदरसन पाएँ। भए मोहि एहि आश्रम आएँ।
अब प्रभुसंग जाउँ गुरु पाहीं। तुम्ह कहुँ नाथ निहोरा नाहीं।
चले जात मग तव पदकंजा। देखिहौं जो बिराध-मद-गंजा।
देखि कृपानिधि मुनिचतुराई। लिए सँग बिहँसे दोउ भाई।
पंथ कहत निज भगति अनूपा। मुनिआश्रम पहुँचे सुरभूपा।
आश्रम देखि महा सुचि सुंदर। सरित सरोवर हरषित भूधर।
बनचर जलचर जीव जहाँ ते। बैर न करहिं, प्रीति सबहीं ते*।

दो०—तरुवर बिबिध बिहंगमय बोलत बिबिध प्रकार।
बसहिं सिद्ध मुनि तप करहिं महिमा-गुन-आगार ॥२३॥

चौ०-तुरत सुतीच्छन गुरु पहिं गयेऊ। करि दंडवत कहत अस भयेऊ।
नाथ कोसलाधीसकुमारा। आए मिलन जगत-आधारा।
राम अनुज समेत बैदेही। निसि दिनु देव जपत हहु जेही।
सुनत अगस्त तुरत उठि धाए। हरि बिलोकि लोचन जल छाए।
मुनि-पद-कमल परे दोउ भाई। रिषि अति प्रीति लिए उर लाई।
सादर कुसल पूँछि मुनि ग्यानी। आसन पर बैठारे आनी।
पुनि करि बहु प्रकार प्रभुपूजा। मोहि सम भागवंत नहिं दूजा।
जहँ लगि रहे अपर मुनिबृंदा। हरषे सब बिलोकि सुखकंदा।

दो०—मुनिसमूह महँ बैठे सनमुख सब की ओर।
सरदइंदु तन चितवत मानहुँ निकर चकोर ॥ २४ ॥

चौ०-पाइ सुथल जल हरषित मीना। पारसु पाइ सुखी जिमि दीना।
प्रभुहिं निरखि सुख भा एहि भाँती। चातक जिमि पाए जल स्वाँती।

---

*हस्त०—बनचर जीव जहाँ लगि जेते। बैर बिहाइ चरहिं सब तेते।

पानि-चाप - सर - कटि-तूनीरं। नौमि निरंतर श्री - रघु - बीरं।
मोह-विपिन-घन-दहन-कृसानुः। संत - सरोरुह - कानन- भानुः।
निसि-चर-करि-वरूथ-मृगराजः। त्रातु सदा नो भव-खग-बाजः।
अरुन - नयन - राजीव - सुवेसं। सीता-नयन - चकोर-निसेसं।
हर-हृदि-मानस-राज - मरालं। नौमि राम-उर-बाहु - बिसालं।
संसय-सर्प - ग्रसन - उरगादः। समन-सु-कर्कस-तर्क-विषादः।
भव-भंजन - रंजन - सुर-जूथः। त्रातु सदा नो कृपावरूथः।
निर्गुन - सगुन-विषम-सम- रूपं। ज्ञान - गिरा - गो- तीतमरूपं।
अमलमखिलमनवद्यमपारं। नौमि राम भंजन -महि - भारं।
भक्त - कल्प - पादप - आरामः। तर्जन-क्रोध-लोभ- मद-कामः।
अति-नागर-भव-सागर - सेतुः। त्रातु सदा दिन-कर-कुल-केतुः।
अतुलित-भुज-प्रताप-बल-धामा। कलि-मल-विपुल- विभंजन-नामा।
धर्मवर्म नर्मद गुनग्रामः। संतत संतनोतु मम रामः।
जदपि विरजब्यापक अविनासी। सब के हृदय निरंतर बासी।
तदपि अनुज-श्री-सहित खरारी। बसतु मनसि मम काननचारी।
जे जानहिं ते जानहु स्वामी। सगुन अगुन उर-अंतर-जामी।
जो कोसलपति राजिवनयना। करौ सो राम हृदय मम अयना।

सो०—मायावस जग जीव रहहिं विवस संतत मगन।
तिमि लागहु मोहिं प्रीय करुनाकर सुंदर सुखद॥ २१॥

चौ०-अस अभिमान जाय जनि भोरे। मैं सेवक रघुपति पति मोरे।
राम-भगति तजि चह कल्याना। सो नर अधम सृगाल समाना।
सुनि मुनिवचन राममन भाए। बहुरि हरषि मुनिवर उर लाए।
परम प्रसन्न जानु मुनि मोही। जो बर मांगु देउँ सो तोही।
मुनि कह मैं बर कबहुँ न जाँचा। समुझि न परै झूठ का साँचा।
तुम्हहिं नीक लागै रघुराई। सो मोहि देहु दास-सुख-दाई।
अविरल भगति विरत विग्याना। होहु सकल-गुन-ग्यान-निधाना।
प्रभु जो दीन्ह सो बर मैं पावा। अब सो देहु मोहिं जो भावा।

संतत दासन्ह देहु बड़ाई। तातें मोहि पूँछेहु रघुराई।
है प्रभु परम मनोहर ठाउँ। पावन पंचवटी तेहि नाउँ।
गोदावरि पुनीत तहँ वहई। चारिहु जुग प्रसिद्ध सो अहई।
दंडक बन पुनीत प्रभु करहू। उग्र श्राप मुनिवर कै हरहू।
वास करहु तहँ रघु-कुल-राया। कीजै सकल मुनिन्ह पर दाया।
चले राम मुनिआयसु पाई। तुरतहिं पंचवटी निअराई।
दिव्य लता द्रुम प्रभु मन भाए। निरखि राम तेउ भए सुहाए।
लषन-राम-सिय-चरन निहारी। काननअघ गा, भा सुखकारी।

दो०—गीधराज सों भेंट भइ वहु विधि प्रीति दृढ़ाइ।
गोदावरी निकट प्रभु रहे परनगृह छाइ॥ २५॥

चौ०-जब तें राम कीन्ह तहँ वासा। सुखी भए मुनि बीती त्रासा।
गिरि वन नदी ताल छवि छाए। दिन दिन प्रति अति होहिं सुहाए।
खग-मृग-वृंद अनंदित रहहीं। मधुप मधुर गुंजत छवि लहहीं।
सो वन वरनि न सक अहिराजा। जहाँ प्रगट रघुवीर विराजा।
एक बार प्रभु सुख आसीना। लछिमन वचन कहे छलहीना।
सुर नर मुनि सचराचर साईं। मैं पूछौं निज प्रभु की नाईं।
मोहि समुझाइ कहहु सो देवा। सब तजि करौं चरन-रज-सेवा।।
कहहु ग्यान विराग अरु माया। कहहु सो भगति करहु जेहि दाया।

दो०—ईश्वर जीवहि भेद प्रभु कहहु सकल समुझाइ।
जातें होइ चरन रति सोक मोह भ्रम जाइ॥ २६॥

चौ०-थोरेहि महँ सब कहौं वुझाई। सुनहु तात मति मनु चित लाई।
मैं अरु मोर तोर तैं माया। जेहि वस कीन्हे जीवनिकाया।
गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई।
तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। विद्या अपर अविद्या दोऊ।
एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा। जा वस जीव परा भवकूपा।
एक रचै जग गुनवस जाके। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताके।
ग्यान मान जहँ एकौ नाहीं। देख ब्रह्म समान सब माहीं।

तब रघुबीर कहा मुनि पाहीं। तुम्ह सन प्रभु दुराव कछु नाहीं।
तुम्ह जानहु जेहि कारन आयेउँ। ता तें तात न कहि समुझायेउँ।
अब सो मंत्र देहु प्रभु मोही। जेहि प्रकार मारौं मुनिद्रोही।
निसिचर अब न बचहिं मुनिराई। जिमि पंकजबन हिम रितु आई*।
मुनि मुसुकाने सुनि प्रभु बानी। पूछेहु नाथ मोहि का जानी।
तुम्हरे भजनप्रभाव अघारी। जानौं महिमा कछुक तुम्हारी†।
अति कराल सब पर जगु जाना। औरो कहा सुनिअ भगवाना।
ऊमरितरु बिसाल तव माया। फल ब्रह्मांड अनेक निकाया।
जीव चराचर जंतुसमाना। भीतर बसहिं न जानहिं आना।
ते फलभच्छक कठिन कराला। तव भय डरत सदा सोउ काला।
ते तुम्ह सकल लोकपति साईं। पूछेहु मोहि मनुज की नाईं।
यह बर माँगौं कृपानिकेता। बसहु हृदय सिय-अनुज-समेता।
अबिरल भगति बिरति सतसंगा। चरनसरोरुह प्रीति अभंगा।
जद्यपि ब्रह्म अखंड अनंता। अनुभवगम्य भजहिं जेहि संता।
अस तव रूप बखानौं जानौं। फिरि फिरि सगुनब्रह्म रति मानौं‡।

---

* काशि०—द्रुमद्रोही न बचहिं मुनिराई। जिमि पकजबन हिमरितु पाई।

† इस चौपाई के आगे काशि० प्रति में यह दोहा है—

दो०—भृकुटी निरखत नाथ तव रहत सदा पद कमल तर।
जिन हारे निज उदर महँ बिबिध बिधाता सिद्ध हर॥

इसके स्थान पर हस्त० में यह सोरठा है—

बिधिहि आदि सुर सिद्ध जिन्ह हारे भ्रमकूप महँ।
मोहिं पूछत मति बुद्ध सकल-लोक-कारन-करन॥

‡ इसके आगे काशि० प्रति में यह सोरठा है—

सो०—जेहि जीव पर तव मया रहत तुम्हहिं संतत बिबस।
तिन्हहुँ कि महिम न जान सेवक तुम्ह कहँ प्रान प्रिय॥

पर हस्त० में यह दोहा है—

भृकुटि बिलोकत देव मुनि चरन-कमल की आस।
सुक सनकादि अनादि सब काया-बचन-निवास॥

दो०—अधम निसाचरि कुटिल अति चली करन उपहास।
सुनु खगेस भावी प्रवल भा चह निसि-चर-नास ॥ २६ ॥
चौ०-रुचिर रूप धरि प्रभु पहिं जाई। बोली बचन बहुत मुसुकाई॥
तुम सम पुरुष न मो सम नारी। यह सँजोग विधि रचा विचारी॥
मम अनुरूप पुरुष जग माहीं। देखिउँ खोजि लोक तिहुँ नाहीं॥
ता तें अव लगि रहिउँ कुमारी। मन माना कछु तुम्हहिं निहारी॥
सीतहि चितै कही प्रभु वाता। अहै कुमार मोर लघु भ्राता॥
गइ, लछिमन रिपुभगिनी जानी। प्रभु विलोकि वोले मृदु वानी॥
सुंदरि सुनु मैं उन्ह कर दासा। पराधीन नहिं तोर सुपासा॥
प्रभु समरथ कोसल-पुर-राजा। जो कछु करहिं उन्हहिं सब छाजा॥
दो०—केहरिसम नहिं करिवर लवा कि वाजसमान।
प्रभुसेवक इमि जानहु मानहु वचन प्रमान ॥ ३० ॥
चौ०-सेवक सुख चह,मान भिखारी। व्यसनी धन सुभ गति बिभिचारी॥
लोभी जसु चह चार गुमानी। नभ दुहि दूध चहत ये प्रानी॥
पुनि फिरि राम निकट सो आई। प्रभु लछिमन पहिं वहुरि पठाई॥
लछिमन कहा तोहि सो वरई। जो तृन तोरि लाज परिहरई॥
तव खिसिआनि राम पहिं गई। रूप भयंकर प्रगटत भई॥
विथुरे केस रदन विकराला। भृकुटी कुटिल करन लगि गाला॥
सीतहि सभय देखि रघुराई। कहा अनुज सन सैन बुझाई॥
अनुज राममन की गति जानी। उठे रिसाइ तव सुनहु भवानी॥
दो०—लछिमन अति लाघव सौं नाक कान विनु कीन्हि।
ता के कर रावन कहँ मनहुँ चुनौती दीन्हि ॥ ३१ ॥
चौ०-नाक कान विनु भइ विकरारा। जनु स्रव सैल गेरु कै धारा॥
स्यामवदा देखत धन केरी। तहँ वासव-धनु मनहुँ उयेरी॥
खरदूपन पहिं गइ विलखाता। धिग धिग तव वल पौरुष भ्राता॥
तेहि पूछा सव कहेसि वुझाई। जातुधान सुनि सेन वनाई॥
चौदह सहस सुभट सँग लीन्हे। जिन्ह सपनेहुँ रन पीठि न दीन्हे॥

कहिअ तात सो परम बिरागी। तृनसम सिद्धि तीनि-गुन-त्यागी।

दो०—माया ईस न आपु कहँ जान कहिअ सो जीव।

बंध मोच्छप्रद सर्बपर माया प्रेरक सीव ॥ २७ ॥

चौ०-धर्मतें बिरति जोग तें ग्याना। ग्यान-मोच्छ-प्रद बेद बखाना।
जा तें बेगि द्रवौं मैं भाई। सो मम भगति भगत-सुखदाई।
सो सुतंत्र अवलंब न आना। तेहि आधीन ग्यान बिग्याना।
भगति तात अनुपम सुखमूला। मिलै जो संत होहिं अनकूला*।
भगति के साधन कहौं बखानी। सुगम पंथ मोहि पावहिं प्रानी।
प्रथमहिं बिप्रचरन अति प्रीती। निज निज धरम निरत श्रुतिरीती।
यहि कर फल पुनि बिषयबिरागा। तब मम चरन उपज अनुरागा।
श्रवनादिक नव भगति दृढ़ाहीं। मम-लीला-रति अति मन माहीं।
संत-चरन-पंकज अति प्रेमा। मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा।
गुरु पितु मातु बंधु पति देवा। सब मोहिं कहँ जानै दृढ़ सेवा।
मम गुन गावत पुलक सरीरा। गदगद गिरा नयन बह नीरा।
काम आदि मद दंभ न जाके। तात निरंतर बस मैं ताके।

दो०—बचन करम मन मोरि गति भजनु करहिं निःकाम।

तिन्ह के हृदय कमल महुँ करौं सदा बिश्राम ॥ २८ ॥

चौ०-भगतिजोगसुनिअतिसुख पावा। लछिमनप्रभुचरनन्हि सिरुनावा।
नाथ सुने गत मम संदेहा। भयेउ ग्यान उपजेउ नव नेहा।
अनुजबचन सुनि प्रभु मन भाए। हरषि राम निज हृदय लगाए।
एहि बिधि गए कछुक दिन बीती। कहत बिराग ग्यान गुन नीती।
सूपनखा रावन कै बहिनी। दुष्टहृदय दारुन जसि अहिनी।
पंचबटी सो गइ एक बारा। देखि बिकल भइ जुगल कुमारा।
भ्राता पिता पुत्र उरगारी। पुरुष मनोहर निरखत नारी।
होइ बिकल सक मनहिं न रोकी। जिमि रबिमनि द्रव रबिहिं बिलोकी॥

---

* यह चौपाई सदल० प्रति में नहीं है।

दो०—अधम निसाचरि कुटिल अति चली करन उपहास।
सुनु खगेस भावी प्रबल भा चह निसि-चर-नास ॥ २९ ॥

चौ०-रुचिर रूप धरि प्रभु पहिं जाई। बोली बचन बहुत मुसुकाई।
तुम सम पुरुष न मो सम नारी। यह सँजोग बिधि रचा बिचारी।
मम अनुरूप पुरुष जग माहीं। देखिउँ खोजि लोक तिहुँ नाहीं।
ता तें अब लगि रहिउँ कुमारी। मन माना कछु तुम्हहिं निहारी।
सीतहि चितै कही प्रभु बाता। अहै कुमार मोर लघु भ्राता।
गइ, लछिमन रिपुभगिनी जानी। प्रभु बिलोकि बोले मृदु बानी।
सुंदरि सुनु मैं उन्ह कर दासा। पराधीन नहिं तोर सुपासा।
प्रभु समरथ कोसल-पुर-राजा। जो कछु करहिं उन्हहिं सब छाजा।

दो०—केहरिसम नहिं करिवर लवा कि बाजसमान।
प्रभुसेवक इमि जानहु मानहु बचन प्रमान ॥ ३० ॥

चौ०-सेवक सुख चह,मान भिखारी। ब्यसनी धन सुभ गति बिभिचारी।
लोभी जसु चह चार गुमानी। नभ दुहि दूध चहत ये प्रानी।
पुनि फिरि राम निकट सो आई। प्रभु लछिमन पहिं बहुरि पठाई।
लछिमन कहा तोहि सो बरई। जो तृन तोरि लाज परिहरई।
तब खिसिआनि राम पहिं गई। रूप भयंकर प्रगटत भई।
बिथुरे केस रदन बिकराला। भृकुटी कुटिल करन लगि गाला।
सीतहि सभय देखि रघुराई। कहा अनुज सन सैन बुझाई।
अनुज राममन की गति जानी। उठे रिसाइ तब सुनहु भवानी।

दो०—लछिमन अति लाघव सों नाक कान बिनु कीन्हि।
ता के कर रावन कहँ मनहुँ चुनौती दीन्हि ॥ ३१ ॥

चौ०-नाक कान बिनु भइ बिकरारा। जनु स्रव सैल गेरु कै धारा।
स्यामघटा देखत घन केरी। तहँ बासव-धनु मनहुँ उयेरी।
खरदूषन पहिं गइ बिलखाता। धिग धिग तब बल पौरुष भ्राता।
तेहि पूछा सब कहेसि बुझाई। जातुधान सुनि सेन बनाई।
चौदह सहस सुभट सँग लीन्हे। जिन्ह सपनेहुँ रन पीठि न दीन्हे।

धाए निसिचर बरनवरूथा। जनु सपच्छ कज्जल-गिरि-जूथा।
नाना वाहन नानाकारा। नानायुधधर घोर अपारा।
सूपनखा आगे करि लीन्ही। असुभरूप श्रुति-नासा-हीनी।
दो०—निज निज बल सब मिलि कहहिं एकहिं एक सुनाइ।
बाजन लाग जुझाऊ हरष न हृदय समाइ* ॥३२॥
चौ०-असगुन अमित होहिं भयकारी। गनहिं न मृत्युबिबस सब भारी।
गर्जहिं तर्जहिं गगन उड़ाहीं। देखि कटक भट अति हरषाहीं।
कोउ कह जिअत धरहु दोउ भाई। धरि मारहु तिय लेहु छुड़ाई।
कोउ कह सुनहु सत्य हम कहहीं। कानन फिरहिं बीर कोउ अहहीं।
एकै कहा भ्रष्ट भै रहहू। खर के आगे अस जनि कहहू।
बहु बिधि कहत वचन रनधीरा। आए सकल जहाँ रघुवीरा।
धूरि पूरि नभमंडल रहा। राम बोलाइ अनुज सन कहा।
लै जानकिहि जाहु गिरिकंदर। आवा निसि-चर-कटकु भयंकर।
रहेहु सजग सुनि प्रभु कै बानी। चले सहित सिय सर-धनु-पानी।
देखि राम रिपुदल चलि आवा। बिहँसि कठिन कोदंड चढ़ावा।
छंद—कोदंड कठिन चढ़ाइ सिर जटजूट बाँधत सोह क्यों।
मरकत सैल पर लसत दामिनी कोटि स्यों जुग भुजग ज्यौं॥
कटि कसि निषंग विसाल भुज गहि चाप बिसिख सुधारि कै।
चितवत मनहुँ मृगराज प्रभु गज-राज-घटा निहारि कै।
सो०—आइ गए बगमेल धरहु धरहु धावत सुभट।
जथा बिलोकि अकेल बालरबिहि घेरत दनुज ॥ ३३ ॥
चौ०-घेरि रहे निसिचर समुदाई। दंडक-खग-मृग चले पराई।
प्रभु बिलोकि सर सकहिं न डारी। थकित भई रजनी-चर-धारी।
सचिव बोलि बोले खरदूषन। यह कोउ नृपबालक नरभूषन।
नाग असुर सुर नर मुनि जेते। देखे जिते हते हम केते।

---

* दूस०—बाजन बाजे बीर रस दल चतुरंग चलाइ।

हम भरि जनम सुनहु सब भाई। देखो नहिं असि सुंदरताई।
जद्यपि भगिनी कीन्हि कुरूपा। बध लायक नहिं पुरुष अनूपा।
देहु तुरत निज नारि दुराई। जीवत भवन जाहु दोउ भाई।
मोर कहा तुम्ह ताहि सुनावहु। तासु बचन सुनि आतुर आवहु।

दो०—भए काल बस मूढ सब जानहिं नहिं रघुबीर।
मसक फूक,की मेरु उड़ सुनहु गरुड़ मतिधीर ॥३४॥

चौ०—दूतन्ह कहा राम सन जाई। सुनत राम बोले मुसुकाई।
आजु भयेउ बड़ भाग हमारा। तुम्हरे प्रभु अस कीन्ह बिचारा।
हम छत्री मृगया बन करहीं। तुम्ह से खल मृग खोजत फिरहीं।
रिपु बलवंत देखि नहिं डरहीं। एक बार कालहु सन लरहीं।
जद्यपि मनुज दनुज-कुल-घालक। मुनिपालक खल-सालक बालक।
जौं न होइ बल घर फिरि जाहू। समरबिमुख मैं हतौं न काहू।
रन चढ़ि करिअ कपट चतुराई। रिपु पर कृपा परम कदराई।
दूतन्ह जाइ तुरत सब कहेउ। सुनि खर दूषन उर अति दहेउ।

छंद—उर दहेउ कहेउ कि धरहु धाए बिकट भट रजनीचरा।
सर-चाप-तोमर-सक्ति-सूल-कृपान-परिघ-परसु-धरा॥
प्रभु कीन्ह धनुषटँकोर प्रथम कठोर घोर भयावहा।
भए बधिर ब्याकुल जातुधान न ग्यान तेहि अवसर रहा॥

दो०—सावधान होइ धाए जानि सबल आराति।
लागे बरषन राम पर अस्त्र सस्त्र बहु भाँति ॥३५॥
तिन्ह के आयुध तिल सम करि काटे रघुबीर।
तानि सरासन श्रवन लगि पुनि छाँड़े निज तीर ॥ ३६ ॥

तोमर छंद—तब चले बान कराल। फुंकरत जनु बहु ब्याल॥
कोपेउ समर श्रीराम। चले बिसिख निसित निकाम॥
अवलोकि खरतर तीर। मुरि चले निसिचर बीर।
एक एक को न सँभार। करैं तात भ्रात पुकार ॥*

* इसके आगे काशि० प्रति में यह पाठ है—

धाए निसिचर बरूथा। जनु सपच्छ कज्जल-गिरि-जूथा।
नाना बाहन नानाकारा। नानायुधधर घोर अपारा।
सूपनखा आगे करि लीन्ही। असुभरूप श्रुति-नासा-हीनी।

दो०—निज निज थल सब मिलि कहहिं एकहिं एक सुनाइ।
बाजन लाग जुझाऊ हरप न हृदय समाइ* ॥३२॥

चौ०-असगुन अमित होहिं भयकारी। गनहिं न मृत्युविबस सब झारी।
गर्जहिं तर्जहिं गगन उड़ाहीं। देखि कटक भट अति हरषाहीं।
कोउ कह जिअत धरहु दोउ भाई। धरि मारहु तिय लेहु छुड़ाई।
कोउ कह सुनहु सत्य हम कहहीं। कानन फिरहिं वीर कोउ अहहीं।
एकै कहा मष्ट भै रहहू। खर के आगे अस जनि कहहू।
बहु बिधि कहत वचन रनधीरा। आए सकल जहाँ रघुबीरा।
धूरि पूरि नभमंडल रहा। राम बोलाइ अनुज सन कहा।
लै जानकिहि जाहु गिरिकंदर। आवा निसि-चर-कटकु भयंकर।
रहेहु सजग सुनि प्रभु कै बानी। चले सहित सिय सर-धनु-पानी।
देखि राम रिपुदल चलि आवा। बिहँसि कठिन कोदंड चढ़ावा।

छंद—कोदंड कठिन चढ़ाइ सिर जटजूट बाँधत सोह क्यों।
मरकत सैल पर लसत दामिनी कोटि स्यों जुग भुजग ज्यों ॥
कटि कसि निषंग बिसाल भुज गहि चाप बिसिख सुधारि कै।
चितवत मनहुँ मृगराज प्रभु गज-राज-घटा निहारि कै।

सो०—आइ गए बगमेल धरहु धरहु धावत सुभट।
जथा बिलोकि अकेल बालरबिहिं घेरत दनुज ॥ ३३ ॥

चौ०–घेरि रहे निसिचर समुदाई। दंडक-खग-मृग चले पराई।
प्रभु बिलोकि सर सकहिं न डारी। थकित भई रजनी-चर-धारी।
सचिव बोलि बोले खरदूषन। यह कोउ नृपबालक नरभूषन।
नाग असुर सुर नर मुनि जेते। देखे जिते हते हम केते।

---

* इस्त०—बाजन बाजे बीर रस दल चतुरंग चलाइ।

महि परत भट, उठि भिरत, मरत न, करत माया अति घनी॥
सुर डरत चौदहसहस प्रेत विलोकि एक अवध धनी॥
सुर मुनि सभय देखि मायानाथ अति कौतुक कर्यो॥
देखहिं परसपर राम करि संग्राम रिपुदल लरि मर्यो॥

दो०—राम राम कहि तनु तजहिं पावहिं पद निर्वान।
करि उपाय रिपु मारे छन महुँ कृपानिधान॥३७॥
हरषित बरषहिं सुमन सुर बाजहिं गगन निसान।
अस्तुति करि करि सब चले सोभित विविध बिमान॥ ३८॥

चौ०-जब रघुनाथ समर रिपु जीते। सुर नर मुनि सबके भय बीते।
तब लछिमनु सीतहिं लै आए। प्रभु पद परत हरषि उर लाए।
सीता चितव स्याम मृदु गाता। परम प्रेम लोचन न अघाता।
पंचवटी बसि श्रीरघुनायक। करत चरित सुर-मुनि-सुख-दायक।
धुआँ देखि खर दूषन केरा। जाइ सुपनखा रावनु प्रेरा।
बोली बचन क्रोध करि भारी। देस कोस कै सुरति बिसारी।
करसि पान सोवसि दिनु राती। सुधि नहिं तव सिर पर आराती।
राजुनीति बिनु धन बिनु धर्मा। हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा।
विद्या बिनु बिवेक उपजाए। श्रम फल पढ़े किए अरु पाए।
संग तें जती कुमंत्र तें राजा। मान तें ग्यान पान तें लाजा।
प्रीति प्रनय बिनु मद तें गुनी। नासहिं बेग नीति असि गुनी।

सो०—रिपु रुज पावक पाप प्रभु अहि गनिअ न छोट करि।
अस कहि बिबिध बिलाप करि लागि रोदन करन॥३९॥

दो०—सभा माँझ परि ब्याकुल बहु प्रकार कह रोइ।
तोहि जिअत दसकंधर मोरि कि असि गति होइ॥ ४०॥

चौ०-सुनत सभासद उठे अकुलाई। समुझाई [illegible] हि बाँह उठाई।
कह लंकेस कहसि निज बाता। केइ [illegible] कान निपाता।
अवधनृपति दस[illegible] जाए। पुरुष[illegible] आए।
समुझि परी मो[illegible]। रहित [illegible] धरनी।

भए क्रुद्ध तीनिउ भाइ। जो भागि रन तें जाइ॥
तेहि बधब हम निज पानि। फिरे मरन मन महुँ ठानि॥
आयुध अनेक प्रकार। सनमुख तें करहिं प्रहार॥
रिपु परम कोपे जानि। प्रभु धनुष सर संधानि॥
छाँड़े बिपुल नाराच। लगे कटन बिकट पिसाच॥
उर सीस भुज कर चरन। जहँ तहँ लगे महि परन॥
चिक्करत लागत बान। धर परत कु-धर- समान॥
भट कटत तन सत खंड। पुनि उठत करि पाखंड॥
नभ उड़त बहु भुज मुंड। बिनु मौलि धावत रुंड॥
खग कंक काक सृगाल। कटकटहिं कठिन कराल॥
छंद—कटकटहिं जंबुक भूत प्रेत पिसाच खप्पर संचहीं॥
बेताल बीर कपाल ताल बजाइ जोगिनि नंचहीं॥
रघुबीर-बान प्रचंड खंडहिं भटन्ह के उर भुज सिरा॥
जहँ तहँ परहिं उठि लरहिं धर धरु धरु करहिं भयकर गिरा॥
अंतावरी गहि उड़त गीध, पिसाच कर गहि धावहीं॥
संग्राम-पुर-बासी मनहुँ बहुबाल गुड़ी उड़ावहीं॥
मारे पछारे उर बिदारे बिपुल भट कहँरत परे॥
अवलोकि निज दल बिकल भट तिसिरादि खरदूषन फिरे॥
सर सक्ति तोमर परसु सूल कृपान एकहिं बारहीं॥
करि कोप श्रीरघुबीर पर अगनित निसाचर डारहीं॥
प्रभु निमिष महुँ रिपुसर निवारि प्रचारि डारे सायका॥
दस दस बिसिख उर माँझ मारे सकल निसिचर-नायका॥

कोउ कहै खर का कीन्ह। जो जुद्ध इन्ह सन लीन्ह॥
जाको बान अतिहि कराल। पसै आइ मानहुँ काल॥
दो०—उमा एक निज प्रभुहिं चस पुनि उनके बड़ भाग।
तरन चहहिं प्रभुसर लगे बिना जोग जप जा . ..
यह दोहा सदल० और हस्त० प्रति में नहीं है।

इहाँ राम जसि जुगुति बनाई। सुनहु उमा सो कथा सुहाई॥

दो०—लछिमन गए बनहिं जब लेन मूल फल कंद।
जनकसुता सन बोले बिहँसि कृपा-सुख-वृंद॥ ४२॥

चौ०—सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुसीला। मैं कछु करब ललित नरलीला॥
तुम्ह पावक महँ करहु निवासा। जौं लगि करौं निसा-चर-नासा॥
जबहिं रामु सबु कहा बखानी। प्रभुपद धरि हिय अनल समानी॥
निज प्रतिबिंब राखि तहँ सीता। तैसइ सील रूप सुबिनीता॥
लछिमनहूँ यह मरम न जाना। जो कछु चरित रचा भगवाना॥
दसमुख गयेउ जहाँ मारीचा। नाइ माथ स्वारथरत नीचा॥
नवनि नीच कै अति दुखदाई। जिमि अंकुस, धनु, उरग, बिलाई॥
भयदायक खल कै प्रिय बानी। जिमि अकाल के कुसुम भवानी॥

दो०—करि पूजा मारीच तब सादर पूछी बात।
कवन हेतु मन ब्यग्र अति अकसर* आयेउ तात॥४३॥

चौ०—दसमुख सकल कथा तेहि आगे। कही सहित अभिमान अभागे॥

छंद—उरगारिसम अति बेगु बरनत जाइ नहिं उपमा कही।
सिर छत्र सोभित स्यामघन जनु चवँर सेत बिराजही॥
एहि भाँति नाँघत सरित सैल अनेक बापी सोहहीं।
बन बाग उपवन बाटिका सुचि नगर मुनिमन मोहहीं॥

दो०—बहु तड़ाग सुचि बिहग मृग बोलत बिबिध प्रकार।
एहि बिधि आयेउ सिंधुतट सत जोजन बिस्तार॥

चौ०-सुंदर जीव बिबिध बिधि जाती। करहिं कोलाहल दिनु अरु राती॥
कूदहिं ते गर्जहिं घन नाई। महाबली बल बरनि न जाई॥
कनकबालु सुंदर सुखदाई। बैठहिं सकल जंतु तहँ जाई॥
तेहि पर दिव्य लता द्रुम लागे। जेहि देखत मुनिमनु अनुरागे॥
गुहा बिबिध बिधि रहहिं बनाई। बरनत सारदमति सकुचाई॥
चाहिय जहाँ रिपिन्ह कर बासा। तहाँ निसाचर करहिं निवासा॥
दसमुख देखि सकल सकुचाने। जे जड़ जीव सजीव पराने॥

* अकसर = अकेले।

न्ह कर भुजबल पाइ दसानन। अभय भए बिचरत मुनि कानन।
त बालक काल समाना। परम धीर धन्वी गुन नाना।
तुलित बल-प्रताप दोउ भ्राता। खल-बध-रत सुर-मुनि-सुख-दाता।
भाधाम राम अस नामा। तिन्ह के संग नारि एक स्यामा*।
परासि बिधि नारि सँवारी। रति सतकोटि तासु बलिहारी।
ासु अनुज काटे श्रुति नासा। सुनि तव भगिनि कराहि परिहासा†।
र दूषन सुनि लगे पुकारा। छन महँ सकल कटक उन्ह मारा।
ार-दूषन-तिसिरा कर घाता। सुनि दससीस जरे सब गाता‡।
दो०—सूपनखहि समुझाइ करि बल बोलेसि बहु भाँति।
गयेउ भवन अति-सोच-बस नींद परइ नहिं राति ॥ ४१ ॥
ौ०—सुर नर असुर नाग खग माहीं। मोरे अनुचर सम कोउ नाहीं।
ार दूषन मोहि सम बलवंता। तिन्हहि को मारै बिनु भगवंता।
ुररंजन भंजन महिभारा। जौं जगदीस लीन्ह अवतारा।
ो मैं जाइ बयरु हठि करऊँ। प्रभुसर प्रान तजे भव तरऊँ।
ोइहि भजनु न तामस देहा। मन क्रम बचन मंत्र दृढ़ एहा।
ौं नररूप भूपसुत कोऊ। हरिहौं नारि जीति रन दोऊ।
चला अकेल जान चढ़ि तहवाँ। बस मारीच सिंधु तट जहवाँ×।

---

* इसके आगे काशि० प्रति में यह पाठ है—
सो०—अति सुकुमारि पियारि पटतर जोगु न आहि कोउ।
मैं मन दीख बिचारि जहाँ रहै तेहि सम न कोउ ॥
चौ०—अजहुँ जाइ देखहु तुम्ह तबहीं। होइहहु बिकल तासु बस तबहीं।
जीवनमुक्त लोक बस ताके। दसमुख सुनु सुंदरि असि ताके।

† इसके आगे काशि० प्रति में यह पाठ है—
बिनु अपराध असि हाल हमारो। अपराधी किमि बचिहि खरारी।

‡ इसके आगे काशि० प्रति में यह चौपाई है—
भयेउ सोच मन नहिं बिश्रामा। बीतहि पल मानहुँ सत जामा।

× काशि० प्रति में इसके आगे यह पाठ है—
रथ अनूप जोरे खर चारी। बेगवंत इमि जिमि खरगारी।

तेहि बन निकट दसानन गयेऊ। तब मारिच कपटमृग भयेऊ।
अति बिचित्र कछु बरनि न जाई। कनकदेह मनि रचित बनाई।
सीता परम रुचिर मृग देखा। अंग अंग सुमनोहर बेखा।
सुनहु देव रघुबीर कृपाला। एहि मृग कर अति सुंदर छाला।
सत्यसंध प्रभु. बध कर एही। आनहु चर्म कहति बैदेही।
तब रघुपति जानत सब कारन। उठे हरषि सुरकाज सँवारन।
मृग बिलोकि कटि परिकर बाँधा। करतल चाप रुचिर सर साँधा।
प्रभु लछिमनहिं कहा समुझाई। फिरत बिपिन निसिचर बहु भाई।
सीता केरि करेहु रखवारी। बुधि बिबेक बल समय बिचारी।

दो०—अस कहि चले तहाँ प्रभु जहाँ कपटमृग नीच।
देव हरष बिस्मउ बिबस चातकावरषा बीच ॥४६॥

चौ०-प्रभुहिं बिलोकि चला मृग भाजी। धाए राम सरासन साजी।
निगम नेति सिव ध्यान न पावा। मायामृग पाछे सो धावा।
कबहुँ निकट पुनि दूरि पराई। कबहुँक प्रगटै कबहुँ छपाई।
प्रगटत दुरत करत छल भूरी। एहि बिधि प्रभुहि गयेउ लै दूरी।
तब तकि राम कठिन सर मारा। धरनि परेउ करि घोर पुकारा।
लछिमन कर प्रथमहि लै नामा। पाछे सुमिरेसि मन महुँ रामा।
प्रान तजत प्रगटेसि निज देहा। सुमिरेसि राम समेत सनेहा।
अंतर प्रेमु तासु पहिचाना। मुनि-दुर्लभ-गति दीन्हि सुजाना।

दो०—बिपुल सुमन सुर बरषहिं गावहिं प्रभु-गुन-गाथ।
निज पद दीन्ह असुर कहुँ दीनबंधु रघुनाथ ॥ ४७ ॥

चौ०-खल बधि तुरत फिरे रघुबीरा। सोह चाप कर कटि तूनीरा।
आरतगिरा सुनी जब सीता। कह लछिमन सन परम समीता।
जाहु बेगि संकट अति भ्राता। लछिमन बिहँसि कहा सुनु माता।
भृकुटिबिलास सृष्टि लय होई। सपनेहु संकट परै कि सोई।
सौंपि गए मोहि रघुपति थाती। जौं तजि जाउँ तोपु नहिं छाती।
यह जिय जानि सुनहु मम माता। पूछब कहब कवनि मैं बाता।

होहु कपटमृग तुम्ह छलकारी। जेहि विधि हरि आनौं नृपनारी।
तेहि पुनि कहा सुनहु दससीसा। ते नररूप चरा-चर-ईसा।
ता सों तात बयरु नहिं कीजे। मारे मरिअ जिआए जीजे।
मुनिमख राखन गयेउ कुमारा। बिनु फर सर रघुपति मोहि मारा।
सत जोजन आयेउँ छन माहीं। तिन्ह सन बयरु किए भल नाहीं।
भइ मति कीट भृंग की नाईं। जहँ तहँ मैं देखौं दोउ भाई।
जौं नर तात तदपि अति सूरा। तिन्हहिं बिरोधि न आइहि पूरा।
दो०—जेहि ताड़का सुबाहु हति खंडेउ हरकोदंड।
खर दूषन तिसिरा बधेउ मनुज कि अस बरिबंड* ॥४४॥
चौ०-जाहु भवन कुलकुसल विचारी। सुनत जरा दीन्हेसि बहु गारी।
गुरु जिमि मूढ़ करसि मम बोधा। कहु जग मोहि समान को जोधा।
तब मारीच हृदय अनुमाना। नवहि बिरोधे नहिं कल्याना।
सस्त्री, मर्मी, प्रभु, सठ, धनी। बैद्य, बंदि, कवि, मानसगुनी।
उभय भाँति देखा निज मरना। तब ताकेसि रघुनायक-सरना।
उतरु देत मोहि बधब अभागे। कस न मरौं रघुपति-सर लागे।
अस जिय जानि दसानन संगा। चला राम-पद-प्रेम अभंगा।
मन अति हरष जनाव न तेही। आजु देखिहौं परम सनेही।
छंद—निज परम प्रीतम देखि लोचन सुफल करि सुख पाइहौं।
श्रीसहित अनुजसमेत कृपा-निकेत-पद मन लाइहौं ॥
निर्वानदायक क्रोध जा कर भगति अबसहिं बस करी।
निज पानि सर संधानि सो मोहि बधिहि सुखसागर हरी ॥
दो०—मम पाछे धर धावत धरे सरासन बान।
फिरि फिरि प्रभुहि बिलोकिहौं धन्य न मो सम आन ॥४५॥
चौ०-सीता-लषन-सहित रघुराई। जेहि बन बसहिं मुनिन्ह सुखदाई।

---

* काशि० प्रति में इसके आगे यह चौपाई है।

रा अस नाम सुनत दसकंधर। रहत प्रान नहिं मम उर अंतर।

दो०—क्रोधवंत तब रावन लीन्हेसि रथ बैठाइ।
चला गगनपथ आतुर भय रथ हाँकि न जाइ ॥ ५० ॥

चौ०-हा जगदेकवीर रघुराया। केहि अपराध बिसारेहु दाया।
आरतिहरन सरन-सुख-दायक। हा रघु-कुल-सरोज-दिन-नायक।
हा लछिमन तुम्हार नहिं दोसा। सो फल पायेउँ कीन्हेउँ रोसा।
कैकेइ के मन जो कछु रहेऊ। सो बिधि आजु मोहि दुख दयेऊ।
पंचवटी के खग-मृग-जाती। दुखी भए जलचर बहु भाँती।
बिपति मोरि को प्रभुहिं सुनावा। पुरोडास चह रासभ खावा।
सीता कै बिलाप सुनि भारी। भए चराचर जीव दुखारी।

दो०—बहु बिधि करति बिलाप नभ लिए जात दससीस।
डरत न खल बर पाइ भल जो दीन्हेउ अज ईस ॥ ५१ ॥

चौ०-गीधराज सुनि आरत बानी। रघु-कुल-तिलक-नारि पहिचानी।
अधम निसाचर लीन्हे जाई। जिमि मलेछबस कपिला गाई।
अहह प्रथम तन मम बल नाहीं। तदपि जाय देखौं बल ताही।
सीते पुत्रि करसि जनि त्रासा। करिहौं जातुधान कै नासा।
धावा क्रोधवंत खग कैसें। छूटै पवि पर्वत कहुँ जैसें।
रे रे दुष्ट ठाढ़ किन होही। निर्भय चलेसि न जानेसि मोही।
आवत देखि कृतांतसमाना। फिरि दसकंधर कर अनुमाना।
की मैनाक कि खगपति होई। मम बल जान सहित पति सोई।
जाना जरठ जटायू एहा। मम कर तीरथ छाँड़िहि देहा।

दो०—मम भुजबल नहिं जानत आवत तपन सहाइ।
समर चढ़इ तो येहि हतौं जियत न निज थल जाइ ॥ ५२ ॥

चौ०-सुनत गीध क्रोधातुर धावा। कह सुनु रावन मोर सिखावा।
तजि जानकिहि कुसल गृह जाहू। नाहिं त अस होइहि बहुबाहू।
राम-रोष-पावक अति घोरा। होइहि सलभ सकल कुल तोरा।
उतरु न देत दसानन जोधा। तबहिं गीध धावा करि क्रोधा।
धरि कच बिरथ कीन्ह महि गिरा। सीतहिं राखि गीध पुनि फिरा।

मरम वचन जब सीता बोला। हरिप्रेरित लछिमन मन डोला*।
चहुँ दिसि रेख खँचाइ अहीसा। बारहि बार नाइ पद सीसा।
बन-दिसि-देव सौंपि सब काहू। चले जहाँ रावन-ससि-राहू।
चितवहिं लषन सीय फिरि कैसे। तजत बच्छ निज मातुहिं जैसे।
दो०—एक डर डरपत राम के दुसरि सीय अकेलि।
लषन तेज तन हत भयो जिमि डाढ़ी दव बेलि ॥ ४८ ॥
चौ०-सून बीच दसकंधर देखा। आवा निकट जती के भेखा।
जाके डर सुर असुर डेराहीं। निसि न नींद दिन अन्न न खाहीं।
सो दससीस स्वान की नाईं। इत उत चितै चला भड़िहाईं।
इमि कुपंथ पगु देत खगेसा। रह न तेज तन बुधिबल-लेसा।
करि अनेक विधि छल चतुराई। माँगेउ भीख दसानन जाई।
अतिथि जानि सिय कंद मूल फल। देन लगी तेहि कीन्ह बहुरि छल।
कह दसमुख सुनु सुंदरि बानी। बाँधी भीख न लेउँ सयानी।
विधिगति बाम कालकठिनाई। रेख नांघि सिय बाहर आई।
दो०—बिलभरनि अघदल-दलनि करनि सकल सुरकाज।
समुझि परी नहीं समय तेहि वंचक जती समाज ॥ ४९ ॥
चौ०-नाना विधि कहि कथा सुहाई। राजनीति भय प्रीति देखाई।
कह सीता सुनु जती गोसाईं। बोलेहु बचन दुष्ट की नाईं।
तब रावन निज रूप देखावा। भई सभय जब नाम सुनावा।
कह सीता धरि धीरजु गाढ़ा। आइ गयेउ प्रभु खल रहु ठाढ़ा।
जिमि हरिवधुहि छुद्र सस चाहा। भयेसि कालबस निसिचर-नाहा।
बायस कर चह खग-पति-समता। सिंधुसमान होहिं किमि सरिता।
खरि कि होइ सुरधेनु समाना। जाहि भवन निज सुनु अग्याना।
सुनत बचन दससीस रिसाना। मन महुँ चरन बंदि सुख माना।

---

* सटल० में इसका संशोधित पाठ इस प्रकार है—
मरम बचन सीता तब बोली। हरिप्रेरित लछिमन मति डोली।

चौ०-रघुपति अनुजहि आवत देखी। बाहिज चिंता कीन्हि बिसेखी।
जनकसुता परिहरेउ अकेली। आयेहु तात बचन मम पेली।
निसि-चर-निकर फिरहिं बन माहीं। मम मन सीता आश्रम नाहीं।
अहह तात भल कीन्हेहु नाहीं। सीय बिना मम जीवनु नाहीं।
एहि तें कवनि बिपति बड़ि भाई। छाँड़ेहु सीय काननहिं आई।
गहि पदकमल अनुज कर जोरी। कहेउ नाथ कछु मोरि न खोरी।
अनुज समेत गए प्रभु तहवाँ। गोदावरितट आश्रम जहवाँ।
आश्रम देखि जानकीहीना। भए बिकल जस प्राकृत दीना।

दो०—कानन रहेउ तड़ाग इव चक चकई सिय राम।
रावन-निसि बिछुरन भयेउ सुख बीते चहुँ जाम ॥५६॥

चौ०-पर-दुख-हरन सो कस दुख ताहीं। भा बिषाद तिन्हहूँ मन माहीं।
हा गुनखानि जानकी सीता। रूप – सील–व्रत–नेम – पुनीता।
लछिमन समुझाए बहु भाँती। पूछत चले लता तरु पाती।
हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी। तुम्ह देखी सीता मृगनैनी।
खंजन सुक कपोत मृग मीना। मधुपनिकर कोकिला प्रवीना।
कुंद कली दाड़िम दामिनी। कमल सरद ससि अहिभामिनी।
बरुनपास मनोजधनु हंसा। गज केहरि निज सुनत प्रसंसा।
श्रीफल कनक कदलि हरषाहीं। नेकु न संक सकुच मन माहीं।
सुनु जानकी तोहि बिनु आजू। हरषे सकल पाइ जनु राजू।
किमि सहि जात अनख तोहि पाहीं। प्रिया बेगि प्रगटसि कस नाहीं।

दो०—फनि मनिहीन, मीन जिमि त्यागत सीतल बारि।
तिमि ब्याकुल भए लषन तहँ रघुबरदसा निहारि ॥५७॥

चौ०-धरि उर धीर बुझावहिं रामहि। तजहि न सोक अधिक सुखधामहि।
एहि बिधि खोजत बिलपत स्वामी। मनहुँ महाबिरही अति कामी।
पूरनकाम राम सुखरासी। मनुजचरित कर अज अबिनासी।
सरबर अमित नदी गिरि खोहा। यहु बिधि लषन राम तहँ जोहा।

दसमुख उठि कृत सर संधाना। गीध आइ काटेउ धनु बाना।
चोचन मारि बिदारेसि देही। दंड एक भइ मुरछा तेही।

दो०—जेहि रावन निज बस किए मुनिगन सिद्ध सुरेस।
तेहि रावन सन समर कर धीर बीर गिद्धेस *॥५३॥

चौ०—तब सक्रोध निसिचर खिसियाना। काढ़ेसि परम कराल कृपाना।
काटेसि पंख परा खग धरनी। सुमिरि राम कै अद्भुत करनी।
मन महुँ गीध परम सुख माना। रामकाज मम लागेउ प्राना।
सीतहि जान चढ़ाइ बहोरी। चला उताइल त्रास न थोरी।
करति बिलाप जात नभ सीता। ब्याधबिबस जनु मृगी सभीता।
गिरि पर बैठे कपिन्ह निहारी। कहि हरिनामु दीन्ह पट डारी।
एहि बिधि सीतहि सो लै गयेऊ। बन असोक महुँ राखत भयेऊ।

दो०—हारि परा खल बहुबिधि भय अरु प्रीति देखाइ।
नव असोकपादप तर राखेसि जतनु कराइ †॥५४॥
जेहि बिधि कपटकुरंग संग धाइ चले श्रीराम।
सो छवि सीता राखि उर रटति रहति हरिनाम॥५५॥

---

* इसके आगे काशि० प्रति में ये पंक्तियां हैं—
सुरत भये पुनि उठि सो धावा। मरै गीध सनमुख नहिं आवा।
कीन्हेसि बहु जब जुद्ध खगेसा। थकित भयेउ तब जरठ गिधेसा।

† इसके आगे काशि० प्रति में यह पाठ है—
उहाँ बिधाता मन अनुमाना। सुरपति बोलि मंत्र अस ठाना।
तात जनकतनया पहिं जाहू। सुधि न पाव जिमि निसि-चर-नाहू।
अस कहि बिधि सुंदर हबि आनी। सौंपि बहुरि बोले मृदु बानी।
एहि भच्छनकृत छुधा न प्यासा। बरष सहस एह संसय नासा।
सो प्रसाद लेइ आयसु पाई। चलेउ हृदय सुमिरत रघुराई।
कछु बासव माया निज पोई। रच्छक रहे गए तहँ सोई।
तदपि डरत सीता पहिं आयेउ। करि प्रनाम निज नाम सुनायेउ।
निसिचय जानि सुरेस सुजाना। पिता जनक दसरथ सम माना।
करि परितोष दूरि करि सोका। रबिप खवाइ गयेउ निज लोका।

वलमप्रमेयमनादिमजमव्यक्तमेकमगोचरं।
गोविंद गोपद द्वंदहर विग्यानघन धरनीधरं॥
जे राममंत्र जपंत संत अनंत जन-मन-रंजनं।
नित नौमि राम अकामप्रिय कामादि-खल-दल-गंजनं॥
जेहि श्रुति निरंजन ब्रह्म ब्यापक बिरज अज कहि गावहीं॥
करि ध्यान ग्यान बिराग जोग अनेक मुनि जेहि पावहीं॥
सो प्रगट करुनाकंद सोभावृंद अग जग मोहई।
मम हृदय-पंकज-भृंग अंग, अनंग बहु छबि सोहई॥
जो अगम सुगम सुभावनिर्मल असम सम सीतल सदा।
पश्यंति ये जोगी जतनु करि करत मन गो-बस जदा॥
सो राम रमानिवास संतत दासबस त्रि-भुवन-धनी।
मम उर बसौ सो समन संसृति जासु कीरति पावनी॥

दो०—अबिरल भगति माँगि बर गीध गयेउ हरिधाम।
तेहि कै क्रिया जथोचित निज कर कीन्ही राम॥६०॥

चौ०-कोमलचित अति दीनदयाला। कारन बिनु रघुनाथ कृपाला।
गीध अधम खग आमिषभोगी। गति दीन्ही जो जाँचत जोगी।
सुनहु उमा ते लोग अभागी। हरि तजि होहिं बिषय-अनुरागी।
पुनि सीतहि खोजत दोउ भाई। चले बिलोकत बन बहुताई।
संकुल लता बिटप घन कानन। बहु खग मृग तहँ गज पंचानन।
आवत पंथ कबंध निपाता। तेहि सब कही श्राप कै बाता।
दुर्वासा मोहि दीन्ही श्रापा। प्रभुपद देखि मिटा सो पापा।
सुनु गंधर्ब कहौं मैं तोही। मोहिं न सुहाइ ब्रह्म-कुल-द्रोही।

दो०—मन क्रम बचन कपट तजि जो गुर-भू-सुर-सेव।
मोहि समेत बिरंचि सिव बस ता के सब देव॥६१॥

चौ०-श्रापत ताड़त परुष कहंता। बिप्र पूज्य अस गावहिं संता।
पूजिअ बिप्र सील-गुन-हीना। सूद्र न गुन-गन-ग्यान-प्रबीना।
कहि निज धर्म ताहि समुझावा। निज-पद-प्रीति देखि मन भावा।

सोच हृदय कछु कहि नहिं आवा। ☐☐ धनुष सर आगे पावा॥*।
कहुँ कहुँ सोनित देखिअ कैसे। सावनजल भर डावर जैसे॥*।
कहत राम सद्धिमनहिं बुझाई। काहू कीन्ह जुद्ध पहि ठाईं॥*।
आगे परा गीधपति देखा। सुमिरत रामचरन की रेखा।
दो०—करसरोज सिरु परसेउ कृपासिंधु रघुबीर।
निरखि राम-छबि-धाम-मुख बिगत भई सब पीर॥ ५८॥
चौ०-तब कह गीध बचन धरि धीरा। सुनहु राम भंजन भवभीरा।
नाथ दसानन यह गति कीन्ही। तेहि खल जनकसुता हरि लीन्ही।
लै दच्छिन दिसि गयेउ गोसाईं। बिलपति अति कुररी की नाईं।
दरस लागि प्रभु राखेउँ प्राना। चलन चहत अब कृपानिधाना।
राम कहा तनु राखहु ताता। मुख मुसुकाइ कही तेहि बाता।
जा कर नाम मरत मुख आवा। अधमहुँ मुकुत होइ श्रुति गावा।
सो मम लोचन गोचर आगे। राखौं देह नाथ केहि खागे।
जल भरि नयन कहहिं रघुराई। तात कर्म निज तें गति पाई।
परहित बस जिनके मन माहीं। तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं।
तनु तजि तात जाहु मम धामा। देउँ काह तुम्ह पूरनकामा।
दो०—सीताहरन तात जनि कहेउ पिता सन जाइ।
जौं मैं राम त कुल सहित कहिहि दसानन आइ॥ ५६॥
चौ०-गीध देह तजि धरि हरिरूपा। भूषन बहु पट पीत अनूपा।
स्याम गात बिसाल भुज चारी। अस्तुति करत नयन भरि बारी।
छंद—जय राम रूप अनूप निर्गुन सगुन गुनप्रेरक सही।
दस-सीस-बाहु-प्रचंड-खंडन चंडसर मंडन मही॥
पाथोद-गात सरोजमुख राजीव-आयत-लोचनं।
नित नौमि राम कृपाल बाहुबिसाल भव-भय-मोचनं॥

---

* यद्यपि ये तीनों पंक्तियाँ केवल काशि० प्रति में हैं, सदल० में नहीं हैं पर इन्हें न रखने से दोनों के बीच में चौपाइयों की संख्या ५ ही रह जाती है।

मम दरसनफल परम अनूपा। जीव पाव निज सहज सरूपा।

दो०—सब प्रकार तव भाग बड़ मम चरननि्ह अनुराग।
तव महिमा जेहि उर बसिहि तासु परम जग भाग॥ ६४॥

चौ०-बचन सुनत सबरी हरषाई। पुनि बोले प्रभु गिरा सुहाई।
जनकसुता के सुधि कहु भामिनि। जानहि कछु जौ करि-बर-गामिनि।
पंपासरहि जाहु रघुराई। मुनिवर बिपुल रहे जहँ छाई।
रिषि मतंग महिमा गुन भारी। जीव चराचर रहत सुखारी।
बैर न कर काहू सन कोऊ। जा सनु बैर प्रीति कर सोऊ।
सिखर सुहावन, कानन फूले। खग मृग जीव जंतु अनुकूले।
करहु सफल श्रम सब कर जाई। तहँ होइहि सुग्रीवमिताई।
सो सब कहिहि देव रघुबीरा। जानतहू पूँछहु मतिधीरा।
बार बार प्रभुपद सिरु नाई। प्रेमसहित सब कथा सुनाई।

छंद—कहि कथा सकल बिलोकि हरिमुख हृदय पदपंकज धरे।
तजि जोगपावक देह हरिपद लीन भइ जहँ नहिं फिरे॥
नर बिबिध कर्म अधर्म बहु मत सोकप्रद सब त्यागहू।
बिस्वास करि कह दास तुलसी रामपद अनुरागहू॥

दो०—जातिहीन अघ जनम महि मुकुत कीन्हि असि नारि।
महा-मंद-मन सुख चहसि ऐसे प्रभुहि बिसारि॥६५॥

चौ०-चले राम त्यागा बन सोऊ। अ-तुलित-बल नरकेहरि दोऊ।
बिरही इव प्रभु करत बिषादा। कहत कथा अनेक संवादा।
लछिमन देखु बिपिन कै सोभा। देखत केहि कर मन नहिं छोभा?
नारि सहित सब खग-मृग-बृंदा। मानहुँ मोरि करत हहिं निंदा।
हमहि देखि मृगनिकर पराहीं। मृगी कहहिं तुम्ह कहँ भय नाहीं।
तुम्ह आनंद करहु मृगजाए। कंचनमृग खोजन ए आए।
संग लाइ करिनी करि लेहीं। मानहुँ मोहि सिखावन देहीं।
सास्त्र सुचिंतित पुनि पुनि देखिअ। भूप सुसेवित बस नहिं लेखिअ।
राखिअ नारि जदपि उर माहीं। जुबती सास्त्र नृपति बस नाहीं।

रघु-पति-चरन-कमल सिरु नाई। गयेउ गगन आपनि गति पाई।
ताहि देइ गति रामु उदारा। सबरी के आश्रम पगु धारा।
सबरी देखि रामु गृह आए। मुनि के बचन समुझि जिय भाए।
सरसिज-लोचन बाहुबिसाला। जटामुकुट सिर उर बनमाला।
स्याम गौर सुंदर दोउ भाई। सबरी परी चरन लपटाई।
प्रेममगन मुख बचनु न आवा। पुनि पुनि पद-सरोज सिरु नावा।
सादर जल लै चरन पखारे। पुनि सुंदर आसन बैठारे।

दो०—कंद मूल फल सुरस अति दिए राम कहुँ आनि।
प्रेमसहित प्रभु खाए बारंबार बखानि ॥ ६२ ॥

चौ०-पानि जोरि आगे भइ ठाढ़ी। प्रभुहि बिलोकि प्रीति अति बाढ़ी।
केहि बिधि अस्तुति करौं तुम्हारी। अधम जाति मैं जड़मति भारी।
अधम तें अधम अधम अति नारी। तिन्ह महँ मैं मतिमंद अघारी।
कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानौं एक भगति कर नाता।
जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई। धन बल परिजन गुन चतुराई।
भगतिहीन नर सोहै कैसा। बिनु जल बारिद देखिअ जैसा।
नवधा भगति कहौं तोहि पाहीं। सावधान सुनु, धरु मन माहीं।
प्रथम भगति संतन्ह कर संगा। दूसरि रति मम कथा-प्रसंगा।

दो०—गुरु-पद-पंकज-सेवा तीसरि भगति अमान।
चौथि भगति मम गुनगन करै कपट तजि गान ॥ ६३ ॥

चौ०-मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा। पंचम भजनु सो बेद प्रकासा।
छठ दम सील बिरति बहु कर्मा। निरत निरंतर सज्जन धर्मा।
सातवँ सम मोहि मय जग देखा। मो तें संत अधिक करि लेखा।
आठवँ जथालाभ संतोषा। सपनेहु नहिं देखै परदोषा।
नवम सरल सब सन छलहीना। मम भरोस हिय हरष न दीना।
नव महुँ एकउ जिन्ह कें होई। नारि पुरुष सचराचर कोई।
सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरें। सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरें।
जोगि-बृंद-दुर्लभ-गति जोई। तो कहुँ आजु सुलभ भइ सोई।

संतहृदय जस निर्मल बारी। बाँधे घाट मनोहर चारी।
जहँ तहँ पिअहिं बिबिध मृग नीरा। जनु उदारगृह जाचकभीरा।
दो०—पुरइनि सघन ओट जल बेगि न पाइअ मर्म।
मायाछन्न न देखिअ जैसे निर्गुन ब्रह्म ॥७०॥
सुखी मीन सब एकरस अति अगाध जल माहिं।
जथा धर्मसीलन्ह के दिन सुखसंजुत जाहिं ॥७१॥
चौ०-बिकसे सरसिज नाना रंगा। मधुर मुखर गुंजत बहु भृंगा।
बोलत जलकुक्कुट कल हंसा। प्रभु बिलोकि जनु करत प्रसंसा।
चक्रवाक—बक—खग—समुदाई। देखत बनै बरनि नहिं जाई।
सुंदर खग-गन-गिरा सुहाई। जात पथिक जनु लेत बोलाई।
ताल समीप मुनिन्ह गृह छाए। चहुँ दिसि कानन बिटप सुहाए।
चंपक बकुल कदंब तमाला। पाटल पनस पलास रसाला।
नवपल्लव कुसुमित तरु नाना। चंचरीकपटली कर गाना।
सीतल मंद सुगंध सुभाऊ। संतत बहै मनोहर बाऊ।
कुहू कुहू कोकिल धुनि करहीं। सुनि रव सरस ध्यान मुनि टरहीं।
दो०—फल भर नम्र बिटप सब रहे भूमि निअराइ।
परउपकारी पुरुष जिमि नवहिं सुसंपति पाइ ॥ ७२ ॥
चौ०-देखि राम अति रुचिर तलावा। मज्जनु कीन्ह परम सुख पावा।
देखी सुंदर तरु—बर—छाया। बैठे अनुज सहित रघुराया।
तहँ पुनि सकल देव मुनि आए। अस्तुति करि निज धाम सिधाए।
बैठे परम प्रसन्न कृपाला। कहत अनुज सन कथा रसाला।
बिरहवंत भगवंतहिं देखी। नारदमन भा सोच बिसेखी।
मोर श्राप करि अंगीकारा। सहत राम नाना दुखभारा।
ऐसे प्रभुहिं बिलोकौं जाइ। पुनि न बनिहि अस अवसरु आई।
यह बिचारि नारद करबीना। गए जहाँ प्रभु सुखआसीना।
गावत राम-चरित मृदुबानी। प्रेमसहित बहु भाँति बखानी।
करत दंडवत लिए उठाई। राखे बहुत बार उर लाई।

देखहु तात बसंत सुहावा। प्रियाहीन मोहि भय उपजावा।

दो०—बिरहबिकल बलहीन मोहि जानेसि निपट अकेल।
सहित बिपिन मधुकर खगन मदन कीन्हि बगमेल॥६६॥
देखि गए भ्राता सहित तासु दूत सुनि बात।
डेरा कीन्हेउ मनहुँ तब कटक हटकि मनजात॥६७॥

चौ०-बिटप बिसाल लता अरुझानी। बिबिध बितान दिए जनु तानी।
कदलि तालबर ध्वजा पताका। देखि न मोह धीर मन जाका।
बिबिध भाँति फूले तरु नाना। जनु बानैत बने बहु बाना।
कहुँ कहुँ सुंदर बिटप सुहाए। जनु भट बिलग बिलग होइ छाए।
कूजत पिक मानहुँ गज माते। ढेक महोख ऊँट बिसराते।
मोर चकोर कीर बर बाजी। पारावत मराल सब ताजी।
तीतर लावक पद-चर-जूथा। बरनि न जाइ मनोजबरूथा।
रथ गिरिसिला दुंदुभी झरना। चातक बंदी गुनगन बरना।
मधुकर-मुखर भेरि सहनाई। त्रिबिध बयारि बसीठी आई।
चतुरंगिनी सेन सँग लीन्हे। बिचरत सबहिं चुनौती दीन्हे।
लछिमन देखत कामअनीका। रहहिं धीर तिन्ह कै जग लीका।
एहि के एक परमबल नारी। तेहि तें उबर सुभट सोइ भारी।

दो०—तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ।
मुनि-बिग्यानधाम-मन करहिं निमिष महुँ छोभ॥६८॥
लोभ के इच्छा दंभ बल काम के केवल नारि।
क्रोध के परुषबचन बल मुनिबर कहहिं बिचारि॥६९॥

चौ०-गुनातीत स-चराचर-स्वामी। राम उमा सब अंतरजामी।
कामिन्ह कै दीनता देखाई। धीरन्ह के मन बिरति दृढ़ाई।
क्रोध मनोज लोभ मद माया। छूटहिं सकल राम की दाया।
सो नर इंद्रजाल नहिं भूला। जा पर होइ सो नट अनुकूला।
उमा कहौं मैं अनुभव अपना। सत हरिभजन जगत सब सपना।
पुनि प्रभु गए सरोबरतीरा। पंपा नाम सुभग गंभीरा।

दो०—काम-क्रोध-लोभादि-मद प्रबल मोह कै धारि।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद माया रूपी नारि ॥ ७६ ॥
चौ०-सुनु मुनि कह पुरान श्रुति संता। मोहविपिन कहुँ नारि बसंता।
जप तप नेम जलासय भारी। होइ ग्रीषम सोखै सब नारी।
काम क्रोध मद मत्सर भेका। इनहिं हरषप्रद बरषा एका।
दुर्बासना कुमुदसमुदाई। तिन्ह कहँ सदा सरद सुखदाई।
धर्म सकल सरसीरुह-बृंदा। होइ हिम तिन्हहिं देति दुखदंदा*।
पुनि ममता जवासबहुताई। पलुहै नारि सिसिररितु पाई।
पाप उलूकनिकर सुखकारी। नारि निविड़ रजनी अँधियारी।
बुधि बल सील सत्य सब मीना। बनसी सम त्रिय कहहिं प्रबीना।
दो०—अवगुनमूल सूलप्रद प्रमदा सब दुखखानि।
ता तें कीन्ह निवारन मुनि मैं यह जिय जानि ॥ ७७ ॥
चौ०-सुनि रघुपति के बचन सुहाए। मुनि तन पुलक नयन भरि आए।
कहहु कवन प्रभु कै असि रीती। सेवक पर ममता अरु प्रीती।
जे न भजहिं अस प्रभु भ्रम त्यागी। ग्यानरंक नर मंद अभागी।
पुनि सादर बोले मुनि नारद। सुनहु राम बिग्यानबिसारद।
संतन्ह के लच्छन रघुबीरा। कहहु नाथ भंजन भवभीरा।
सुनु मुनि संतन्ह के गुन कहऊँ। जिन्ह ते मैं उन्ह के बस रहऊँ।
षट-बिकार-जित अनघ अकामा। अचल अकिंचन सुचि सुखधामा।
अमित बोध अनीह मितभोगी। सत्यसार कबि कोबिद जोगी।
सावधान मानद मदहीना। धीर भगतिपथ परम प्रबीना।
दो०—गुनागार संसार-दुख-रहित बिगत संदेह।
तजि मम चरनसरोज प्रिय जिन्ह कहुँ देह न गेह ॥ ७८ ॥
चौ०-निज गुन श्रवन सुनत सकुचाहीं। परगुन सुनत अधिक हरषाहीं।
सम सीतल नहिं त्यागहिं नीती। सरल सुभाउ सबहिं सन प्रीती।

---

* काशि०—सदा।

स्वागत पूछि निकट बैठारे। लछिमन सादर चरन पखारे।

दो०—नाना बिधि बिनती करि प्रभु प्रसन्न जिय जानि।
नारद बोले बचन तब जोरि सरोरुहपानि ॥ ७३ ॥

चौ०-सुनहु उदार परम रघुनायक। सुंदर अगम सुगम बरदायक।
देहु एक बर माँगौं स्वामी। जद्यपि जानत अंतरजामी।
जानहु मुनि तुम्ह मोर सुभाऊ। जन सन कबहुँ कि करौं दुराऊ।
कवनि वस्तु असि प्रिय मोहि लागी। जो मुनि बर न सकहु तुम्ह माँगी।
जन कहुँ कछु अदेय नहि मोरें। अस बिस्वास तजहु जनि भोरें।
तब नारद बोले हरषाई। अस बर माँगौं करौं ढिठाई।
जद्यपि प्रभु के नाम अनेका। श्रुति कह अधिक एक तें एका।
राम सकल नामन्ह तें अधिका। होउ नाथ अघ-खग-गन-बधिका।

दो०—राका रजनी भगति तव रामनाम सोइ सोम।
अपर नाम उडुगन बिमल बसहु भगत-उर-ब्योम ॥ ७४ ॥
एवमस्तु मुनि सन कहेउ कृपासिंधु रघुनाथ।
तब नारद मन हरष अति प्रभुपद नायेउ माथ ॥ ७५ ॥

चौ०-अति प्रसन्न रघुनाथहि जानी। पुनि नारद बोले मृदुबानी।
राम जबहिं प्रेरेहु निज माया। मोहेहु मोहि सुनहु रघुराया।
तब बिबाह मैं चाहौं कीन्हा। प्रभु केहि कारन करै न दीन्हा।
सुनु मुनि तोहि कहौं सह रोसा*। भजहिं जे मोहि तजि सकल भरोसा।
करौं सदा तिन्ह कै रखवारी। जिमि बालकहिं राख महतारी।
गह सिसु बच्छ अनल अहि धाई। तहँ राखै जननी अरु गाई।
प्रौढ़ भए तेहि सुत पर माता। प्रीति करै नहिं पाछिलि बाता।
मोरे प्रौढ़-तनय-सम ग्यानी। बालक सुत सम दास अमानी।
जनहि मोर बल निज बल ताही। दुहुँ कहँ काम क्रोध रिपु आही।
यह बिचारि पंडित मोहि भजहीं। पाएहु ग्यान भगति नहिं तजहीं।

---

*हस्त०—सहि रोसा।

जप तप व्रत दम संजम नेमा। गुरु-गोविंद-विप्र-पद प्रेमा।
श्रद्धा छमा मइत्री दाया। मुदिता मम पदप्रीति अमाया।
बिरति बिबेक बिनय बिग्याना। बोध जथारथ बेदपुराना।
दंभ मान मद करहिं न काऊ। भूलि न देहिं कुमारग पाऊ।
गावहिं सुनहिं सदा मम लीला। हेतु-रहित पर-हित-रत-सीला।
सुनु मुनि साधुन के गुन जेते। कहि न सकहिं सारद श्रुति तेते।

छंद—कहि सक न सारद सेष नारद सुनत पद-पंकज गहे।
अस दीनबंधु कृपालु अपने भगतगुन निज मुख कहे॥
सिरु नाइ बारहिं बार चरनन्हि ब्रह्मपुर नारद गए।
ते धन्य तुलसीदास आस बिहाइ जे हरिरँग रए।

दो०—रावनारि जस पावन गावहिं सुनहिं जे लोग।
रामभगति दृढ़ पावहीं बिनु बिराग जप जोग॥ ७९॥
दीप-सिखा-सम जुवतिजन मन जनि होसि पतंग।
भजहि राम तजि काम मद करहि सदा सतसंग॥ ८०॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुष-
विध्वंसने विमलवैराग्यसम्पादनो
नाम तृतीयः सोपानः समाप्तः॥



सो०—मुक्तिजन्म महि जानि ग्यानिखानि अघहानिकर।
जहँ बस संभुभवानि सो कासी सेइअ कस न ॥ १ ॥
जरत सकल सुरवृंद विषमगरल जेहि पान किअ।
तेहि न भजसि मन मंद*को कृपाल संकरसरिस ॥ २ ॥

चौ०-आगे चले बहुरि रघुराया। रिष्यमूक पर्वत निअराया।
तहँ रह सचिव सहित सुग्रीवाँ। आवत देखि अतुल-बल-सींवाँ।
अति सभीत कह सुनु हनुमाना। पुरुष जुगल बल-रूप-निधाना।
धरि बटुरूप देखु तैं जाई। कहेसु जानि जिय सैन बुझाई।
पठए बालि होहिं मन मैला। भागौं तुरत तजौं यह सैला।
बिप्ररूप धरि कपि तहँ गयेऊ। माथ नाइ पूछत अस भयेऊ।
के तुम्ह स्यामल-गौर-सरीरा। छत्रीरूप फिरहु बन बीरा।
कठिनभूमि कोमल-पद-गामी। कवन हेतु बिचरहु बन स्वामी।
मृदुल मनोहर सुंदर गाता। सहत दुसह बन आतपबाता।
की तुम्ह तीनि देव महँ कोऊ। नरनारायन की तुम्ह दोऊ।

दो०—जगकारन तारन भव भंजन धरनीभार।
की तुम्ह अखिल-भुवन-पति लीन्ह मनुजअवतार ॥ ३ ॥

चौ०- हँसि बोले रघुबंस-कुमारा। बिधि कर लिखा को मेटनहारा।
कोसलेस दसरथ के जाए। हम पितुबचन मानि बन आए॥
नाम राम लछिमन दोउ भाई। संग नारि सुकुमारि सुहाई।
इहाँ हरी निसिचर बैदेही। बिप्र फिरहिं हम खोजत तेही।
आपन चरित कहा हम गाई। कहहु बिप्र निज कथा बुझाई।
प्रभु पहिचानि परेउ कपि‡ चरना। सो सुख उमा जाइ नहिं बरना।
पुलकित तन मुख आव न बचना। देखत रुचिर बेष कै रचना।
पुनि धीरज धरि अस्तुति कीन्ही। हरष हृदय निज नाथहिं चीन्ही।
मोर न्याउ मैं पूँछा साईं। तुम्ह पूँछहु कस नर की नाईं।

* हस्त०—मतिमंद। † यह चौपाई हस्त० में है, काशि० और सट्ठ० में नहीं है। ‡ हस्त० को छोड़ और प्रतियों में 'महि' पाठ है।

चतुर्थ सोपान

(किष्किंधा कांड)

श्लोकौ ।

कुन्देन्दीवरसुन्दरावतिबलौ विज्ञानधामावुभौ
शोभाढ्यौ वरधन्विनौ श्रुतिनुतौ गोविप्रवृन्दप्रियौ ।
मायामानुषरूपिणौ रघुवरौ सद्धर्म्मवर्म्मौ हितौ
सीतान्वेषणतत्परौ पथि गतौ भक्तिप्रदौ तौ हि नः ॥ १ ॥

ब्रह्माम्भोधिसमुद्भवं कलिमलप्रध्वंसनं चाव्ययं
श्रीमच्छम्भुमुखेन्दुसुन्दरवरे संशोभितं सर्वदा ।
संसारामयभेषजं सुखकरं श्रीजानकीजीवनं
धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं श्रीरामनामामृतम् ॥ २ ॥

कुंद और इंदीवर (नीलकमल) के समान सुंदर, अतिबलयुक्त, विज्ञानधाम, शोभासम्पन्न, धनुर्विद्या के उत्तम ज्ञाता, वेद से स्तूयमान, गौ और ब्राह्मणों के प्रिय, माया से मनुष्यतनुधारी, सद्धर्म के रक्षक, हितकारी, सीता की खोज में तत्पर, मार्ग में जाते हुए, वे दोनों रघुवर अर्थात् राम और लक्ष्मण हमारे लिये निश्चय से अधिक भक्ति के देनेवाले हों ॥ १ ॥

वे कृती (पुण्यवान् या कुशल) धन्य हैं, जो वेदरूपी समुद्र से निकले हुए, कलिमल को सर्वथा दूर करनेवाले, अविनाशी श्रीमहादेवजी के मुखचंद्र से अति-शोभायुक्त, सब काल में सब प्रकार से शोभासम्पन्न, संसाररूपी रोग के औषध, सुख देनेवाले, श्रीजानकीजी के प्राणाधार श्रीरामनामामृत को निरंतर पान करते हैं ॥ २ ॥

गगनपंथ देखी मैं जाता। परबस परी बहुत बिलपाता।
राम राम हा राम पुकारी। हमहिं देखि दीन्हेउ पट डारी।
माँगा राम तुरत तेहि दीन्हा। पट उर लाइ सोच अति कीन्हा।
कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा। तजहु सोच मन आनहु धीरा।
सब प्रकार करिहौं सेवकाई। जेहि बिधि मिलिहि जानकी आई।

दो०—सखाबचन सुनि हरषे कृपासिंधु बल सींवँ।
कारन कवन बसहु बन मोहि कहहु सुग्रीवँ ॥ ७ ॥

चौ०-नाथ बालि अरु मैं दोउ भाई। प्रीति रही कछु बरनि न जाई।
मयसुत मायावी तेहि नाऊँ। आवा सो प्रभु हमरे गाऊँ।
अर्धराति पुरद्वार पुकारा। बाली रिपुबल सहै न पारा।
धावा बालि देखि सो भागा। मैं पुनि गयौं बंधु सँग लागा।
गिरि-बर-गुहा पैठ सो जाई। तब बाली मोहिं कहा बुझाई।
परिखेसु मोहिं एक पखवारा। नहिं आवौं तब जानेसु मारा।
मास दिवस तहँ रहेऊँ खरारी। निसरी रुधिरधार तहँ भारी।
बालि हतेसि मोहि मारिहि आई। सिला देइ तहँ चलेउँ पराई।
मंत्रिन्ह पुर देखा बिनु साईं। दीन्हेउँ मोहि राजु बरिआईं।
बाली ताहि मारि गृह आवा। देखि मोहि जिय भेद बढ़ावा।
रिपुसम मोहि मारेसि अति भारी। हरि लीन्हेसि सर्बसु अरु नारी।
ताके भय रघुबीर कृपाला। सकलभुवन मैं फिरेउँ बिहाला।
इहाँ आपबस आवत नाहीं। तदपि सभीत रहौं मन माहीं।
सुनि सेवकदुख दीनदयाला। फरकि उठीं दोउ भुजा बिसाला।

दो०—सुनु सुग्रीवँ मारिहौं बालिहि एकहि बान।
ब्रह्म-रुद्र-सरनागत गए न उबरिहि प्रान ॥ ८ ॥

चौ०-जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी।
निज-दुख-गिरि-सम रज करि जाना। मित्र क दुखरज मेरुसमाना।
जिन्ह के असि मति सहज न आई। ते सठ हठि कत करत मिताई।

तव मायावस फिरौं भुलाना। ता तें मैं नहिं प्रभु पहिचाना।

दो०—एक मंद मैं मोहबस कुटिलहृदय अग्यान।
पुनि प्रभु मोहि बिसारेउ दीनबंधु भगवान॥ ४॥

चौ०-जदपि नाथ बहु अवगुन मोरें। सेवक प्रभुहिं परै जनि भोरें।
नाथ जीव तव माया मोहा। सो निस्तरै तुम्हारेहि छोहा।
ता पर मैं रघुबीर दोहाई। जानौं नहिं कछु भजन उपाई।
सेवक-सुत पति-मातु भरोसें। रहै असोच बनै प्रभु पोसें।
अस कहि परेउ चरन अकुलाई। निज तनु प्रगटि प्रीति उर छाई।
तब रघुपति उठाइ उर लावा। निज-लोचन-जल सींचि जुड़ावा।
सुनु कपि जिय मानसि जनि ऊना। तैं मम प्रिय लछिमन तें दूना।
समदरसी मोहि कह सब कोऊ। सेवकप्रिय अनन्यगति सोऊ।

दो०—सो अनन्य जाके असि मति न टरै हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत॥ ५॥

चौ०-देखि पवनसुत पति अनुकूला। हृदय हरष, बीती सब सूला।
नाथ सैल पर कपिपति रहई। सो सुग्रीव दास तव अहई।
तेहि सन नाथ मइत्री कीजै। दीन जानि तेहि अभय करीजै।
सो सीता कर खोज कराइहि। जहँ तहँ मरकट कोटि पठाइहि।
यहि बिधि सकल कथा समुझाई। लिये दुवौ जन पीठि चढ़ाई।
जब सुग्रीव राम कहुँ देखा। अतिसय जनम धन्य करि लेखा।
सादर मिलेउ नाइ पद माथा। भैंटेउ अनुजसहित रघुनाथा।
कपि कर मन बिचार यहि रीती। करिहहिं बिधि मो सन ये प्रीति।

दो०—तब हनुमंत उभय दिसि कहि सब कथा सुनाइ।
पावक साखी देइ करि जोरी प्रीति दृढ़ाइ॥ ६॥

चौ०-कीन्हि प्रीति कछु बीच न राखा। लछिमन रामचरित सब भाखा।
कह सुग्रीवँ नयन भरि बारी। मिलिहि नाथ मिथिलेसकुमारी।
मंत्रिन्ह सहित इहाँ एक बारा। बैठ रहेउँ मैं करत बिचारा।

सोइ रघुवीर हृदय महँ आनहु। ममता छाँड़ि कहा मम मानहु।

दो०—कहा वालि सुनु भीरु प्रिय समदरसी रघुनाथ।
जौं कदाचि मोहि मारहिं तौ पुनि होउँ सनाथ ॥ ६ ॥

चौ०-अस कहि चला महा अभिमानी। तृनसमान सुग्रीवँहि जानी।*
भिरे उभौ, वाली अति तरजा। मुठिका मारि महा धुनि गरजा।
तब सुग्रीवँ विकल होइ भागा। मुष्टिप्रहार वज्रसम लागा।
मैं जो कहा रघुवीर कृपाला। बंधु न होइ, मोर यह काला।
एकरूप तुम्ह भ्राता दोऊ। तेहि भ्रम तें नहिं मारेउँ सोऊ।
कर परसा सुग्रीवँ-सरीरा। तनु भा कुलिस, गई सब पीरा।
मेली कंठ सुमन कै माला। पठवा पुनि बल देइ बिसाला।
पुनि नाना विधि भई लराई। बिटपओट देखहिं रघुराई।

दो०—बहु छलबल सुग्रीवँ करि हिय हारा भय मानि।
मारा वालिहि राम तब हृदय माँझ सर तानि ॥१०॥

चौ०-परा विकल महि सर के लागें। पुनि उठि बैठ देखि प्रभु आगें।
स्यामगात सिर जटा बनाए। अरुननयन सर चाप चढ़ाएँ।
पुनि पुनि चितै चरन चित दीन्हा। सुफल जनम माना प्रभु चीन्हा।
हृदय प्रीति मुख बचन कठोरा। बोला चितै राम की ओरा।
धर्महेतु अवतरेहु गोसाईं। मारेहु मोहिं ब्याधा की नाईं।
मैं बैरी सुग्रीवँ पिआरा। अवगुन कवन नाथ मोहिं मारा।
अनुजबधू भगिनी सुतनारी। सुन सठ कन्या सम ए चारी।
इन्हहिं कुदिष्टि बिलोकै जोई। ताहि बधें कछु पाप न होई।
मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना। नारिसिखावन करसि न काना।
मम-भुज-बल-आश्रित तेहि जानी। मारा चहसि अधम अभिमानी।

दो०—सुनहु राम स्वामी सकल चलन चातुरी मोरि।
प्रभु अजहूँ मैं पातकी † अंतकाल गति तोरि ॥ ११ ॥

* काशि० की प्रति ने इस के आगे यह पाठ है—बालि दीख सुग्रीवँहि ठाढ़ा। हृदय कोप बहु बिधि पुनि बाढ़ा ॥ † काशि०—पापी।

कुपथ निवारि सुपंथ चलावहिं। गुन प्रगटै अवगुनन्हि दुरावहिं*।
देत लेत मन संक न धरई। बल अनुमान सदा हित करई।
विपतिकाल कर सतगुन नेहा। श्रुति कह संत मित्र गुन एहा।
आगे कह मृदुवचन बनाई। पाछे अनहित मन कुटिलाई।
जा कर चित अहि-गति-सम भाई। अस कुमित्र परिहरेहि भलाई।
सेवक सठ, नृप कृपन, कुनारी। कपटी मित्र सूलसम चारी।
सखा सोच त्यागहु बल मोरें। सब विधि घटब काज मैं तोरें।
कह सुग्रीवँ सुनहु रघुवीरा। बालि महाबल अति-रन-धीरा।
दुंदुभिअस्थि ताल देखराए। बिनु प्रयास रघुनाथ ढहाए।
देखि अमित बल बाढ़ी प्रीति। बालि बधै के भइ परतीती।
बार बार नावै पद सीसा। प्रभुहि जानि मन हरष कपीसा।
उपजा ग्यान बचन तब बोला। नाथ-कृपा मन भयेउ अलोला।
सुख संपति परिवार बड़ाई। सब परिहरि करिहौं सेवकाई।
ए सब नामभगति के बाधक। कहहिं संत तव-पद-अवराधक।
सत्रु मित्र सुख दुख जग माहीं। मायाकृत, परमारथ नाहीं।
बालि परमहित जासु प्रसादा। मिलेहु राम तुम्ह समन-बिषादा।
सपने जेहि सन होइ लराई। जागे समुझत मन सकुचाई।
अब प्रभु कृपा करहु एहि भाँती। सब तजि भजनु करौं दिनु राती।
सुनि बिरागसंयुत कपिबानी। बोले बिहँसि रामु धनुपानी।
जो कछु कहेहुँ सत्य सब सोई। सखावचन मम मृषा न होई।
नट मरकट इव सबहि नचावत। रामु खगेस बेद अस गावत।
लै सुग्रीवँ संग रघुनाथा। चले चापसायक गहि हाथा।
तब रघुपति सुग्रीवँ पठावा। गर्जेसि जाइ निकट बल पावा।
सुनत बालि क्रोधातुर धावा। गहि कर चरन नारि समुझावा।
सुनु पति जिन्हहिं मिलेउ सुग्रीवाँ। ते दोउ बंधु तेज-बल-सीवाँ।
कोसलेससुत लछिमन रामा। कालहु जीति सकहिं संग्रामा।

* हस्त० को छोड़ और प्रतियों में "चलावा दुरावा" पाठ है।

उपजा ग्यान चरन तब लागी। लीन्हेसि परम भगति-बर माँगी।
उमा दारुजोषित की नाईं। सबहिं नचावत रामु गोसाईं।
तब सुग्रीवँहि आयसु दीन्हा। मृतककर्म विधिवत सब कीन्हा।
राम कहा अनुजहिं समुझाई। राज देहु सुग्रीवँहि जाई।
रघु-पति-चरन नाइ करि माथा। चले सकल प्रेरित रघुनाथा।

दो०—लछिमन तुरत बोलाए पुरजन विप्रसमाज।
राजु दीन्ह सुग्रीवँ कहुँ अंगद कहुँ जुबराज ॥ १३ ॥

चौ०-उमा रामसम हित जग माहीं। गुरु पितु मातु बंधु कोउ नाहीं।
सुर नर मुनि सब कै यह रीती। स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती।
बालि-त्रास-ब्याकुल दिन राती। तनु बहु ब्रन, चिंता जर छाती।
सोइ सुग्रीवँ कीन्ह कपिराऊ। अति कृपाल रघुबीर-सुभाऊ।
जानतहूँ अस प्रभु परिहरहीं। काहे न बिपतिजाल नर परहीं?
पुनि सुग्रीवँहि लीन्ह बोलाई। बहु प्रकार नृपनीति सिखाई।
कह सुग्रीवँ सुनहु रघुराया। दीन जानि पुर कीजिय दाया*।
कह प्रभु सुनु सुग्रीवँ हरीसा। पुर न जाउँ दस-चारि बरीसा।
गत ग्रीषम, बरषा रितु आई। रहिहौं निकट सैल पर छाई।
अंगदसहित करहु तुम्ह राजू। संतत हृदय धरेहु मम काजू।
तब सुग्रीवँ भवन फिरि आए। राम प्रवरषन गिरि पर छाए।

दो०—प्रथमहिं देवन्ह गिरि-गुहा राखी † रुचिर बनाइ।
रामु कृपानिधि कछुक दिन बास करहिंगे आइ ॥१४॥

चौ०-सुंदर बन कुसुमित अति सोभा। गुंजत मधुपनिकर मधुलोभा।
कंद मूल फल पत्र सुहाए। भए बहुत जब तें प्रभु आए।
देखि मनोहर सैल अनूपा। रहे तहँ अनुज सहित सुरभूपा।
मधुकर-खग-मृग-तनु धरि देवा। करहिं सिद्ध मुनि प्रभु कै सेवा।

---

* यह चौपाई केवल हस्त० में मिली है पर उपयुक्त प्रतीत होती है।

† छक०—राखेउ।

चौ०-सुनत राम अति कोमल बानी। बालिसीस परसेउ निज पानी।
अचल करौं तनु राखहु प्राना। बालि कहा सुनु कृपानिधाना।
जनम जनम मुनि जतन कराहीं। अंत राम कहि आवत नाहीं।
जासु नामबल संकर कासी। देत सबहि समगति अबिनासी।
मम लोचन गोचर सोइ आवा। बहुरि कि प्रभु अस बनहि बनावा।

छंद—सो नयनगोचर जासु गुन नित नेति कहि श्रुति पावहीं।
जिति पवन मन गो निरस करि मुनि ध्यान कबहुँक गावहीं॥
मोहि जानि अति-अभिमान-बस प्रभु कहेहु राखु सरीरही।
अस कवन सठ हठि काटि सुरतरु बारि करिहि बबूरही॥
अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु जो बर मागऊँ।
जेहि जोनि जनमौं कर्मबस तहँ रामपद अनुरागऊँ॥
यह तनय मम सम बिनयबल कल्यानपद प्रभु लीजिए।
गहि बाँह सुर-नर-नाह आपन दास अंगद कीजिए॥

दो०—रामचरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनुत्याग।
सुमनमाल जिमि कंठ तें गिरत न जानै नाग॥ १२॥

चौ०-राम बालि निज धाम पठावा। नगरलोग सब ब्याकुल धावा।
नाना बिधि बिलाप कर तारा। छूटे केस न देह सँभारा*।
तारा बिकल देखि रघुराया। दीन्ह ग्यान हरि लीन्ही माया।
छिति जल पावक गगन समीरा। पंच-रचित यह अधम सरीरा।
प्रगट सो तनु तव आगे सोवा। जीव नित्य केहि लगि तुम्ह रोवा।

---

* काशि० में इसके आगे यह पाठ है पर सटल० में नहीं है इससे संदिग्ध जान पड़ता है।

पुनि पुनि तासु सीस उर धरई। बदन बिलोकि हृदय मो हनई।
मैं पति तुम्हहिं बहुत समुझावा। कालबस्य कछु मनहिं न आवा॥
अंगद कहँ कछु कहइ न पाएहु। बीचहि सुरपुर प्रान पठाएहु।

ऊसर बरषै तृन नहिं जामा। जिमि हरि-जन-हिय उपज न कामा।
बिबिध जंतुसंकुल महि भ्राजा। प्रजा बाढ़ जिमि पाइ सुराजा।
जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना। जिमि इंद्रियगन उपजें ग्याना।
दो०—कबहुँ प्रबल चल मारुत जहँ तहँ मेघ बिलाहिं।
जिमि कपूत के उपजें कुल सद्धर्म नसाहिं॥ १७॥
कबहुँ दिवस महुँ निबिड़ तम कबहुँक प्रगट पतंग।
बिनसै उपजै ग्यान जिमि पाइ कुसंग सुसंग॥ १८॥
चौ०-बरषाबिगत सरद रितु आई। लछिमन देखहु परम सुहाई।
फूले कास सकल महि छाई। जनु बरषाकृत प्रगट बुढ़ाई।
उदित अगस्त पंथजल सोखा। जिमि लोभहि सोखै संतोषा।
सरितासर निर्मल जल सोहा। संतहृदय जस गत-मद-मोहा।
रस रस सूख सरित-सर-पानी। ममता त्याग करहिं जिमि ग्यानी।
जानि सरद रितु खंजन आए। पाइ समय जिमि सुकृत सुहाए।
पंक न रेनु सोह असि धरनी। नीति-निपुन-नृप कै जसि करनी।
जलसंकोच बिकल भै मीना। अबुध कुटुंबी जिमि धनहीना।
बिनु घन निर्मल सोह अकासा। हरिजन इव परिहरि सब आसा।
कहुँ कहुँ वृष्टि सारदी थोरी। कोउ एक पाव भगति जसि मोरी।
दो०—चले हरषि तजि नगर नृप तापस बनिक भिखारि।
जिमि हरिभगति पाइ श्रम तजहिं आश्रमी चारि॥१९॥
चौ०-सुखी मीन जे नीर अगाधा। जिमि हरिसरन न एकौ बाधा।
फूले कमल सोह सर कैसे। निर्गुन ब्रह्म सगुन भए जैसे।
गुंजत मधुकर मुखर अनूपा। सुंदर खगरव नाना रूपा।
चक्रबाक-मन दुख निसि पेखी। जिमि दुरजन परसंपति देखी।
चातक रटत तृषा अति ओही। जिमि सुख लहै न संकरद्रोही।
सरदातप निसि ससि अपहरई। संतदरस जिमि पातक टरई।
देखि इंदु चकोरसमुदाई। चितवहिं जिमि हरिजन हरि पाई।
मसकदंस बीते हिमत्रासा। जिमि द्विजद्रोह किए कुलनासा।

मंगलरूप भयेउ बन तब तें। कीन्ह निवास रमापति जब तें।
फटिकसिला अति सुभ्र सुहाई। सुख-आसीन तहाँ दोउ भाई।
कहत अनुज सन कथा अनेका। भगति बिरति नृप नीति बिबेका।
बरषाकाल मेघ नभ छाए। गर्जत लागत परम सुहाए।
दो०—लछिमन देखहु मोरगन नाचत बारिद पेखि।
गृही बिरतिरत हरष जस बिष्णुभगत कहुँ देखि॥१५॥
चौ०-घन घमंड नभ गरजत घोरा। प्रिया-हीन डरपत मन मोरा।
दामिनि दमकि रह न घन माहीं। खल कै प्रीति जथा थिर नाहीं।
बरषहिं जलद भूमि नियराए। जथा नवहिं बुध बिद्या पाए।
बुंद अघात सहहिं गिरि कैसें। खल के बचन संत सह जैसें।
छुद्र नदी भरि चलीं तोराई। जस थोरेहु धन खल इतराई।
भूमि परत भा ढाबर पानी। जिमि जीवहि माया लपटानी।
सिमिटि सिमिटि जल भरहि तलावा। जिमि सदगुन सज्जन पहिं आवा।
सरिताजल जलनिधि महुँ जाई। होहि अचल जिमि जिव हरि पाई।
दो०—हरित भूमि तृनसंकुल समुझि परहिं नहिं पंथ।
जिमि पाखंड-बाद तें गुप्त होहिं सदग्रंथ॥ १६॥
चौ०-दादुर धुनि चहुँ दिसा सुहाई। बेद पढ़हिं जनु बटुसमुदाई।
नव पल्लव भए बिटप अनेका। साधक मन जस मिले बिबेका।
आक * जवास पात बिनु भयेऊ। जस सुराज खल उद्यम गयेऊ।
खोजत कतहुँ मिलै नहिं धूरी। करै क्रोध जिमि धर्महि दूरी।
ससिसंपन्न सोह महि कैसी। उपकारी कै संपति जैसी।
निसि तम घन खद्योत बिराजा। जनु दंभिन कर मिला समाजा।
महावृष्टि चलि फूटि किआरी। जिमि सुतंत्र भए बिगरहिं नारी।
कृषी निरावहिं चतुर किसाना। जिमि बुध तजहिं मोह मद माना।
देखिअत चक्रवाक खग नाहीं। कलिहि पाइ जिमि धर्म पराहीं।

---

* काशि०—अर्क।

तब कपीस चरनन्हि सिर नावा। गहि भुज लछिमन कंठ लगावा।
नाथ विषयसम मद कछु नाहीं। मुनिमन मोह करै छन माहीं।
सुनत विनीत बचन सुख पावा। लछिमन तेहि बहु विधि समुझावा।
पवनतनय सब कथा सुनाई। जेहि विधि गए दूतसमुदाई।

दो०—हरषि चले सुग्रीवँ तब अंगदादि कपि साथ।
रामानुज आगे करि आए जहँ रघुनाथ ॥ २३ ॥

चौ०-नाइ चरन सिरु कह कर जोरी। नाथ मोहि कछु नाहिन खोरी।
अतिसय प्रबल देव तव माया। छूटै राम करहु जौ दाया।
विषयवस्य सुर नर मुनि स्वामी। मैं पाँवर पसु कपि अतिकामी।
नारि-नयन-सर जाहि न लागा। घोर-क्रोध-तम-निसि जो जागा।
लोभफास* जेहि गर न बँधाया। सो नर तुम्ह समान रघुराया।
यह गुन साधन तें नहिं होई। तुम्हरी कृपा पाव कोइ कोई।
तब रघुपति बोले मुसुकाई। तुम्ह प्रिय मोहि भरत जिमि भाई।
अब सोइ जतन करहु मन लाई। जेहि विधि सीता कै सुधि पाई।

दो०—एहि विधि होत बतकही आए बानरजूथ।
नाना बरन सकल दिसि देखिअ कीसबरूथ ॥ २४ ॥

चौ०-बानरकटक उमा मैं देखा। सो मूरुख जो कर चह लेखा†।
आइ रामपद नावहिं माथा। निरखि बदनु सब होहिं सनाथा।
अस कपि एक न सेना माहीं। राम कुसल जेहि पूँछा नाहीं।
यह कछु नहिं प्रभु कै अधिकाई। बिस्वरूप ब्यापक रघुराई।
ठाढ़े जहँ तहँ आयसु पाई। कह सुग्रीवँ सबहिं समुझाई।
रामकाजु अरु मोर निहोरा। बानरजूथ जाहु चहुँ ओरा।
जनकसुता कहँ खोजहु जाई। मासदिवस महँ आयेहु भाई।
अवधि मेटि जो बिनु सुधि पाएँ। आवै बनिहि सो मोहि मराएँ।

* काशि०—लोभपास।
† हस्त०—सो मुख कोटि जाइ नहिं लेखा।

दो०—भूमि जीव-संकुल रहे गए सरद रितु पाइ।
सद्गुरु मिलें जाहिं जिमि संसय-भ्रम समुदाइ॥ २०॥
चौ०-बरषा गत निर्मल रितु आई। सुधि न तात सीता कै पाई।
एक बार कैसेहुँ सुधि जानौं। कालहु जीति निमिष महुँ आनौं।
कतहुँ रहौ जौं जीवति होई। तात जतन करि आनौं सोई।
सुग्रीवँहु सुधि मोरि बिसारी। पावा राज कोस पुर नारी।
जेहि सायक मारा मैं बाली। तेहि सर हतौं मूढ कहुँ काली।
जासु कृपा छूटहिं मद मोहा। ताकहुँ उमा कि सपनेहु कोहा।
जानहिं यह चरित्र मुनि ग्यानी। जिन्ह रघु-बीर-चरन-रति मानी।
लछिमन क्रोधवंत प्रभु जाना। धनुष चढ़ाइ गहे कर बाना।
दो०—तब अनुजहि समुझावा रघुपति करुनासींव।
भय देखाइ लै आवहु तात सखा सुग्रीवँ॥ २१॥
चौ०-इहाँ पवनसुत हृदय विचारा। रामकाज सुग्रीवँ बिसारा।
निकट जाइ चरनन्हि सिरु नावा। चारिहु विधि तेहि कहि समुझावा।
सुनि सुग्रीवँ परमभय माना। विषय मोर हरि लीन्हेउ ग्याना।
अब मारुतसुत दूतसमूहा। पठवहु जहँ तहँ बानरजूहा।
कहेहु पाख महुँ आव न जोई। मोरे कर ता कर बध होई।
तब हनुमंत बोलाए दूता। सब कर करि सनमान बहूता।
भय अरु प्रीति नीति देखराई। चले सकल चरनन्हि सिरु नाई।
एहि अवसर लछिमन पुर आए। क्रोध देखि जहँ तहँ कपि धाए।
दो०—धनुष चढ़ाइ कहा तब जारि करौं पुर छार।
ब्याकुल नगर देखि तब आयेउ बालिकुमार॥ २२॥
चौ०-चरन नाइ सिरु बिनती कीन्ही। लछिमनु अभयबाँह तेहि दीन्ही।
क्रोधवंत लछिमनु सुनि काना। कह कपीस अतिभय अकुलाना।
सुनु हनुमंत संग लै तारा। करि बिनती समुझाउ कुमारा।
तारासहित जाइ हनुमाना। चरन बंदि प्रभु सुजसु बखाना।
करि बिनती मंदिर लै आए। चरन पखारि पलँग बैठाए।

चौ०-दूरि तें ताहि सबन्हि सिरु नावा। पूँछे निज वृत्तांत सुनावा।
तेहि तब कहा करहु जलपाना। खाहु सु-रस सुंदर-फल नाना।
मज्जन कीन्ह मधुर फल खाए। तासु निकट पुनि सब चलि आए।
तेहि सब आपनि कथा सुनाई। मैं अब जाब जहाँ रघुराई।
मूँदहु नयन बिबर तजि जाहू। पैहहु सीतहि जनि पछिताहू।
नयन मूँदि पुनि देखहिं बीरा। ठाढ़े सकल सिंधु के तीरा।
सो पुनि गई जहाँ रघुनाथा। जाइ कमलपद नाएसि माथा।
नाना भाँति बिनय तेहि कीन्ही। अनपायनी भगति प्रभु दीन्ही।

दो०—बदरीबन कहुँ सो गई प्रभुअग्या धरि सीस।
उर धरि राम-चरन-जुग जे बंदत अज ईस ॥२८॥

चौ०-इहाँ बिचारहिं कपि मन माहीं। बीती अवधि काज कछु नाहीं।
सब मिलि कहहिं परसपर बाता। बिनु सुधि लए करब का भ्राता।
कह अंगद लोचन भरि बारी। दुहुँ प्रकार भइ मृत्यु हमारी।
इहाँ न सुधि सीता कै पाई। उहाँ गए मारिहि कपिराई।
पिता बधे पर मारत मोही। राखा राम, निहोर न ओही।
पुनि पुनि अंगद कह सब पाहीं। मरन भयेउ कछु संसय नाहीं*।
अंगदबचन, सुनत कपिबीरा। बोलि न सकहिं नयन बह नीरा।
छन एक सोचमगन होइ रहेऊ। पुनि अस बचन कहत सब भयेऊ।
हम सीता कै सोध बिहीना†। नहिं जैहहिं जुबराज प्रबीना।
अस कहि लवन-सिंधु-तट जाई। बैठे कपि सब दर्भ डसाई।
जामवंत अंगददुख देखी। कहीं कथा उपदेस बिसेखी।
तात राम कहुँ नर जनि मानहु। निर्गुन ब्रह्म अजित अज जानहु।
हम सब सेवक अति-बड़-भागी। संतत स-गुन-ब्रह्म-अनुरागी।

दो०—निजइच्छा प्रभु अवतरै सुर-महि-गो-द्विज लागि।
सगुन-उपासक संग तहँ रहे मोच्छसुख त्यागि ॥ २९ ॥

* इसके आगे की तीन चौपाइयाँ सटल० में नहीं हैं।
† काशि०—सुधि लीन्हे बिना।

दो०—वचन सुनत सब वानर जहँ तहँ चले तुरंत।
तब सुग्रीवँ बोलाए अंगद नल हनुमंत ॥२५॥

चौ०-सुनहु नील अंगद हनुमाना। जामवंत मतिधीर सुजाना।
सकल सुभट मिलि दच्छिन जाहू। सीतासुधि पूँछेहु सब काहू।
मन क्रम वचन सो जतनु विचारेहु। रामचंद्र कर काज सँवारेहु।
भानुपीठि सेइअ उर आगी। स्वामिहि सर्वभाव छल त्यागी।
तजि माया सेइअ परलोका। मिटहिं सकल भवसंभव सोका।
देह धरे कर यह फलु भाई। भजिअ राम सब काम विहाई।
सोइ गुनग्य सोई वड़भागी। जो रघु-वीर-चरन–अनुरागी।
आयसु माँगि चरन सिरु नाई। चले हरषि सुमिरत रघुराई।
पाछे पवनतनय सिरु नावा। जानि काजु प्रभु निकट बोलावा।
परसा सीस सरोरुहपानी। करमुद्रिका दीन्हि जन जानी।
बहु प्रकार सीतहिं समुझायेहु। कहि वल विरह वेगि तुम्ह आयेहु।
हनुमत जनम सुफल करि माना। चलेउ हृदय धरि कृपानिधाना।
जद्यपि प्रभु जानत सब वाता। राजनीति राखत सुरत्राता।

दो०—चले सकल वन खोजत सरिता सर गिरि खोह।
राम-काज-लय-लीन मन विसरा तन कर छोह ॥२६॥

चौ०-कतहुँ होइ निसिचर सन भेटा। प्रान लेहिं एक एक चपेटा।
बहु प्रकार गिरि कानन हेरहिं। कोउ मुनि मिलै ताहि सब घेरहिं।
लागि तृषा अतिसय अकुलाने। मिलै न जल घन गहन भुलाने।
मन हनुमान कीन्ह अनुमाना। मरन चहत सब विनु जलपाना।
चढ़ि गिरिसिखर चहूँ दिसि देखा। भूमिविवर एक कौतुक पेखा।
चक्रबाक बक हंस उड़ाहीं। बहुतक खग प्रविसहिं तेहि माहीं।
गिरि तें उतरि पवनसुत आवा। सब कहुँ लै सोइ विवर देखावा।
आगे कै हनुमंतहिं लीन्हा। पैठे विवर विलंबु न कीन्हा।

दो०—दीख जाइ उपवन बर सर विकसित बहु कंज।
मंदिर एक रुचिर तहँ बैठि नारि तपपुंज ॥२७॥

मुनि कै गिरा सत्य भइ आजू । सुनि मम बचन करहु प्रभुकाजू ।
गिरि त्रिकूट ऊपर बस लंका । तहँ रह रावन सहज असंका ।
तहँ असोकउपवन जहँ रहई । सीता बैठि सोचरत अहई ।
दो०—मैं देखौं तुम्ह नाहीं गीधहि दृष्टि अपार ।
बूढ़ भयेउँ न त करतेउँ कछुक सहाय तुम्हार ॥ ३१ ॥
चौ०-जो नांघै सतजोजन सागर । करै सो रामकाज मतिआगर ।
जो कोउ करै राम कर काजू । तेहि सम धन्य आन नहिं आजू ।
मोहि विलोकि धरहु मन धीरा । रामकृपा कस भयेउ सरीरा ।
पापिउ जाकर नाम सुमिरहीं । अति अपार भवसागर तरहीं ।
तासु दूत तुम्ह तजि कदराई । रामु हृदय धरि करहु उपाई ।
अस कहि उमा गीध जब गयेऊ । तिन्ह के मन अति बिसमय भयेऊ ।
निज निज बल सब काहु भाखा । पार जाइ कर संसय राखा ।
जरठ भयेउँ अब कहै रिछेसा । नहिं तनु रहा प्रथम-बल-लेसा ।
जबहिं त्रिविक्रम भयेउ खरारी । तब मैं तरुन रहेउँ बलभारी ।
दो०—बलि बाँधत प्रभु बाढ़ेउ सो तनु बरनि न जाइ ।
उभय घरी महँ दीन्ह मैं सात प्रदच्छिन धाइ ॥ ३२ ॥
चौ०-अंगद कहै जाउँ मैं पारा । जिय संसय कछु फिरती बारा ।
जामवंत कह तुम्ह सब लायक । पठइअ किमि सबही कर नायक ।
कहा रिच्छपति सुनु हनुमाना । का चुप साधि रहा बलवाना ।
पवन-तनय-बल पवनसमाना । बुधि-विवेक-बिग्यान-निधाना ।
कवन सो काज कठिन जग माहीं । जो नहिं तात होइ तुम्ह पाहीं ।
रामकाज लगि तव अवतारा । सुनतहिं भयेउ पर्वताकारा ।
कनक-बरन-तन तेज बिराजा । मानहुँ अपर गिरिन्ह कर राजा
सिंघनाद करि बारहिं बारा । लीलहिं नाघौं जलधि अपारा ।
सहित सहाय रावनहिं मारी । आनौं इहाँ त्रिकूट उपारी ।
जामवंत मैं पूछौं तोही । उचित सिखावन दीजै मोही ।
एतना करहु तात तुम्ह जाई । सीतहि देखि कहहु सुधि आई ।

चौ०-एहि विधि कथा कहहिं बहु भाँती। गिरिकंदरा सुना संपाती।
बाहेर होइ देखे बहु कीसा। मोहि अहार दीन्ह जगदीसा।
आजु सबन्ह कहँ भच्छन करऊँ। दिन बहु चल अहार बिनु मरऊँ।
कबहुँ न मिल भरि उदर अहारा। आजु दीन्ह विधि एकहि बारा।
डरपे गीधबचन सुनि काना। अब भा मरन सत्य हम जाना।
कपि सब उठे गीध कहँ देखी। जामवंत मन सोच विसेखी।
कह अंगद बिचारि मन माहीं। धन्य जटायू सम कोउ नाहीं।
राम-काज-कारन तनु त्यागी। हरिपुर गयेउ परम-बड़-भागी।
सुनि खग हरष-सोक-जुत बानी। आवा निकट कपिन्ह भय मानी।
तिन्हहिं अभय करि पूछेसि जाई। कथा सकल तिन्ह ताहि सुनाई।
सुनि संपाति बंधु कै करनी। रघु-पति-महिमा बहु विधि बरनी।

दो०—मोहि लै जाहु सिंधुतट देउँ तिलांजलि ताहि।
बचनसहाय करब मैं पैहहु खोजहु जाहि॥ ३०॥

चौ०-अनुजक्रिया करि सागरतीरा। कह निज कथा सुनहु कपिबीरा।
हम दोउ बंधु प्रथम तरुनाई। गगन गए रविनिकट उड़ाई।
तेज न सहि सक सो फिरि आवा। मैं अभिमानी रवि निअरावा*।
जरे पंख अति तेज अपारा। परेउँ भूमि करि घोर चिकारा।
मुनि एक नाम चंद्रमा ओही। लागी दया देखि करि मोही।
बहु प्रकार तेहि ग्यान सुनावा। देह-जनित अभिमान छँड़ावा।
त्रेता ब्रह्म मनुजतनु धरिहीं। तासु नारि निसि-चर-पति हरिहीं।
तासु खोज पठइहि प्रभु दूता। तिन्हहिं मिले तैं होब पुनीता।
जमिहहिं पंख करसि जनि चिंता। तिन्हहिं देखाइ दिहेसु तैं सीता†।

---

* इसके आगे काशि० में यह चौपाई है—
जिमि जिमि मैं रवि निकट उड़ाऊँ। तिमि तिमि मैं बिकल होइ जाऊँ।
† काशी० प्रति में इसके आगे यह पाठ है—
यह कहि पुनि आश्रम निज गयऊ। तेहि छन हृदय ग्यान कछु भयऊ।
सदा राम कर सुमिरन करऊँ। एहि विधि मगु जोअत मैं रहऊँ॥

तब निज-भुज-बल राजिवनैना। कौतुक लानि संग कपिसेना।

छंद—कपि-सेन-संग सँघारि निसिचर रामु सीतहिं आनिहैं।
त्रै-लोक-पावन-सुजस सुर मुनि नारदादि बखानिहैं॥
जो सुनत गावत कहत समुझत परमपद नर पावई।
रघु-बीर-पद-पाथोज-मधुकर दास तुलसी गावई॥

दो०—भवभेषज रघुनाथजसु सुनहिं जे नर अरु नारि।
तिन्ह कर सकल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिसिरारि॥३३॥

सो०—नीलोत्पल-तन-स्याम कामकोटि सोभा अधिक।
सुनिअ तासु गुनग्राम जासु नाम अघ-खग-बधिक॥३४॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने
विशुद्धसन्तोष-सम्पादनो नाम
चतुर्थः सोपानः समाप्तः।



जब लगि आवौं सीतहि देखी। होइ काज मोहि हरष बिसेखी।
अस कहि नाइ सबन्हि कहुँ माथा। चलेउ हरषि हिय धरि रघुनाथा।
सिंधुतीर एक भूधर सुंदर। कौतुक कूदि चढ़ेउ ता ऊपर।
बार बार रघुबीर सँभारी। तरकेउ पवनतनय बल भारी।
जेहि गिरि चरन देइ हनुमंता। चलि सो गा पाताल तुरंता।
जिमि अमोघ रघुपति कर बाना। तेही भाँति चला हनुमाना।
जलनिधि रघुपति-दूत बिचारी। तैं मैनाक होहि श्रमहारी।

सो०—सिंधुवचन उर आनि तुरत उठेउ मैनाक तब।
कपि कहुँ कीन्ह प्रनाम पुलकित तनु कर जोरि करि *॥ १ ॥

दो०—हनूमान तेहि परसा कर पुनि कीन्ह प्रनाम।
रामकाजु कीन्हे बिनु मोहि कहाँ बिश्राम ॥ २ ॥

चौ०-जात पवनसुत देवन्ह देखा। जानै कहुँ बल-बुद्धि-बिसेखा।
सुरसा नाम अहिन्ह कै माता। पठइन्हि आइ कही तेहि बाता।
आजु सुरन्ह मोहि दीन्ह अहारा। सुनत बचन कह पवनकुमारा।
रामकाजु करि फिरि मैं आवौं। सीता कै सुधि प्रभुहि सुनावौं।
तब तव बदन पैठिहौं आई। सत्य कहौं मोहि जान दे माई।
कवनेहु जतन देइ नहिं जाना। ग्रससि न मोहि कहेउ हनुमाना।
जोजन भरि तेहि बदनु पसारा। कपि तनु कीन्ह दु-गुन-बिस्तारा।
सोरह जोजन मुख तेहि ठयेऊ। तुरत पवनसुत बत्तिस भयेऊ।
जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा। तासु दून कपि रूप देखावा।
सत जोजन तेहि आनन कीन्हा। अति लघुरूप पवनसुत लीन्हा।
बदन पैठि पुनि बाहेर आवा। माँगी बिदा ताहि सिरु नावा।
मोहि सुरन्ह जेहि लागि पठावा। बुधि-बल-मरमु तोर मैं पावा।

दो०—राम-काजु सब करिहहु तुम्ह बल-बुद्धि-निधान।
आसिष देइ गई सो हरषि चलेउ हनुमान ॥ ३ ॥

---

* सदज० प्रति में यह सोरठा नहीं है।

पंचम सोपान

(सुंदर कांड)

श्लोकाः

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं
ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम् ।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूड़ामणिम् ॥ १ ॥
नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुङ्गव निर्भरां मे कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च ॥२॥
अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि ॥३॥
चौ०—जामवंत के बचन सुहाए । सुनि हनुमंत हृदय अति भाए ।
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई । सहि दुख कंद मूल फल खाई ।

निरंतर शांतियुक्त, अपार महिमा-सम्पन्न, निष्पाप, मोक्षद्वारा शांति के देने वाले, महादेव ब्रह्मा और शेष से सेवित, निरंतर वेदांतों से जानने योग्य, व्यापक, जगदीश्वर देवताओं में प्रधान, लीला से मनुष्यरूपधारी, करुणा के करनेवाले, राजाओं के चूड़ामणि, रघुकुल में प्रधान, रामनामधारी, हरि (ईश्वर) को मैं प्रणाम करता हूँ ॥ १ ॥

हे रघुपति मेरे हृदय में दूसरी अभिलाषा नहीं है, यह सत्य कहता हूँ, आप सब के अंतर्यामी हैं, इसलिये हे रघुपुंगव मुझे पूर्ण भक्ति दो, और मेरे चित्त को काम आदि दोष से रहित करो ॥ २ ॥

अनुपम बलसम्पन्न, मेरुसदृश शरीरवाले, राक्षसरूपी वन के (जलाने के लिये) अग्नि, ज्ञानियों में प्रधान, समस्त गुणों की खान, वानरों के अधीश्वर, श्रीरामचंद्र के प्रधान दूत, पवनसुत को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ३ ॥

जाने नहीं मरम सठ मोरा। मोर अहार जहाँ लगि चोरा।
मुठिका एक महाकपि हनी। रुधिर बमत धरनी ढनमनी।
पुनि संभार उठी सो लंका। जोरि पानि कर बिनय ससंका।
जब रावनहि ब्रह्म बरु दीन्हा। चलत बिरंचि कहा मोहि चीन्हा।
बिकल होसि तैं कपि के मारे। तब जानेसु निसिचर संघारे।
तात मोर अति पुन्य बहूता। देखेउँ नयन राम कर दूता।

दो०—तात स्वर्ग-अपवर्ग-सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग ॥ ५ ॥

चौ०-प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदय राखि कोसलपुर-राजा।
गरल सुधा रिपु करै मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।
गरुअ सुमेरु रेनुसम ताही। राम कृपा करि चितवा जाही।
अति लघु रूप धरेउ हनुमाना। पैठा नगर सुमिरि भगवाना।
मंदिर मंदिर प्रति करि सोधा। देखे जहँ तहँ अगनित जोधा।
गयेउ दसानन मंदिर माँहीं। अति बिचित्र कहि जात सो नाहीं।
सयन किए देखा कपि तेही। मंदिर महुँ न दीखि बैदेही।
भवन एक पुनि दीख सुहावा। हरिमंदिर तहँ भिन्न बनावा।

दो०—रामायुध अंकित गृह सोभा बरनि न जाइ।
नव तुलसी के बृंद तहँ देखि हरष कपिराइ ॥ ६ ॥

चौ०-लंका निसिचर-निकर-निवासा। इहाँ कहाँ सज्जन कर बासा।
मन महुँ तरक करै कपि लागा। तेही समय बिभीषनु जागा।
राम राम तेहि सुमिरन कीन्हा। हृदय हरष कपि सज्जन चीन्हा।
एहि सनु हठि करिहौं पहिचानी। साधु तें होइ न कारज हानी।
बिप्ररूप धरि बचन सुनाए। सुनत बिभीषनु उठि तहँ आए।
करि प्रनाम पूछी कुसलाई। बिप्र कहहु निज कथा बुझाई।
की तुम्ह हरिदासन महुँ कोई। मोरे हृदय प्रीति अति होई।
की तुम्ह राम-दीन-अनुरागी। आयेहु मोहि करन बड़ भागी।

चौ०-निसिचरि एक सिंधु महँ रहई। करि माया नभ के खग गहई॥
जीव जंतु जे गगन उड़ाहीं। जल बिलोकि तिन्ह कै परिछाहीं॥
गहै छाँह सक सो न उड़ाई। एहि बिधि सदा गगनचर खाई॥
सोइ छल हनूमान तें कीन्हा। तासु कपट कपि तुरतहिं चीन्हा॥
ताहि मारि मारुत-सुत-बीरा। बारिधिपार गयेउ मतिधीरा॥
तहाँ जाइ देखी बनसोभा। गुंजत चंचरीक मधुलोभा॥
नाना तरु फल फूल सुहाए। खग-मृग-बृंद देखि मन भाए॥
सैल बिसाल दीख एक आगें। तापर धाइ चढ़ेउ भय त्यागें॥
उमा न कछु कपि कै अधिकाई। प्रभुप्रताप जो कालहि खाई॥
गिरि पर चढ़ि लंका तेहि देखी। कहि न जाइ अति दुर्ग बिसेखी॥
अति उतंग जलनिधि चहुँ पासा। कनककोट कर परम प्रकासा॥

छंद—कनक कोट बिचित्र-मनि-कृत सुंदरायत अति घना।
चउहट्ट हट्ट सुबट्ट बीथीं चारु पुर बहु बिधि बना॥
गज बाजि खच्चर निकर पदचर रथ बरूथन्हि को गनै।
बहुरूप निसि-चर-जूथ अति बल सेन बरनत नहिं बनै॥
बन बाग उपबन बाटिका सर कूप बापी सोहहीं।
नर-नाग-सुर-गंधर्ब-कन्या-रूप मुनिमन मोहहीं॥
कहुँ माल देह बिसाल सैलसमान अति बल गर्जहीं।
नाना अखारेन्ह भिरहिं बहु बिधि एक एकन्ह तर्जहीं॥
करि जतन भट कोटिन्ह बिकट तन नगर चहुँ दिसि रच्छहीं।
कहुँ महिष मानुष धेनु खर अज खल निसाचर भच्छहीं॥
एहि लागि तुलसीदास इन्ह की कथा कछुयक है कही।
रघुबीर-सर-तीरथ सरीरन्हि त्यागि गति पैहैं सही॥

दो०—पुररखवारे देखि बहु कपि मन कीन्ह बिचार।
अति लघु रूप धरौं निसि नगर करौं पैसार॥ ४॥

चौ०-मसकसमान रूप कपि धरी। लंकहि चले सुमिरि नरहरी॥
नाम लंकिनी एक निसिचरी। सो कह चलेसि मोहि निंदरी॥

कह रावनु सुनु सुमुखि सयानी। मंदोदरी आदि सब रानी।
तव अनुचरी करौं पन मोरा। एक बार बिलोकु मम ओरा।
तृन धरि ओट कहति बैदेही। सुमिरि अवधपति परम सनेही।
सुनु दसमुख खद्योत प्रकासा। कबहुँ कि नलिनी करै बिकासा।
अस मन समुझु कहति जानकी। खल सुधि नहिं रघुबीर-बान की।
सठ सूने हरि आनेहि मोही। अधम निलज्ज लाज नहिं तोही।
दो०—आपुहि सुनि खद्योतसम रामहिं भानुसमान।
परुष बचन सुनि काढ़ि असि बोला अति खिसियान॥ १०॥
चौ०-सीता तैं मम कृत अपमाना। कटिहौं तव सिर कठिन कृपाना।
नाहिं त सपदि मानु मम बानी। सुमुखि होत न त जीवनहानी।
स्याम-सरोज-दाम-सम सुंदर। प्रभुभुज करि-कर-सम, दसकंधर।
सो भुज कंठ कि तव असि घोरा। सुनु सठ अस प्रमान पन मोरा।
चंद्रहास हरु मम परितापं। रघुपति-बिरह-अनल-संजातं।
सीतल निसि तव असि बर धारा। कह सीता हरु मम दुखभारा।
सुनत बचन पुनि मारन धावा। मयतनया कहि नीति बुझावा।
कहेसि सकल निसिचरिन्ह बोलाई। सीतहि बहु बिधि त्रासहु जाई।
मास दिवस महुँ कहा न माना। तौ मैं मारब काढ़ि कृपाना।
दो०—भवन गयेउ दसकंधर इहाँ पिसाचिनिबृंद।
सीतहिं त्रास देखावहिं धरहिं रूप बहु मंद॥ ११॥
चौ०-त्रिजटा नाम राच्छसी एका। राम-चरन-रति निपुन बिबेका।
सबन्हौ बोलि सुनायेसि सपना। सीतहिं सेइ करहु हित अपना।
सपने बानर लंका जारी। जातुधानसेना सब मारी।
खरआरूढ़ नगर दससीसा। मुंडित सिर खंडित-भुज-बीसा।
एहि बिधि सो दच्छिन दिसि जाई। लंका मनहुँ बिभीषन पाई।
नगर फिरी रघुबीर-दोहाई। तब प्रभु सीता बोलि पठाई।
यह सपना मैं कहौं पुकारी। होइहि सत्य गए दिन चारि।
तासु बचन सुन ते सब डरीं। जनकसुता के चरनन्हि परीं।

दो०—तब हनुमंत कही सब रामकथा निज नाम।
सुनत जुगलतन पुलक मन मगन सुमिरि गुनग्राम ॥ ७ ॥

चौ०-सुनहु पवनसुत रहनि हमारी। जिमि दसनन्हि महुँ जीभ बिचारी।
तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा। करिहहिं कृपा भानु-कुल-नाथा।
तामस तनु कछु साधन नाहीं। प्रीति न पद सरोज मन माहीं।
अब मोहि भा भरोस हनुमंता। बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता।
जौं रघुबीर अनुग्रह कीन्हा। तौ तुम्ह मोहि दरसु हठि दीन्हा।
सुनहु बिभीषन प्रभु कै रीती। करहिं सदा सेवक पर प्रीती।
कहहु कवन मैं परम कुलीना। कपि चंचल सबही बिधि हीना।
प्रात लेइ जो नाम हमारा। तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा।

दो०—अस मैं अधम सखा सुनु मोहूँ पर रघुबीर।
कीन्ही कृपा सुमिरि गुन भरे बिलोचन नीर ॥ ८ ॥

चौ०-जानतहूँ अस स्वामि बिसारी। फिरहिं ते काहे न होहिं दुखारी।
एहि बिधि कहत राम-गुन-ग्रामा। पावा अनिर्बाच्य बिश्रामा।
पुनि सब कथा बिभीषन कही। जेहि बिधि जनकसुता तहँ रही।
तब हनुमंत कहा सुनु भ्राता। देखा चहौं जानकी माता।
जुगुति बिभीषन सकल सुनाई। चलेउ पवनसुत बिदा कराई।
करि सोइ रूप गयेउ पुनि तहवाँ। बन असोक सीता रह जहवाँ।
देखि मनहिं महुँ कीन्ह प्रनामा। बैठेहि बीति जात निसि जामा।
कृस तनु सीस जटा एक बेनी। जपति हृदय रघुपति-गुन-श्रेनी।

दो०—निज पद नयन दिए मन रामचरन महँ* लीन।
परम दुखी भा पवनसुत देखि जानकी दीन ॥ ९ ॥

चौ०-तरुपल्लव महुँ रहा लुकाई। करै बिचार करौं का भाई।
तेहि अवसर रावनु तहँ आवा। संग नारि बहु किए बनावा।
बहु बिधि खल सीतहिं समुझावा। साम दाम भय भेद देखावा।

---

* काशि०—कमलपद।

दो०—कपि के वचन सप्रेम सुनि उपजा मन विस्वास।
जाना मन क्रम वचन यह कृपासिंधु कर दास॥ १४॥
चौ०-हरिजन जानि प्रीति अति बाढ़ी। सजल नयन पुलकावलि ठाढ़ी।
बूड़त विरहजलधि हनुमाना। भयेहु तात मो कहुँ जलयाना।
अब कहु कुसल जाउँ बलिहारी। अनुजसहित सुखभवन खरारी।
कोमल चित कृपालु रघुराई। कपि केहि हेतु धरी निठुराई।
सहज बानि सेवक-सुख-दायक। कबहुँ क सुरति करत रघुनायक।
कबहुँ नयन मम सीतल ताता। होइहहिं निरखि स्याम मृदु गाता।
वचन न आव नयन भरि वारी। अहह नाथ हौं निपट विसारी।
देखि परम विरहाकुल सीता। बोला कपि मृदु वचन विनीता।
मातु कुसल प्रभु अनुजसमेता। तव दुख दुखी सु-कृपा-निकेता।
जनि जननी मानहु जिय ऊना। तुम्ह तें प्रेम राम के दूना।
दो०—रघुपति कर संदेसु अब सुनु जननी धरि धीर।
अस कहि कपि गदगद भयेउ भरे विलोचन नीर॥ १५॥
चौ०-कहेउ राम 'वियोग तव सीता। मो कहुँ सकल भए विपरीता।
नव-तरु-किसलय मनहुँ कृसानू। काल-निसा-सम निसि ससि भानू।
कुवलयविपिन कुंत बन-सरिसा। वारिद तपत तेल जनु वरिसा।
जेहि तरु रहे करत तेइ पीरा *। उरग-स्वास-सम त्रिविध समीरा।
कहे ते कछु दुख घाटि न होई। काहि कहौं यह जान न कोई।
तत्त्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मन मोरा।
सो मन सदा रहत तोहि पाहीं। जानु प्रीतिरसु एतनहि माहीं'।
प्रभुसंदेसु सुनत वैदेही। मगन प्रेम तनु-सुधि नहिं तेही।
कह कपि हृदय धीर धरु माता। सुमिरु राम सेवक-सुख-दाता।
उर आनहु रघुपति-प्रभुताई। सुनि मम वचन तजहु कदराई।
दो०—निसि-चर-निकर पतंगसम रघुपति-बान कृसानु।
जननी हृदय धीर धरु जरे निसाचर जानु॥१६॥

* 'जे हितु रहे करत तेइ पीरा' पाठ भी कहा जाता है।

दो०—जहँ तहँ गईं सकल तब सीता कर मन सोच।
मास दिवस बीते मोहि मारिहि निसिचर पोच॥ १२॥
चौ०-त्रिजटा सन बोली कर जोरी। मातु बिपतिसंगिनि तैं मोरी।
तजौं देह करु बेगि उपाई। दुसह बिरह अब नहिं सहि जाई।
आनि काठ रचु चिता बनाई। मातु अनल पुनि देहि लगाई।
सत्य करहि मम प्रीति सयानी। सुनै को श्रवन सूलसम बानी।
सुनत वचन पद गहि समुझायेसि। प्रभु-प्रताप-बल-सुजस सुनायेसि।
निसि न अनल मिलु सुनु सुकुमारी। अस कहि सो निज भवन सिधारी।
कह सीता बिधि भा प्रतिकूला। मिलहि न पावक मिटहि न सूला।
देखिअत प्रगट गगन अंगारा। अवनि न आवत एकौ तारा।
पावकमय ससि स्रवत न आगी। मानहुँ मोहि जानि हतभागी।
सुनहि बिनय मम बिटप असोका। सत्य नाम करु हरु मम सोका।
नूतन किसलय अनलसमाना। देहि अगिनि, जनि करहि निदाना।
देखि परम बिरहाकुल सीता। सो छन कपिहि कलपसम बीता।
सो०—कपि करि हृदय बिचार दीन्हि मुद्रिका डारि तब।
जनु असोक अंगार दीन्ह हरषि उठि कर गहेउ॥ १३॥
चौ०-तब देखी मुद्रिका मनोहर। राम-नाम-अंकित अति सुंदर।
चकित चितव मुदरी पहिचानी। हरष बिषाद हृदय अकुलानी।
जीति को सकै अजय रघुराई। माया तें असि रचि नहिं जाई।
सीता मन बिचार कर नाना। मधुर बचन बोलेउ हनुमाना।
रामचंद्र-गुन बरनै लागा। सुनतहि सीता कर दुख भागा।
लागी सुनै श्रवन मन लाई। आदिहुँ तें सब कथा सुनाई।
श्रवनामृत जेहि कथा सुनाई। कहि सो प्रगट होत किन भाई।
तब हनुमंत निकट चलि गयेऊ। फिर बैठीं मन बिसमउ भयेउ।
रामदूत मैं मातु जानकी। सत्य सपथ करुनानिधान की।
यह मुद्रिका मातु मैं आनी। दीन्हि राम तुम्ह कहँ सहिदानी।
नर बानरहि संग कहु कैसे। कही कथा भइ संगति जैसे।

सब रजनीचर कपि संघारे। गए पुकारत कछु अधमारे।
पुनि पठयेउ तेहि अच्छकुमारा। चला संग लै सुभट अपारा।
आवत देखि बिटप गहि तर्जा। ताहि निपाति महाधुनि गर्जा।

दो०—कछु मारेसि कछु मर्देसि कछु मिलयेसि धरि धूरि।
कछु पुनि जाइ पुकारे प्रभु मर्कट बलभूरि॥१९॥

चौ०-सुनि सुत-बध लंकेस रिसाना। पठयेसि मेघनाद बलवाना।
मारेसु जनि सुत बाँधेसु ताही। देखिअ कपिहि कहाँ कर आही।
चला इंद्रजित अतुलित-जोधा। बंधुनिधन सुनि उपजा क्रोधा।
कपि देखा दारुन भट आवा। कटकटाइ गर्जा अरु धावा।
अति बिसाल तरु एक उपारा। बिरथ कीन्ह लंकेसकुमारा।
रहे महाभट ता के संगा। गहि गहि कपि मर्दइ निज अंगा।
तिन्हहिं निपाति ताहि सन बाजा। भिरे जुगल मानहुँ गजराजा।
मुठिका मारि चढ़ा तरु जाई। ताहि एक छन मुरछा आई।
उठि बहोरि कीन्हेसि बहु माया। जीति न जाय प्रभंजनजाया।

दो०—ब्रह्म अस्त्र तेहि साधा कपि मन कीन्ह बिचार।
जौं न ब्रह्म सर मानौं महिमा मिटै अपार॥ २०॥

चौ०—ब्रह्मबान कपि कहँ तेहि मारा। परतिहुँ बार कटकु संघारा।
तेहि देखा कपि मुरछित भयेऊ। नागपास बाँधेसि लै गयेऊ।
जासु नाम जपि सुनहु भवानी। भवबंधन काटहिं नर ग्यानी।
तासु दूत कि बँध तर आवा ? । प्रभुकारज लगि कपिहि बँधावा।
कपिबंधन सुनि निसिचर धाए। कौतुक लागि सभा सब आए।
दस-मुख-सभा दीखि कपि जाई। कहि न जाइ कछु अति प्रभुताई।
कर जोरे सुर दिसिप बिनीता। भृकुटि बिलोकत सकल सभीता।
देखि प्रताप न कपि मन संका। जिमि अहिगन महुँ गरुड़ असंका।

दो०—कपिहि बिलोकि दसानन बिहँसा कहि दुर्बाद।
सुत-बध-सुरति कीन्ह पुनि उपजा हृदय बिषाद॥ २१॥

चौ०-कह लंकेस कवन तैं कीसा। केहि के बल घालेहि बन खीसा

चौ०-जो रघुवीर होति सुधि पाई। करते नहिं विलंबु रघुराई।
रामवान रवि उए जानकी। तमवरूथ कहँ जातुधान की।
अवहिं मातु मैं जाउँ लेवाई। प्रभुआयसु नहिं रामदोहाई।
कछुक दिवस जननी धरु धीरा। कपिन्ह सहित अइहहिं रघुवीरा।
निसिचर मारि तोहि लै जैहहिं। तिहुँ पुर नारदादि जस गैहहिं।
हैं सुत कपि सब तुम्हहिं समाना। जातुधान भट अति वलवाना।
मोरे हृदय परम संदेहा। सुनि कपि प्रगट कीन्ह निज देहा।
कनक - भूधराकार - सरीरा। समरभयंकर अति वल - वीरा।
सीता मनभरोस तव भयेऊ। पुनि लघु रूप पवनसुत लयेऊ।

दो०—सुनु माता साखामृग नहिं वल-वुद्धि-विसाल।
प्रभुप्रताप तें गरुड़हिं खाइ परम लघु व्याल ॥१७॥

चौ०-मन संतोष सुनत कपिवानी। भगति - प्रताप - तेज-वल-सानी।
आसिष दीन्हि रामप्रिय जाना। होहु तात वल - सील-निधाना।
अजर अमर गुननिधि सुत होहू। करहु वहुत रघुनायक छोहू।
करहु कृपा प्रभु अस सुनि काना। निर्भर प्रेममगन हनुमाना।
वार वार नायेसि पद सीसा। वोला वचन जोरि कर कीसा।
अव कृतकृत्य भयेउँ मैं माता। आसिष तव अमोघ विख्याता।
सुनहु मातु मोहि अतिसय भूखा। लागि देखि सुंदर फल रूखा।
सुनु सुत करहिं विपिन रखवारी। परम सुभट रजनीचर भारी।
तिन्ह कर भय माता मोहि नाहीं। जौं तुम्ह सुख मानहु मन माहीं।

दो०—देखि वुद्धि-वल-निपुन कपि कहेउ जानकी जाहु।
रघुपति-चरन हृदय धरि तात मधुर फल खाहु ॥१८॥

चौ०-चलेउ नाइ सिरु पैठेउ वागा। फल खायेसि तरु तोरै लागा।
रहे तहाँ वहु भट रखवारे। कछु मारेसि कछु जाइ पुकारे।
नाथ एक आवा कपि भारी। तेहि असोकवाटिका उजारी।
खायेसि फल अरु विटप उपारे। रच्छक मर्दि मर्दि महि डारे।
सुनि रावन पठए भट नाना। तिन्हहिं देखि गर्जेउ हनुमाना।

सजल मूल जिन्ह सरितन्ह नाहीं। बरषि गए पुनि तबहिं सुखाहीं।
सुनु दसकंठ कहौं पन रोपी। विमुख राम त्राता नहिं कोपी।
संकर सहस विष्णु अज तोही। सकहिं न राखि राम कर द्रोही।

दो०—मोहमूल बहु सूलप्रद त्यागहु तम अभिमान।
भजहु राम रघुनायक कृपासिंधु भगवान॥ २४॥

चौ०-जदपि कही कपि अति हित बानी। भगति-विवेक-विरति-नय-सानी।
बोला विहँसि महा अभिमानी। मिला हमहिं कपि गुर बड़ ग्यानी।
मृत्यु निकट आई खल तोही। लागेसि अधम सिखावन मोही।
उलटा होइहि कह हनुमाना। मतिभ्रम तोहि प्रगट मैं जाना।
सुनि कपिबचन बहुत खिसिआना। वेगि न हरहु मूढ़ कर प्राना।
सुनत निसाचर मारन धाए। सचिवन्ह सहित विभीषन आए।
नाइ सीस करि विनय बहूता। नीतिविरोध न मारिअ दूता।
आन दंड कछु करिअ गोसाईं। सबही कहा मंत्र भल भाई।
सुनत विहँसि बोला दसकंधर। अंगभंग करि पठइअ बंदर।

दो०—कपि कै ममता पूँछ पर सबहि कहेउ समुझाय।
तेल बोरि पट बाँधि पुनि पावक देहु लगाय॥२५॥

चौ०-पूँछहीन बानर तहँ जाइहि। तब सठ निज नाथहिं लै आइहि।
जिन्ह कै कीन्हेसि बहुत बड़ाई। देखौं मैं तिन्ह कै प्रभुताई।
बचन सुनत कपि मन मुसुकाना। भइ सहाय सारद मैं जाना।
जातुधान सुनि रावनबचना। लागे रचै मूढ़ सोइ रचना।
रहा न नगर बसन घृत तेला। बाढ़ी पूँछ कीन्ह कपि खेला।
कौतुक कहँ आए पुरबासी। मारहिं चरन करहिं बहु हाँसी।
बाजहिं ढोल देहिं सब तारी। नगर फेरि पुनि पूँछ प्रजारी।
पावक जरत देखि हनुमंता। भयेउ परम लघु रूप तुरंता।
निबुकि चढ़ेउ कपि कनक अटारी। भईं सभीत निसाचर-नारी।

दो०—हरिप्रेरित तेहिं अवसर चले मरुत उनचास।
अट्टहास करि गर्जा कपि बढ़ि लाग अकास॥ २६॥

की धौं श्रवन सुने नहिं मोही। देखौं अति असंक सठ तोही।
मारे निसिचर केहि अपराधा। कहु सठ तोहि न प्रान कै बाधा।
सुनु रावन ब्रह्मांडनिकाया। पाइ जासु बल बिरचति माया।
जा के बल बिरंचि हरि ईसा। पालत सृजत हरत दससीसा।
जा बल सीस धरत सहसानन। अंडकोस समेत गिरि कानन।
धरै जो बिबिध देह सुरत्राता। तुम्ह से सठन्ह सिखावनदाता।
हरकोदंड कठिन जेहि भंजा। तेहि समेत नृप-दल-मद गंजा।
खर दूषन त्रिसिरा अरु बाली। बधे सकल अतुलित-बल-साली।
दो०—जा के बललवलेस तें जितेहु चराचर झारि।
तासु दूत मैं जा करि हरि आनेहु प्रिय नारि॥ २२॥
चौ०-जानौं मैं तुम्हारि प्रभुताई। सहसबाहु सन परी लराई।
समर बालि सन करि जसु पावा। सुनि कपिबचन बिहँसि बहरावा।
खायेउँ फल प्रभु लागी भूखा। कपिसुभाव तें तोरेउँ रूखा।
सब के देह परम प्रिय स्वामी। मारहिं मोहि कुमारग-गामी।
जिन्ह मोहि मारा ते मैं मारे। तेहि पर बाँधेउ तनय तुम्हारे।
मोहि न कछु बाँधे कर लाजा। कीन्ह चहौं निज प्रभु कर काजा।
बिनती करौं जोरि कर रावन। सुनहु मान तजि मोर सिखावन।
देखहु तुम निज कुलहि बिचारी। भ्रम तजि भजहु भगत-भय-हारी।
जा के डर अति काल डेराई। जो सुर असुर चराचर खाई।
ता सौं बैरु कबहुँ नहिं कीजै। मोरे कहे जानकी दीजै।
दो०—प्रनतपाल रघुनायक करुनासिंधु खरारि।
गए सरन प्रभु राखिहिं तव अपराध बिसारि॥ २३॥
चौ०-राम-चरन-पंकज उर धरहू। लंका अचल राजु तुम्ह करहू।
रिषि-पुलस्ति-जस बिमल मयंका। तेहि ससि महुँ जनि होहु कलंका।
रामनाम बिनु गिरा न सोहा। देखु बिचारि त्यागि मद मोहा।
बसनहीन नहिं सोह सुरारी। सब-भूषन-भूषित बर नारी।
रामबिमुख संपति प्रभुताई। जाइ रही पाई बिनु पाई

रखवारे जब बरजन लागे। मुष्टिप्रहार हनत सब भागे।

दो०—जाइ पुकारे ते सब बन उजार जुवराज।

सुनि सुग्रीव हरष कपि करि आए प्रभुकाज ॥ २९ ॥

चौ०-जौं न होति सीतासुधि पाई। मधुबन के फल सकहिं कि खाई।
एहि विधि मन विचार कर राजा। आइ गए कपि सहित समाजा।
आइ सबन्हि नावा पद सीसा। मिले सबन्हि अति प्रेम कपीसा।
पूँछी कुसल कुसलपद देखी। रामकृपा भा काजु विसेखी।
नाथ काजु कीन्हेउ हनुमाना। राखे सकल कपिन्ह के प्राना।
सुनि सुग्रीवँ बहुरि तेहि मिलेऊ। कपिन्हसहित रघुपति पहिं चलेऊ।
राम कपिन्ह जब आवत देखा। किए काजु मन हरष बिसेखा।
फटिकसिला बैठे दोउ भाई। परे सकल कपि चरनन्हि जाई।

दो०—प्रीतिसहित सब भेंटे रघुपति करुनापुंज।

पूँछी कुसल नाथ अब कुसल देखि पदकंज ॥ ३० ॥

चौ०-जामवंत कह सुनु रघुराया। जापर नाथ करहु तुम्ह दाया।
ताहि सदा सुभ कुसल निरंतर। सुर नर मुनि प्रसन्न ता ऊपर।
सोइ बिजई बिनई गुनसागर। तासु सुजसु त्रयलोक-उजागर।
प्रभु की कृपा भयेउ सबु काजू। जनम हमार सुफल भा आजू।
नाथ पवनसुत कीन्हि जो करनी। सहसहुँ मुख न जाइ सो बरनी।
पवनतनय के चरित सुहाए। जामवंत रघुपतिहि सुनाए।
सुनत कृपानिधि मन अति भाए। पुनि हनुमान हरषि हिय लाए।
कहहु तात केहि भाँति जानकी। रहति करति रच्छा स्वप्रान की।

दो०—नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।

लोचन निज-पद-जंत्रित जाहिं प्रान केहि बाट ॥ ३१ ॥

चौ०-चलत मोहि चूड़ामनि दीन्ही। रघुपति हृदय लाइ सोइ लीन्ही।
नाथ जुगल लोचन भरि बारी। बचन कहे कछु जनककुमारी।
अनुजसमेत गहेहु प्रभु चरना। दीनबंधु प्रनतारतिहरना।
मन क्रम बचन चरन अनुरागी। केहि अपराध नाथ हौं त्यागी।

चौ०-देह बिसाल परम हरुआई। मंदिर तें मंदिर चढ़ धाई॥
जरै नगर भा लोग बिहाला। झपट लपट बहु कोटि कराला॥
तात मातु हा सुनिअ पुकारा। एहि अवसर को हमहिं उबारा॥
हम जो कहा यह कपि नहिं होई। बानररूप धरे सुर कोई॥
साधुअवग्या कर फल ऐसा। जरै नगर अनाथ कर जैसा॥
जारा नगर निमिष एक माहीं। एक बिभीषन कर गृह नाहीं॥
ता कर दूत अनल जेहि सिरिजा। जरा न सो तेहि कारन गिरिजा॥
उलटि पलटि लंका सब जारी। कूदि परा पुनि सिंधु मँझारी॥
दो०—पूँछ बुझाइ खोइ श्रम धरि लघु रूप बहोरि।
जनकसुता के आगे ठाढ़ भयेउ कर जोरि॥ २७॥
चौ०-मातु मोहि दीजे कछु चीन्हा। जैसे रघुनायक मोहि दीन्हा॥
चूड़ामनि उतारि तब दयेऊ। हरषसमेत पवनसुत लयेऊ॥
कहेउ तात अस मोर प्रनामा। सब प्रकार प्रभु पूरनकामा॥
दीन-दयालु-बिरुद संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी॥
तात सक्र-सुत-कथा सुनायेहु। बानप्रताप प्रभुहिं समुझायेहु॥
मास दिवस महुँ नाथु न आवा। तौ पुनि मोहि जिअत नहिं पावा॥
कहु कपि केहि बिधि राखौं प्राना। तुम्हहूँ तात कहत अब जाना॥
तोहि देखि सीतल भइ छाती। पुनि मो कहुँ सोइ दिनु सोइ राती॥
दो०—जनकसुतहिं समुझाइ करि बहु बिधि धीरजु दीन्ह।
चरनकमल सिरु नाइ कपि गवनु राम पहिं कीन्ह॥ २८॥
चौ०-चलत महाधुनि गर्जेसि भारी। गर्भ स्रवहिं सुनि निसिचर-नारी॥
नाँघि सिंधु एहि पारहिं आवा। सबद किलकिला कपिन्ह सुनावा॥
हरषे सब बिलोकि हनुमाना। नूतन जनम कपिन्ह तब जाना॥
मुख प्रसन्न तन तेज बिराजा। कीन्हेसि रामचंद्र कर काजा॥
मिले सकल अति भए सुखारी। तलफत मीन पाव जनु बारी॥
चले हरषि रघुनायक पासा। पूँछत कहत नवल इतिहासा॥
तब मधुबन भीतर सब आए। अंगदसंमत मधुफल खाए॥

दो०—ता कहुँ प्रभु कछु अगम नहिं जा पर तुम्ह अनुकूल।
तब प्रभाव बड़वानलहि जारि सकै खलु तूल ॥ ३४ ॥
चौ०-नाथ भगति अति-सुख-दायिनी। देहु कृपा करि अनपायिनी।
सुनि प्रभु परम सरल कपिबानी। एवमस्तु तब कहेउ भवानी।
उमा रामसुभाव जेहि जाना। ताहि भजनु तजि भाव न आना।
यह संवाद जासु उर आवा। रघुपति-चरन-भगति सोइ पावा।
सुनि प्रभुबचन कहहिं कपिबृंदा। जय जय जय कृपाल सुखकंदा।
तब रघुपति कपिपतिहिं बोलावा। कहा चलै कर करहु बनावा।
अब बिलंबु केहि कारन कीजे। तुरत कपिन्ह कहुँ आयसु दीजै।
कौतुक देखि सुमन बहु बरषी। नभ तें भवन चले सुर हरषी।
दो०—कपिपति बेगि बोलाए आए जूथप जूथ।
नानाबरन अतुल-बल बानर-भालु-बरूथ ॥ ३५ ॥
चौ०-प्रभु-पद-पंकज नावहिं सीसा। गर्जहिं भालु महाबल कीसा।
देखी राम सकल कपि सैना। चितै कृपा करि राजिवनैना।
राम-कृपा-बल पाइ कपिंदा। भए पच्छजुत मनहुँ गिरिंदा।
हरषि राम तब कीन्ह पयाना। सगुन भए सुंदर सुभ नाना।
जासु सकल मंगलमय कीती। तासु पयान सगुन यह नीती।
प्रभुपयान जाना बैदेही। फरकि बाम अँग जनु कहि देही।
जोइ जोइ सगुन जानकिहि होई। असगुन भयेउ रावनहि सोई।
चला कटकु को बरनै पारा। गर्जहिं बानर भालु अपारा।
नखआयुध गिरि-पादप-धारी। चले गगन महि इच्छाचारी।
केहरिनाद भालु कपि करहीं। डगमगाहिं दिग्गज चिक्करहीं।
छंद—चिक्करहिं दिग्गज डोल महि गिरि लोल सागर खरभरे।
मन हरष दिनकर सोम सुर मुनि नाग किन्नर दुख टरे ॥
कटकटहिं मर्कट बिकट भट बहु कोटि कोटिन्ह धावहीं।
जय राम प्रबलप्रताप कोसलनाथ गुनगन गावहीं ॥
सहि सक न भार उदार अहिपति बार बारहिं मोहई।

अवगुन एक मोर मैं माना। बिछुरत प्रान न कीन्ह पयाना।
नाथ सो नयनन्हि कर अपराधा। निसरत प्रान करहिं हठि बाधा।
बिरह अगिनि तनु तूल समीरा। स्वास जरै छन माहँ सरीरा।
नयन स्रवहिं जल निजहित लागी। जरै न पाव देह बिरहागी।
सीता के अति बिपति बिसाला। बिनहिं कहे भलि दीनदयाला।

दो०—निमिष निमिष करुनानिधि जाहिं कलप सम बीति।
बेगि चलिअ प्रभु आनिअ भुजबल खलदल जीति॥ ३२॥

चौ०-सुनि सीतादुख प्रभुसुखअयना। भरि आए जल राजिवनयना।
बचन काय मन मम गति जाही। सपनेहुँ बूझिअ बिपति कि ताही।
कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई। जब तव सुमिरन भजनु न होई।
केतिक बात प्रभु जातुधान की। रिपुहि जीति आनिबी जानकी।
सुनु कपि तोहि समान उपकारी। नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी।
प्रतिउपकार करौं का तोरा। सनमुख होइ न सकत मन मोरा।
सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं। देखेउँ करि बिचार मन माहीं।
पुनि पुनि कपिहि चितव सुरत्राता। लोचन नीर पुलक अति गाता।

दो०—सुनि प्रभुबचन बिलोकि मुख गात हरषि हनुमंत।
चरन परेउ प्रेमाकुल त्राहि त्राहि भगवंत॥ ३३॥

चौ०-बार बार प्रभु चहहिं उठावा। प्रेममगन तेहि उठबु न भावा।
प्रभु-कर-पंकज कपि के सीसा। सुमिरि सो दसा मगन गौरीसा।
सावधान मन करि पुनि संकर। लागे कहन कथा अति सुंदर।
कपि उठाइ प्रभु हृदय लगावा। कर गहि परम निकट बैठावा।
कहु कपि रावनपालित लंका। केहि बिधि दहेउ दुर्ग अति बंका।
प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना। बोला बचन बिगत-अभिमाना।
साखामृग कै बड़ि मनुसाई। साखा तें साखा पर जाई।
नाँघि सिंधु हाटकपुर जारा। निसिचरगन बधि बिपिन उजारा।
सो सब तव प्रताप रघुराई। नाथ न कछू मोरि प्रभुताई।

दो०—सचिव बैद गुर तीनि जौं प्रिय बोलहिं भय आस।
राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगिही नास ॥ ३८ ॥

चौ०-सोइ रावन कहुँ बनी सहाई। अस्तुति करहिं सुनाइ सुनाई।
अवसर जानि बिभीषनु आवा। भ्राताचरन सीसु तेहि नावा।
पुनि सिरु नाइ बैठ निज आसन। बोला बचन पाइ अनुसासन।
जौं कृपाल पूँछेहु मोहिं बाता। मति अनु-रूप कहौं हित ताता।
जो आपन चाहै कल्याना। सुजसु सुमति सुभगति सुख नाना।
सो परनारि-लिलारु गोसाईं। तजै चौथि के चंद कि नाईं।
चौदह भुवन एक पति होई। भूतद्रोह तिष्ठै नहिं सोई।
गुनसागर नागर नर जोऊ। अलप लोभ भल कहै न कोऊ।

दो०—काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुबीरही भजहु भजहिं जेहि संत ॥ ॥ ३९ ॥

चौ०-तात रामु नहिं नर भूपाला। भुवनेश्वर कालहुँ कर काला।
ब्रह्म अनामय अज भगवंता। ब्यापक अजित अनादि अनंता।
गो-द्विज- धेनु-देव हितकारी। कृपासिंधु मानुष-तनु-धारी।
जनरंजन भंजन खलब्राता। वेद-धर्म-रच्छक सुनु भ्राता।
ताहि बयरु तजि नाइअ माथा। प्रनतारति - भंजन रघुनाथा।
देहु नाथ प्रभु कहुँ बैदेही। भजहु राम बिनु हेतु सनेही।
सरन गए प्रभु ताहु न त्यागा। बिस्व-द्रोह-कृत अघ जेहि लागा।
जासु नाम त्रय-ताप-नसावन। सोइ प्रभु प्रगट समुझु जिय रावन।

दो०—बार बार पद लागौं बिनय करौं दससीस।
परिहरि मान मोह मद भजहु कोसलाधीस ॥ ४० ॥
मुनि पुलस्ति निज शिष्य सन कहि पठई यह बात।
तुरत सो मैं प्रभु सन कहि पाई सुअवसरु तात ॥ ४१ ॥

चौ०-माल्यवंत अति सचिव सयाना। तासु बचन सुनि अति सुख माना।
तातु अनुज तव नीतिबिभूषन। सोइ उर धरहु जो कहत बिभीषन।

गहि दसन पुनि पुनि कमठपृष्ठ कठोर सो किमि सोहई ॥
रघुबीर-रुचिर-पयान-प्रस्थिति जानि परम सुहावनी।
जनु कमठखर्पर सर्पराज सो लिखत अविचल पावनी ॥

दो०—एहि बिधि जाइ कृपानिधि उतरे सागरतीर।
जहँ तहँ लागे खान फल भालु बिपुल कपि बीर ॥ ३६ ॥

चौ०-उहाँ निसाचर रहहिं ससंका। जब तें जारि गयेउ कपि लंका।
निज निज गृह सब करहिं बिचारा। नहिं निसिचर-कुल केर उबारा।
जासु दूतबल बरनि न जाई। तेहि आयें पुर कवनि भलाई।
दूतिन्ह सन सुनि पुर-जन-बानी। मंदोदरी अधिक अकुलानी।
रहसि जोरि कर पतिपद लागी। बोली बचन नीति-रस-पागी।
कंत करष हरि सन परिहरहू। मोर कहा अति हित हिय धरहू।
समुझत जासु दूत कै करनी। स्रवहिं गर्भ रजनीचर-घरनी।
तासु नारि निज सचिव बोलाई। पठवहु कंत जौं चहहु भलाई।
तव कुल-कमल-बिपिन-दुख-दाई। सीता सीत-निसा-सम आई।
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हे। हित न तुम्हार संभु अज कीन्हे।

दो०—रामबान अहि-गन-सरिस निकर निसाचर भेक।
जब लगि ग्रसत न तब लगि जतनु करहु तजि टेक ॥ ३७ ॥

चौ०-श्रवन सुनी सठ ता करि बानी। बिहँसा जगतबिदित अभिमानी।
सभय सुभाउ नारि कर साँचा। मंगल महुँ भय मन अति काँचा।
जौं आवै मर्कट-कटकाई। जियहिं बिचारे निसिचर खाई।
कंपहिं लोकप जा की त्रासा। तासु नारि सभीत बड़ि हाँसा।
अस कहि बिहँसि ताहि उर लाई। चलेउ सभा ममता अधिकाई।
मंदोदरी हृदय कर चिंता। भयेउ कंत पर बिधि बिपरीता।
बैठेउ सभा खबरि असि पाई। सिंधु पार सेना सब आई।
बूझेसि सचिव उचित मत कहहू। ते सब हँसे मष्ट करि रहहू।
जितेहु सुरासुर तब श्रम नाहीं। नर बानर केहि लेखे माहीं।

दो०—जिन्ह पायन्ह के पादुकन्हि भरत रहे मन लाइ।
ते पद आज बिलोकिहौं इन्ह नयनन्हि अब जाइ ॥४४॥

चौ०-एहि बिधि करत सप्रेम बिचारा। आयेउ सपदि सिंधु एहि पारा।
कपिन्ह बिभीषनु आवत देखा। जाना कोउ रिपुदूत बिसेखा।
ताहि राखि कपीस पहिं आए। समाचार सब ताहि सुनाए।
कह सुग्रीवँ सुनहु रघुराई। आवा मिलन दसानन भाई।
कह प्रभु सखा बूझिए काहा। कहै कपीस सुनहु नरनाहा।
जानि न जाइ निसाचर माया। कामरूप केहि कारन आया।
भेद हमार लेन सठ आवा। राखिअ बाँधि मोहि अस भावा।
सखा नीति तुम्ह नीकि बिचारी। मम पन सरनागत-भय-हारी।
सुनि प्रभुबचन हरष हनुमाना। सरनागतबच्छल भगवाना।

दो०—सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि।
ते नर पाँवर पापमय तिन्हहिं बिलोकत हानि ॥४५॥

चौ०-कोटि बिप्रबध लागहिं जाहू। आए सरन तजौं नहिं ताहू।
सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जनम कोटि अघ नासहिं तबहीं।
पापवंत कर सहज सुभाऊ। भजनु मोर तेहि भाव न काऊ।
जौं पै दुष्ट हृदय सोइ होई। मोरे सनमुख आव कि सोई।
निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा।
भेद लेन पठवा दससीसा। तबहुँ न कछु भय हानि कपीसा।
जग महुँ सखा निसाचर जेते। लछिमनु हनइ निमिष महुँ तेते।
जौं सभीत आवा सरनाई। रखिहौं ताहि प्रान की नाईं।

दो०—उभय भाँति तेहि आनहु हँसि कह कृपानिकेत।
जय कृपालु कहि कपि चले अंगद-हनू-समेत ॥४६॥

चौ०-सादर तेहि आगे करि बानर। चले जहाँ रघुपति करुनाकर।
दूरिहि तें देखे दोउ भ्राता। नयनानंद-दान के दाता।
बहुरि राम छबिधाम बिलोकी। रहेउ ठठुकि एकटक पल रोकी।
भुज प्रलंब कंजारुनलोचन। स्यामल गात प्रनत-भय-मोचन।

रिपु-उतकरष कहत सठ दोऊ। दूरि न करहु इहाँ हइ कोऊ॥
माल्यवंत गृह गयेउ बहोरी। कहै विभीषनु पुनि कर जोरी।
सुमति कुमति सबके उर रहहीं। नाथ पुरान निगम अस कहहीं।
जहाँ सुमति तहँ संपति नाना। जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना।
तव उर कुमति बसी विपरीती। हित अनहित मानहु रिपु प्रीती।
कालराति निसिचर-कुल केरी। तेहि सीता पर प्रीति घनेरी।

दो०—तात चरन गहि माँगौं राखहु मोर दुलार।
सीता देहु राम कहुँ अहित न होइ तुम्हार॥ ४२॥

चौ०-बुध पुरान-श्रुति-संमत बानी। कही विभीषन नीति बखानी।
सुनत दसानन उठा रिसाई। खल तोहि निकट मृत्यु अब आई।
जियसि सदा सठ मोर जिआवा। रिपु कर पच्छ मूढ़ तोहि भावा।
कहसि न खल अस को जग माहीं। भुजबल जेहि जीता मैं नाहीं।
मम पुर बसि तपसिन्ह पर प्रीती। सठ मिलु जाइ तिन्हहिं कहु नीती।
अस कहि कीन्हेसि चरन प्रहारा। अनुज गहे पद बारहिं बारा।
उमा संत कै इहै बड़ाई। मंद करत जो करै भलाई।
तुम्ह पितु सरिस भलेहि मोहि मारा। राम भजे हित नाथ तुम्हारा।
सचिव संग लेइ नभपथ गयेऊ। सबहिं सुनाइ कहत अस भयेऊ।

दो०—रामु सत्यसंकल्प प्रभु सभा काल-बस तोरि।
मैं रघुबीर-सरन अब जाउँ देहु जनि खोरि॥ ४३॥

चौ०-अस कहि चला विभीषन जबहीं। आयुहीन भए सब तबहीं।
साधुअवग्या तुरत भवानी। कर कल्यान अखिल कै हानी।
रावन जबहिं विभीषनु त्यागा। भयेउ बिभव बिनु तबहिं अभागा।
चलेउ हरषि रघुनायक पाहीं। करत मनोरथ बहु मन माहीं।
देखिहौं जाइ चरन-जलजाता। अरुन मृदुल सेवक-सुखदाता।
जे पद परसि तरी रिषिनारी। दंडक - कानन - पावन - कारी।
जे पद जनकसुता उर लाए। कपट-कुरंग-संग धर धाए।
हर-उर-सर-सरोज पद जेई। अहोभाग्य मैं देखिहौं तेई।

जौं नर होइ चराचरद्रोही। आवै सभय सरन तकि मोही।
तजि मद मोह कपट छल नाना। करौं सद्य तेहि साधु समाना।
जननी जनक बंधु सुत दारा। तनु धन भवन सुहृद परिवारा।
सब कै ममताताग बटोरी। मम पद मनहिं बाँध बरि डोरी।
समदरसी इच्छा कछु नाहीं। हरप सोक भय नहिं मन माहीं।
अस सज्जन मम उर बस कैसे। लोभी हृदय बसै धन जैसे।
तुम्ह सारिखे संत प्रिय मोरें। धरौं देह नहिं आन निहोरें।

दो०—सगुनउपासक परम हित-निरत नीति-दृढ़-नेम।
ते नर प्रानसमान मम जिन्ह के द्विज-पद-प्रेम ॥ ५० ॥

चौ०–सुनु लंकेस सकल गुन तोरें। ताते तुम्ह अतिसय प्रिय मोरें।
रामबचन सुनि बानरजूथा। सकल कहहिं जय कृपाबरूथा।
सुनत विभीपनु प्रभु कै बानी। नहिं अघात श्रवनामृत जानी।
पदअंबुज गह बारहिं बारा। हृदय समात न प्रेमु अपारा।
सुनहु देव स-चराचर-स्वामी। प्रनतपाल उर-अंतर-जामी।
उर कछु प्रथम बासना रही। प्रभु-पद-प्रीति-सरित सो बही।
अब कृपाल निज भगति पावनी। देहु सदा सिव-मन-भावनी।
एवमस्तु कहि प्रभु रनधीरा। माँगा तुरत सिंधु कर नीरा।
जदपि सखा तव इच्छा नाहीं। मोर दरसु अमोघ जग माहीं।
अस कहि राम तिलक तेहि सारा। सुमनवृष्टि नभ भई अपारा।

दो०—रावनक्रोध अनल निज स्वास समीर प्रचंड।
जरत बिभीपन राखेउ * दीन्हेउ राजु अखंड ॥ ५१ ॥
जो संपति सिव रावनहिं दीन्हि दिए दस माथ।
सोइ संपदा बिभीपनहिं सकुचि दीन्हि रघुनाथ ॥ ५२ ॥

चौ०-अस प्रभु छाँड़ि भजहिं जे आना। ते नर पसु बिनु पूँछ बिपाना।
निज जन जानि ताहि अपनावा। प्रभुसुभाव कपि-कुल-मन भावा।

* काशि०—राखा।

सिरकंध आयत कर सोहा। आनन अमित-मदन-छवि मोहा।
नयन नीर पुलकित अति गाता। मन धरि धीर कही मृदु बाता।
नाथ दसानन कर मैं भ्राता। निसिचर-बंस-जनम सुरत्राता।
सहज पापप्रिय तामस देहा। जथा उलूकहिं तम पर नेहा।

दो०—श्रवन सुजसु सुनि आयेउँ प्रभु भंजन भवभीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर ॥४७॥

चौ०-अस कहि करत दंडवत देखा। तुरत उठे प्रभु हरष बिसेखा।
दीन वचन सुनि प्रभु मन भावा। भुज बिसाल गहि हृदय लगावा।
अनुजसहित मिलि ढिग बैठारी। बोले बचन भगत-भय-हारी।
कहु लंकेस सहित परिवारा। कुसल कुठाहर बास तुम्हारा।
खलमंडली बसहु दिनु राती। सखा धर्म निबहै केहि भाँती।
मैं जानौं तुम्हारि सब रीती। अति नयनिपुन न भाव अनीती।
बरु भल बास नरक कर ताता। दुष्ट संग जनि देइ बिधाता।
अब पद देखि कुसल रघुराया। जौ तुम्ह कीन्हि जानि जन दाया।

दो०—तब लगि कुसल न जीव कहुँ सपनेहुँ मन बिश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुँ सोकधाम तजि काम ॥४८॥

चौ०-तब लगि हृदय बसत खल नाना। लोभ मोह मत्सर मद माना।
जब लगि उर न बसत रघुनाथा। धरे चापसायक कटि भाथा।
ममता तरुन तमी अँधियारी। राग द्वेष उलूक सुखकारी।
तब लगि बसत जीव मन माहीं। जब लगि प्रभु-प्रताप-रबि नाहीं।
अब मैं कुसल मिटे भय भारे। देखि राम पद कमल तुम्हारे।
तुम्ह कृपाल जा पर अनुकूला। ताहि न ब्याप त्रिबिध भवसूला।
मैं निसिचर अति-अधम-सुभाऊ। सुभ आचरनु कीन्ह नहिं काऊ।
जासु रूप मुनि ध्यान न आवा। तेहि प्रभु हरषि हृदय मोहि लावा।

दो०—अहोभाग्य मम अमित अति राम कृपा-सुख-पुंज।
देखेउँ नयन बिरंचि-सिव-सेव्य जुगल-पद-कंज ॥ ४९ ॥

चौ०-सुनहु सखा निज कहौं सुभाऊ। जान भुसुंडि संभु गिरिजाऊ।

दो०—कहेहु मुखागर मूढ़ सन मम संदेस उदार।
सीता देइ मिलहु न त आवा काल तुम्हार ॥५५॥

चौ०-तुरत नाइ लछिमनपद माथा। चले दूत बरनत गुनगाथा।
कहत रामजसु लंका आए। रावनचरन सीस तिन्ह नाए।
बिहँसि दसानन पूँछी बाता। कहसि न सुक आपनि कुसलाता।
पुनि कहु खबरि बिभीषन केरी। जाहि मृत्यु आई अति नेरी।
करत राजु लंका सठ त्यागी। होइहि जव कर कीट अभागी।
पुनि कहु भालु कीस कटकाई। कठिन कालप्रेरित चलि आई।
जिन्हके जीवन्ह कर रखवारा। भयो मृदुलचित सिंधु बेचारा।
कहु तपसिन्ह कै बात बहोरी। जिन्ह के हृदय त्रास अति मोरी।

दो०—की भइ भेंट कि फिरि गए श्रवन सुजसु सुनि मोर।
कहसि न रिपु-दल-तेज-बल बहुत चकित चित तोर ॥५६॥

चौ०—नाथ कृपा करि पूँछेहु जैसें। मानहु कहा क्रोध तजि तैसें।
मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा। जातहि राम तिलक तेहि सारा।
रावनदूत हमहिं सुनि काना। कपिन्ह बाँधि दीन्हे दुख नाना।
श्रवन नासिका काटै लागे। रामसपथ दीन्हे हम त्यागे।
पूँछेहु नाथ रामकटकाई। बदन कोटि सत बरनि न जाई।
नाना बरन भालु-कपि-धारी। बिकटानन बिसाल भयकारी।
जेहि पुर दहेउ हतेउ सुत तोरा। सकल कपिन्ह महँ तेहि बलु थोरा।
अमित नाम भट कठिन कराला। अमित-नाग-बल बिपुल बिसाला।

दो०—द्विबिद मयंद नील नल अंगदादि बिकटासि।
दधिमुख केहरि कुमुद गव जामवंत बलरासि ॥५७॥

चौ०-ए कपि सब सुग्रीवँसमाना। इन्ह सम कोटिन्ह गनै को नाना।
रामकृपा अतुलित-बल तिन्हहीं। तृनसमान त्रैलोकहिं गनहीं।
अस मैं श्रवन सुना दसकंधर। पदुम अठारह जूथप बंदर।
नाथ कटक महँ सो कपि नाहीं। जो न तुम्हहिं जीतै रन माहीं।
परम क्रोध मीजहिं सब हाथा। आयसु पै न देहिं रघुनाथा।

पुनि सर्वग्य सर्व-उर-बासी। सर्वरूप सबरहित उदासी।
बोले बचन नीति-प्रति-पालक। कारनमनुज दनुज-कुल-घालक।
सुनु कपीस लंकापति बीरा। केहि बिधि तरिअ जलधि गंभीरा।
संकुल मकर उरग झष जाती। अति अगाध दुस्तर सब भाँती।
कह लंकेस सुनहु रघुनायक। कोटि-सिंधु-सोषक तव सायक।
जद्यपि तदपि नीति असि गाई। बिनय करिअ सागर सन जाई।

दो०—प्रभु तुम्हार कुलगुर जलधि कहिहि उपाय बिचारि।
बिनु प्रयास सागर तरिहि सकल भालु-कपि-धारि ॥ ५३ ॥

चौ०-सखा कही तुम्ह नीकि उपाई। करिअ दैव जौं होइ सहाई।
मंत्र न यह लछिमन मन भावा। रामबचन सुनि अति दुख पावा।
नाथ दैव कर कवन भरोसा। सोखिअ सिंधु करिअ मन रोसा।
कादर मन कहुँ एक अधारा। दैव दैव आलसी पुकारा।
सुनत बिहँसि बोले रघुबीरा। ऐसेइ करब धरहु मन धीरा।
अस कहि प्रभु अनुजहि समुझाई। सिंधु समीप गए रघुराई।
प्रथम प्रनाम कीन्ह सिरु नाई। बैठे पुनि तट दर्भ डसाई।
जबहिं बिभीषन प्रभु पहिं आए। पाछे रावन दूत पठाए।

दो०—सकल चरित तिन्ह देखे धरे कपट कपिदेह।
प्रभुगुन हृदय सराहहिं सरनागत पर नेह ॥५४॥

चौ०-प्रगट बखानहिं रामसुभाऊ। अति सप्रेम गा बिसरि दुराऊ।
रिपु के दूत कपिन्ह तब जाने। सकल बाँधि कपीस पहिं आने।
कह सुग्रीव सुनहु सब बानर। अंगभंग करि पठवहु निसिचर।
सुनि सुग्रीवबचन कपि धाए। बाँधि कटक चहुँ पास फिराए।
बहु प्रकार मारन कपि लागे। दीन पुकारत तदपि न त्यागे।
जो हमार हर नासा काना। तेहि कोसलाधीस कै आना।
सुनि लछिमन सब निकट बोलाए। दया लागि हँसि तुरत छोड़ाए।
रावन कर दीन्हेहु यह पाती। लछिमनबचन बाँचु कुलघाती।

नाइ चरन सिरु चला सो तहाँ। कृपासिंधु रघुनायक जहाँ॥
करि प्रनामु निज कथा सुनाई। रामकृपा आपनि गति पाई॥
रिष अगस्ति के श्राप भवानी। राच्छस भयेउ रहा मुनि ग्यानी॥
बंदि राम पद बारहिं बारा। मुनि निज आश्रम कहुँ पगु धारा॥

दो०—विनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति॥६१॥

चौ०-लछिमन बानसरासन आनू। सोखौं बारिधि बिसिखकृसानू॥
सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीती। सहज कृपिन सन सुंदर नीती॥
ममतारत सन ग्यान कहानी। अति लोभी सन बिरति बखानी॥
क्रोधिहिं सम कामिहिं हरिकथा। ऊसर बीज बएँ फल जथा॥
अस कहि रघुपति चाप चढ़ावा। यह मत लछिमन के मन भावा॥
संधानेउ प्रभु बिसिख कराला। उठी उदधि उर अंतर ज्वाला॥
मकर-उरग-झक-गन अकुलाने। जरत जंतु जलनिधि जब जाने॥
कनकथार भरि मनिगन नाना। विप्ररूप आयो तजि माना॥

दो०—काटेहि पइ कदली फरै कोटि जतन कोउ सींच।
विनय न मान खगेस सुनु डाँटेहि पै नव नीच॥ ६२॥

चौ०-सभय सिंधु गहि पद प्रभु केरे। छमहु नाथ सब अवगुन मेरे॥
गगन समीर अनल जल धरनी। इन्ह के नाथ सहज जड़ करनी॥
तव प्रेरित माया उपजाए। सृष्टि हेतु सब ग्रंथन्हि गाए॥
प्रभुआयसु जेहि कहँ जस अहई। सो तेहि भाँति रहे सुख लहई॥
प्रभु भल कीन्ह मोहि सिख दीन्ही। मरजादा पुनि तुम्हरिअ कीन्ही॥
ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी॥
प्रभुप्रताप मैं जाब सुखाई। उतरिहि कटकु न मोरि बड़ाई॥
प्रभु-आग्या अपेल श्रुति गाई। करौं सो बेगि जो तुम्हहिं सुहाई॥

दो०—सुनत विनीत वचन अति कह कृपाल मुसुकाइ।
जेहि विधि उतरै कपिकटकु तात सो कहहु उपाइ॥६३॥

सोषहिं सिंधु सहित झषब्याला। पूरहिं न त भरि कुधर बिसाला।
मर्दि गर्द मिलवहिं दससीसा। ऐसेइ बचन कहहिं सब कीसा।
गर्जहिं तर्जहिं सहज असंका। मानहु ग्रसन चहत हहिं लंका।
दो०—सहज सूर कपि भालु सब पुनि सिर पर प्रभु राम।
रावन काल कोटि कहुँ जीति सकहिं संग्राम ॥५८॥
चौ०-राम-तेज-बल-बुधि-बिपुलाई। सेष सहस सत सकहिं न गाई।
सक सर एक सोखि सत सागर। तब भ्रातहिं पूछेउ नय-नागर।
तासु बचन सुनि सागर पाहीं। माँगत पंथ कृपा मन माहीं।
सुनत बचन बिहँसा दससीसा। जौं असि मति सहायकृत कीसा।
सहज भीरु कर बचन दृढ़ाई। सागर सन ठानी मचलाई।
मूढ़ मृषा का करसि बड़ाई। रिपु-बल-बुद्धि-थाह मैं पाई।
सचिव सभीत बिभीषनु जा कें। बिजय बिभूति कहाँ लगि ता कें।
सुनि खलबचन दूतरिसि बाढ़ी। समय बिचारि पत्रिका काढ़ी।
रामानुज दीन्ही यह पाती। नाथ बँचाइ जुड़ावहु छाती।
बिहँसि बाम कर लीन्ही रावन। सचिव बोलि सठ लाग बचावन।
दो०—बातन्ह मनहिं रिझाइ सठ जनि घालेसि कुल खीस।
रामबिरोध न उबरसि सरन बिष्णु अज ईस ॥५९॥
की तजि मान अनुज इव प्रभु-पद-पंकज-भृंग।
होहि कि रामसरानल खल कुलसहित पतंग ॥ ६० ॥
चौ०-सुनत सभय मन मुख मुसुकाई। कहत दसानन सबहिं सुनाई।
भूमि परा कर गहत अकासा। लघु तापस कर बागबिलासा।
कह सुक नाथ सत्य सब बानी। समुझहु छाँड़ि प्रकृत अभिमानी।
सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा। नाथ राम सन तजहु बिरोधा।
अति कोमल रघुबीर-सुभाऊ। जद्यपि अखिल लोक कर राऊ।
मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करिहीं। उर अपराध न एकौ धरिहीं।
जनकसुता रघुनाथहि दीजै। एतना कहा मोर प्रभु कीजै।
जब तेहि कहा देन बैदेही। चरन-प्रहार कीन्ह सठ तेही।

चौ०-नाथ नील नल कपि दोउ भाई। लरिकाई रिषिआसिष पाई।
तिन्ह के परस किए गिरि भारे। तरिहहिं जलधि प्रताप तुम्हारे।
मैं पुनि उर धरि प्रभु प्रभुताई। करिहौं बलअनुमान सहाई।
एहि बिधि नाथ पयोधि बँधाइअ। जेहि यह सुजसु लोक तिहुँ गाइअ।
एहि सर मम उत्तर-तट-बासी। हतहु नाथ खल नर अघरासी।
सुनि कृपालु सागर-मन-पीरा। तुरतहि हरी राम रनधीरा।
देखि राम-बल-पौरुष भारी। हरषि पयोनिधि भयेउ सुखारी।
सकल चरित कहि प्रभुहि सुनावा। चरन बंदि पाथोधि सिधावा।

छंद—निज भवन गवनेउ सिंधु श्रीरघुपतिहि यह मत भायेऊ।
यह चरित कलि-मल-हर जथामति दास तुलसी गायेऊ॥
सुखभवन संसयसमन दमनबिषाद रघुपति-गुन-गना।
तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहि संतत सठ मना॥

दो०—सकल-सु-मंगल-दायक रघुनायक-गुन-गान।
सादर सुनहिं ते तरहिं भव-सिंधु बिना जलजान॥ ६४॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुष-
विध्वंसने ज्ञानसम्पादनो नाम
पञ्चमः सोपानः समाप्तः॥



षष्ठ सोपान

(लंका कांड)

श्लोकाः

रामं कामारिसेव्यं भवभयहरणं कालमत्तेभसिंहं
योगीन्द्रज्ञानगम्यं गुणनिधिमजितं निर्गुणं निर्विकारम्।
मायातीतं सुरेशं खलवधनिरतं ब्रह्मवृन्दैकदेवं
वन्दे कन्दावदातं सरसिजनयनं देवमुर्वीशरूपम्॥ १॥

शङ्खेन्द्वाभमतीवसुन्दरतनुं शार्दूलचर्माम्बरं
कालव्यालकरालभूषणधरं गङ्गाशशाङ्कप्रियम्।
काशीशं कलिकल्मषौघशमनं कल्याणकल्पद्रुमं
नौमीड्यं गिरिजापतिं गुणनिधिं कन्दर्पहं शङ्करम्॥ २॥

जो शिवजी से सेव्यमान, संसार के भय के हरनेवाले, कालरूपी मत्त हाथी के लिये सिंह, योगींद्रों को ज्ञानद्वारा प्राप्त, गुण के निधि, अजित, निर्गुण, निर्विकार, माया से अतीत (रहित), देवताओं के ईश, खलों के मारने में निरत, ब्राह्मण वृंद के पूज्य देवता, मेघ के समान सुंदर, कमलनेत्र और पृथ्वीपति हैं, उन श्रीरामचंद्र भगवान की मैं वन्दना करता हूँ॥ १॥

शंख और चंद्रमा के समान द्युतिवाले, अति सुंदर शरीरधारी, शार्दूल का चर्म ओढ़े, भयानक काले सर्पों का भूषण पहिरे, गंगा और चंद्रमा से प्रीति रखनेवाले, काशीपति, कलियुग के पापों के हरनेवाले, कल्याण के कल्पवृक्ष, गुणनिधि, कामदेव को मारनेवाले और गिरिजापति महादेव को मैं नमस्कार करता हूँ॥ २॥

यो ददाति सतां शम्भुः कैवल्यमपि दुर्लभम्।
खलानां दण्डकृद्योऽसौ शङ्करः शं तनोतु माम्॥ ३॥

दो०—लव निमेष परमानु जुग बरष कलप सर चंड।
भजसि न मन तेहि राम कहँ काल जासु कोदंड॥ १॥

सो०—सिंधुबचन सुनि राम सचिव बोलि प्रभु अस कहेउ।
अब बिलंबु केहि काम करहु सेतु उतरै कटकु॥ २॥
सुनहु भानु-कुल-केतु जामवंत कर जोरि कह।
नाथ नाम तव सेतु नर चढ़ि भवसागर तरहिं॥ ३॥

चौ०-यह लघु जलधि तरत कति बारा। अस सुनि पुनि कह पवनकुमारा।
प्रभुप्रताप बड़वानल भारी। सोखेउ प्रथम पयोनिधि-बारी।
तव रिपु-नारि-रुदन-जल-धारा। भरेउ बहोरि भयेउ तेहि खारा।
सुनि अति उक्ति पवनसुत केरी। हरषे कपि रघुपति-तन हेरी।
जामवंत बोले दोउ भाई। नल नीलहिं सब कथा सुनाई।
रामप्रताप सुमिरि मन माहीं। करहु सेतु प्रयास कछु नाहीं।
बोलि लिए कपिनिकर बहोरी। सकल सुनहु बिनती कछु मोरी।
राम-चरन-पंकज उर धरहू। कौतुक एक भालु कपि करहू।
धावहु मरकट बिकट बरूथा। आनहु बिटप गिरिन्ह के जूथा।
सुनि कपि भालु चले करि हू हा। जय रघुबीर प्रतापसमूहा।

दो०—अति उतंग तरुसैलगन लीलहिं लेहिं उठाइ।
आनि देहिं नल नीलहि रचहिं ते सेतु बनाइ॥ ४॥

चौ०-सैल बिसाल आनि कपि देहीं। कंदुक इव नल नील ते लेहीं।
देखि सेतु अति सुंदर रचना। बिहँसि कृपानिधि बोले बचना।
परम रम्य उत्तम यह धरनी। महिमा अमित जाइ नहिं बरनी।

जो शिव सदा दुर्लभ मोक्ष को भी दे देते हैं वह सज्जनों को दंड देनेवाले शंकर मेरा कल्याण करें॥ ३॥

षष्ठ सोपान

(लंका कांड)

श्लोकाः

रामं कामारिसेव्यं भवभयहरणं कालमत्तेभसिंहं
योगीन्द्रज्ञानगम्यं गुणनिधिमजितं निर्गुणं निर्विकारम्।
मायातीतं सुरेशं खलवधनिरतं ब्रह्मवृन्दैकदेवं
वन्दे कन्दावदातं सरसिजनयनं देवमुर्वीशरूपम् ॥ १ ॥

शङ्खेन्द्वाभमतीवसुन्दरतनुं शार्दूलचर्माम्बरं
कालव्यालकरालभूषणधरं गङ्गाशशाङ्कप्रियम्।
काशीशं कलिकल्मषौघशमनं कल्याणकल्पद्रुमं
नौमीड्यं गिरिजापतिं गुणनिधिं कन्दर्पहं शङ्करम् ॥ २ ॥

जो शिवजी से सेव्यमान, संसार के भय के हरनेवाले, कालरूपी मत्त हाथी के लिये सिंह, योगींद्रों को ज्ञानद्वारा प्राप्त, गुण के निधि, अजित, निर्गुण, निर्विकार, माया से अतीत (रहित), देवताओं के ईश, खलों के मारने में निरत, ब्राह्मण वृंद के पूज्य देवता, मेघ के समान सुंदर, कमलनेत्र और पृथ्वीपति हैं, उन श्रीरामचंद्र भगवान की मैं वन्दना करता हूँ ॥ १ ॥

शंख और चंद्रमा के समान द्युतिवाले, अति सुंदर शरीरधारी, शार्दूल का चर्म ओढ़े, भयानक काले सर्पों का भूषण पहिरे, गंगा और चंद्रमा से प्रीति रखनेवाले, काशीपति, कलियुग के पापों के हरनेवाले, कल्याण के कल्पवृक्ष, गुणनिधि, कामदेव को मारनेवाले और गिरिजापति महादेव को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥

दो०—सेतुबंध भइ भीर अति कपि नभपंथ उड़ाहिं।
अपर जलचरन्हिँ ऊपर चढ़ि चढ़ि पारहिं जाहिं ॥७॥

चौ०-अस कौतुक बिलोकि दोउ भाई। बिहँसि चले कृपाल रघुराई।
सेनसहित उतरे रघुबीरा। कहि न जाइ कपि-जूथप-भीरा।
सिंधुपार प्रभु डेरा कीन्हा। सकल कपिन्ह कहुँ आयसु दीन्हा।
खाहु जाइ फल मूल सुहाए। सुनत भालु कपि जहँ तहँ धाए।
सब तरु फरे राम हित लागी। रितु अनरितु अकालगति त्यागी।
खाहिं मधुर फल बिटप हलावहिं। लंका सनमुख सिखर चलावहिं।
जहँ कहुँ फिरत निसाचर पावहिं। घेरि सकल बहु नाच नचावहिं।
दसनन्हि काटि नासिका काना। कहि प्रभु सुजसु देहिं तब जाना।
जिन्ह कर नासा कान निपाता। तिन्ह रावनहिं कही सब बाता।
सुनत श्रवन बारिधि-बंधाना। दसमुख बोलि उठा अकुलाना।

दो०—बाँधे बननिधि नीरनिधि जलधि सिंधु बारीस।
सत्य तोयनिधि कंपती उदधि पयोधि नदीस ॥८॥

चौ०-ब्याकुलता निज समुझि बहोरी। बिहँसि चला गृह करि भय भोरी।
मंदोदरी सुनेउ प्रभु आयो। कौतुकही पाथोधि बँधायो।
कर गहि पतिहि भवनु निज आनी। बोली परम मनोहर बानी।
चरन नाइ सिरु अँचलु रोपा। सुनहु बचन पिय परिहरि कोपा।
नाथ बैर कीजै ताही सों। बुधि बल सकिअ जीति जाही सों।
तुम्हहिं रघुपतिहिं अंतर कैसा। खलु खद्योत दिनकरहिं जैसा।
अति बल मधुकैटभ जेहि मारे। महाबीर दितिसुत संहारे।
जेहि बलि बाँधि सहसभुज मारा। सोइ अवतरेउ हरन महिभारा।
तासु बिरोध न कीजिअ नाथा। काल करम जिव जा के हाथा।

दो०—रामहिं सौंपहु जानकी नाइ कमल पद माथ।
सुत कहुँ राजु समर्पि बन जाइ भजिअ रघुनाथ ॥ ९ ॥

चौ०-नाथ दीनदयाल रघुराई। बाघौ सनमुख गए न खाई।
चाहिअ करन सो सबु करि बीते। तुम्ह सुर असुर चराचर जीते।

करिहौं इहाँ संभुथापना। मोरे हृदय परम कलपना।
सुनि कपीस बहु दूत पठाए। मुनिवर सकल बोलि लै आए।
लिंग थापि विधिवत करि पूजा। सिवसमान प्रिय मोहि न दूजा।
सिवद्रोही मम भगत कहावा। सो नर सपनेहु मोहि न पावा।
संकरविमुख भगति चह मोरी। सो नारकी मूढ़ मति थोरी।

दो०—संकरप्रिय मम द्रोही सिवद्रोही मम दास।
ते नर करहिं कलप भरि घोरनरक महुँ वास ॥५॥

चौ०-जो रामेस्वर दरसन करिहहिं। ते तनु तजि हरिलोक सिधरिहहिं।
जो गंगाजल आनि चढ़ाइहि। सो साजुज्य मुक्ति नर पाइहि।
होइ अकाम जो छल तजि सेइहि। भगति मोरि तेहि संकर देइहि।
मम कृत सेतु जो दरसन करिही। सो बिनु श्रम भवसागर तरिही।
रामवचन सब के जिय भाए। मुनिवर निज निज आश्रम आए।
गिरिजा रघुपति कै यह रीती। संतत करहिं प्रनत पर प्रीती।
बाँधेउ सेतु नील नल नागर। रामकृपा जसु भयेउ उजागर।
बूड़हिं आनहिं बोरहिं जेई। भए उपल बोहित सम तेई।
महिमा यह न जलधि कै बरनी। पाहन गुन न कपिन्ह कै करनी।

दो०—श्रीरघुबीर-प्रताप तें सिंधु तरे पाषान।
ते मतिमंद जे राम तजि भजहिं जाइ प्रभु आन ॥६॥

चौ०-बाँधि सेतु अति सुदृढ़ बनावा। देखि कृपानिधि के मन भावा।
चली सेन कछु बरनि न जाई। गरजहिं मरकट-भट-समुदाई।
सेतु-बंध ढिग चढ़ि रघुराई। चितव कृपाल सिंधुबहुताई।
देखन कहँ प्रभु करुनाकंदा। प्रगट भए सब जल-चर-वृंदा।
नाना मकर नक्र झख ब्याला। सत-जोजन-तनु परम बिसाला।
ऐसेउ एक तिन्हहि जे खाहीं। एकन के डर तेपि डेराहीं।
प्रभुहि बिलोकहिं टरहिं न टारे। मन हरषित सब भए सुखारे।
तिन्ह की ओट न देखिअ बारी। मगन भए हरिरूप निहारी।
चला कटकु कछु बरनि न जाई। को कहि सक कपि-दल-बिपुलाई।

बचन परमहित सुनत कठोरे। सुनहिं जे कहहिं ते नर प्रभु थोरे।
प्रथम बसीठ पठव सुनु नीती। सीता देइ करहु पुनि प्रीती।

दो०—नारि पाइ फिरि जाहिं जौ तौ न बढ़ाइअ रारि।
नाहिं त सनमुख समर महि तात करिअ हठि मारि ॥१२॥

चौ०-यह मत जौ मानहु प्रभु मोरा। उभय प्रकार सुजसु जग तोरा।
सुत सन कह दसकंठ रिसाई। असि मति सठ केहि तोहि सिखाई।
अबहीं ते उर संसय होई। बेनुमूल सुत भयेउ घमोई।
सुनि पितुगिरा परुष अति घोरा। चला भवन कहि बचन कठोरा।
हितमत तोहि न लागत कैसे। कालबिबस कहुँ भेषज जैसे।
संध्या समय जानि दससीसा। भवन चलेउ निरखत भुजबीसा।
लंका सिखर उपर आगारा। अति बिचित्र तहँ होइ अखारा।
बैठ जाइ तेहि मंदिर रावन। लागे किन्नर गुनगन गावन।
बाजहिं ताल पखाउज बीना। नृत्य करहिं अपछरा प्रबीना।

दो०—सुनासीर-सत-सरिस सोइ संतत करै बिलास।
परम-प्रबल रिपु सीस पर तदपि न कछु मन त्रास ॥१३॥

चौ०-इहाँ सुबेल सैल रघुबीरा। उतरे सेन सहित अति भीरा।
सैलसृंग एक सुंदर देखी। अति उतंग सम सुभ्र बिसेखी।
तहँ तरु-किसलय-सुमन सुहाए। लछिमन रचि निज हाथ डसाए।
ता पर रुचिर मृदुल मृगछाला। तेहि आसन आसीन कृपाला।
प्रभु कृत सीस कपीसउछंगा। बाम दहिन दिसि चाप निषंगा।
दुहुँ करकमल सुधारत बाना। कह लंकेस मंत्र लगि काना।
बड़भागी अंगद हनुमाना। चरन कमल चाँपत बिधि नाना।
प्रभु पाछे लछिमन बीरासन। कटि निषंग कर बान सरासन।

दो०—एहि बिधि करुनासील गुन-धाम राम आसीन।
ते नर धन्य जे ध्यान एहि रहत सदा लयलीन ॥ १४ ॥
पूरब दिसा बिलोकि प्रभु देखा उदित मयंक।
कहत सबहिं देखहु ससिहि मृग-पति-सरिस असंक ॥ १५ ॥

संत कहहिं असि नीति दसानन। चौथे पन जाइहि नृप कानन।
तासु भजन कीजिअ तहँ भरता। जो करता पालक संहरता।
सोइ रघुबीर प्रनतअनुरागी। भजहु नाथ ममता सब त्यागी।
मुनिवर जतन करहिं जेहि लागी। भूप राजु तजि होहिं बिरागी।
सोइ कोसलाधीस रघुराया। आए करन तोहि पर दाया।
जो पिय मानहु मोर सिखावन। होइ सुजसु तिहुँ पुर अति पावन।

दो०—अस कहि लोचन बारि भरि गहि पद कंपित गात।
नाथ भजहु रघुबीर-पद अचल होइ अहिवात॥ १०॥

चौ०-तब रावन मयसुता उठाई। कहै लाग खल निज प्रभुताई।
सुनु तैं प्रिया बृथा भय माना। जग जोधा को मोहि समाना।
बरुन कुबेर पवन जम काला। भुजबल जितेउँ सकल दिगपाला।
देव दनुज नर सब बस मोरें। कवन हेतु उपजा भय तोरें।
नाना बिधि तेहि कहेसि बुझाई। सभा बहोरि बैठ सो जाई।
मंदोदरी हृदय अस जाना। कालबिबस उपजा अभिमाना।
सभा आइ मंत्रिन्ह तेहि बूझा। करब कवनि बिधि रिपु सैं जूझा।
कहहिं सचिव सुनु निसिचर-नाहा। बार बार प्रभु पूँछहु काहा।
कहहु कवन भय करिअ बिचारा। नर कपि भालु अहार हमारा।

दो०—बचन सबहि के श्रवन सुनि कह प्रहस्त कर जोरि।
नीतिविरोध न करिअ प्रभु मंत्रिन्ह मति अति थोरि॥ ११॥

चौ०-कहहिं सचिव सब ठकुरसोहाती। नाथ न पूर आव एहि भाँती।
बारिधि नाँघि एक कपि आवा। तासु चरित मन महुँ सब गावा।
छुधा न रही तुम्हहि तब काहू। जारत नगर न कस धरि खाहू।
सुनत नीक आगे दुख पावा। सचिवन्ह अस मत प्रभुहि सुनावा।
जेहि बारीस बँधायेउ हेला। उतरेउ सेन समेत सुबेला।
सो भनु मनुज खाव हम भाई। बचन कहहिं सब गाल फुलाई।
तात बचन मम सुनु अति आदर। जनि मन गुनहु मोहि करि कादर।
प्रियबानी जे सुनहिं जे कहहीं। ऐसे नर निकाय जग अहहीं।

सोचहिं सब निज हृदय मँझारी। असगुन भयेउ भयंकर भारी।
दसमुख देखि सभा भय पाई। बिहँसि बचन कह जुगुति बनाई।
सिरौ गिरे संतत सुभ जाही। मुकुट परे कस असगुन ताही।
सयन करहु निज निज गृह जाई। गवने भवन सकल सिर नाई।
मंदोदरी सोच उर बसेऊ। जब तें श्रवनपूर महि खसेऊ।
सजल नयन कह जुग कर जोरी। सुनहु प्रानपति बिनती मोरी।
कंत रामबिरोध परिहरहू। जानि मनुज जनि मन हठ धरहू।
दो०—बिस्वरूप रघु-बंस-मनि करहु बचनबिस्वासु।
लोककल्पना बेद कर अंग अंग प्रति जासु॥ २०॥
चौ०-पद पाताल सीस अजधामा। अपर लोक अँग अँग बिश्रामा।
भृकुटि बिलास भयंकर काला। नयन दिवाकर कच घनमाला।
जासु घ्रान अस्विनीकुमारा। निसि अरु दिवस निमेष अपारा।
श्रवन दिसा दस बेद बखानी। मारुत स्वास निगम निज बानी।
अधर लोभ जम दसन कराला। माया हास बाहु दिगपाला।
आनन अनल अंबुपति जीहा। उतपति पालन प्रलय समीहा।
रोमराजि अष्टादस भारा। अस्थि सैल सरिता नस जारा।
उदर उदधि अधगो जातना। जगमय प्रभु का बहु कलपना।
दो०—अहंकार सिव बुद्धि अज मन ससि चित्त महान।
मनुज बास चर-अचर-मय रूप राम भगवान॥ २१॥
अस बिचारि सुनु प्रानपति प्रभु सन बैर बिहाइ।
प्रीति करहु रघु-बीर-पद मम अहिवात न जाइ*॥२२॥
चौ०-बिहँसा नारिबचन सुनि काना। अहो मोहमहिमा बलवाना।
नारिसुभाउ सत्य कबि कहहीं। अवगुन आठ सदा उर रहहीं।
साहस, अनृत, चपलता, माया। भय, अविवेक, असौच, अदाया।
रिपु कर रूप सकल तैं गावा। अति बिसाल भय मोहि सुनावा।

* काशि० और हस्त० प्रति में यह दोहा नहीं है। पर सदल मिश्र की प्रति में है।

चौ०-पूरब दिसि गिरि-गुहा-निवासी। परम-प्रताप-तेज-बल-रासी।
मत्त-नाग-तम-कुंभ-विदारी। ससि केसरी गगन-बन-चारी।
बिथुरे नभ मुकुताहल तारा। निसि सुंदरी केर सिंगारा।
कह प्रभु ससि महँ मेचकताई। कहहु काह निज निजमति भाई।
कह सुग्रीवँ सुनहु रघुराई। ससि महँ प्रगट भूमि कै झाँई।
मारेहु राहु ससिहि कह कोई। उर महँ परी स्यामता सोई।
कोउ कह जब विधि रतिमुख कीन्हा। सारभाग ससि कर हरि लीन्हा।
छिद्र सो प्रगट इंदुउर माहीं। तेहि मग देखिअ नभ परिछाहीं।
प्रभु कह गरल बंधु ससि केरा। अति प्रिय निज उर दीन्ह बसेरा।
बिषसंयुत करनिकर पसारी। जारत बिरहवंत नरनारी।

दो०—कह मारुतसुत सुनहु प्रभु ससि तुम्हार निज दास।
तव मूरति बिधुउर बसति सोइ स्यामता अभास॥ १६॥
पवनतनय के वचन सुनि बिहँसे राम सुजान।
दच्छिन दिस अवलोकि पुनि बोले कृपानिधान॥ १७॥

चौ०-देखु बिभीषन दच्छिन आसा। घन घमंड दामिनी बिलासा।
मधुर मधुर गरजै घन घोरा। होइ वृष्टि जनु उपल कठोरा।
कहँ बिभीषन सुनहु कृपाला। होइ न तड़ित न बारिदमाला।
लंकासिखर रुचिर आगारा। तहँ दसकंधर देख अखारा।
छत्र मेघडंबर सिर धारी। सोइ जनु जलदघटा अति कारी।
मंदोदरी - श्रवन - ताटंका। सोइ प्रभु जनु दामिनी दमंका।
बाजहिं ताल मृदंग अनूपा। सोइ रव सरस सुनहु सुरभूपा।
प्रभु मुसुकान समुझि अभिमाना। चाप चढ़ाइ बान संधाना।

दो०—छत्र मुकुट ताटंक तब हते एक ही बान।
सब के देखत महि परे मरम न कोऊ जान॥ १८॥
अस कौतुक करि रामसर प्रविसेउ आइ निषंग।
रावन सभा ससंक सब देखि महा-रस-भंग॥ १९॥

चौ०-कंप न भूमि न मरुत बिसेखा। अस्त्र सस्त्र कछु नयन न देखा।

भयेउ कोलाहल नगर मँझारी। आवा कपि लंका जेहि जारी।
अब धौं काह करिहि करतारा। अति सभीत सब करहिं विचारा।
बिनु पूँछे मगु देहिं देखाई। जेहि विलोक सोइ जाइ सुखाई।
दो०—गयेउ सभादरबार तब सुमिरि राम-पद-कंज।
सिंघठवनि इत उत चितव धीर-बीर-बल-पुंज ॥२७॥
चौ०-तुरित निसाचर एक पठावा। समाचार रावनहिं जनावा।
सुनत बिहँसि बोला दससीसा। आनहु बोलि कहाँ कर कीसा।
आयसु पाइ दूत बहु धाए। कपिकुंजरहि बोलि लै आए।
अंगद दीख दसानन वैसा। सहित प्रान कज्जलगिरि जैसा।
भुजा बिटप सिर शृंग समाना। रोमावली लता जनु जाना।
मुख नासिका नयन अरु काना। गिरिकंदरा खोह अनुमाना।
गयेउ सभा मन नेकु न मुरा। बालितनय अतिबल बाँकुरा।
उठे सभासद कपि कहँ देखी। रावनउर भा क्रोध विसेखी।
दो०—जथा मत्त गज जूथ महँ पंचानन चलि जाइ।
रामप्रताप सँभारि उर बैठ सभा सिरु नाइ ॥२८॥
चौ०-कह दसकंठ कवन तैं बंदर। मैं रघु-बीर-दूत दसकंधर।
मम जनकहि तोहि रही मिताई। तब हितकारन आयेउँ भाई।
उत्तम कुल पुलस्ति कर नाती। सिव बिरंचि पूजेहु बहु भाँती।
बर पायेहु कीन्हेहु सब काजा। जीतेहु लोकपाल सब राजा।
नृपअभिमान मोहवस किंबा। हरि आनेहु सीता जगदंबा।
अब सुभ कहा सुनहु तुम्ह मोरा। सब अपराध छमिहि प्रभु तोरा।
दसन गहहु तृन, कंठ कुठारी। परिजनसहित संग निज नारी।
सादर जनकसुता करि आगे। एहि बिधि चलहु सकल भय त्यागे।
दो०—प्रनतपाल* रघु-बंस-मनि त्राहि त्राहि अब मोहि।
सुनतहि आरत बचन† प्रभु अभय करहिंगे तोहि ॥२९॥

* पाठा०-बिश्वरूप। † पाठा०-आरत गिरा सुनत।

सो सब प्रिया सहज बस मोरे। समुझि परा प्रसाद अब तोरे।
जानेउँ प्रिया तोरि चतुराई। एहि मिस कहहि मोरि प्रभुताई।
तव बतकही गूढ़ मृगलोचनि। समुझत सुखद सुनत भयमोचनि।
मंदोदरि मन महुँ अस ठयेऊ। पियहि कालबस मतिभ्रम भयेऊ।

दो०—बहु बिधि जल्पसि सकल निसि प्रात भए दसकंध।
सहज असंक सु-लंक-पति सभा गयेउ मदअंध ॥२३॥

सो०—फूलै फरै न बेत जदपि सुधा बरषहिं जलद।
मूरखहृदय न चेत जौं गुर मिलहिं बिरंचि सत ॥२४॥

चौ०–इहाँ प्रात जागे रघुराई। पूछा मत सब सचिव बोलाई।
कहहु बेगि का करिअ उपाई। जामवंत कह पद सिरु नाई।
सुनु सर्वग्य सकल गुनरासी। सत्यसंध प्रभु सब उर वासी।
मंत्र कहौं निज-मति-अनुसारा। दूत पठाइअ बालिकुमारा।
नीक मंत्र सब के मन माना। अंगद सन कह कृपानिधाना।
बालितनय बल-बुधि-गुन-धामा। लंका जाहु तात मम कामा।
बहुत बुझाइ तुम्हहिं का कहऊँ। परम चतुर मैं जानत अहऊँ।
काजु हमार तासु हित होई। रिपु सन करेहु बतकही सोई।

सो०—प्रभुअग्याँ धरि सीस चरन बंदि अंगद उठेउ।
सोइ गुनसागर ईस राम कृपा जा पर करहु ॥२५॥
स्वयंसिद्ध सब काजु नाथ मोहि आदर दियेउ।
अस बिचारि जुबराजु तन पुलकित हरषित हिये ॥२६॥

चौ०–बंदि चरन उर धरि प्रभुताई। अंगद चलेउ सबहिं सिरु नाई।
प्रभुप्रताप उर सहज असंका। रनबाँकुरा बालिसुत बंका।
पुर पैठत रावन कर बेटा। खेलत रहा सो होइ गइ भेंटा।
बातहिं बात करष बढ़ि आई। जुगल अतुल बल पुनि तरुनाई।
तेहि अंगद कहुँ लात उठाई। गहि पद पटकेउ भूमि भवाँई।
निसि-चर-निकर देखि भट भारी। जहँ तहँ चले न सकहिं पुकारी।
एक एक सन मरम न कहहीं। समुझि तासु बध चुप करि रहहीं।

तुम्ह सुग्रीवँ कूलद्रुम दोऊ। अनुज हमार भीरु अति सोऊ।
जामवंत मंत्री अति बूढ़ा। सो कि होइ अब समर-अरूढ़ा।
सिल्पकर्म जानहिं नल नीला। है कपि एक महा-बल-सीला।
आवा प्रथम नगर जेहि जारा। सुनि हँसि बोलेउ बालिकुमारा।
सत्य बचन कहु निसि-चर-नाहा। साँचेहु कीस कीन्ह पुरदाहा।
रावननगरु अलप करि दहई। को अस झूठ सुनै को कहई।
जो अति सुभट सराहेहु रावन। सो सुग्रीवँ केर लघु धावन।
चलइ बहुत सो बीर न होई। पठवा खबरि लेन हम सोई।

दो०—अब जानेउ पुर दहेउ कपि* बिनु प्रभुआयसु पाइ।
फिरि न गयेउ सुग्रीवँ पहिं तेहि भय रहा लुकाइ ॥३३॥
सत्य कहेहु दसकंठ सब मोहि न सुनि कछु कोह।
कोउ न हमरे कटक अस तो सन लरत जो सोह ॥३४॥
प्रीति बिरोध समान सन करिअ नीति असि आहि।
जौं मृगपति बध मेडुकन्हि भल कि कहै कोउ ताहि ॥३५॥
जद्यपि लघुता राम कहुँ तोहि बधें बड़ दोष।
तदपि कठिन दसकंठ सुनु छत्रिजाति कर रोष ॥३६॥
बक्रउक्ति धनु बचन सर हृदय दहेउ रिपु कीस।
प्रति-उत्तर सडसिन्ह मनहुँ काढ़त भट दससीस† ॥३७॥
हँसि बोलेउ दसमौलि तब कपि कर बड़ गुन एक।
जो प्रतिपालै तासु हित करै उपाय अनेक ॥ ३८ ॥

चौ०-धन्य कीस जो निज प्रभु-काजा। जहँ तहँ नाचै परिहरि लाजा।
नाँचि कूदि करि लोग रिझाई। पतिहित करै धर्म-निपुनाई।
अंगद स्वामिभक्त तव जाती। प्रभुगुन कस न कहसि एहि भाँती।
मैं गुनगाहक परम सुजाना। तव कटु रटनि करौं नहिं काना।
कह कपि तव गुनगाहकताई। सत्य पवनसुत मोहि सुनाई।

* छक्कन०—सत्यनगर कपि जारेउ ?
† यह दोहा सदल० में नहीं है।

चौ०-रे कपिपोत न बोल सँभारी। मूढ़ न जानसि मोहि सुरारी।
कहु निज नामु जनक कर भाई। केहि नाते मानिए मिताई।
अंगद नाम बालि कर बेटा। ता सों कबहुँ भई ही * भेंटा।
अंगदबचन सुनत सकुचाना। रहा बालि बानर मैं जाना।
अंगद तहीं बालि कर बालक। उपजेहु बंस-अनल कुलघालक।
गर्भ न गयेउ ब्यर्थ तुम्ह जायेहु। निजमुख तापसदूत कहायेहु।
अब कहु कुशल बालि कहँ अहई। बिहँसि बचन तब अंगद कहई।
दिन दस गए बालि पहिं जाई। बूझेहु कुशल सखा उर लाई।
रामबिरोध कुशल जसि होई। सो सब तोहि सुनाइहिं सोई।
सुनु सठ भेद होइ मन ताके। श्री-रघु-बीर हृदय नहिं जाके।

दो०—हम कुलघालक, सत्य तुम्ह कुलपालक दससीस।
अंधउ बहिर न अस कहहिं नयन कान तव बीस॥३०॥

चौ०-सिव-बिरंचि-सुर-मुनि-समुदाई। चाहत जासु चरन – सेवकाई।
तासु दूत होइ हम कुल बोरा। ऐसिहु मति उर बिहरु न तोरा।
सुनि कठोर बानी कपि केरी। कहत दसाननु नयन तरेरी।
खल तव कठिन बचन सब सहऊँ। नीति धर्म मैं जानत अहऊँ।
कह कपि धर्मशीलता तोरी। हमहु सुनी कृत पर-तिय-चोरी।
देखेउ नयन दूत रखवारी। बूड़ि न मरहु धर्म – ब्रत – धारी।
नाक कान बिनु भगिनि निहारी। छमा कीन्ह तुम्ह धर्म बिचारी।
धर्मसीलता तव जग जागी। पावा दरसु हमहुँ बड़भागी।

दो०—जनि जल्पसि जड़ जंतु कपि सठ बिलोकु मम बाहु।
लोक-पाल-बल-बिपुल-ससि-ग्रसन हेतु जिमि राहु॥३१॥
पुनि नभसर मम कर-निकर-कमलन्हि पर करि बास।
सोभत भयेउ मराल इव संभुसहित कैलास॥३२॥

चौ०-तुम्हरे कटक माँझ सुनु अंगद। मो सन भिरिहि कवन जोधा बद।
तब प्रभु नारिबिरह बलहीना। अनुज तासु दुख दुखी मलीना।

* ही=थी।

जासु परसु-सागर-खर-धारा। बूड़े नृप अगनित बहु बारा।
तासु गर्व जेहि देखत भागा। सो नर क्यों दससीस अभागा।
रामु मनुज कस रे सठ बंगा। धन्वी कामु, नदी पुनि गंगा।
पसु सुरधेनु, कलपतरु रूखा। अन्न दान, अरु रस पीयूखा।
वैनतेय खग, अहि सहसानन। चिंतामनि की उपल दसानन।
सुनु मतिमंद! लोक बैकुंठा। लाभु कि रघु-पति-भगति-अकुंठा।

दो०—सेनसहित तव मान मथि बन उजारि पुर जारि।
कस रे सठ हनुमान कपि गयेउ जो तव सुत मारि ॥४१॥

चौ०-सुनु रावन परिहरि चतुराई। भजसि न कृपासिंधु रघुराई।
जौं खल भयेसि राम कर द्रोही। ब्रह्म रुद्र सक राखि न तोही।
मूढ़ मुधा * जनि मारसि गाला। रामबैर होइहि अस हाला।
तव सिरनिकर कपिन्ह के आगें। परिहहिं धरनि रामसर लागें।
ते तव सिर कंदुक इव नाना। खेलिहहिं भालु कीस चौगाना।
जबहिं समर कोपिहिं रघुनायक। छुटिहहिं अति कराल बहु सायक।
तब कि चलिहि अस गाल तुम्हारा। अस बिचारि भजु राम उदारा।
सुनत बचन रावनु परजरा। जरत महानल जनु घृत परा।

दो०—कुंभकरन अस बंधु मम सुत प्रसिद्ध सक्रारि।
मोर पराक्रम सुनेसि नहिं जितेउँ चराचर-झारि ॥४२॥

चौ०-सठ साखामृग जोरि सहाई। बाँधा सिंधु इहै प्रभुताई।
नाँघहिं खग अनेक बारीसा। सूर न होहिं ते सुनु जड़ कीसा।
मम भुज-सागर-बल-जल-पूरा। जहँ बूड़े बहु सुर नर सूरा।
बीस पयोधि अगाध अपारा। को अस बीर जो पाइहि पारा।
दिगपालन्ह मैं नीर भरावा। भूप सुजसु खल मोहि सुनावा।
जौं पै समरसुभट तव नाथा। पुनि पुनि कहसि जासु गुनगाथा।
तौ बसीठ पठवत केहि काजा। रिपु सन प्रीति करत नहिं लाजा।
हर-गिरि-मथन निरखु मम बाहू। पुनि सठ कपि निज प्रभुहि सराहू।

* पुस्तक० सटज०—मृषा।

बन बिधंसि सुत बधि पुर जारा। तदपि न तेहि कछु कृत अपकारा।
सोइ बिचारि तव प्रकृति सुहाई। दसकंधर मैं कीन्हि ढिठाई।
देखेउँ आइ जो कछु कपि भाषा। तुम्हरे लाज, न रोष, न माषा।
जौं असि मति पितु खायेहु कीसा। कहि अस बचन हँसा दससीसा।
पितहि खाइ खातेउँ पुनि तोही। अबही समुझि परा कछु मोही।
बालि-बिमल-जस-भाजन जानी। हतौं न तोहि अधम अभिमानी।
कहु * रावन रावन जग केते। मैं निज स्रवन सुने सुनु जेते।
बलिहि जितन एकु गयेउ पताला। राखा बाँधि सिसुन्ह हयसाला।
खेलहिं बालक मारहिं जाई। दया लागि बलि दीन्ह छोड़ाई।
एकु बहोरि सहसभुज देखा। धाइ धरा जिमि जंतुबिसेखा।
कौतुक लागि भवन लै आवा। सो पुलस्ति मुनि जाइ छोड़ावा।

दो०—एक कहत मोहि सकुच अति रहा बालि की काँख।
तिन्ह महुँ रावन तैं कवन सत्य बदहि तजि माख॥ ३९॥

चौ०-सुनु सठ सोइ रावन बलसीला। हरगिरि जान जासु भुजलीला।
जान उमापति जासु सुराई। पूजेउँ जेहि सिर सुमन चढ़ाई।
सिरसरोज निज करन्हि उतारी। पूजेउँ अमित बार त्रिपुरारी।
भुजबिक्रम जानहिं दिगपाला। सठ अजहूँ जिन्ह के उर साला।
जानहिं दिग्गज उर कठिनाई। जब जब भिरेउँ जाइ बरिआई।
जिन्ह के दसन कराल न फूटे। उर लागत मूलक इव टूटे।
जासु चलत डोलति इमि धरनी। चढ़त मत्त गज जिमि लघु तरनी।
सोइ रावन जगबिदित प्रतापी। सुने न स्रवन अलीकप्रलापी।

दो०—तेहि रावन कहँ लघु कहसि नर कर करसि बखान।
रे कपि बर्बर खर्ब खल अब जाना तव ग्यान †॥ ४०॥

चौ०-सुनि अंगद सकोप कह बानी। बोलु सँभारि अधम अभिमानी।
सहस-बाहु-भुज-गहन अपारा। दहन अनलसम जासु कुठारा।

---

* सदल० काशि० इस्त०-सुनु।

† सदल० इस्त०-तव न जान, अब जान।

कौल कामबस कृपिन विमूढ़ा। अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा।
सदा रोगबस संतत क्रोधी। विष्णुविमुख श्रुति-संत-विरोधी।
तनुपोषक निंदक अघखानी। जीवत सवसम चौदह प्रानी।
अस विचारि खल बधौं न तोही। अब जनि रिस उपजावसि मोही।
सुनि सकोप कह निसिचर-नाथा। अधर दसन दसि मींजत हाथा।
रे कपि अधम मरन अब चहसी। छोटे बदन बात बड़ि कहसी।
कटु जल्पसि जड़ कपि बल जाकें। बल प्रताप बुधि तेज न ताकें।

दो०—अगुन अमान विचारि तेहि दीन्ह पिता बनवास।
सो दुख अरु जुवतीविरहु पुनि निसि दिन मम त्रास॥४६॥
जिन्ह के बल कर गर्व तोहि ऐसे मनुज अनेक।
खाहिं निसाचर दिवस निसि मूढ़ समुझु तजि टेक॥४७॥

चौ०-जब तेहि कीन्ह राम कै निंदा। क्रोधवंत अति भयेउ कपिंदा।
हरि-हर-निंदा सुनै जो काना। होइ पाप गो-घात-समाना।
कटकटान कपिकुंजर भारी। दुहुँ भुजदंड तमकि महि मारी।
डोलत धरनि सभासद खसे। चले भागि भय मारुत ग्रसे।
गिरत दसानन उठेउ सँभारी। भूतल परे मुकुट पट चारी।
कछु तेहि लै निज सिरन्हि सँवारे। कछु अंगद प्रभु पास पवारे।
आवत मुकुट देखि कपि भागे। दिनही लूक परन विधि लागे।
की रावन करि कोप चलाए। कुलिस चारि आवत अति धाए।
कह प्रभु हँसि जनि हृदय डेराहू। लूक न असनि केतु नहिं राहू।
ए किरीट दसकंधर केरे। आवत बालितनय के प्रेरे।

दो०—कूदि गहे कर पवनसुत आनि धरे प्रभु पास।
कौतुक देखहिं भालु कपि दिन-कर-सरिस प्रकास॥४८॥

चौ०-उहाँ कहत दसकंध रिसाई। धरि मारहु कपि भागि न जाई*।

---

* छक्कन में इस चौपाई के स्थान पर यह दोहा है—
दो०—उहाँ सकोप दसानन सब सन कहत रिसाइ।
धरहु कपिहि धरि मारहु सुनि अंगद मुसुकाइ॥

दो०—सूर कवन रावन सरिस स्वकर काटि जेहि सीस।
हुने अनल महुँ बार बहु हरषि साषि गौरीस ॥४३॥
चौ०-जरत बिलोकेउँ जबहि कपाला। बिधि के लिखे अंक निज भाला।
नर के कर आपन बध बाँची। हँसेउँ जानि बिधिगिरा असाँची।
सोउ मन समुझि त्रास नहि मोरें। लिखा बिरंचि जरठमति भोरें।
आन बीरबल सठ मम आगे। पुनि पुनि कहसि लाज पति त्यागे।
कह अंगद सलज्ज जग माहीं। रावन तोहि समान कोउ नाहीं।
लाजवंत तब सहज सुभाऊ। निज मुख निज गुन कहसि न काऊ।
सिर अरु सैल कथा चित रही। ता तें बार बीस तें कही।
सो भुजबल राखेहु उर घाली। जीतेहु सहसबाहु बलि बाली।
सुनु मतिमंद देहि अब पूरा। काटे सीस कि होइअ सूरा।
बाजीगर * कहँ कहिअ न बीरा। काटै निज कर सकल सरीरा।
दो०—जरहिं पतंग बिमोहबस भार बहहिं खरबृंद।
ते नहिं सूर कहावहिं † समुझि देखु मतिमंद ॥४४॥
चौ०-अब जनि बत-बढाव खल करही। सुनु मम बचन मान परिहरही।
दसमुख मैं न बसीठी आयेउँ। अस बिचारि रघुबीर पठायेउँ।
बार बार असि कहेउ कृपाला। नहिं गजारि जस बधें सृगाला।
मन महँ समुझि बचन प्रभु केरे। सहेउँ कठोरबचन सठ तेरे।
नाहिं त करि मुखभंजन तोरा। लै जातेउँ सीतहि बरजोरा।
जानेउँ तव बल अधम सुरारी। सूने हरि आनेसि परनारी।
तें निसि-चर-पति गर्ब बहूता। मैं रघु-पति-सेवक कर दूता।
जौं न रामअपमानहिं डरऊँ। तोहि देखत अस कौतुक करऊँ।
दो०—तोहि पटकि महि सेन हति चौपट करि तव गाउँ।
मंदोदरी समेत सठ जनकसुतहि लेइ जाउँ ॥४५॥
चौ०-जौं अस करौं तदपि न बड़ाई। मुयेहि बधे कछु नहिं मनुसाई।

* छक्कन०—इंद्रजालि। † काशि०, हस्त०—सराहियहि।

पुनि उठि झपटहिं सुरआराती। टरै न कीसचरन एहि भाँती।
पुरुष कुजोगी जिमि उरगारी। मोहबिटप नहिं सकहिं उपारी।

दो०—कोटिन्ह मेघ-नाद-सम सुभट उठे हरखाइ।
झपटहिं टरै न कपिचरन पुनि बैठहिं सिरु नाइ* ॥ ५१ ॥
भूमि न छाँड़त कपिचरन देखत रिपुमद भाग।
कोटि बिघ्न तें संत कर मन जिमि नीति न त्याग ॥ ५२ ॥

चौ०-कपिबलु देखि सकल हिय हारे। उठा आपु जुबराज पचारे।
गहत चरन कह बालिकुमारा। मम पद गहे न तोर उबारा।
गहसि न रामचरन सठ जाई। सुनत फिरा मन अति सकुचाई।
भयेउ तेजहत श्री सब गई। मध्यदिवस जिमि ससि सोहई।
सिंघासन बैठेउ सिर नाई। मानहुँ संपति सकल गवाँई।
जगदातमा प्रानपति रामा। तासु बिमुख किमि लह बिश्रामा।
उमा राम कर भृकुटि-बिलासा। होइ बिस्व, पुनि पावै नासा।
तृन तें कुलिस, कुलिस तृन करई। तासु दूतपन कहु किमि टरई।
पुनि कपि कही नीति बिधि नाना। मान न ताहि † काल नियराना।
रिपुमद मथि प्रभु-सु-जस सुनायेउ। यह कहि चलेउ बालि-नृप-जायेउ।
हतौं न खेत खेलाइ खेलाई। तोहि, अबहिं का करौं बड़ाई‡।
प्रथमहिं तासु तनय कपि मारा। सो सुनि रावनु भयेउ दुखारा।
जातुधान अंगदपन देखी। भय-ब्याकुल सब भए बिसेखी।

दो०—रिपुबल धरषि हरषि कपि बालितनय बलपुंज।
सजल नयन, तन पुलक अति गहे राम-पद-कंज ॥ ५३ ॥
साँझ जानि दसमौलि तब भवन गयेउ बिलखाइ।
मंदोदरी निसाचरहि बहुरि कहा समुझाइ ॥ ५४ ॥

चौ०-कंत समुझि मन तजहु कुमतिही। सोह न समर तुम्हहिं रघुपतिही।
रामानुज लघुरेख खँचाई। सोउ नहिं नाँघेहु असि मनुसाई।

---

* काशि० और सरल० में यह दोहा नहीं है। † सरल०—मानत नाहिं।
‡ सरल०—अबहीं मुख का करौं बड़ाई। हतिहौं खेत खेलाइ खेलाई।

एहि बिधि बेगि सुभट सब धावहु। खाहु भालु कपि जहँ तहँ पावहु।
मरकटहीन करहु महि जाई*। जिअत धरहु तापस दोउ भाई।
पुनि सकोप बोलेउ जुबराजा। गाल बजावत तोहि न लाजा।
मरु गर काटि निलज कुलघाती। बल बिलोकि बिहरति नहिं छाती।
रे तियचोर कु-मारग-गामी। खल मलराजि मंदमति कामी।
सन्निपात जल्पसि दुर्बादा। भयेसि कालबस खल मनुजादा।
याकर फल पावहुगे आगे। बानर-भालु-चपेटन्हि लागे।
राम मनुज बोलत असि बानी। गिरहिं न तव रसना अभिमानी।
गिरिहहिं रसना संसय नाहीं। सिरन्हि समेत समरमहि माहीं।

सो०—सो नर क्यों दसकंध बालि बधेउ जेहि एक सर।
बीसहु लोचन अंध धिग तव जनम कुजाति जड़ ॥४९॥
तव सोनित की प्यास तृषित राम-सायक-निकर।
तजौं तोहि तेहि त्रास† कटुजल्पक निसिचर अधम ॥५०॥

चौ०-मैं तव दसन तोरिबे लायक। आयसु मोहिं न दीन्ह रघुनायक।
असि रिसि होति दसउ मुख तोरौं। लंका गहि समुद्र महँ बोरौं।
गूलर-फल-समान तव लंका। बसहु मध्य तुम्ह जंतु असंका।
मैं बानर फल खात न बारा। आयसु दीन्ह न राम उदारा।
जुगुति सुनत रावन मुसुकाई। मूढ़ सीख कहँ बहुत झुठाई।
बालि न कबहुँ गालु अस मारा। मिलि तपसिन्ह तैं भयेसि लबारा।
साँचेहुँ मैं लबार भुजबीहा। जौं न उपारौं तव दस जीहा।
रामप्रतापु सुमिरि कपि कोपा। सभा माँझ पन करि पद रोपा।
जौं मम चरन सकसि सठ टारी। फिरहिं राम सीता मैं हारी।
सुनहु सुभट सब कह दससीसा। पद गहि धरनि पछारहु कीसा।
इंद्रजीत आदिक बलवाना। हरषि उठे जहँ तहँ भट नाना।
झपटहिं करि बल बिपुल उपाई। पद न टरै बैठहिं सिर नाई।

---

* काशि०—महि अकीस करि फेरि दोहाई।
† सदल०—भास।

बैठ जाइ सिंघासन फूली। अतिअभिमान त्रास सब भूली।
इहाँ राम अंगदहिं बोलावा। आइ चरन-पंकज सिरु नावा।
अति आदर समीप बैठारी। बोले बिहँसि कृपाल खरारी।
बालितनय अति कौतुक मोही। तात सत्य कहु पूँछौं तोही।
रावन जातुधान - कुल - टीका। भुजबल अतुल जासु जग लीका।
तासु मुकुट तुम्ह चारि चलाए। कहहु तात कवनी बिधि पाए।
सुनु सर्वग्य प्रनत-सुख-कारी। मुकुट न होहिं भूपगुन चारी।
साम दाम अरु दंड बिभेदा। नृपउर बसहिं नाथ कह बेदा।
नीतिधर्म के चरन सुहाए। अस जिय जानि नाथपहिं आए।

दो०—धर्महीन प्रभु-पद-बिमुख कालबिवस दससीस।
आए गुन तजि रावनहि सुनहु कोसलाधीस ॥५७॥
परमचतुरता श्रवन सुनि बिहँसे रामु उदार।
समाचार पुनि सब कहे गढ़ के बालिकुमार ॥५८॥

चौ०-रिपु के समाचार जब पाए। राम सचिव सब निकट बोलाए।
लंका बाँके चारि दुआरा। केहि बिधि लागिअ करहु बिचारा।
तब कपीस रिच्छेस बिभीषन। सुमिरि हृदय दिन-कर-कुल-भूषन।
करि बिचार तिन्ह मंत्र दृढ़ावा। चारि अनी कपिकटकु बनावा।
जथाजोग सेनापति कीन्हे। जूथप सकल बोलि तब लीन्हे।
प्रभुप्रताप कहि सब समुझाए। सुनि कपि सिंघनाद करि धाए।
हरषित रामचरन सिर नावहिं। गहि गिरिसिखर बीरसब धावहिं॥*
गर्जहिं तर्जहिं भालु कपीसा। जय रघुबीर कोसलाधीसा।
जानत परमदुर्ग अति लंका। प्रभुप्रताप कपि चले असंका।
घटाटोप करि चहुँ दिसि घेरी। मुखहि निसान बजावहिं भेरी।

दो०—जयति राम भ्राता सहित जय कपीस सुग्रीवँ।
गर्जहिं केहरिनाद कपि भालु महा-बल-सीवँ ॥५६॥

* काशि० प्रति में यह अर्द्धाली नहीं है।

प्रिय तुम्ह ताहि जितब संग्रामा। जा के दूत केर अस कामा।
कौतुक सिंधु नाँघि तव लंका। आयेउ कपिकेसरी असंका।
रखवारे हति बिपिन उजारा। देखत तोहि अच्छ तेहि मारा।
जारि नगर सबु कीन्हेसि छारा। कहाँ रहा बल गर्ब तुम्हारा।
अब पति मृषा गाल जनि मारहु। मोर कहा कछु हृदय बिचारहु।
पति रघुपतिहि नृपति मति मानहुँ*। अज जगनाथ अ-तुल-बल जानहु†
बानप्रताप जान मारीचा। तासु कहा नहिं मानेहु नीचा।
जनकसभा अगनित महिपाला। रहे तुम्हउ बल बिपुल बिसाला।
भंजि धनुष जानकी बिआही। तब संग्राम जितेहु किन ताही।
सुर-पति-सुत जानै बल थोरा। राखा जियत आँखि गहि फोरा।
सूपनखा कै गति तुम्ह देखी। तदपि हृदय नहिं लाज बिसेखी।
दो०—बधि बिराध खर दूखनहिं लीला हतेउ कबंध।
बालि एक सर मारेउ तेहि जानहु‡ दसकंध ॥ ५५ ॥
चौ०-जेहि जल नाथ बँधायेउ हेला। उतरे प्रभु दल सहित सुबेला।
कारुनीक दिन-कर-कुल-केतू। दूत पठायेउ तव हित हेतू।
सभा माँझ जेहि तव बल मथा। करिबरूथ महुँ मृगपति जथा।
अंगद हनुमत अनुचर जा के। रनबाँकुरे बीर अतिबाँके।
तेहि कहुँ पिअ पुनि पुनि नर कहहू। मुधा मान ममता मद बहहू।
अहह कंत कृत राम बिरोधा। कालबिबस मन उपज न बोधा।
कालु दंड गहि काहु न मारा। हरै धर्म बल बुद्धि बिचारा।
निकट काल जेहि आवै साईं। तेहि भ्रम होहि तुम्हारिहि नाईं।
दो०—दुइ सुत मारेउ दहेउ पुर अजहुँ पूर पिअ देहु।
कृपासिंधु रघुपतिहि भजि नाथ बिमल जस लेहु ॥५६॥
चौ०-नारिबचन सुनि बिसिखसमाना। सभा गयेउ उठि होत बिहाना।

---

* सदल०—मनुज जनि मानहु। † सदल०—मानहु।
‡ सदल०—तेहि नर कह।

दो०—एक एक गहि रजनिचर पुनि कपि चले पराइ।
ऊपर आपुनि हेठ भट गिरहिं धरनि पर आइ ॥६१॥

चौ०-राम-प्रताप-प्रबल कपिजूथा। मर्दहिं निसि-चर-निकर-बरूथा।
चढ़े दुर्ग पुनि जहँ तहँ बानर। जय रघु-बीर - प्रताप-दिवाकर।
चले निसाचर-निकर पराई। प्रबल पवन जिमि घनसमुदाई।
हाहाकार भयेउ पुर भारी। रोवहिं आरत बालक नारी।
सब मिलि देहिं रावनहिं गारी। राज करत एहि मृत्यु हँकारी।
निज दल बिचल सुना जब काना। फेरि सुभट लंकेस रिसाना।
जो रन बिमुख फिरा मैं जाना। सो मैं हतब * करालकृपाना।
सरबसु खाइ भोग करि नाना। समरभूमि भए दुर्लभ प्राना।
उग्र बचन सुनि सकल डेराने। फिरे क्रोध करि बीर लजाने।
सनमुख मरन बीर कै सोभा। तब तिन्ह तजा प्रान कर लोभा।

दो०—बहु-आयुध-धर सुभट सब भिरहिं पचारि पचारि।
कीन्हे ब्याकुल भालु कपि परिघ त्रिसूलन्ह † मारि ॥६२॥

चौ०-भयआतुर कपि भागन लागे। जद्यपि उमा जीतिहहिं आगे।
कोउ कह कहँ अंगद हनुमंता। कहँ नल नील दुबिद बलवंता।
निज दल बिचल सुना हनुमाना। पच्छिम द्वार रहा बलवाना।
मेघनाद तहँ करै लराई। टूट न द्वार परम कठिनाई।
पवन-तनय-मन भा अति क्रोधा। गर्जेउ प्रबल-काल-सम जोधा।
कूदि लंकगढ़ ऊपर आवा। गहि गिरि मेघनाद कहुँ धावा।
भंजेउ रथ सारथी निपाता। ताहि हृदय महुँ मारेसि लाता।
दुसरे सूत बिकल तेहि जाना। स्यंदन घालि तुरत गृह आना।

दो०—अंगद सुनेउ कि पवनसुत गढ़ पर गयेउ अकेल।
समरबाँकुरा बालिसुत तरकि चढ़ेउ कपिखेल ॥६३॥

चौ०-जुद्धबिरुद्ध क्रुद्ध दोउ बानर। रामप्रताप सुमिरि उरअंतर।

---

* काशि०, हस्त०—तेहि मारिहौं। † काशि०—परिघन्हि।

चौ०-लंका भयेउ कोलाहलु भारी। सुने दसानन अतिअहँकारी।
देखहु बनरन्ह केरि ढिठाई। बिहँसि निसाचर सेन बोलाई।
आए कीस काल के प्रेरे। छुधावंत रजनीचर मेरे।
अस कहि अट्टहास सठ कीन्हा। गृह बैठे अहार बिधि दीन्हा।
सुभट सकल चारिहु दिसि जाहू। धरि धरि भालु कीस सब खाहू।
उमा रावनहि अस अभिमाना। जिमि टिट्टिभ खग सूत उताना।
चले निसाचर आयसु माँगी। गहि कर भिंडिपाल बर साँगी।
तोमर मुद्गर परिघ प्रचंडा। सूल कृपान परसु गिरिखंडा।
जिमि अरुनोपलनिकर निहारी। धावहिं सठ खग मांसअहारी।
चोंच-भंग-दुख तिन्हहिं न सूझा। तिमि धाए मनुजाद अबूझा।

दो०—नानायुध सर-चाप-धर जातुधान बलबीर।
कोटकँगूरनि चढ़ि गए कोटि कोटि रनधीर ॥६०॥

चौ०-कोटकँगूरन्हि सोहहिं कैसे। मेरु के सृंगनि जनु घन बैसे।
बाजहिं ढोल निसान जुझाऊ। सुनि धुनि होहि भटन्ह मन चाऊ।
बाजे नफीरी भेरि अपारा। सुनि कादरउर जाहिं दरारा।
देखि न जाइ कपिन्ह के ठट्टा। अति बिसाल-तनु भालु सुभट्टा।
धावहिं गनहिं न अवघट घाटा। पर्बत फोरि करहिं गहि बाटा।
कटकटाहिं कोटिन्ह भट गर्जहिं। दसन ओठ काटहिं अति तर्जहिं।
उत रावन इत राम दोहाई। जयति जयति जय परी लराई।
निसिचर सिखरसमूह ढहावहिं। कूदि धरहिं कपि फेरि चलावहिं।

छंद-धरि कुधर-खंड प्रचंड मर्कट भालु गढ़ पर डारहीं।
झपटहिं चरन गहि पटकि महि भजि चलत बहुरि पचारहीं ॥
अति तरल तरुन प्रताप तर्जहिं * तमकि गढ़ चढ़ि चढ़ि गए।
कपि भालु चढ़ि मंदिरन्हि जहँ तहँ रामजसु गावत भए ॥

---

* काशि०—तर्पहिं।

प्राविट – सरद – पयोद घनेरे। लरत मनहुँ मारुत के प्रेरे।
अनिप अकंपन अरु अतिकाया। बिचलत सेन कीन्हि इन्ह माया।
भयेउ निमिष महँ अति अँधिआरा। वृष्टि होइ रुधिरोपलछारा।
दो०—देखि निबिड़ तम दसहुँ दिसि कपिदल भयेउ खभार।
एकहि एक न देखहिं जहँ तहँ करहिं पुकार ॥६६॥
चौ०-सकल मरम रघुनायक जाना। लिए बोलि अंगद हनुमाना।
समाचार सब कहि समुझाए। सुनत कोपि कपिकुंजर धाए।
पुनि कृपाल हँसि चाप चढ़ावा। पावकसायक सपदि चलावा।
भयेउ प्रकास कतहुँ तम नाहीं। ग्यानउदय जिमि संसय जाहीं।
भालु बलीमुख पाइ प्रकासा। धाए कोपि बिगत-श्रम-त्रासा।
हनूमान अंगद रन गाजे। हाँक सुनत रजनीचर भाजे।
भागत भट पटकहिं धरि धरनी। करहिं भालु कपि अदभुत करनी।
गहि पद डारहिं सागर माहीं। मकर उरग झष धरि धरि खाहीं।
दो०—कछु घायल कछु रन परे कछु गढ़ चले पराइ।
गर्जहिं मर्कट भालु भट रिपु-दल-बल बिचलाइ ॥६७॥
चौ०-निसा जानि कपि-चारिउ-अनी। आए जहाँ कोसलाधनी।
राम कृपा करि चितवा सबहीं। भए बिगतश्रम बानर तबहीं।
उहाँ दसानन सचिव* हँकारे। सब सन कहेसि सुभट जे मारे।
आधा कटक कपिन्ह संहारा। कहहु बेगि का करिअ बिचारा।
माल्यवंत अतिजरठ निसाचर। रावनु – मातु–पिता–मंत्री– बर।
बोला बचन नीति अति पावन। सुनहु तात कछु मोर सिखावन।
जब तें तुम्ह सीता हरि आनी। असगुन होहिं न जाहिं बखानी।
बेद पुरान जासु जस गावा। रामबिमुख काहु न सुखु पावा।
दो०—हिरन्याच्छ भ्रातासहित मधुकैटभ बलवान।
जेहि मारे सोइ अवतरेउ कृपासिंधु भगवान ॥ ६८ ॥

* काशि०, दस०—सुभट।

रावन भवन चढ़े दोउ धाई। करहिं कोसलाधीस-दोहाई।
कलससहित गहि भवन ढहावा। देखि निसा-चर-पति भय पावा।
नारिबृंद कर पीटहिं छाती। अब दुइ कपि आए उतपाती।
कपिलीला करि तिन्हहिं डेरावहिं। रामचंद्र कर सुजस सुनावहिं।
पुनि कर गहि कंचन के खंभा। कहेन्हि करिअ उतपात-अरंभा।
कूदि परे रिपुकटक मँझारी। लागे मर्दै भुजबल भारी।
काहुहि लात चपेटन्हि केहू। भजहु न रामहि सो फल लेहू।
दो०—एक एक सन मर्दि करि तोरि चलावहिं मुंड।
रावन आगे परहिं ते जनु फूटहिं दधिकुंड ॥६४॥
चौ०-महा-महा-मुखिआ जे पावहिं। ते पद गहि प्रभु पास चलावहिं।
कहहिं बिभीषन, तिन्ह के नामा। देहिं रामु तिन्हहूँ निज धामा।
खल मनुजाद द्विजामिषभोगी। पावहिं गति जो जाँचत जोगी।
उमा राम मृदुचित करुनाकर। बैरभाव सुमिरत मोहि निसिचर।
देहिं परम गति सो जिअ जानी। अस कृपालु को कहहु भवानी।
सुनि अस प्रभु न भजहिं भ्रम त्यागी। नर मतिमंद ते परम अभागी।
अंगद अरु हनुमंत प्रवेसा। कीन्ह दुर्ग अस कह अवधेसा।
लंका दोउ कपि सोहहिं कैसे। मथहिं सिंधु दुइ मंदर जैसे।
दो०—भुजबल रिपुदल दलमलेउ देखि दिवस कर अंत।
कूदे जुगल प्रयास बिनु आए जहँ भगवंत ॥६५॥
चौ०-प्रभु-पद-कमल सीस तिन्ह नाए। देखि सुभट रघुपति-मन भाए।
राम कृपा करि जुगल निहारे। भए बिगतश्रम परम सुखारे।
गए जानि अंगद हनुमाना। फिरे भालु मर्कट भट नाना।
जातुधान प्रदोषबल पाई। धाए करि दस-सीस-दोहाई।
निसि-चर-अनी देखि कपि फिरे। जहँ तहँ कटकटाइ भट भिरे।
दोउ दल प्रबल पचारि पचारी। लरत सुभट नहिं मानत हारी।
बीर तमीचर सब अति कारे। नानाबरन बलीमुख भारे।
सबल जुगल दल समबल जोधा। बिबिध प्रकार भिरत करि क्रोधा।

जहँ तहँ भागि चले कपि रिच्छा*। बिसरी सबहिं युद्ध कै इच्छा।
सो कपि भालु न रन महुँ देखा। कीन्हेसि जेहि न प्रान-अवसेखा।

दो०—मारेसि दस दस बिसिख सब† परे भूमि कपि बीर।
सिंघनाद करि गर्जा मेघनाद बलधीर‡॥ ७१॥

चौ०-देखि पवनसुत कटकु बिहाला। क्रोधवंत धायेउ जनु काला।
महा महीधर तमकि उपारा+। अति रिसि मेघनाद पर डारा।
आवत देखि गयेउ नभ सोई। रथ सारथी तुरग सब खोई।
बार बार पचार हनुमाना। निकट न आव, मरमु सो जाना।
रघु-पति-निकट गयेउ घननादा। नाना भाँति कहेसि दुर्बादा।
अस्त्र सस्त्र आयुध सब डारे। कौतुकहीं प्रभु काटि निवारे।
देखि प्रभाउ मूढ़ खिसिआना। करै लाग माया बिधि नाना।
जिमि कोउ करै गरुड़ सन खेला। डर पावै गहि स्वल्प सँपेला।

दो०—जासु प्रबल-माया-बिबस सिव बिरंचि बड़ छोट।
ताहि देखावै निसिचर निज माया मतिखोट॥ ७२॥

चौ०-नभ चढ़ि बरषै बिपुल अँगारा। महि तें प्रगट होहिं जलधारा।
नाना भाँति पिसाच पिसाची। मारु काटु धुनि बोलहिं नाची।
बिष्ठा पूय रुधिर कच हाड़ा। बरषै कबहुँ उपल बहु छाँड़ा।
बरषि धूरि कीन्हेसि अँधिआरा। सूझ न आपन हाथु पसारा।
कपि अकुलाने माया देखें। सब कर मरनु बना यहि लेखें।
कौतुक देखि रामु मुसुकाने। भए सभीत सकल कपि जाने।
एक बान काटी सब माया। जिमि दिनकर हर तिमिरनिकाया।
कृपादृष्टि कपि भालु बिलोके। भए प्रबल रन रहहिं न रोके।

दो०—आयसु माँगि राम पहिं अंगदादि कपि साथ।
लछिमनु चले सकोप अति बान सरासन हाथ॥ ७३॥

---

* काशि० हस्त०—भागे भय-ब्याकुल कपि रीछा। † छक्कन० दस दस सर सब मारेसि। ‡ काशि०, हस्त०—सिंहनाद गर्जत भयेउ मेघनाद रनधीर। + छक्कन०—महासैल एक तुरत उपारा।

कालरूप खल-वन-दहन गुनागार घनबोध।
सिव बिरंचि जेहि सेवहिं* तासों कवन विरोध† ॥ ६९ ॥

चौ०-परिहरि बैरु देहु बैदेही। भजहु कृपानिधि परम सनेही॥
ता के बचन बानसम लागे। करियामुख करि जाहि अभागे॥
बृद्ध भयसि न त मरतेउँ तोही। अब जनि नयन‡ देखावसि मोही॥
तेहि अपने मन अस अनुमाना। बध्यो चहत एहि कृपानिधाना॥
सो उठि गयेउ कहत दुर्बादा। तब सकोप बोलेउ घननादा॥
कौतुक प्रात देखिअहु मोरा। करिहौं बहुत कहौं का थोरा॥
सुनि सुतबचन भरोसा आवा। प्रीति समेत अंक बैठावा॥
करत बिचार भयेउ भिनुसारा। लागे कपि पुनि चहूँ दुआरा॥
कोपि कपिन्ह दुरघट गढ़ु घेरा। नगर कोलाहलु भयेउ घनेरा॥
बिबिधायुधधर निसिचर धाए। गढ़ तें पर्बत सिखर ढहाए॥

छंद—ढाहे महीधर-सिखर कोटिन्ह बिबिध बिधि गोला चले।
घहरात जिमि पबिपात गर्जत जनु प्रलय के बादले॥
मर्कट बिकट भट जुटत कटत न लटत तन जर्जर भए।
गहि सैल तेइ गढ़ पर चलावहिं जहँ सो तहँ निसिचर हए॥

दो०—मेघनाद सुनि श्रवन अस गढ़ु पुनि छेंका आइ।
उतरि दुर्ग तें बीरबर सनमुख चला बजाइ॥ ७० ॥

चौ०-कहँ कोसलाधीस दोउ भ्राता। धन्वी सकल-लोक-बिख्याता॥
कहँ नल नील द्विबिद सुग्रीवाँ। अंगद हनूमंत बलसीवाँ॥
कहाँ बिभीषनु भ्राताद्रोही। आजु सठहि हठि मारौं ओही॥
अस कहि कठिन बान संधाने। अतिसय कोप श्रवन लगि ताने॥
सरसमूह सो छाँड़ै लागा। जनु सपच्छ धावहिं बहु नागा॥
जहँ तहँ परत देखिअहि बानर। सनमुख होइ न सके तेहि अवसर॥

---

* काशि०—जेहि सेवहिं सिव कमलभव।

† यह दोहा सदल० प्रति में नहीं है। ‡ काशि० हस्त०—नयन।

धरि लघु रूप गयेउ हनुमंता। आनेउ भवन समेत तुरंता।

दो०—रघु-पति-चरन-सरोज सिर नायेउ आय सुषेन।
कहा नाम गिरि औषधी जाहु पवनसुत लेन ॥ ७६ ॥

चौ०-राम-चरन-सरसिज उर राखी। चले प्रभंजनसुत बल भाखी।
उहाँ दूत एक मरमु जनावा। रावनु कालनेमि-गृह आवा।
दसमुख कहा मरमु तेहि सुना। पुनि पुनि कालनेमि सिर धुना।
देखत तुम्हहिं नगर जेहि जारा। तासु पंथ को रोकनिहारा।
भजि रघुपति करु हित आपना। छाँड़हु नाथ वृथा जल्पना।
नील-कंज-तनु सुंदर स्यामा। हृदय राखु लोचन अभिरामा।
अहंकार ममता मद त्यागू। महा मोहनिसि सोवत जागू।
कालब्याल कर भच्छक जोई। सपनेहु समर कि जीतिअ सोई।

दो०—सुनि दसकंध रिसान अति तेहि मन कीन्ह विचार।
राम-दूत-कर मरौं बरु यह खल रत मलभार ॥ ७७ ॥

चौ०-अस कहि चला रचेसि मग माया। सर मंदिर वर बाग बनाया।
मारुतसुत देखा सुभ आस्रम। मुनिहि बूझि जलु पिऔं जाइ श्रम।
राच्छस-कपट-वेष तहँ सोहा। माया-पति-दूतहि चह मोहा।
जाइ पवन सुत नायेउ माथा। लाग सो कहै राम-गुन-गाथा।
होत महा रन रावनरामहिं। जितिहहिं रामु न संसय या महिं।
इहाँ भए मैं देखौं भाई। ग्यान-दृष्टि-बलु मोहिं अधिकाई।
माँगा जल तेहि दीन्ह कमंडल। कह कपि नहिं अघाउँ थोरे जल।
सरमज्जनु करि आतुर आवहु। दिच्छा देउँ ग्यान जेहि पावहु।

दो०—सर पैठत कपिपद गहा मकरी तब अकुलान।
मारी सो धरि दिव्यतनु चली गगन चढ़ि जान ॥ ७८ ॥

चौ०-कपि तव दरस भइउँ निःपापा। मिटा तात मुनिबर कर श्रापा।
मुनि न होइ यह निसिचर घोरा। मानहु सत्य बचन प्रभु मोरा।
अस कहि गई अपछरा जबहीं। निसि-चर निकट गयेउ सो तबहीं।
कह कपि मुनि गुरदछिना लेहू। पाछे हमहिं मंत्र तुम्ह देहू।

चौ०-छत-ज-नयन उर बाहु बिसाला। हिम-गिरि-निभ तनु कछुएक लाला।
इहाँ दसानन सुभट पठाए। नाना सस्त्र अस्त्र गहि धाए।
भू-धर-नख-विटपायुध धारी। धाए कपि जय राम पुकारी।
भिरे सकल जोरिहि सन जोरी। इत उत जय-इच्छा नहिं थोरी।
मुठिकन्ह लातन्ह दाँतन्ह काटहिं। कपि जय-सील मारि पुनि डाटहिं।
मारु मारु धरु धरु धरु मारू। सीस तोरि गहि भुजा उपारू।
असि रव पूरी रही नव खंडा। धावहिं जहँ तहँ रुंड प्रचंडा॥
देखहिं कौतुक नभ सुरवृंदा। कबहुँक विसमउ कबहुँ अनंदा।

दो०—रुधिर गाड़ भरि भरि जमेउ ऊपर धूरि उड़ाई।
जिमि अंगाररासिन्ह पर मृतकधूम रह छाई॥ ७४॥

चौ०-घायल बीर बिराजहिं कैसे। कुसुमित किंसुक के तरु जैसे।
लछिमन मेघनाद दोउ जोधा। भिरहिं परसपर करि अति क्रोधा।
एकहि एक सकै नहिं जीती। निसिचर छल बल करै अनीती।
क्रोधवंत तब भयेउ अनंता। भंजेउ रथु सारथी तुरंता।
नाना बिधि प्रहार कर सेषा। राच्छस भयेउ प्रानअवसेषा।
रावनसुत निज मन अनुमाना। संकट भयेउ हरिहि मम प्राना।
बीरघातिनी छाँड़ेसि साँगी। तेजपुंज लछिमन उर लागी।
मुरछा भई सक्ति के लागे। तब चलि गयेउ निकट भय त्यागे।

दो०—मेघ-नाद-सम कोटिसत जोधा रहे उठाइ।
जगदाधार अनंत किमि उठै, चले खिसिआइ॥ ७५॥

चौ०-सुनु गिरिजा क्रोधानल जासू। जारै भुवन चारिदस आसू।
सक संग्राम जीति को ताही। सेवहिं सुर नर अग जग जाही।
यह कौतूहल जानै सोई। जा पर कृपा राम कै होई।
संध्या भई फिरी दोउ बाहिनी। लगे सँभारन निज निज अनी।
व्यापक ब्रह्म अजित भुवनेस्वर। लछिमन कहाँ बूझ करुनाकर।
तब लगि लै आयेउ हनुमाना। अनुज देखि प्रभु अति दुख माना।
जामवंत कह बैद सुषेना। लंका रहै को पठै लेना।

तव प्रताप उर राखि गोसाईं। जैहौं रामबान की नाईं*।
भरत हरषि तव आयसु दयेऊ। पद सिर नाइ चलत कपि भयेऊ*।
दो०—भरत-बाहु-बल-सील-गुन प्रभु पद प्रीति अपार।
जात सराहत मनहिं मन पुनि पुनि पवनकुमार॥ ८१॥
चौ०-उहाँ राम लछिमनहिं निहारी। बोले बचन मनुजअनुहारी।
अर्धराति गइ कपि नहिं आवा। राम उठाइ अनुज उर लावा।
सकहु न दुखित देखि मोहिं काऊ। बंधु सदा तव मृदुल सुभाऊ।
मम हित लागि तजेहु पितु माता। सहेउ बिपिन हिम आतप बाता।
सो अनुराग कहाँ अब भाई। उठहु न सुनि मम बचबिकलाई।
जौं जनत्यों बन बंधुबिछोहू। पितावचन मनत्यो नहिं ओहू।
सुत बित नारि भवन परिवारा। होहिं जाहिं जग बारहिं बारा।
अस बिचारि जिय जागहु ताता। मिलै न जगत सहोदर भ्राता।
जथा पंख बिनु खग अति दीना। मनि बिनु फनि करिवर करहीना।
अस मम जिवन बंधु बिनु तोही। जौं जड़ दैव जियावै मोही।
जैहौं अवध कवन मुँह लाई। नारिहेतु प्रिय भाई† गवाँई।
बरु अपजसु सहत्यों जग माहीं। नारिहानि बिसेष छति नाहीं।
अब अपलोकु सोकु सुत तोरा। सहिहि निठुर कठोर उर मोरा।
निज जननी के एक कुमारा। तात तासु तुम्ह प्रानअधारा।
सौंपेसि मोहि तुम्हहिं गहि पानी। सब बिधि सुखद परम हित जानी।
उतरु काह दैहौं तेहि जाई। उठि किन मोहि सिखावहु भाई।
बहु बिधि सोचत सोचबिमोचन। स्रवत सलिल राजिव-दल-लोचन।
उमा एक अखंड रघुराई। नरगति भगतकृपालु देखाई।

---

* छक्कन० में इन दोनों चौपाइयों के स्थान पर यह दोहा है—
सो०—तव प्रताप उर राखि प्रभु जैहौं नाथ तुरन्त।
अस कहि आयसु पाइ पद बंदि चले हनुमन्त॥

† सदल० हस्त०—बंधु।

सिर लंगूर लपेटि पछारा। निज तनु प्रगटेसि मरती बारा।
राम राम कहि छाँड़ेसि प्राना। सुनि मन हरषि चलेउ हनुमाना।
देखा सैल न औषध चीन्हा। सहसा कपि उपारि गिरि लीन्हा।
गहि गिरि निसि नभ धावत भयेऊ। अवध-पुरी ऊपर कपि गयेऊ।

दो०—देखा भरत विसाल अति निसिचर मन अनुमान।
बिनु फर सर* तकि मारेउ चाप श्रवन लगि तान॥ ७९॥

चौ०-परेउ मुरछि महि लागत सायक। सुमिरत राम राम रघुनायक।
सुनि प्रिय वचन भरतु उठि धाए। कपि समीप अति आतुर आए।
बिकल बिलोकि कीस उर लावा। जागत नहिं बहु भाँति जगावा।
मुख मलीन मन भए दुखारी। कहत वचन लोचन भरि वारी।
जेहि बिधि रामबिमुख मोहि कीन्हा। तेहि पुनि यह दारुन दुखु दीन्हा।
जौं मोरे मन बच अरु काया। प्रीति राम-पद-कमल अमाया।
तौ कपि होउ बिगत श्रम-सूला। जौं मो पर रघुपति अनुकूला।
सुनत वचन उठि बैठ कपीसा। कहि जय जयति कोसलाधीसा।

सो०—लीन्ह कपिहिं उर लाइ पुलकित तन लोचन सजल।
प्रीति न हृदय समाइ सुमिरि राम रघु-कुल-तिलक॥८०॥

चौ०-तात कुसल कहु सुख निधान की। सहित अनुज अरु मातु जानकी।
कपि सब चरित सछेप बखाने। भए दुखी मन महुँ पछिताने।
अहह दैव मैं कत जग जायेउँ। प्रभु के एकहु काज न आयेउँ।
जानि कुअवसर मन धरि धीरा। पुनि कपि सन बोले बल बीरा।
तात गहरु होइहि तोहि जाता। काजु नसाइहि होत प्रभाता।
चढ़ु मम सायक सैल समेता। पठवौं तोहिं जहँ कृपानिकेता।
सुनि कपिमन उपजा अभिमाना। मोरे भार चलिहि किमि बाना।
रामप्रभाव बिचारि बहोरी। बंदि चरन कपि कह कर जोरी।

---

* पाठान्तर०—बिनु फर सायक।

कुंभकरन दुर्मद रनरंगा। चला दुर्ग तजि सेन न संगा।
देखि बिभीषनु आगे आयेउ। परेउ चरन निज नाम सुनायेउ*।
अनुज उठाइ हृदय तेहि लावा। रघु-पति-भगत जानि मन भावा।
तात लात रावन मोहि मारा। कहत परमहित मंत्रबिचारा।
तेहि गलानि रघुपति पहिं आयेउँ। देखि दीन प्रभु के मन भायेउँ।
सुनु सुत भयेउ कालबस रावनु। सो कि मान अब परम सिखावनु।
धन्य धन्य तैं धन्य बिभीषन। भयेउ तात निसि-चर-कुल-भूषन।
बंधु बंस तैं कीन्ह उजागर। भजेहु राम सोभा-सुख-सागर।

दो०—बचन कर्म मन कपटु तजि भजेहु राम रनधीर।
जाहु न निज पर सूझ मोहि भयेउँ कालबस बीर ॥ ८५ ॥

चौ०-बंधुबचन सुनि फिरा बिभीषन। आयेउ जहँ त्रै-लोक-बिभूषन।
नाथ भूधरा – कार – सरीरा। कुंभकरन आवत रनधीरा।
एतना कपिन्ह सुना जब काना। किलिकिलाइ धाए बलवाना।
लिए उपारि बिटप अरु भूधर। कटकटाइ डारहिं ता ऊपर।
कोटि कोटि गिरि-सिखर-प्रहारा। करहिं भालु कपि एक एक बारा।
मुरै न मन तन टरै न टारा। जिमि गज अर्कफलन्हि कर मारा।
तब मारुतसुत मुठिका हनेऊ। परेउ धरनि ब्याकुल सिर धुनेऊ।
पुनि उठि तेहि मारेउ हनुमंता। घुर्मित भूतल परेउ तुरंता।
पुनि नल नीलहि अवनि पछारेसि। जहँ तहँ पटकि पटकि भट डारेसि।
चली बली – मुख – सेन पराई। अति-भय-त्रसित न कोउ समुहाई।

दो०—अंगदादि कपि मुर्छित † करि समेत सुग्रीवँ।
काँख दाबि कपिराज कहुँ चला अमित-बल-सींवँ ॥ ८६ ॥

चौ०-उमा करत रघुपति नरलीला। खेल गरुड़ जिमि अहिगन मीला।
भृकुटि भंग कालहि जो खाई। ताहि कि सोहै ऐसि लराई।
जगपावनि कीरति बिस्तरिहहिं। गाइ गाइ भवनिधि नर तरिहहिं।

---

* काशि०, दस्त०—पद गहि नाम कहत निज भयेउ। † काशि०—घाय बल।

सो०—प्रभुविलाप सुनि कान बिकल भए बानरनिकर ।
आइ गयेउ हनुमान जिमि करुना महँ बीर रस ॥ ८२ ॥

चौ०-हरषि राम भेंटेउ हनुमाना । अति कृतग्य प्रभु परम सुजाना ।
तुरत बैद तब कीन्हि उपाई । उठि बैठे लछिमनु हरषाई ।
हृदय लाइ भेंटेउ प्रभु भ्राता । हरषे सकल भालु-कपि-ब्राता ।
पुनि कपि बैद तहाँ पहुँचावा । जेहि बिधि तबहि ताहि लेइ आवा ।
यह वृत्तांत दसानन सुनेऊ । अतिबिषाद पुनि पुनि सिर धुनेऊ ।
ब्याकुल कुंभकरन पहिं गयेऊ । करि बहु जतन जगावत भयेऊ ।
आगा निसिचर देखिअ कैसा । मानहुँ कालु देह धरि बैसा ।
कुंभकरन बूझा सुनु भाई । काहे तव मुख रहे सुखाई ।
कथा कही सब तेहि अभिमानी । जेहि प्रकार सीता हरि आनी ।
तात कपिन्ह सब निसिचर मारे । महा-महा-जोधा संघारे ।
दुर्मुख सुररिपु मनुजअहारी । भट अतिकाय अकंपन भारी ।
अपर महोदर आदिक बीरा । परे समरमहि सब रनधीरा ।

दो०—सुनि दस-कंधर-बचन तब कुंभकरनु बिलखान ।
जगदंबा हरि आनि अब सठु चाहत कल्यान ॥ ८३ ॥

चौ०-भल न कीन्ह तैं निसि-चर-नाहा । अब मोहि आइ जगायेहि काहा ।
अजहूँ तात त्यागि अभिमाना । भजहु राम होइहि कल्याना ।
हैं दससीस मनुज रघुनायक । जा के हनूमान से पायक ?
अहह बंधु तैं कीन्हि खोटाई । प्रथमहिं मोहि न सुनायेहि आई ।
कीन्हेहु प्रभुबिरोध तेहि देवक । सिव बिरंचि सुर जाके सेवक ।
नारद मुनि मोहि ग्यान जो कहा । कहतेउँ तोहि समय निरवहा ।
अब भरि अंक भेंटु मोहि भाई । लोचन सुफल करौं मैं जाई ।
स्यामगात सरसी-रुह-लोचन । देखौं जाइ ताप-त्रय-मोचन ।

दो०—राम-रूप-गुन सुमिर मन मगन भयेउ छन एक ।
रावन माँगेउ कोटि घट मद अरु महिष अनेक ॥ ८४ ॥

चौ०-महिष खाइ करि मदिरापाना । गर्जा बज्राघातसमाना ।

कटहिं चरन उर सिर भुजदंडा। बहुतक बीर होहिं सत खंडा।
घुर्मि घुर्मि घायल महि परहीं। उठि संभारि सुभट पुनि लरहीं।
लागत बान जलद जिमि गाजहिं। बहुतक देखि कठिन सर भाजहिं।
रुंड प्रचंड मुंड बिनु धावहिं। धरु धरु मारु मारु धुनि गावहिं।

दो०—छन महँ प्रभु के सायकन्हि काटे बिकट पिसाच।
पुनि रघुबीर निषंग* महँ प्रबिसे सब नाराच॥ ८६॥

चौ०-कुंभकरन मन दीख बिचारी। हती निमिष महँ निसिचर-धारी।
भयेउ क्रुद्ध दारुन बल बीरा। करि मृग-नायक-नाद गँभीरा।
कोपि महीधर लेइ उपारी। डारै जहँ मर्कटभट भारी।
आवत देखि सैल प्रभु भारे। सरन्हि काटि रजसम करि डारे।
पुनि धनु तानि कोपि रघुनायक। छाँड़े अति कराल बहु सायक।
तन महँ प्रबिसि निसरि सर जाहीं। जनु दामिनि घन माँझ समाहीं।
सोनित स्रवत सोह तन कारे। जनु कज्जलगिरि गेरुपनारे।
बिकल बिलोकि भालु कपि धाए। बिहँसा जबहिं निकट भट आए।

दो०—गर्जत धायेउ बेग अति कोटि कोटि गहि कीस।
महि पटके गजराज इव सपथ करै दससीस॥ ९०॥

चौ०-भागे भालु-बलीमुख-जूथा। बृक बिलोकि जिमि मेषबरूथा।
चले भागि कपि भालु भवानी। बिकल पुकारत आरतबानी।
यह निसिचर दु-काल-सम अहई। कपिकुल-देस परन अब चहई।
कृपा-बारि-धर राम खरारी। पाहि पाहि प्रनतारतिहारी।
स-करुन-बचन सुनत भगवाना। चले सुधारि सरासन बाना।
राम सेन निज पाछे घाली। चले सकोप महा-बल-साली।
खैंचि धनुष सर सत संधाने। छूटे तीर सरीर समाने।
लागत सर धावा रिसभरा। कुधर डगमगत डोलति धरा।
लीन्ह एक तेहि सैल उपाटी। रघु-कुल-तिलक भुजा सोइ काटी।

* कासि०—रघुपति के प्रेम।

मुरछा गइ मारुतसुत जागा। सुग्रीवँहिं तब खोजन लागा।
सुग्रीवँहुँ* कै मुरुछा बीती। निबुकि गयेउ तेहि मृतकप्रतीती।
काटेसि दसन नासिका काना। गरजि अकास चला तेहि जाना।
गहेउ चरन धरि धरनि पछारा। अति लाघव उठि पुनि तेहि मारा।
पुनि आयेउ प्रभु पहिं बलवाना। जयति जयति जय कृपानिधाना†।
नाक कान काटे सोइ जानी। फिरा क्रोध करि भइ मन ग्लानी।
सहज भीम पुनि बिनु श्रुति नासा। देखत कपिदल उपजी त्रासा।
दो०—जय जय जय रघु-बंस-मनि धाए कपि दै हूह।
एकहि बार जो तासु पर छाड़ेन्हि गिरि-तरु-जूह ॥ ८७ ॥
चौ०-कुंभकरन रनरंग बिरुद्धा। सनमुख चला काल जनु क्रुद्धा।
कोटि कोटि कपि धरि धरि खाई। जनु टीडी गिरिगुहा समाई।
कोटिन्ह गहि सरीर सन मर्दा। कोटिन्ह मींजि मिलव महि गर्दा।
मुख नासा श्रवनन्हि की बाटा। निसरि पराहिं भालु-कपि-ठाटा।
रन-मद-मत्त निसाचर दर्पा। बिस्व ग्रसिहि जनु एहि बिधि अर्पा।
मुरे सुभट रन फिरहिं न फेरे। सूझ न नयन सुनहिं नहिं टेरे।
कुंभकरन कपिफौज बिड़ारी। सुनि धाई रजनी-चर-धारी।
देखी राम बिकल कटकाई। रिपुअनीक नाना बिधि आई।
दो०—सुनु सौमित्र कपीस तुम सकल सँभारेहु सैन।
मैं देखौं खल-दल-बलहि बोले राजिवनैन ॥ ८८ ॥
चौ०-कर सारंग साजि कटि भाथा। अरि दल-दलनि ‡ चले रघुनाथा।
प्रथम कीन्ह प्रभु धनुषटकोरा। रिपुदल बधिर भयेउ सुनि सोरा।
सत्यसंध छाँड़े सर लच्छा। कालसर्प जनु चले सपच्छा।
जहँ तहँ चले बिपुल नाराचा×। लगे कटन भट बिकट पिसाचा।

* काशि०, हस्त०—कपिराजहु। †काशि०, हस्त०—जय जय कारुनीक भगवाना। ‡ काशि०, हस्त०—मृगपतिठवनि। × काशि०, हस्त०—अति जब अचले निसित नाराचा।

छीजहिं निसिचर दिनु अरु राती। निज मुख कहे सुकृत जेहि भाँती।
बहु बिलाप दसकंधर करई। बंधुसीस पुनि पुनि उर धरई।
रोवहिं नारि हृदय हति पानी। तासु तेज बल बिपुल बखानी।
मेघनाद तेहि अवसर आवा। कहि बहु कथा पिता समुझावा।
देखेहु कालि मोरि मनुसाई। अबहिं बहुत का करौं बड़ाई।
इष्टदेव सौं बल रथ पायेउँ। सो बलु तात न तोहि देखायेउँ।
एहि बिधि जलपत भयेउ बिहाना। चहुँ दुआर लागे कपि नाना।
इत कपि भालु कालसम बीरा। उत रजनीचर अति-रन-धीरा।
लरहिं सुभट निज निज जय हेतू। बरनि न जाइ समर खगकेतू।

दो०—मेघनाद मायारचित रथ चढ़ि गयेउ अकास।
गर्जेउ प्रलय-पयोद जिमि भइ कपिकटकहि त्रास ॥ ८३ ॥

चौ०—सक्ति सूल तरवारि कृपाना। अस्त्र सस्त्र कुलिसायुध नाना।
डारै परसु परिघ पाषाना। लागेउ वृष्टि करै बहु बाना।
रहे दसहु दिसि सायक छाई। मानहुँ मघा मेघ झरि लाई।
धरु धरु मारु सुनिअ धुनि काना। जो मारै तेहि कोउ न जाना।
गहि गिरि तरु अकास कपि धावहिं। देखहिं तेहि न दुखित फिरि आवहिं।
अवघट घाट बाट गिरि कंदर। मायाबल कीन्हेसि सरपंजर।
जाहिं कहाँ भए ब्याकुल बंदर। सुरपति बंदि परे जनु मंदर।
मारुतसुत अंगद नल नीला। कीन्हेसि बिकल सकल बलसीला।
पुनि लछिमन सुग्रीवँ बिभीषन। सरन्हि मारि कीन्हेसि जर्जरतन।
पुनि रघुपति सन जूझै लागा। सर छाँड़ै होइ लागहिं नागा।
ब्याल-पास-बस भयेउ खरारी। स्वबस अनंत एक अबिकारी।
नटइव कपट चरित कर नाना। सदा स्वतंत्र राम भगवाना।
रनसोभा लगि प्रभुहिं बँधावा। देखि दसा देवन्ह भय पावा।

दो०—जासु नाम जपि मुनि काटहिं भवपास।
सो प्रभु आव कि बंध तर ब्यापक बिस्वनिवास ॥ ८४ ॥

दो०—वंदि राम-पद-कमल जुग चलेउ तुरंत अनंत।
अंगद नील मयंद नल संग सुभट * हनुमंत॥ ६७॥

चौ०-जाइ कपिन्ह सो देखा वैसा। आहुति देत रुधिर अरु भैंसा।
कीन्ह कपिन्ह सब जग्य बिधंसा †। जब न उठै तब करहिं प्रसंसा।
तदपि न उठै धरेन्हि कच जाई। लातन्हि हति हति चले पराई।
लेइ त्रिसूल धावा कपि भागे। आए जहँ रामानुज आगे।
आवा परम क्रोध कर मारा। गर्ज घोररव वारहिं वारा।
कोपि मरुतसुत अंगद धाए। हति त्रिसूल उर धरनि गिराए।
प्रभु कह छाँड़ेसि सूल प्रचंडा। सर हति कृत अनंत जुग खंडा।
उठि बहोरि मारुति जुवराजा। हतहिँ कोपि तेहि घाउ न बाजा।
फिरे बीर रिपु मरै न मारा। तब धावा करि घोर चिकारा।
आवत देखि क्रुद्ध जनु काला। लछिमन छाँड़े बिसिख कराला।
देखेसि आवत पबिसम बाना। तुरत भयेउ खल अंतरधाना।
बिबिध वेष धरि करै लराई। कबहुँक प्रगट कबहुँ दुरि जाई।
देखि अजय रिपु डरपे कीसा। परम क्रुद्ध तब भयेउ अहीसा।
एहि पापिहि मैं बहुत खेलावा। अब बध उचित कपिन्ह भय पावा।
सुमिरि कोसला-धीस-प्रतापा। सरसंधान कीन्ह करि दापा।
छाँड़ेउ बान माँझ उर लागा। मरती बार कपटु सबु त्यागा।

दो०—रामानुज कहँ राम कहँ अस कहि छाँड़ेसि प्रान।
धन्य सक्रजित मातु तव कह अंगद हनुमान॥ ६८॥

चौ०-बिनु प्रयास हनुमंत उठावा। लंका द्वार राखि तेहि आवा।
तासु मरन सुनि सुर गंधर्वा। चढ़ि बिमान आए नभ सर्वा।
बरपि सुमन दुंदुभी बजावहिं। श्री-रघु-बीर-बिमल जस गावहिं।
जय अनंत जय जगदाधारा। तुम प्रभु सब देवन्ह निस्तारा।
अस्तुति करि सुर सिद्ध सिधाए। लछिमन कृपासिंधु पहिं आए।

---

* काशि०—रिषभ। † काशि०— तब कीसन्ह कृत जग्य बिधंसा।

चौ०-चरित राम के सगुन भवानी। तरकि न जाहिं बुद्धि बल बानी।
अस बिचारि जे तग्य बिरागी। रामहि भजहिं तर्क सब त्यागी।
ब्याकुल कटक कीन्ह घननादा। पुनि भा प्रगट कहै दुर्बादा।
जामवंत कह खल रहु ठाढ़ा। सुनि करि ताहि क्रोध अति बाढ़ा।
बूढ़ जानि सठ छाँड़ेउँ तोही। लागेसि अधम पचारै मोही।
अस कहि तीव्र त्रिसूल चलावा। जामवंत सो कर गहि धावा।
मारेसि मेघनाद कै छाती। परा धरनि घुर्मित सुरघाती।
पुनि रिसान गहि चरन फिरावा। महि पछारि निज बलु देखरावा।
बरप्रसाद सो मरै न मारा। तब गहि पद लंका पर डारा।
इहाँ देवरिषि गरुड़ पठावा। रामसमीप सपदि सो आवा।

दो०—पन्नगारि खाए सकल छन महुँ ब्याल-बरूथ।
भए बिगत माया तुरित हरषे बानरजूथ॥ ९५॥
गहि गिरि पादप उपल नख धाए कीस रिसाइ।
चले तमीचर बिकलतर गढ़ पर चढ़े पराइ॥ ९६॥

चौ०-मेघनाद कै मुरुछा जागी। पितहि बिलोकि लाज अति लागी।
तुरत गयेउ गिरि-बर-कंदरा। करै अजय मख अस मन धरा।
सो सुधि पाइ बिभीषन कहई। सुनु प्रभु समाचार अस अहई।
मेघनाद मख करै अपावन। खल मायावी देवसतावन।
जौं प्रभु सिद्ध होइ सो पाइहि। नाथ बेगि रिपु जीति न जाइहि।
सुनि रघुपति अतिसय सुख माना। बोले अंगदादि कपि नाना।
लछिमन संग जाहु सब भाई। करहु बिधंस जग्य कर जाई।
मारेहु तेहि बल बुद्धि उपाई। जेहि छीजै निसिचर सुनु भाई।
जामवंत कपिराज बिभीषन। सेन समेत रहेउ तीनिउँ जन।
जब रघुबीर दीन्हि अनुसासन। कटि निषंग कसि साजि सरासन।
प्रभुप्रताप उर धरि रनधीरा। बोले घन इव गिरा गँभीरा।
जौं तेहि आजु बधे बिनु आवौं। तौ रघु-पति-सेवकु न कहावौं।
जौं सत संकर करहिं सहाई। तदपि हतौं रघु-बीर-दोहाई।

पवन निसान घोररव बाजहिं। महाप्रलय के घन जनु गाजहिं।
भेरि नफीर बाज सहनाई। मारू राग सुभट सुखदाई।
केहरिनाद बीर सब करहीं। निज निज बल पौरुष उच्चरहीं।
कहै दसानन सुनहु सुभट्टा। मर्दहु भालु कपिन्ह के ठट्टा।
हौं मारिहौं भूप दोउ भाई। अस कहि सनमुख फौज रेंगाई।
यह सुधि सकल कपिन्ह जब पाई। धाए करि रघु-बीर-दोहाई।

छंद—धाए बिसाल कराल मरकट भालु काल समान ते।
मानहुँ सपच्छ उड़ाहिं भूधरबृंद नाना बान ते॥
नख-दसन-सैल-महाद्रुमायुध सबल संक न मानहीं।
जय राम रावन-मत्त-गज-मृगराज सुजस बखानहीं॥

दो०—दुहुँ दिसि जय जयकार करि निज निज जोरी जानि।
भिरे बीर इत रघुपतिहिं उत रावनहिं बखानि॥१०१॥

चौ०-रावन रथी बिरथ रघुबीरा। देखि बिभीषन, भयेउ अधीरा।
अधिकप्रीति मन भा संदेहा। बंदि चरन कह सहित सनेहा।
नाथ न रथ नहिं तनु पदत्राना। केहि बिधि जितब बीर बलवाना।
सुनहु सखा कह कृपानिधाना। जेहि जय होइ सो स्यंदन आना।
सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य सील दृढ ध्वजा पताका।
बल बिबेक दम परहित घोरे। छमा कृपा समता रजु जोरे।
ईसभजन सारथी सुजाना। बिरति चर्म संतोष कृपाना।
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा। बर बिग्यान कठिन कोदंडा।
अमल अचल मन त्रोनसमाना। सम जम नियम सिलीमुख नाना।
कवच अभेद बिप्र-गुर-पूजा। यहि सम बिजयउपाय न दूजा।
सखा धर्ममय अस रथ जा के। जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ता के।

दो०—महा अजय संसाररिपु जीति सकै सो बीर।
जा के अस रथ होइ दृढ़ सुनहु सखा मतिधीर॥१०२॥
सुनत बिभीषन प्रभु बचन हरषि गहे पदकंज।
एहि मिस मोहि उपदेसिअ राम कृपा सुखपुंज॥१०३॥

सुतबध सुनेउ दसानन जबहीं। मुरछित भयेउ परेउ महि तबहीं।
मंदोदरी रुदन करि भारी। उर ताड़त बहु भाँति पुकारी।
नगर लोग सब ब्याकुल सोचा। सकल कहहिं दसकंधरु पोचा।
दो०—तब दसकंध अनेक बिधि समुझाई सब नारि।
नस्वररूप प्रपंच सब देखहु हृदय बिचारि ॥ ९९ ॥
चौ०-तिन्हहिं ग्यान उपदेसा रावन। आपुन मंद कथा सुभ पावन।
परउपदेस कुसल बहुतेरे। जे आचरहिं ते नर न घनेरे।
निसा सिरानि भयेउ भिनुसारा। लगे भालु कपि चारिहुँ द्वारा।
सुभट बोलाइ दसानन बोला। रनसनमुख जा कर मन डोला।
सो अबहीं बरु जाउ पराई। संजुगबिमुख भए न भलाई।
निज-भुज-बल मैं बैरु बढ़ावा। देइहौं उतरु जो रिपु चढ़ि आवा।
अस कहि मरुतबेग रथ साजा। बाजे सकल जुझाऊ बाजा।
चले बीर सब अतुलित बली। जनु कज्जल कै आँधी चली।
असगुन अमित होहिं तेहि काला। गनै न भुजबल गर्ब बिसाला।
छंद—अतिगर्ब गनै न सगुन असगुन स्रवहिं आयधु हाथ तें।
भट गिरत रथ तें बाजि गज चिक्करत भागहिं साथ तें ॥
गोमायु गीध कराल खररव स्वान रोवहिं अति घने।
जनु कालदूत उलूक बोलहिं बचन परम भयावने ॥
दो०—ताहि कि संपति सगुन सुभ सपनेहु मन बिश्राम।
भूत-द्रोह-रत मोहबस रामबिमुख रतकाम ॥१००॥
चौ०-चलेउ निसाचर-कटक अपारा। चतुरंगिनी अनी बहुधारा।
बिबिध भाँति बाहन रथ जाना। बिपुल बरन पताक ध्वज नाना।
चले मत्त गजजूथ घनेरे। प्राबिट-जलद मरुत जनु प्रेरे।
बरन बरन बिरदैत निकाया। समरसूर जानहिं बहु माया।
अति बिचित्र बाहिनी बिराजी। बीर बसंत सेन जनु साजी।
चलत कटकु दिगसिंधुर डगहीं। छुभित पयोधि कुधर डगमगहीं।
उठी रेनु रबि गयेउ छपाई। पवन थकित बसुधा अकुलाई।

पाहि पाहि रघुबीर गोसाइँ। यह खल खाइ काल की नाइँ।
तेहि देखे कपि सकल पराने। दसहुँ चाप सायक संधाने।
छंद—संधानि धनु सरनिकर छाँड़ेसि उरग जिमि उड़ि लागहीं।
रहे पूरि सर धरनी गगन दिसि विदिसि कहँ कपि भागहीं॥
भयो अति कोलाहलु विकल कपिदल भालु बोलहिं आतुरे।
रघुबीर करुनासिंधु आरतबंधु जनरच्छक हरे॥
दो०—विचलत देखि अनीक निज कटि निषंग धनु हाथ।
लछिमन चले सकोप तब नाइ रामपद माथ*॥ १०६॥
चौ०-रे खल का मारसि कपि भालू। मोहि विलोकु तोर मैं कालू।
खोजत रहेउँ तोहि सुतघाती। आजु निपातु जुड़ावौं छाती।
अस कहि छाँड़ेसि बान प्रचंडा। लछिमन किए सकल सतखंडा।
कोटिन्ह आयुध रावन डारे। तिल प्रवान करि काटि निवारे।
पुनि निज बानन्ह कीन्ह प्रहारा। स्यंदन भंजि सारथी मारा।
सत सत सर मारे दस भाला। गिरिसृंगन्ह जनु प्रविसहिं ब्याला।
सत सर पुनि मारा उर माहीं। परेउ अवनितल सुधि कछु नाहीं।
उठा प्रबल पुनि मुरछा जागी। छाँड़ेसि ब्रह्म दीन जो साँगी।
छंद—सो ब्रह्मदत्त प्रचंडसक्ति अनंत उर लागी सही।
पर्यो बीर विकल उठाव दसमुख अतुलबल महिमा रही॥
ब्रह्मांड भुवन विराज जा के एक सिर जिमि रजकनी।
तेहि चह उठावन मूढ़ रावन जान नहिं त्रि-भुवन-धनी॥
दो०—देखत धायेउ पवनसुत बोलत बचन कठोर।
आवत ही उर महुँ हनेउ मुष्टिप्रहार प्रघोर॥ १०७॥
चौ०-जानु टेकि कपि भुमि न गिरा। उठा सँभारि बहुत रिसभरा।
मुठिका एक ताहि कपि मारा। परेउ सैल जनु बज्रप्रहारा।

* छक्कन०—निज दल बिकल देखि कटि कसि निषंग धनु हाथ।
लछिमन चले सक्रुद्ध होइ नाइ रामपद माथ॥

उत पचार दसकंठ भट इत अंगद हनुमान ।
लरत निसाचर भालु कपि करि निज निज प्रभु आन ॥१०४॥

चौ०-सुर ब्रह्मादि सिद्ध मुनि नाना । देखत रन नभ चढ़े बिमाना ।
हमहूँ उमा रहे तेहि संगा । देखत राम-चरित-रन-रंगा ।
सुभट समर रस दुहुँ दिसि माँते । कपि जयसील राम बल ताते ।
एक एक सन भिरहिं पचारहिं । एकन्ह एक मर्दि महि पारहिं ।
मारहिं काटहिं धरहिं पछारहिं । सीस तोरि सीसन्ह सन मारहिं ।
उदर बिदारहिं भुजा उपारहिं । गहि पद अवनि पटकि भट डारहिं ।
निसिचर भट महि गाड़हिं भालू । ऊपर डारि देहिं बहु बालू ।
बीर बलीमुख जुद्ध बिरुद्धे । देखिअत बिपुल काल जनु क्रुद्धे ।

छंद—क्रुद्धे कृतांत समान कपि तनु स्रवत सोनित राजहीं ।
मर्दहिं निसाचर कटक भट बलवंत घन जिमि गाजहीं ॥
मारहिं चपेटन्हि डाँटि दातन्ह काटि लातन्ह मीजहीं ।
चिक्करहिं मरकट भालु छल बल करहिं जेहि खल छीजहीं ॥
धरि गाल फारहिं उर बिदारहिं गल अँतावरि मेलहीं ।
प्रह्लादपति जनु बिबिध तनु धरि समरअंगन खेलहीं ॥
धरु मारु काटु पछारु घोर गिरा गगन महि भरि रही ।
जय राम जो तृन तें कुलिस कर कुलिस तें तृन कर सही ॥

दो०—निज दल बिचल बिलोकि तब बीस भुजा दस चाप ।
रथ चढ़ि चलेउ दसानन * फिरहु फिरहु करि दाप ॥१०५॥

चौ०-धायेउ परम क्रुद्ध दसकंधर । सनमुख चले हूह देइ बंदर ।
गहि कर पादप उपल पहारा । डारेहिं ता पर एकहिं बारा ।
लागहिं सैल बज्रतनु तासू । खंड खंड होइ फूटहिं आसू ।
चला न अचल रहा रथ रोपी । रनदुर्मद रावन अति कोपी ।
इत उत झपटि दपटि कपिजोधा । मर्दै लाग भयेउ अति क्रोधा ।
चले पराइ भालु कपि नाना । त्राहि त्राहि अंगद हनुमाना ।

* काशि०—चलेउ दसानन कोपि तब ।

दो०—मख बिधंसि कपि कुसल सब आए रघुपति पास।
चलेउ लंकपति क्रुद्ध होइ त्यागि जियन कै आस ॥१०९॥

चौ०-चलत होहिं अति असुभ भयंकर। बैठहिं गीध उड़ाइ सिरन्ह पर।
भयेउ कालबस काहु न माना। कहेसि बजावहु जुद्धनिसाना।
चली तमी-चर-अनी अपारा। बहु गज रथ पदाति असवारा।
प्रभु सनमुख धाए खल कैसे। सलभसमूह अनल कहँ जैसे।
इहाँ देवतन्ह बिनती कीन्ही। दारुन बिपति हमहिं एहि दीन्ही।
अब जनि राम खेलावहु एही। अतिसय दुखित होति बैदेही।
देववचन सुनि प्रभु मुसुकाना। उठि रघुवीर सुधारे बाना।
जटाजूट दृढ़ बाँधे माथे। सोहहिं सुमन बीच बिच गाँथे।
अरुननयन बारिद-तनु-स्यामा। अखिल-लोक-लोचन-अभिरामा।
कटितट परिकर कसेउ निषंगा। कर कोदंड कठिन सारंगा।

छंद—सारंग कर सुंदर निषंग सिलीमुखाकर कटि कस्यौ।
भुजदंड पीन मनोहरायत उर धरा-सुर-पद लस्यौ॥
कह दास तुलसी जबहिं प्रभु सरचाप कर फेरन लगे।
ब्रह्मांड दिग्गज कमठ अहि महि सिंधु भूधर डगमगे॥

दो०—हरषे देव बिलोकि छबि बरषहिं सुमन अपार।
जय जय प्रभु गुन-ग्यान-बल-धाम हरन महिभार ॥११०॥

चौ०-एही बीच निसा-चर-अनी। कसमसाति आई अतिघनी।
देखि चले सनमुख कपि भट्टा। प्रलय काल के जनु घनघट्टा।
बहुकृपान तरवारि चमंकहिं। जनु दस दिसि दामिनी दमंकहिं।
गज रथ तुरग चिकार कठोरा। गर्जहिं मनहुँ बलाहक घोरा।
कपिलंगूर बिपुल नभ छाए। मनहुँ इंद्रधनु उए सुहाए।
उठी धूरि मानहुँ जलधारा। बान बुंद भइ बृष्टि अपारा।
दुहुँ दिसि पर्वत करहिं प्रहारा। बज्रपात जनु बारहिं बारा।
रघुपति कोपि बानझरि लाई। घायल भइ निसि-चर-समुदाई।
लागत बान बीर चिक्करहीं। घुर्मि घुर्मि जहँ तहँ महि परहीं।

मुरुछा गइ बहोरि सो जागा। कपिवल विपुल सराहन लागा।
धिग धिग मम पौरुष धिग मोही। जौं तैं जिअत उठेसि सुरद्रोही।
अस कहि कपि लछिमन कहुँ ल्यायो। देखि दसानन विसमउ पायो।
कह रघुवीर समुझु जिय भ्राता। तुम्ह कृतांतभच्छक सुरत्राता।
सुनत वचन उठि वैठ कृपाला। गगन गई सो सक्ति कराला।
पुनि कोदंड वान गहि धाए। रिपुसनमुख अतिआतुर आए*।
छंद—आतुर बहुरि विभंजि स्यंदन सूत हति व्याकुल कियो।
गिर्‌यो धरनि दसकंधर विकलतर वानसत वेध्यो हियो॥
सारथी दूसर घालि रथ तेहि तुरत लंका लेइ गयो।
रघु-वीर-वंधु प्रतापपुंज बहोरि प्रभुचरननि्ह नयो॥
दो०—उहाँ दसानन जागि करि करै लाग कछु जग्य।
जय चाहत रघुपति विमुख सठ हठवस अतिअग्य॥१०८॥
चौ०-इहाँ विभीषन सव सुधि पाई। सपदि जाइ रघुपतिहिं सुनाई।
नाथ करै रावनु एक जागा। सिद्ध भए नहिं मरिहि अभागा।
पठवहु देव वेगि भट वंदर। करहिं विधंस आव दसकंधर।
प्रात होत प्रभु सुभट पठाए। हनुमदादि अंगद सव धाए।
कौतुक कूदि चढ़े कपि लंका। पैठे रावन-भवन असंका।
जवहीं करत जग्य सो देखा। सकल कपिन्ह भा क्रोध विसेखा।
रन तें निलज भाजि गृह आवा। इहाँ आइ बकध्यानु लगावा।
अस कहि अंगद मारेउ लाता। चितव न सठ स्वारथ मनु राता।
छंद—नहिं चितव जव कपि कोपि तव गहि दसन लातन्ह मारहीं।
धरि केस नारि निकारि वाहेर तेऽतिदीन पुकारहीं॥
तव उठेउ क्रुद्ध कृतांतसम गहि चरन वानर डारई।
एहि वीच कपिन्ह विधंसकृत मख देखि मन महँ हारई।

---

* काशि०, हस्त०—धरि सर चाप चढ़त पुनि भये। रिपुसमीप अति-आतुर गये।

तेजपुंज रथ दिव्य अनूपा। बिहँसि चढ़े कोसल-पुर-भूपा।
चंचल तुरग मनोहर चारी। अजर अमर मन-सम-गति-कारी।
रथारूढ़ रघुनाथहिं देखी। धाए कपि बलु पाइ बिसेखी *।
सही न जाइ कपिन्ह कै मारी। तब रावन माया बिस्तारी।
सो माया रघुबीरहि बाँची। सब काहू मानी करि साँची।
देखी कपिन्ह निसा-चर-अनी। बहु अंगद लछिमन कपिधनी।

छंद—बहु बालिसुत लछिमन कपीस बिलोकि मरकट अपडरे।
जनु चित्रलिखित समेत लछिमन जहँ सो तहँ चितवहिं खरे॥
निज सेन चकित बिलोकि हँसि सर चाप सजि कोसलधनी।
माया हरी हरि निमिष महुँ हरषी सकल मरकटअनी॥

दो०—बहुरि राम सब तन चितै बोले बचन गँभीर।
द्वंदजुद्ध देखहु सकल श्रमित भए अति बीर॥११३॥

चौ०-अस कहि रथ रघुनाथ चलावा। बिप्र-चरन-पंकज सिरु नावा।
तब लंकेस क्रोध उर छावा। गर्जत तर्जत सनमुख धावा।
जीतेहु जे भट संजुग माहीं। सुनु तापस मैं तिन्ह सम नाहीं।
रावन नाम जगत जस जाना। लोकप जाके बंदीखाना।
खर-दूषन-कबंध तुम्ह मारा। बधेहु ब्याध इव बालि बिचारा।
निसि-चर-निकर सुभट संघारेहु। कुंभकरन घननादहिं मारेहु।
बैरु आजु सब लेउँ निबाही। जौं रन भूप भाजि नहिं जाही।
आजु करौं खलु काल हवाले। परेहु कठिन रावन के पाले।
सुनि दुर्बचन कालबस जाना। बिहँसि बचन कह कृपानिधाना।
सत्य सत्य सब तव प्रभुताई। जलपसि जनि देखाउ मनुसाई।

छंद—जनि जलपना करि सुजसु नासहि नीति सुनहि करहि छमा।
संसार महँ पूरुष त्रिबिधि पाटल-रसाल-पनस-समा॥

* यह अर्द्धाली काशि० हस्त० सदल० प्रतियों में नहीं है।

स्रवहिं सैल जनु निर्झरवारी। सोनित सरि कादर भयकारी।

छंद—कादर भयंकर रुधिरसरिता चली * परम अपावनी।
दोउ कूल दल रथ रेत चक्र अवर्त्त बहति भयावनी॥
जलजंतु गज पदचर तुरग खर विविध बाहन को गने।
सर सक्ति तोमर सर्प चाप तरंग चर्म कमठ घने॥

दो०—बीर परहिं जनु तीरतरु मज्जा बहु बह फेन।
कादर देखत डरहिं तेहि सुभटन के मन चेन॥१११॥

चौ०-मज्जहिं भूत पिसाच बेताला। प्रथम महा झोटिंग कराला।
काक कंक लेइ भुजा उड़ाहीं। एक ते छीनि एक लेइ खाहीं।
एक कहहिं ऐसिउ सौंघाई। सठहु तुम्हार दरिद्र न जाई।
कहँरत भट घायल तट गिरे। जहँ तहँ मनहुँ अर्धजल परे।
खैंचहिं गीध आँत तट भए। जनु बनसी खेलहिं चित दए।
बहु भट बहहिं चढ़े खग जाहीं। जनु नावरि खेलहिं सरि माहीं।
जोगिनि भरि भरि खप्पर संचहिं। भूत-पिसाच-बधू नभ नंचहिं।
भट कपाल करताल बजावहिं। चामुंडा नाना विधि गावहिं।
जंबुकनिकर कटक्कट कट्टहिं। खाहिं हुआहिं अघाहिं दपट्टहिं।
कोटिन्ह रुंड मुंड बिनु चल्लहिं। सीस परे महि जय जय बोल्लहिं।

छंद—बोल्लहिं जो जय जय मुंड रुंड प्रचंड सिर बिनु धावहीं।
खप्परिन्ह खग्ग अलुज्झि जुज्झहिं सुभट सुरपुर पावहीं॥
निसिचर-बरूथ विमर्दि गरजहिं भालु कपि दर्पित भए।
संग्रामअंगन सुभट सोवहिं राम-सर-निकरन्हि हए॥

दो०—हृदय विचारेसि दसवदन भा निसि-चर-संहार।
मैं अकेल कपि भालु बहु माया करौं अपार॥११२॥

चौ०-देवन्ह प्रभुहिं पयादे देखा। उपजा उर अतिछोभ बिसेखा।
सुरपति निज रथ तुरत पठावा। हरष सहित मातलि लेइ आवा।

* काशि०—बही।

दस दस बान भाल दस मारे। निसरि गए चले रुधिरपनारे॥
स्रवत रुधिर धायेउ बलवाना। प्रभु पुनि कृत धनु-सर-संधाना॥
तीस तीर रघुबीर पवारे। भुजन्ह समेत सीस महि पारे॥
काटतही पुनि भए नवीने। राम बहोरि भुजा सिर छीने॥
कटत झटिति पुनि नूतन भए। प्रभु बहु बार बाहु सिर हए॥
पुनि पुनि प्रभु काटत भुज सीसा। अतिकौतुकी कोसलाधीसा॥
रहे छाइ नभ सिर अरु बाहू। मानहुँ अमित केतु अरु राहू॥

छंद—जनु राहु केतु अनेक नभपथ स्रवत सोनित धावहीं।
रघु-बीर-तीर प्रचंड लागहिं भूमि गिरत न पावहीं॥
एक एक सर सिरनिकर छेदे नभ उड़त इमि सोहहीं।
जनु कोपि दिन-कर-कर-निकर जहँ तहँ बिधुंतुद पोहहीं॥

दो०—जिमि जिमि प्रभु हर तासु सिर तिमि तिमि होहिं अपार।
सेवत बिषय बिबर्ध जिमि नित नित नूतन मार॥११६॥

चौ०-दसमुख देखि सिरन्ह कै बाढ़ी। बिसरा मरन भई रिस गाढ़ी॥
गर्जेउ मूढ़ महा अभिमानी। धायेउ दसउ सरासन तानी॥
समरभूमि दसकंधर कोपेउ। बरषि बान रघु-पति-रथ तोपेउ॥
दंड एक रथ देखि न परा। जनु निहार महँ दिनमनि दुरा॥
हाहाकार सुरन्ह जब कीन्हा। तब प्रभु कोपि कार्मुक लीन्हा॥
सर निवारि रिपु के सिर काटे। ते दिसि बिदिसि गगन महि पाटे॥
काटे सिर नभमारग धावहिं। जय जय धुनि करि भय उपजावहिं॥
कहँ लछिमनु हनुमान कपीसा। कहँ रघुबीर कोसलाधीसा॥

छंद—कहँ राम कहि सिरनिकर धाए देखि मर्कट भजि चले।
संधानि धनु रघु-बंस-मनि हँसि सरन्ह सिर भेदे भले॥
सिरमालिका गहि कालिका कर बृंद बृंदन्हि बहु मिलीं।
करि रुधिरसरि मज्जन मनहुँ संग्रामबट पूजन चलीं॥

दो०—पुनि रावन अति कोप करि छाँडेसि सक्ति प्रचंड।
सनमुख चली बिभीषनही मनहुँ काल कर दंड॥११७॥

एक सुमनमद एक सुमनफल एक फलइ केवल लागहीं।
एक कहहिं, कहहिं करहिं अपर, एक करहिं कहत न बागहीं।

दो०—रामबचन सुनि बिहँसि कह मोहि सिखावत ग्यान।
बैरु करत नहिं तब डरेहु अब लागे प्रिय प्रान ॥११४॥

चौ०-कहि दुर्बचन क्रुद्ध दसकंधर। कुलिससमान लाग छाँड़ै सर।
नानाकार सिलीमुख धाए। दिसि अरु बिदिसि गगन महि छाए।
अनलबान छाँड़ेउ रघुबीरा। छन महँ जरे निसा-चर-तीरा।
छाँड़ेसि तीब्र सक्ति खिसिआई। बानसंग प्रभु फेरि पठाई।
कोटिन्ह चक्र त्रिसूल पबारै। बिनु प्रयास प्रभु काटि निवारै।
निफल होहिं रावन सर कैसे। खल के सकल मनोरथ जैसे।
तब सतबान सारथी मारेसि। परेउ भूमि जय राम पुकारेसि।
राम कृपा करि सूत उठावा। तब प्रभु परम क्रोध कहँ पावा।

छंद—भए क्रुद्ध जुद्धविरुद्ध रघुपति त्रोन सायक कसमसे।
कोदंडधुनि अतिचंड सुनि मनुजाद सब मारुत ग्रसे।
मंदोदरी उर कंप कंपति कमठ भू भूधर त्रसे॥
चिक्करहिं दिग्गज दसन गहि महि देखि कौतुक सुर हँसे।

दो०—तानि सरासन श्रवन लगि छाँड़े बिसिख कराल।
राम-मारगन-गन * चले लहलहात जनु ब्याल ॥११५॥

चौ०-चले बान सपच्छ जनु उरगा। प्रथमहिं हतेउ सारथी तुरगा।
रथ बिभंजि हति केतु पताका। गर्जा अति अंतर बलु थाका।
तुरत आन रथ चढ़ि खिसियाना। छाँड़ेसि अस्त्र सस्त्र बिधि नाना।
बिफल होहिं सब उद्यम ता के। जिमि पर-द्रोह-निरत-मनसा के।
तब रावन दस सूल चलाए। बाजि चारि महि मारि गिराए।
तुरत उठाइ कोपि रघुनायक। खैंचि सरासन छाँड़े सायक।
रावन - सिर - सरोज- बन-चारी। चलि रघुबीर सिलीमुख-धारी।

* मारगन = बाण।

दो०—राम प्रचारे बीर तब धाए कीस प्रचंड।
कपिदल प्रबल बिलोकि तेहि कीन्ह प्रगट पाखंड॥११६॥

चौ०-अंतरधान भयेउ छन एका। पुनि प्रगटे खल रूप अनेका।
रघु-पति-कटक भालु कपि जेते। जहँ तहँ प्रगट दसानन तेते।
देखे कपिन्ह अमित दससीसा। भागे भालु बिकल भट कीसा।
चले बलीमुख धरहिं न धीरा। त्राहि त्राहि लछिमन रघुबीरा।
दह दिसि कोटिन्ह धावहिं रावन। गर्जहिं घोर कठोर भयावन।
डरे सकल सुर चले पराई। जय कै आस तजहु अब भाई।
सब सुर जिते एक दसकंधर। अब बहु भए तकहु गिरिकंदर।
रहे बिरंचि संभु मुनि ग्यानी। तिन्ह जिन्ह प्रभु महिमा कछु जानी।

छंद—जाना प्रताप ते रहे निर्भय कपिन्ह रिपु माने फुरे।
चले बिचलि मर्कट भालु सकल कृपाल पाहि भयातुरे॥
हनुमंत अंगद नील नल अतिबल लरत रनबाँकुरे।
मर्दहिं दसानन कोटि कोटिन्ह कपटभू भट अंकुरे॥

दो०—सुर बानर देखे बिकल हँसे कोसलाधीस।
सजि बिसिखासन एक सर हते सकल दससीस॥१२०॥

चौ०-प्रभु छन महुँ माया सब काटी। जिमि रबि उए जाहिं तम फाटी।
रावनु एक देखि सुर हरषे। फिरे सुमन बहु प्रभु पर बरषे।
भुज उठाइ रघुपति कपि फेरे। फिरे एक एकन्ह तब टेरे।
प्रभुबलु पाइ भालु कपि धाए। तरल तमकि संजुग महि आए।
अस्तुति करत देव तेहि देखे। भयेउ एक मैं इन्ह के लेखे।
सठहु सदा तुम्ह मोर मरायल। कहि अस कोपि गगनपथ धायल।
हाहाकार करत सुर भागे। खलहु जाहु कहँ मोरें आगे।
बिकल देखि सुर अंगदु धावा। कूदि चरन गहि भूमि गिरावा।

छंद—गहि भूमि पाखौ लात माखो बालिसुत प्रभु पहिं गयो।
संभारि उठि दसकंठ घोर कठोर रव गर्जत भयो॥

चौ०-आवत देखि सक्ति खरधारा। प्रनतारतिहर बिरदु सँभारा।
तुरत बिभीषनु, पाछे मेला। सनमुख राम सहेउ सो सेला।
लागि सक्ति मुरछा कछु भई। प्रभु कृत खेल सुरन्ह बिकलई।
देखि बिभीषनु प्रभु स्रम पायेउ। गहि कर गदा क्रुद्ध होइ धायेउ।
रे कुभाग्य सठ मंद कुबुद्धे। तैं सुर नर मुनि नाग बिरुद्धे।
सादर सिव कहुँ सीस चढ़ाए। एक एक के कोटिन्ह पाए।
तेहि कारन खल अब लगि बाँचा। अब तव काल सीस पर नाँचा।
रामबिमुख सठ चहसि संपदा। अस कहि हनेसि माँझ उर गदा।

छंद—उर माँझ गदाप्रहार घोर कठोर लागत महि पर्यो।
दसबदन सोनित स्रवत पुनि संभारि धायेउ रिस भर्यो॥
दोउ भिरे अतिबल मल्ल जुद्ध बिरुद्ध एकु एकहि हने।
रघु-बीर-बल-गर्बित बिभीषनु घालि नहिं ता कहुँ गने॥

दो०—उमा बिभीषनु रावनहिं सनमुख चितव कि काउ।
भिरत सो कालसमान अब श्री-रघु-बीर-प्रभाउ॥११८॥

चौ०-देखा थमित बिभीषनु भारी। धायेउ हनूमान गिरिधारी।
रथ तुरंग सारथी निपाता। हृदय माँझ तेहि मारेसि लाता।
ठाढ़ रहा अतिकंपित गाता। गयेउ बिभीषनु जहँ जनत्राता।
पुनि रावन तेहि हतेउ पचारी। चला गगन कपि पूँछ पसारी।
गहेसि पूँछ कपिसहित उड़ाना। पुनि फिरि भिरेउ प्रबल हनुमाना।
लरत अकास जुगल सम जोधा। हनत एकु एकहिं करि क्रोधा।
सोहहिं नभ छल बल बहु करहीं। कज्जलगिरि सुमेरु जनु लरहीं।
बुधिबल निसिचर परै न पारा। तब मारुतसुत प्रभु संभारा।

छंद—संभारि श्री-रघु-बीर धीर पचारि कपि रावन हन्यौ।
महि परत पुनि उठि लरत देवन जुगल कहँ जय जय भन्यौ॥
हनुमंत संकट देखि मर्कट भालु क्रोधातुर चले।
रनमत्त रावन सकल सुभट प्रचंड भुजबल दलमले॥

चौ०-तेही निसि सीता पहिं जाई। त्रिजटा कहि सब कथा सुनाई।
सिर भुज बाढ़ि सुनत रिपु केरी। सीता उर भइ त्रास घनेरी।
मुख मलीन उपजी मन चिंता। त्रिजटा सन बोली तब सीता।
होइहि काह कहसि किन माता। केहि बिधि मरिहि बिस्व-दुख-दाता।
रघु-पति-सर सिर कटेहु न मरई। बिधि बिपरीत चरित सब करई।
मोर अभाग्य जिआवत ओही। जेहि हौं हरि-पद-कमल बिछोही।
जेहि कृत कपट कनक मृग झूठा। अजहुँ सो दैव मोहि पर रूठा।
जेहि बिधि मोहि दुख दुसह सहाए। लछिमन कहँ कटु बचन कहाए।
रघु-पति-बिरह सबिष सर भारी। तकि तकि मार बार बहु मारी।
ऐसेहु दुख जो राखु मम प्राना। सोइ बिधि ताहि जिआव न आना।
बहु बिधि करति बिलाप जानकी। करि करि सुरति कृपानिधान की।
कह त्रिजटा सुनु राजकुमारी। उर सर लागत मरै सुरारी।
प्रभु ता तें उर हतैं न तेही। एहि के हृदय बसति बैदेही।
छंद—एहि के हृदय बस जानकी जानकी उर मम बास है।
मम उदर भुवन अनेक लागत बान सब कर नास है॥
सुनि बचन हरष बिषाद मन अति देखि पुनि त्रिजटा कहा।
अब मरिहि रिपु एहि बिधि सुनहि सुंदरि तजहि संसय महा॥
दो०—काटत सिर होइहि बिकल छुटि जाइहि तव ध्यान।
तब रावन कहुँ हृदय महुँ मरिहहिं राम सुजान॥ १२३॥
चौ०-अस कहि बहुत भाँति समुझाई। पुनि त्रिजटा निज भवन सिधाई।
रामसुभाउ सुमिरि बैदेही। उपजी बिरहब्यथा अति तेही।
निसिहि ससिहि निंदति बहु भाँती। जुग सम भई न राति सिराती*।
करति बिलाप मनहिं मन भारी। रामबिरह जानकी दुखारी।
जब अति भयेउ बिरह उर दाहू। फरकेउ बाम नयन अरु बाहू।
सगुन बिचारि धरी मन धीरा। अब मिलिहहिं कृपाल रघुबीरा।

---

* काशि०—बिहाति न राती।

करि दाप चाप चढ़ाइ दस संधान सर बहु बरषई।
किए सकल भट घायल भयाकुल देखि निज बलु हरषई॥
दो०—तब रघुपति लंकेस के सीस भुजा सर चाप।
काटे भए बहोरि बहु जिमि तीरथ कर पाप * ॥१२१॥
चौ०-सिर भुज बाढ़ि देखि रिपु केरी। भालु कपिन्ह रिस भई घनेरी॥
मरत न मूढ़ कटेहुँ भुज सीसा। धाए कोपि भालु भट कीसा॥
बालितनय मारुति नल नीला। द्विबिद कपीस पनस बलसीला॥
बिटप महीधर करहिं प्रहारा। सोइ गिरि तरु गहि कपिन्ह सो मारा॥
एक नखन्ह रिपुबपुष बिदारी। भागि चलहिं एक लातन्ह मारी॥
तब नल नील सिरन्ह चढ़ि गए। नखन्ह लिलार बिदारत भए॥
रुधिर बिलोकि सकोप सुरारी। तिन्हहिं धरन कहँ भुजा पसारी॥
गहे न जाहिं सिरन्ह पर फिरहीं। जनु जुग मधुप कमलबन चरहीं॥
कोपि कूदि दोउ धरेसि बहोरी। महि पटकत भजे भुजा मरोरी॥
पुनि सकोप दस धनु कर लीन्हे। सरन्ह मारि घायल कपि कीन्हे॥
हनुमदादि मुरुछित करि बंदर। पाइ प्रदोष हरष दसकंधर॥
मुरुछित देखि सकल कपिबीरा। जामवंत धायेउ रनधीरा॥
संग भालु भूधर तरु धारी। मारन लगे पचारि पचारी॥
भयेउ क्रुद्ध रावनु बलवाना। गहि पद महि पटकै भट नाना॥
देखि भालुपति निज-दल-घाता। कोपि माँझ उर मारेसि लाता॥
छंद—उर लात घात प्रचंड लागत बिकल रथ तें महि परा।
गहि भालु बीसहु कर मनहुँ कमलन्ह बसे निसि मधुकरा॥
मुरुछित बिलोकि बहोरि पद हति भालुपति प्रभु पहिं गयो।
निसि जानि स्यंदन घालि तेहि तब सूत जतनु करत भयो॥
दो०—मुरुछा बिगत भालु कपि सब आए प्रभु पास।
निसिचर सकल रावनहिं घेरि रहे अतित्रास॥ १२२॥

---

* काशि०—काटे भये बहोरि जिमि कर्म मूढ कर पाप।

छंद—तेहि मध्य कोसलराज सुंदर स्यामतन सोभा लही।
जनु इंद्रधनुष अनेक की वर वारि तुंग तमालही॥
प्रभु देखि हरष विषाद उर सुर वदत जय जय जय करी।
रघुवीर एकहि तीर कोपि निमेष महुँ माया हरी॥
माया विगत कपि भालु हरषे विटप गिरि गहि सब फिरे।
सरनिकर छाँड़े राम रावन-बाहु-सिर पुनि महि गिरे॥
श्री-राम-रावन समरचरित अनेक कल्प जो गावहीं।
सत सेष सारद निगम कवि तेउ तदपि पार न पावहीं॥

दो०—ता के गुनगन कछु कहे जड़मति तुलसीदास।
निज-पौरुष-अनुसार जिमि मसक उड़ाहिं अकास॥१२५॥
काटे सिरभुज वार वहु मरत न भट लंकेस।
प्रभु क्रीड़त मुनि सिद्ध सुर व्याकुल देखि कलेस॥१२६॥

चौ०-काटत वढ़हिं सीससमुदाई। जिमि प्रति लाभ लोभ अधिकाई।
मरै न रिपु श्रम भयेउ विसेखा। राम विभीषनतन तव देखा।
उमा काल मरु जा की ईछा। सोइ प्रभु करं जन-प्रीति-परीछा।
सुनु सर्वग्य चराचरनायक। प्रनतपाल सुर-मुनि-सुख-दायक।
नाभीकुंड सुधा वस या के। नाथ जिअत रावनु वल ता के।
सुनत विभीषनवचन कृपाला। हरषि गहे कर वान कराला।
असगुन होन लगे तव नाना। रोवहिं वहु सृगाल खर स्वाना।
वोलहिं खग जग-आरति-हेतू। प्रगट भए नभ जहँ तहँ केतू।
दस दिसि दाह होन अति लागा। भयेउ परव विनु रविउपरागा।
मंदोदरि उर कंपति भारी। प्रतिमा स्रवहिं नयनमग वारी।

छंद—प्रतिमा स्रवहिं पवि पात नभ अतिवात वहु डोलति मही।
वरषहिं वलाहक रुधिर कच रज असुभ अति सक को कही॥
उतपात अमित विलोकि नभ सुर मुनि विकल वोलहिं जय जये।
सुर सभय जानि कृपाल रघुपति चाप सर जोरत भये॥

इहाँ अर्धनिसि रावनु जागा। निजसारथि सन खीझन लागा।
सठ रनभूमि छँड़ायसि मोही। धिग धिग अधम मंदमति तोही।
तेहिं पद गहि बहु बिधि समुझावा। भोर भए रथ चढ़ि पुनि धावा।
सुनि आगमन दसानन केरा। कपिदल खरभर भयेउ घनेरा।
जहँ तहँ भूधर बिटप उपारी। धाए कटकटाइ भट भारी।

छंद—धाए जो मर्कट बिकट भालु कराल कर भूधर धरा।
अति कोपि करहिं प्रहार मारत भजि चले रजनीचरा॥
बिचलाइ दल बलवंत कीसन्ह घेरि पुनि रावन लियो।
चहुँ दिसि चपेटन्हि मारि नखन्हि बिदारि तनु ब्याकुल कियो।

दो०—देखि महा मर्कट प्रबल रावन कीन्ह बिचार।
अंतरहित होइ निमिष महँ कृत माया बिस्तार॥१२४॥

तोमर छंद—जब कीन्ह तेहिं पाखंड। भए प्रगट जंतु प्रचंड॥
बेताल भूत पिसाच। कर धरें धनु नाराच॥
जोगिनि गहें करबाल। एक हाथ मनुजकपाल॥
करि सद्य सोनित पान। नाचहिं करहिं बहु गान॥
धरु मारु बोलहिं घोर। रहि पूरि धुनि चहुँ ओर॥
मुख बाइ धावहिं खान। तब लगे कीस परान॥
जहँ जाहिं मर्कट भागि। तहँ बरत देखहिं आगि॥
भए बिकल बानर भालु। पुनि लाग बरषै बालु॥
जहँ तहँ थकित करि कीस। गर्जेउ बहुरि दससीस॥
लछिमन कपीससमेत। भए सकल बीर अचेत॥
हा राम हा रघुनाथ। कहि सुभट मीजहिं हाथ॥
एहि बिधि सकल बल तोरि। तेहि कीन्ह कपट बहोरि॥
प्रगटेसि बिपुल हनुमान। धाए गहें पाषान॥
तिन्ह राम घेरे जाइ। चहुँ दिसि बरूथ बनाइ॥
मारहु धरहु जनि जाइ। कटकटहिं पूँछ उठाइ॥
दह दिसि लँगूर बिराज। तेहि मध्य कोसलराज॥

पतिगति देखि ते करहिं पुकारा। छूटे चिकुर न देह सँभारा *
उरताड़ना करहिं बिधि नाना। रोवत करहिं प्रताप बखाना।
तव बल नाथ डोल नित धरनी। तेजहीन पावक ससि तरनी।
सेष कमठ सहि सकहिं न भारा। सोइ तनु भूमि परेउ भरि छारा।
बरुन कुबेर सुरेस समीरा। रनसनमुख धर काहु न धीरा।
भुजबल जितेहु काल जम साईं। आजु परेउ अनाथ की नाईं।
जगतबिदित तुम्हारि प्रभुताई। सुत परिजन बल बरनि न जाइ।
रामबिमुख अस हालु तुम्हारा। रहा न कोउ कुल रोवनिहारा।
तव बस बिधिप्रपंच सब नाथा। सभय दिसिप नित नावहिं माथा।
अब तव सिर भुज जंबुक खाहीं। रामबिमुख यह अनुचित नाहीं।
कालबिबस पति कहा न माना। अग-जग नाथु मनुज करि जाना।
छंद—आनेउ मनुज करि दनुज-कानन-दहन-पावक हरि स्वयं।
जेहि नमत सिव ब्रह्मादि सुर पिअ भजेहु नहिं करुनामयं॥
आजनम तें पर-द्रोह-रत पापौघमय तव तनु अयं।
तुम्हहूँ दियो निजधाम राम नमामि ब्रह्म निरामयं॥
दो०—अहह नाथ रघुनाथ सम कृपासिंधु को आन।
मुनिदुर्लभ जो परमगति तोहि दीन्हि भगवान॥ १२६॥
चौ०-मंदोदरी बचन सुनि काना। सुर मुनि सिद्ध सबन्हि सुख माना।
अज महेस नारद सनकादी। जे मुनिबर परमारथबादी।
भरि लोचन रघुपतिहिं निहारी। प्रेममगन सब भए सुखारी।
रुदन करत बिलोकि सब नारी। गयेउ बिभीषनु मन दुख भारी।
बंधुदसा देखत दुख कीन्हा। राम अनुज कहुँ आयसु दीन्हा।
लछिमन जाइ ताहि समुझायेउ। बहुरि बिभीषनु प्रभु पहिं आयेउ।
कृपादृष्टि प्रभु ताहि बिलोका। करहु क्रिया परिहरि सब सोका।
कीन्हि क्रिया प्रभुआयसु मानी। बिधिवत देस काल जिय जानी।

* छक्कन०—छूटे कच नहिं देह सँभारा।

दो०—खैंचि सरासन स्रवन लगि* छाँड़े सर एकतीस।
रघु-नायक-सायक चले मानहुँ काल फनीस ॥ १२७ ॥

चौ०-सायक एक नाभिसर सोखा। अपर लगे सिर भुज करि रोखा।
लेइ सिर बाहु चले नाराचा। सिर भुज-हीन-रुंड महि नाचा।
धरनि धसै धर धाव प्रचंडा। तब प्रभु सर हति कृत जुग खंडा।
गर्जेउ मरत घोररव भारी। कहाँ राम रन हतौं पचारी।
डोली भूमि गिरत दसकंधर। छुभित सिंधु सरि दिग्गज भूधर।
धरनि परेउ† दोउ खंड बढ़ाई। चापि भालु-मर्कट-समुदाई।
मंदोदरि आगे भुज सीसा। धरि सर चले जहाँ जगदीसा।
प्रविसे सब निषंग महँ जाई। देखि सुरन्ह दुंदुभी बजाई।
तासु तेजु समान प्रभुआनन। हरषे देखि संभु चतुरानन।
जय जय धुनि पूरी ब्रह्मंडा। जय रघुवीर प्रबल-भुज-दंडा।
बरषहिं सुमन देव-मुनि-वृंदा। जय कृपाल जय जयति मुकुंदा।

छंद—जय कृपाकंद मुकुंद द्वंदहरन सरन-सुख-प्रद प्रभो।
खल-दल-विदारन परमकारन कारुनीक सदा विभो॥
सुर सिद्ध मुनि गंधर्व हरषे बाज दुंदुभि गहगही।
संग्रामअंगन रामअंग अनंग बहु सोभा लही॥
सिर जटामुकुट प्रसून बिच बिच अति मनोहर राजहीं।
जनु नीलगिरि पर तड़ित पटल समेत उडुगुन भ्राजहीं॥
भुजदंड सरकोदंड फेरत रुधिरकन तन अति बने।
जनु रायमुनी तमाल पर बैठीं बिपुल सुख आपने॥

दो०—कृपादृष्टि करि बृष्टि प्रभु अभय किए सुरवृंद।
हरषे बानर भालु सब जय सुखधाम मुकुंद ॥ १२८ ॥

चौ०-पतिसिर देखत मंदोदरी। मुरुछित बिकल धरनि खसि परी।
जुवतिवृंद रोवत उठि धाईं। तेहि उठाइ रावन पहिं आईं।

---

*काशि०, हस्त०, सरज०—पाठ:पेश धनु कान लगि। †काशि०—परेउ बीर।

सुनु मातु मैं पायेउँ अखिल-जग राज आजु न संसयं।
रन जीति रिपुदल बंधुगत पस्यामि राममनामयं ॥

दो०—सुनु सुत सदगुन सकल तव हृदय बसहु हनुमंत।
सानुकूल रघुबंस मनि रहहु समेत अनंत ॥१३२॥

चौ०-अब सोइ जतनु करहु तुम्ह ताता। देखौं नयन स्याम मृदुगाता।
तब हनुमान राम पहिं जाई। जनकसुता कै कुसल सुनाई।
सुनि संदेस भानु-कुल-भूषन *। बोलि लिए जुवराज बिभीषन।
मारुतसुत के संग सिधावहु। सादर जनकसुतहिं लेइ आवहु।
तुरतहिं सकल गए जहँ सीता। सेवहिं सब निसिचरी बिनीता।
बेगि बिभीषन तिन्हहिं सिखावा। सादर तिन्ह सीतहिं अन्हवावा।
बहु प्रकार भूषन पहिराए। सिबिका रुचिर साजि पुनि लाए।
ता पर हरषि चढ़ी बैदेही। सुमिरि राम सुखधाम सनेही।
बेतपानि रच्छक चहुँ पासा। चले सकल मन परम हुलासा †।
देखन भालु कीस सब आए। रच्छक कोपि निवारन धाए।
कह रघुबीर कहा मम मानहु। सीतहिं सखा पयादे आनहु।
देखहिं कपि जननी की नाईं। बिहँसि कहा रघुनाथ गुसाईं।
सुनि प्रभुबचन भालु कपि हरषे। नभ तें सुरन्ह सुमन बहु बरषे।
सीता प्रथम अनल महुँ राखी। प्रगट कीन्हि चह अंतर साखी।

दो०—तेहि कारन करुनायतन कहे कछुक दुर्बाद।
सुनत जातुधानी सकल लागीं करै बिषाद ॥१३३॥

चौ० प्रभु के बचन सीस धरि सीता। बोली मन-क्रम-बचन-पुनीता।
लछिमन होहु धरम के नेगी। पावक प्रगट करहु तुम्ह बेगी।
सुनि लछिमन सीता कै बानी। बिरह-बिबेक-धरम-नय सानी।

---

* काशि०—सुनि बानी पतंग-कुल-भूषन।

† इसके आगे काशि० की प्रति में यह चौपाई है—

संग लिए त्रिजटा निसिचरी। चढ़ी राम पहिं सुमिरत हरी।

दो०—मयतनयादिक नारि सब देइ तिलांजलि ताहि।
भवन गई रघुबीर-गुन-गन बरनत मन माहिं ॥१२०॥

चौ०-आइ बिभीषन पुनि सिर नायेउ। कृपासिंधु तब अनुज बोलायेउ।
तुम्ह, कपीस अंगद नल नीला। जामवंत मारुति नयसीला।
सब मिलि जाहु बिभीषन साथा। सारेहु तिलकु कहेउ रघुनाथा।
पिताबचन मैं नगर न आवौं। आपु सरिस कपि अनुज पठावौं।
तुरत चले कपि सुनि प्रभुबचना। कीन्ही जाइ तिलक कै रचना।
सादर सिंघासन बैठारी। तिलक कीन्ह अस्तुति अनुसारी।
जोरि पानि सबहीं सिरु नाए। सहित बिभीषन प्रभु पहिं आए।
तब रघुबीर बोलि कपि लीन्हे। कहि प्रियबचन सुखी सब कीन्हे।

छंद—किए सुखी कहि बानी सुधासम बल तुम्हारे रिपु हयो।
पायो बिभीषन राजु तिहुँ पुर जस तुम्हारो नित नयो॥
मोहि सहित सुभ कीरति तुम्हारी परम प्रीति जे गाइहैं।
संसारसिंधु अपार पार प्रयास बिनु नर पाइहैं॥

दो०—बारहिं बार बिलोक मुख नहिं अघाहिं कपिपुंज।
सुनत राम के बचन मृदु गहहिं सकल पदकंज ॥१२१॥

चौ०-पुनि प्रभु बोलि लियेउ हनुमाना। लंका जाहु कहेउ भगवाना।
समाचार जानकिहिं सुनायेहु। तासु कुसल लेइ तुम्ह चलि आयेहु।
तब हनुमंत नगर महुँ आए। सुनि निसिचरी निसाचर धाए।
बहु प्रकार तिन्ह पूजा कीन्ही। जनकसुता दिखाइ पुनि दीन्ही।
दूरिहिं तें प्रनाम कपि कीन्हा। रघु-पति-दूत जानकी चीन्हा।
कहहु तात प्रभु कृपानिकेता। कुसल अनुज-कपि-सेन-समेता।
सब बिधि कुसल कोसलाधीसा। मातु समर जीतेउ दससीसा।
अबिचल राजु बिभीषन पाया। सुनि कपिबचन हरष उर छाया।

छंद—अति हरष मन तन पुलक लोचन सजल कह पुनि पुनि रमा।
का देउँ तोहि त्रैलोक महुँ कपि किमपि नहिं बानी समा॥

सोउ कृपाल तब धाम सिधावा। यह हमरे मन बिसमौ आवा।
हम देवता परम अधिकारी। स्वारथरत तव भगति बिसारी।
भवप्रवाह संतत हम परे। अब प्रभु पाहि सरन अनुसरे।
दो०—करि बिनती सुर सिद्ध सब रहे जहँ तहँ कर जोरि।
अतिसय प्रेम सरोज-भव अस्तुति करत बहोरि॥१२६॥
छंद तोटक—जयराम सदा सुख धाम हरे। रघुनायक सायक-चाप-धरे।
भव-बारन-दारन सिंह प्रभो। गुनसागर नागर नाथ बिभो॥
तन काम अनेक अनूप छवी। गुन गावत सिद्ध मुनींद्र कवी।
जसु पावन रावन नाग महा। खगनाथ जथा करि कोप गहा॥
जनरंजन भंजन सोक भयं। गतक्रोध सदा प्रभु बोधमयं।
अवतार उदार अपारगुनं। महि-भार-बिभंजन ग्यानघनं।
अज व्यापकमेकमनादि सदा। करुनाकर राम नमामि मुदा।
रघु-बंस-बिभूषन दूषनहा। कृत भूप बिभीषन दीन रहा।
गुन-ग्यान-निधान अमान अजं। नित राम नमामि बिभुं बिरजं।
भुज-दंड-प्रचंड-प्रताप-बलं। खल-बृंद-निकंद-महा-कुसलं।
बिनु कारन दीनदयाल हितं। छबि धाम नमामि रमासहितं।
भवतारन कारन काजपरं। मन-संभव-दारुन-दोष-हरं।
सर चाप मनोहर त्रोनधरं। जलजारुन-लोचन भूपवरं।
सुखमंदिर सुंदर श्रीरमनं। मद मार महा-ममता-समनं।
अनवद्य अखंड न गोचर गो। सब रूप सदा सब होइ न सो।
इति बेद बदंति न दंतकथा। रबि आतपभिन्न न भिन्न जथा।
कृतकृत्य बिभो सब बानर ए। निरखंत तवानन सादर जे।
धिग जीवन देव सरीर हरे। तव भक्ति बिना भव भूमि परे।
अब दीनदयाल दया करिए। मति मोरि बिभेदकरी हरिए।
जेहि तें बिपरीत क्रिया करिए। दुख सो सुख मानि सुखी चरिए।
खलखंडन मंडन रम्य छमा। पद-पंकज सेवित संभु उमा।
नृपनायक दे बरदानमिदं। चरनांबुज प्रेम सदा सुभदं।

लोचन सजल जोरि कर दोऊ। प्रभु सन कछु कहि सकत न ओऊ।
देखि रामरुख लछिमनु धाए। प्रगटि कृसानु काठ बहु लाए।
प्रबल अनल देखि बैदेही। हृदय हरष कछु भय नहिं तेही।
जौं मन बच क्रम मम उर माहीं। तजि रघुबीर आन गति नाहीं।
तौ कृसानु सब कै गति जाना। मो कहँ होहु श्रिखंड समाना।

छंद—श्री-खंड-सम पावक प्रबेसु कियो सुमिरि प्रभु मैथिली।
जय कोसलेस महेस-बंदित-चरन रति अति निर्मली।
प्रतिबिंब अरु लौकिक कलंक प्रचंड पावक महुँ जरे।
प्रभुचरित काहु न लखे नभ सुर सिद्ध मुनि देखहिं खरे॥
तब अनल भूसुररूप कर गहि सत्य सिय श्रुतिबिदित जो।
जिमि छीरसागर इंदिरा रामहिं समर्पी आनि सो।
सो राम बाम बिभाग राजति रुचिर अति सोभा भली।
नव-नील-नीरज निकट मानहुँ कनक-पंकज की कली।

दो०—हरषि सुमन बरषहिं बिबुध बाजहिं गगन निसान।
गावहिं किन्नर अपछरा नाचहिं चढ़ी बिमान॥१३४॥
श्री-जानकी-समेत प्रभु सोभा अमित अपार।
देखत हरषे भालु कपि जय रघुपति सुखसार॥१३५॥

चौ०-तब रघु-पति-अनुसासन पाई। मातलि चलेउ चरन सिरु नाई।
आए देव सदा स्वारथी। बचन कहहिं जनु परमारथी।
दीनबंधु दयाल रघुराया। देव कीन्ह देवन्ह पर दाया।
बिस्व-द्रोह-रत यह खल कामी। निज अघ गयेउ कु-मारग-गामी।
तुम्ह सम रूप ब्रह्म अबिनासी। सदा एकरस सहज उदासी।
अकल अगुन अज अनघ अनामय। अजित अमोघसक्ति करुनामय।
मीन कमठ सूकर नरहरी। बामन परसुराम बपु धरी।
जब जब नाथ सुरन्ह दुख पावा। नाना तनु धरि तुम्हहिं नसावा।
रावन पापमूल सुरद्रोही। काम-लोभ-मद-रत अति कोही।

स्यामगात राजीवबिलोचन। दीनबंधु प्रनतारतिमोचन॥
अनुज-जानकी-सहित निरंतर। बसहु राम नृप मम उरअंतर॥
मुनिरंजन महि-मंडल-मंडन। तुलसि-दास-प्रभु त्रासबिखंडन॥

दो०—नाथ जबहिं कोसलपुरी होइहि तिलकु तुम्हार।
कृपासिंधु मैं आउब देखन चरित उदार॥१४२॥

चौ०-करि बिनती जब संभु सिधाए। तब प्रभु निकट बिभीषनु आए॥
नाइ चरन सिर कह मृदु बानी। बिनय सुनहु प्रभु सारंगपानी॥
सकुल सदल प्रभु रावन मारा। पावन जसु त्रिभुवन बिस्तारा॥
दीन मलीन हीनमति जाती। मो पर कृपा कीन्हि बहु भाँती॥
अब जनगृह पुनीत प्रभु कीजे। मज्जनु करिअ समरश्रम छीजे॥
देखि कोस मंदिर संपदा। देहु कृपाल कपिन्ह कहुँ मुदा॥
सब बिधि नाथ मोहि अपनाइअ। पुनि मोहि सहित अवध प्रभु जाइअ॥
सुनत बचन मृदु दीनदयाला। सजल भए दोउ नयन बिसाला॥

दो०—तोर कोस गृह मोर सब सत्य बचन सुनु भ्रात।
दसा भरत के सुमिरि मोहि निमिष कल्पसम जात॥१४३॥
तापस बेष सरीर कृस जपत निरंतर मोहि।
देखौं बेगि सो जतन करु सखा निहोरौं तोहि *॥१४४॥
बीते अवध जाउँ जौं जियत न पावौं बीर।
प्रीति भरत कै समुझि प्रभु पुनि पुनि पुलक सरीर*॥१४५॥
करेहु कल्प भरि राज तुम्ह मोहि सुमिरेहु मन माहिं।
पुनि मम धाम सिधाइहहु जहाँ संत सब जाहिं*॥१४६॥

चौ०-सुनत बिभीषन बचन राम के। हरषि गहे पद कृपाधाम के॥
बानर भालु सकल हरषाने। गहि प्रभुपद गुन बिमल बखाने॥
बहुरि बिभीषन भवन सिधावा। मनि-गन-बसन बिमानु भरावा॥
लेइ पुष्पक प्रभु आगे राखा। हँसि करि कृपासिंधु तब भाखा॥

* ये तीनों दोहे सदल० प्रति में नहीं है।

मोहि जानिये निज दास। दे भगति रमानिवास॥

छंद—दे भक्ति रमानिवास त्रासहरन सरन-सुख-दायकं।
सुखधाम• राम नमामि काम अनेकछवि रघुनायकं॥
सुर-बृंद-रंजन द्वंदभंजन मनुजतनु अतुलितबलं।
ब्रह्मादि-संकर-सेव्य राम नमामि करुनाकोमलं॥

दो०—अब करि कृपा बिलोकि मोहि आयसु देहु कृपाल।
काह करौं सुनि प्रिय बचन बोले दीनदयाल॥१३९॥

चौ०-सुनु सुरपति कपि भालु हमारे। परे भूमि निसिचरन्ह जे मारे।
मम हित लागि तजे इन्ह प्राना। सकल जियाउ सुरेस सुजाना।
सुनु खगपति प्रभु कै यह बानी। अति अगाध जानहिं मुनि ज्ञानी।
प्रभु सक त्रिभुवन मारि जियाई। केवल सक्रहि दीन्हि बड़ाई।
सुधा बरषि कपि भालु जियाए। हरषि उठे सब प्रभु पहिं आए।
सुधा वृष्टि भइ दुहुँ दल ऊपर। जिए भालु कपि नहिं रजनीचर।
रामाकार भए तिन्ह के मन। गए ब्रह्मपद तजि सरीर रन।
सुरअंसिक सब कपि अरु रीछा। जिये सकल रघुपति की ईछा।
रामसरिस को दीन-हित-कारी। कीन्हे मुक्त निसाचर-झारी।
खल मलधाम कामरत रावन। गति पाई जो मुनिवर पावन।

दो०—सुमन बरषि सब सुर चले चढ़ि चढ़ि रुचिर बिमान।
देखि सुअवसर राम पहिं आए संभु सुजान॥१४०॥
परम प्रीति कर जोरि जुग नलिननयन भरि बारि।
पुलकिततन गद्गदगिरा बिनय करत त्रिपुरारि॥१४१॥

छंद-मामभिरक्षय रघु-कुल-नायक। धृत बर-चाप रुचिर-कर-सायक॥
मोह महा घनपटल प्रभंजन। संसय-बिपिन-अनल सुररंजन॥
सगुन अगुन गुनमंदिर सुंदर। भ्रम-तम-प्रबल-प्रताप-दिवाकर॥
काम-क्रोध-मद-गज-पंचानन। बसहु निरंतर जन-मन-कानन॥
बिषय-मनोरथ-पुंज-कंज-बन। प्रबल तुषार उदार पार मन॥
भव-बारिधि-मंदर परमंदर। बारय तारय संसृति दुस्तर॥

मन महुँ विप्रचरन सिर नावा। उत्तर दिसिहिं बिमान चलावा।
चलत बिमानु कोलाहलु होई। जय रघुबीर कहहिं सब कोई।
सिंघासनु अतिउच्च मनोहर। सियसमेत प्रभु बैठे ता पर।
राजत रामसहित भामिनी। मेरुसृंग जनु घनु दामिनी।
रुचिर बिमानु चलेउ अतिआतुर। कीन्ही सुमनबृष्टि हरषे सुर।
परम सुखद चलि त्रिबिध बयारी। सागर सर सरि निर्मल बारी।
सगुन होहिं सुंदर चहुँ पासा। मन प्रसन्न निर्मल नभ आसा।
कह रघुबीर देखु रन सीता। लछिमन इहाँ हतेउ इंद्रजीता।
हनूमान अंगद के मारे। रन महिं परे निसाचर भारे।
कुंभकरन रावन दोउ भाई। इहाँ हते सुर-मुनि-दुख-दाई।

दो०—इहाँ सेतु बाँधेउँ अरु * थापेउँ सिव सुखधाम।
सीतासहित कृपायतन संभुहि कीन्ह प्रनाम॥ १५२॥
जहँ जहँ करुनासिंधु बन कीन्ह बास बिश्राम।
सकल देखाए जानकिहि कहे सबन्हि के नाम॥ १५३॥

चौ०-सपदि बिमानु तहाँ चलि आवा। दंडकबन जहँ परम सुहावा।
कुंभजादि मुनिनायक नाना। गए राम सब के अस्थाना।
सकल रिषिन्ह सन पाइ असीसा। चित्रकूट आयेउ जगदीसा।
तहँ करि मुनिन्ह करे संतोखा। चला बिमान तहाँ ते चोखा।
बहुरि राम जानकिहि देखाई। जमुना कलि-मल-हरनि सुहाई।
पुनि देखी सुरसरी पुनीता। राम कहा प्रनाम करु सीता।
तीरथपति पुनि देखु प्रयागा। देखत जनम-कोटि-अघ भागा।
देखु परमपावनि पुनि बेनी। हरनि सोक हरि-लोक-निसेनी।
देखो अवधपुरी अति पावनि। त्रि-बिध-ताप भवरोग नसावनि।

---

* काशि०—यह देखु सुंदर सेतु जहँ। सदल०—सुंदरि सेतु देखु यह। छक्कन०—इहाँ सेतु जहँ बाँधेउ अरु।

चढ़ि बिमान सुनु सखा बिभीषन। गगन जाइ बरषहु पट भूषन।
नभ पर जाइ बिभीषन तबहीं। बरषि दिए मनि अंबर सबहीं।
जोइ जोइ मन भावै सोइ लेहीं। मनि मुख मेलि डारि कपि देहीं।
हँसे राम श्री-अनुज-समेता। परमकौतुकी कृपानिकेता।

दो०—ध्यान न पावहिं जासु मुनि नेति नेति कह बेद।
कृपासिंधु सोइ कपिन्ह सन करत अनेक बिनोद* ॥१४७॥
उमा जोग जप दान तप नाना ब्रत मख नेम।
रामकृपा नहिं करहिं तसि जसि निस्केवल प्रेम ॥१४८॥

चौ०-भालु कपिन्ह पट भूषन पाए। पहिरि पहिरि रघुपति पहिं आए।
नाना जिनिस देखि प्रभु कीसा। पुनि पुनि हँसत कोसलाधीसा।
चितै सबन्ह पर कीन्ही दाया। बोले मृदुल बचन रघुराया।
तुम्हरे बल मैं रावनु मारा। तिलकु बिभीषन कहुँ पुनि सारा।
निज निज गृह अब तुम्ह सब जाहू। सुमिरेहु मोहि डरेहु जनि काहू।
बचन सुनत प्रेमाकुल बानर। पानि जोरि बाले सब सादर।
प्रभु जोइ कहहु तुम्हहिं सब सोहा। हमरे होत बचन सुनि मोहा।
दीन जानि कपि किए सनाथा। तुम्ह त्रैलोक ईस रघुनाथा।
सुनि प्रभुबचन लाज हम मरहीं। मसक कतहुँ खग-पति-हित करहीं।
देखि रामरुख बानर रीछा। प्रेममगन नहिं गृह कै ईछा।

दो०—प्रभुप्रेरित कपि भालु सब रामरूप उर राखि।
हरष बिषाद समेत तब चले बिनय बहु भाषि ॥१४९॥
जामवंत कपिराज नल अंगदादि हनुमान।
सहित बिभीषन अपर जे जूथप कपि बलवान ॥१५०॥
कहि न सकहिं कछु प्रेमबस भरि भरि लोचन बारि।
सनमुख चितवहिं रामतन नयननिमेष निवारि ॥१५१॥

चौ०-अतिसय प्रीति देखि रघुराई। लीन्हे सकल बिमान चढ़ाई।

---

* सदल०—बिभेद।

यह कलिकाल मलायतन मन करि देखु बिचार।
श्रीरघुनायक-नामु तजि नहिं कछु आन अधार ॥१५७॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने
विमलविज्ञानसम्पादनो नाम
षष्ठः सोपानः समाप्तः।

दो०—तब रघुनंदन सिय सहित अवधहिं कीन्ह प्रनामु।
सजल बिलोचन पुलकि तन पुनि पुनि हरषत रामु ॥१५४॥
बहुरि त्रिबेनी आइ प्रभु हरषित मज्जनु कीन्ह।
कपिन्ह समेत महीसुरन्ह दान विविध विधि दीन्ह ॥१५५॥

चौ०-प्रभु हनुमंतहि कहा बुझाई। धरि बटुरूप अवधपुर जाई।
भरतहि कुसल हमारि सुनायेहु। समाचार लेइ तुम्ह चलि आयेहु।
तुरत पवनसुत गवनत भयेऊ। तब प्रभु भरद्वाज पहिं गयेऊ।
नाना विधि मुनि पूजा कीन्ही। अस्तुति करि पुनि आसिष दीन्ही।
मुनिपद बंदि जुगल कर जोरी। चढ़ि बिमान प्रभु चले बहोरी।
इहाँ निषाद सुना हरि आए। नाव नाव कहँ लोग बुलाए।
सुरसरि नाँघि जान जब आवा। उतरेउ तट प्रभुआयसु पावा।
तब सीता पूजी सुरसरी। बहु प्रकार पुनि चरनन्हि परी।
दीन्हि असीस हरषि मन गंगा। सुंदरि तव अहिवात अभंगा।
सुनत गुहा धायेउ प्रेमाकुल। आयेउ निकट परम-सुख-संकुल।
प्रभुहि बिलोकि सहित बैदेही। परेउ अवनि तनसुधि नहिं तेही।
प्रीति परम बिलोकि रघुराई। हरषि उठाइ लियो उर लाई।

छंद—लियो हृदय लाइ कृपानिधान सुजान राय रमापती।
बैठारि परम समीप बूझी कुसल सो करि बीनती ॥
अब कुसल पदपंकज बिलोकि बिरंचि-संकर-सेव्य जे।
सुखधाम पूरनकाम राम नमामि राम नमामि ते ॥
सब भाँति अधम निषाद सो हरि भरतज्यों उर लाइयो।
मतिमंद तुलसीदास सो प्रभु मोहबस बिसराइयो ॥
यह रावनारिचरित्र पावन राम-पद-रति-प्रद सदा।
कामादिहर बिग्यानकर सुर सिद्ध मुनि गावहिं मुदा॥

दो०—समर बिजय रघुबीर के चरित जे सुनहिं सुजान*।
बिजय बिबेक बिभूति नित तिन्हहिं देहिं भगवान ॥१५६॥

* काशि०—समरबिजय रघु-पति-चरित सुनहिं जे सदा सुजान।

सप्तम सोपान

(उत्तर कांड)

श्लोकाः

केकीकण्ठाभनीलं उरवरविलसद्विप्रपादाब्जचिह्नं
शोभाढ्यं पीतवस्त्रं सरसिजनयनं सर्वदा सुप्रसन्नम् ।
पाणौ नाराचचापं कपिनिकरयुतं बन्धुना सेव्यमानं
नौमीड्यं जानकीशं रघुवरमनिशं पुष्पकारूढरामम् ॥१॥
कोशलेन्द्रपदकञ्जमञ्जुलौ कोमलावजमहेशवन्दितौ
जानकीकरसरोजलालितौ चिन्तकस्य मनभृङ्गसङ्गिनौ ॥२॥
कुन्दइन्दुदरगौरसुन्दरं अम्बिकापतिमभीष्टसिद्धिदम् ।
कारुणीककलकञ्जलोचनं नौमि शङ्करमनङ्गमोचनम् ॥३॥

मोर के कंठ ऐसे नीलवर्ण वाले ब्राह्मण के चरणकमल के चिह्न (भृगुलता) से शोभित उत्तम वक्षस्थल वाले, शोभा से भरे, पीताम्बर धारण किए, कमल से नयनवाले, सर्वदा सुप्रसन्न, हाथ में धनुष बाण लिए, वानरों के झुंड से युत, भाई (लक्ष्मण) से सेवित, जानकी के नाथ, पुष्पक पर चढ़े, रघुकुल में श्रेष्ठ और पूज्य राम को सर्वदा नमस्कार करता हूँ ॥१॥

कोमल, ब्रह्मा-महादेव से वंदित, जानकी के हस्तकमल से लालित, ध्यान करनेवाले भक्तजन के मन रूपी भ्रमर के संगी, ऐसे कोसलेंद्र के चरणकमल को (नमस्कार करता हूँ) ॥२॥

कुंद फूल, चंद्र और शंख के गौर वर्ण से भी सुंदर, अंबिका (पार्वती) के पति, मनोरथ के घर, करुणा से भरे, सुंदर कमल से नयन वाले, कामदेव को नाश करनेवाले, शंकर को नमस्कार करता हूँ ॥३॥

मारुतसुत मैं कपि हनुमाना। नाम मोर सुनु कृपानिधाना।
दीनबंधु रघुपति कर किंकर। सुनत भरत भेंटेउ उठि सादर।
मिलत प्रेमु नहिं हृदय समाता। नयन स्रवत जल पुलकित गाता।
कपि तव दरस सकल दुख बीते। मिले आजु मोहि राम पिरीते।
बार बार बूझी कुसलाता। तो कहुँ देउँ काह सुनु भ्राता।
एहि संदेससरिस जग माहीं। करि बिचार देखेउँ कछु नाहीं।
नाहिंन तात उरिन मैं तोही। अब प्रभुचरित सुनावहु मोही।
तब हनुमंत नाइ पद माथा। कहे सकल रघु-पति-गुन-गाथा।
कहु कपि कबहुँ कृपाल गुसाईं। सुमिरहिं मोहि दास की नाईं।

छंद—निज दास ज्यों रघु-बंस-भूषन कबहुँ मम सुमिरन कर्‌यो।
सुनि भरत बचन बिनीत अति कपि पुलकि तन चरनन्हि पर्‌यो॥
रघुबीर निजमुख जासु गुनगन कहत अग-जग-नाथ जो।
काहे न होइ बिनीत परम पुनीत सद-गुन-पाथ * सो॥

दो०—राम-प्रान प्रिय नाथ तुम्ह सत्य बचन मम तात।
पुनि पुनि मिलत भरत सुनि हरष न हृदय समात॥७॥

सो०—भरतचरन सिरु नाइ तुरित गयेउ कपि राम पहिं।
कही कुसल सब जाइ हरषि चलेउ प्रभु जान चढ़ि॥८॥

चौ०-हरषि भरत कोसलपुर आए। समाचार सब गुरहिं सुनाए।
पुनि मंदिर महँ बात जनाई। आवत नगर कुसल रघुराई।
सुनत सकल जननी उठि धाईं। कहि प्रभुकुसल भरत समुझाईं।
समाचार पुरबासिन्ह पाए। नर अरु नारि हरषि सब धाए।
दधि दुर्बा रोचन फल फूला। नव तुलसीदल मंगलमूला।
भरि भरि हेमथार भामिनी। गावत चलीं सिंधुरगामिनी †।
जो जैसेहिं तैसेहिं उठि धावहिं। बाल वृद्ध कहँ संग न लावहिं।
एक एकन्ह कहँ बूझहिं भाई। तुम्ह देखे दयाल रघुराई।

---

* हस्त०, सदल०—सिंधु। † हस्त०—गावत चलि सिंधुरबर गामिनी।

दो०—रहा एक दिन अवधि कर अति आरत पुरलोग।
जहँ तहँ सोचहिं नारि नर कृसतन रामवियोग ॥१॥
सगुन होहिं सुंदर सकल मन प्रसन्न सब केर।
प्रभुआगमन जनाव जनु नगर रम्य चहुँ फेर ॥२॥
कौसल्यादि मातु सब मन अनंद अस होइ।
आए प्रभु सिय-अनुज-युत कहन चहत अब कोइ ॥३॥
भरत-नयन-भुज दच्छिन फरकत वारहिं वार।
जानि सगुन मन हरष अति लागे करै विचार ॥४॥

चौ०-रहेउ एक दिन अवधि-अधारा। समुझत मन दुख भयेउ अपारा।
कारन कवन नाथु नहिं आयेउ। जानि कुटिल किधौं मोहि बिसरायेउ।
अहह धन्य लछिमनु वड़ भागी। राम - पदारविंद - अनुरागी।
कपटी कुटिल मोहि प्रभु चीन्हा। ता तें नाथ संग नहिं लीन्हा।
जौं करनी समुझैं प्रभु मोरी। नहिं निस्तार कलपसत कोरी।
जनअवगुन प्रभु मान न काऊ। दीनवंधु अति मृदुल सुभाऊ।
मोरे जिय भरोस दृढ़ सोई। मिलिहहिं रामु सगुन सुभ होई।
बीते अवधि रहहिं जौं प्राना। अधम कवन जग मोहि समाना।

दो०—राम-बिरह-सागर महुँ भरत मगन मन होत।
विप्ररूप धरि पवनसुत आइ गयेउ जनु पोत ॥ ५ ॥
बैठे देखि कुसासन जटामुकुट कृसगात।
राम राम रघुपति जपत स्रवत नयन जलजात ॥ ६ ॥

चौ०-देखत हनूमान अति हरषेउ। पुलकगात लोचनजलु वरषेउ।
मन महुँ वहुत भाँति सुख मानी। वोलेउ श्रवन-सुधा-सम वानी।
जासु विरह सोचहु दिनु राती। रटहु निरंतर गुन-गन-पाँती।
रघु-कुल-तिलक सु-जन-सुख-दाता। आयेउ कुसल देव-मुनि-त्राता।
रिपु रन जीति सुजसु सुर गावत। सीता अनुज सहित पुर आवत।
सुनत वचन विसरे सब दूखा। तृषावंत जिमि पाव पियूखा।
को तुम्ह तात कहाँ तें आए। मोहि परम प्रिय वचन सुनाए।

स्यामलगात रोम भए ठाढ़े। नव-राजीव-नयन जल बाढ़े।

छंद—राजीवलोचन स्रवत जल तन ललित पुलकावलि बनी।
अति प्रेम हृदय लगाइ अनुजहिं मिले प्रभु त्रि-भुवन-धनी॥
प्रभु मिलत अनुजहिं सोह मो पहिं जाति नहिं उपमा कही।
जनु प्रेम अरु सिंगार तनु धरि मिले बर सुखमा*लही॥
बूझत कृपानिधि कुसल भरतहिं बचनु बेगि न आवई।
सुनु सिवा सो सुख बचनमन ते भिन्न जान जो पावई॥
अब कुसल कोसलनाथ आरत जानि जन दरसन दियो।
बूड़त बिरहबारीस कृपानिधान मोहि कर गहि लियो॥

दो०—पुनि प्रभु हरषित सत्रुहन भेंटे हृदय लगाइ।
लछिमनु भरत मिले तब परम प्रेम दोउ भाइ †॥१४॥

चौ०-भरतानुज लछिमनु पुनि भेंटे। दुसह बिरहसंभव दुख मेटे
सीताचरन भरत सिरु नावा। अनुज समेत परम सुख पावा
प्रभु बिलोकि हरषे पुरबासी। जनित वियोग बिपति सब नासी।
प्रेमातुर सब लोग निहारी। कौतुक कीन्ह कृपाल खरारी।
अमित रूप प्रगटे तेहि काला। जथाजोग मिले सबहिं कृपाला।
कृपादृष्टि रघुबीर बिलोकी। किए सकल नर नारि बिसोकी।
छन महुँ सबहि मिले भगवाना। उमा मरमु यह काहु न जाना।
एहि बिधि सबहिं सुखी करि रामा। आगे चले सील-गुन-धामा।
कौसल्यादि मातु सब धाईं। निरखि बच्छ जनु धेनु लवाईं।

छंद—जनु धेनु बालक बच्छ तजि गृह चरन बन परबस गईं।
दिनअंत पुर रुख स्रवत थन हुँकार करि धावत भईं॥
अतिप्रेम प्रभु सब मातु भेंटी बचन मृदु बहु बिधि कहे।
गइ बिषम बिपति बियोगभव तिन्ह हरष सुख अगनित लहे॥

दो०—भेंटेउ तनय सुमित्रा राम-चरन-रति जानि।
रामहिं मिलत कैकई हृदय बहुत सकुचानि॥१५॥

---

* काशि०-परमा। † सद्ग०-लछिमन भेंटे भरत पुनि प्रेम न हृदय समाइ।

अवधपुरी प्रभु आवत जानी। भई सकल सोभा कै खानी।
भइ सरजू अति-निर्मल-नीरा। बहै सुहावन त्रिविध समीरा।

दो०—हरषित गुर परिजन अनुज भू-सुर-वृंद-समेत।
चले भरत अतिप्रेम मन सनमुख कृपानिकेत॥ ९॥
बहुतक चढ़ी अटारिन्ह निरखहिं गगन बिमान।
देखि मधुर सुर हरषित करहिं सुमंगल गान॥ १०॥
राकाससि रघुपति पुर सिंधु देखि हरषान।
बढ़ेउ कोलाहल करत जनु नारि-तरंग-समान॥ ११॥

चौ०-इहाँ भानु-कुल-कमल-दिवा-कर। कपिन्ह देखावत नगर मनोहर
सुनु कपीस अंगद लंकेसा। पावन पुरी रुचिर यह देसा
जद्यपि सब बैकुंठ बखाना। बेद-पुरान-विदित जग जाना।
अवध सरिस प्रिय मोहि न सोऊ। यह प्रसंग जानै कोउ कोऊ
जनमभूमि मम पुरी सुहावनि। उत्तर दिसि बह सरजू पावनि।
जा मज्जन तें बिनहिं प्रयासा। मम समीप नर पावहिं बासा।
अतिप्रिय मोहि इहाँ के बासी। मम धामदा पुरी सुखरासी।
हरषे सब कपि सुनि प्रभुबानी। धन्य अवध जो राम बखानी।

दो०—आवत देखि लोग सब कृपासिंधु भगवान।
नगर निकट प्रभु प्रेरेउ उतरेउ भूमि बिमान॥१२॥
उतरि कहेउ प्रभु पुष्पकहिं तुम्ह कुबेर पहिं जाहु।
प्रेरित राम चलेउ सो हरष बिरहु अति ताहु॥१३॥

चौ०-आए भरत संग सब लोगा। कृसतन श्री-रघु-बीर-बियोगा।
बामदेव बसिष्ठ मुनिनायक। देखे प्रभु महि धरि धनु सायक।
धाइ धरे गुर-चरन-सरोरुह। अनुजसहित अति-पुलक-तनोरुह।
भेंटि कुसल बूझी मुनिराया। हमरे कुसल तुम्हारिहि दाया।
सकल द्विजन्ह मिलि नायेउ माथा। धरम-धुरं-धर रघु-कुल-नाथा।
गहे भरत पुनि प्रभु-पद-पंकज। नमत जिन्हहिं सुर मुनि संकर अज।
परे भूमि नहिं उठत उठाए। बर करि कृपासिंधु उर लाए।

बीथी सकल सुगंध सिंचाईं। गजमनि रचि बहु चौक पुराईं।
नाना भाँति सुमंगल साजे। हरषि नगर निसान बहु बाजे।
जहँ तहँ नारि निछावरि करहीं। देहिं असीस हरष उर भरहीं।
कंचनथार आरती नाना। जुवती सजे करहिं सुभ गाना।
करहिं आरती आरतिहर कै। रघु कुल-कमल-बिपिन-दिन-कर कै।
पुरसोभा संपति कल्याना। निगम सेष सारदा बखाना।
तेउ यह चरित देखि ठगि रहहीं। उमा तासु गुन नर किमि कहहीं।

दो०—नारि कुमुदिनी अवध सर रघु-पति-बिरह दिनेस।
अस्त भए बिगसत भईं निरखि रामु राकेस ॥२०॥
होंहि सगुन सुभ बिबिध बिधि बाजहिं गगन निसान।
पुर-नर नारि सनाथ करि भवन चले भगवान ॥२१॥

चौ०-प्रभु जानी कैकई लजानी। प्रथम तासु गृह गए भवानी।
ताहि प्रबोधि बहुत सुख दीन्हा। पुनि निज भवन गमनु हरि कीन्हा।
कृपासिंधु जब मंदिर गए। पुर-नर नारि सुखी सब भए।
गुर बसिष्ठ द्विज लिये बोलाई। आज सुघरी सुदिनु सुभदाई।
सब द्विज देहु हरषि अनुसासन। रामचंद्र बैठहिं सिंघासन।
मुनि बसिष्ठ के बचन सुहाए। सुनत सकल बिप्रन्ह अति भाए।
कहहिं बचन मृदु बिप्र अनेका। जगअभिराम रामअभिषेका।
अब मुनिबर बिलंबु नहिं कीजै। महाराज कहुँ तिलकु करीजै।

दो०—तब मुनि कहेउ सुमंत्र सन सुनत चलेउ सिरु नाइ।
रथ अनेक बहु बाजि गज तुरत सँवारेउ जाइ ॥२२॥
जहँ तहँ धावन पठै पुनि मंगल द्रब्य मँगाइ।
हरष समेत बसिष्ठपद पुनि सिरु नायेउ आइ ॥२३॥

चौ०-अवधपुरी अतिरुचिर बनाई। देवन्ह सुमनबृष्टि झरि लाई।
राम कहा सेवकन्ह बोलाई। प्रथम सखन्ह अन्हवावहु जाई।
सुनत बचन जहँ तहँ जन धाए। सुग्रीवादि तुरत अन्हवाए।
पुनि करुनानिधि भरत हँकारे। निज कर राम जटा निरुआरे।

लछिमन सब मातन्ह मिलि हरषे आसिष पाइ।
कैकइ कहुँ पुनि पुनि मिले मन कर छोभ न जाइ ॥१६॥

चौ०-सासुन्ह सबन्ह मिली बैदेही। चरनन्हि लागि हरष अति तेही।
देहिं असीस बूझि कुसलाता। होहु अचल तुम्हार अहिवाता।
सब रघु-पति-मुख-कमल बिलोकहिं। मंगल जानि नयनजल रोकहिं।
कनकथार आरती उतारहिं। बार बार प्रभुगात निहारहिं।
नाना भाँति निछावरि करहीं। परमानंद हरष उर भरहीं।
कौसल्या पुनि पुनि रघुबीरहिं। चितवति कृपासिंधु रनधीरहिं।
हृदय बिचारति बारहिं बारा। कवन भाँति लंकापति मारा।
अतिसुकुमार जुगल मेरे बारे। निसिचर सुभट महाबल भारे।

दो०—लछिमन अरु सीतासहित प्रभुहिं बिलोकति मात।
परमानंद-मगन-मन पुनि पुनि पुलकित गात ॥ १७ ॥

चौ०-लंकापति कपीस नल नीला। जामवंत अंगद सुभसीला।
हनुमदादि सब बानर बीरा। धरे मनोहर मनुजसरीरा।
भरत—सनेहु—सील-ब्रत—नेमा। सादर सब बरनहिं अतिप्रेमा।
देखि नगरबासिन्ह कै रीती। सकल सराहहिं प्रभु-पद-प्रीती।
पुनि रघुपति सब सखा बोलाए। मुनिपद लागहु सकल सिखाए।
गुर बसिष्ठ कुलपूज्य हमारे। इन्ह की कृपा दनुज रन मारे।
ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे। भए समरसागर कहुँ बेरे।
मम हित लागि जनम इन्ह हारे। भरतहुँ तें मोहि अधिक पिआरे।
सुनि प्रभुवचन मगन सब भए। निमिष निमिष उपजत सुख नए।

दो०—कौसल्या के चरनन्हि पुनि तिन्ह नायेउ माथ॥
आसिष दीन्ही हरषि तुम्ह प्रिय मम जिमि रघुनाथ ॥ १८ ॥
सुमनवृष्टि नभ संकुल भवन चले सुखकंद।
चढ़ी अटारिन्ह देखहिं नगर-नारि-बर-बृंद ॥ १९ ॥

चौ०-कंचनकलस बिचित्र सँवारे। सबहिं धरे सजि निज निज द्वारे।
बंदनवार पताका केतू। सबन्हि बनाए मंगलहेतू।

दो०—वह सोभा समाज सुख कहत न बनै खगेस।
बरनै सारद सेष श्रुति सो रस जान महेस ॥२७॥
भिन्न भिन्न अस्तुति करि गे सुर निज निज धाम।
बंदिवेष धरि वेद तब आए जहँ श्रीराम ॥२८॥
प्रभु सर्बग्य कीन्ह अति आदर कृपानिधान।
लखेउ न काहू मरम कछु लगे करन गुनगान ॥२९॥
छंद—जय सगुन निर्गुनरूप रूपअनूप भूप सिरोमने।
दसकंधरादि प्रचंड निसिचर प्रबल खल भुजबल हने॥
अवतार नर संसारभार बिभंजि दारुनदुख दहे।
जय प्रनतपाल दयाल प्रभु संजुक्तसक्ति नमामहे॥
तव बिषम मायावस सुरासुर नाग नर अग जग हरे।
भवपंथ भ्रमत अमित दिवसनिसि काल कर्म गुनन्हि भरे॥
जे नाथ करि करुना बिलोके त्रिविध दुख ते निर्बहे।
भव-खेद-छेदन-दच्छ हम कहँ रच्छ राम नमामहे॥
जे ग्यान-मान-बिमत्त तव भवहरनि भगति न आदरी।
ते पाइ सुर-दुर्लभ-पदादपि परत हम देखत हरी।
बिस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे॥
जपि नाम तव बिनु श्रम तरहिं भवनाथ सोइ समरामहे।
जे चरन सिव अज पूज्य रज सुभ परसि मुनिपतिनी तरी।
नखनिर्गता मुनिबंदिता त्रैलोक्य-पावनि सुरसरी॥
ध्वज-कुलिस-अंकुस-कंज-जुत बन फिरत कंटक किन लहे।
पद-कंज-द्वंद मुकुंद राम रमेस नित्य भजामहे॥
अब्यक्त-मूल-मनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने।
षट कंध साखा पंचबीस अनेक पर्न सुमन घने॥
फल जुगल बिधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आस्रित रहे।
पल्लवत फूलत नवल नित संसारबिटप नमामहे॥
जे ब्रह्म अजमद्वैत-मनुभव-गम्य मन पर ध्यावहीं।

अन्हवाए प्रभु तीनउँ भाई। भगतबछल कृपाल रघुराई।
भरतभाग्य प्रभु-कोमल-ताई। सेष कोटि सत सकहिं न गाई।
पुनि निज जटा राम बिबराए। गुरु अनुसासन माँगि नहाए।
करि मज्जनु प्रभु भूषन साजे। अंग अनंग कोटि छबि छाजे।

दो०—सासुन्ह सादर जानकिहि मज्जनु तुरत कराइ।
दिव्य बसन बर भूषन अँग अँग सजे बनाइ ॥२४॥
राम-बाम-दिसि सोभति रमारूप गुनखानि।
देखि मातु सब हरषीं जनम सुफल निज जानि ॥२५॥
सुनु खगेस तेहि अवसर ब्रह्मा सिव मुनिबृंद।
चढ़ि बिमान आए सब सुर देखन सुखकंद ॥२६॥

चौ० प्रभु बिलोक मुनि मनु अनुरागा। तुरत दिव्य सिंघासनु माँगा ॥
रबिसम तेज सो बरनि न जाई। बैठे राम द्विजन्ह सिरु नाई।
जनक-सुता-समेत रघुराई। पेखि प्रहरषे मुनिसमुदाई।
बेदमंत्र तब द्विजन्ह उचारे। नभ सुर मुनि जय जयति पुकारे।
प्रथम तिलक बसिष्ठ मुनि कीन्हा। पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।
सुत बिलोकि हरषीं महतारी। बार बार आरती उतारी।
बिप्रन्ह दान बिबिध बिधि दीन्हे। जाचक सकल अजाचक कीन्हे।
सिंघासन पर त्रि-भुवन-साईं। देखि सुरन्ह दुंदुभी बजाईं।

छंद—नभ दुंदुभी बाजहिं बिपुल गंधर्ब किंनर गावहीं।
नाचहिं अपछराबृंद परमानंद सुर मुनि पावहीं ॥
भरतादि अनुज बिभीषनांगद हनुमदादि समेत ते।
गहे छत्र चामर व्यजन धनु असि चर्म* सक्ति बिराजते ॥
सियसहित दिन-कर-बंस-भूषन काम बहु छबि सोहई।
नव-अंबु-धर-बर-गात अंबर पीत मुनिमन मोहई ॥
मुकुटांगदादि बिचित्र भूषन अंग अंगन्हि प्रति सजे।
अंभोजनयन बिसाल उर भुज धन्य नर निरखंत जे ॥

* पाठा०—चर्म।

दो०—बार बार बर माँगौं हरषि देहु श्रीरंग।
पद-सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग ॥३२॥
बरनि उमापति रामगुन हरषि गए कैलास।
तब प्रभु कपिन्ह दिवाए सब बिधि सुखप्रद बास ॥३३॥
चौ०-सुनु खगपति यह कथा पावनी। त्रिबिध ताप भव-भय-दावनी।
महाराज कर सुभ अभिषेका। सुनत लहहिं नर बिरति बिबेका।
जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं। सुख संपति नाना बिधि पावहिं।
सुरदुर्लभ सुख करि जग माहीं। अंतकाल रघु-पति-पुर जाहीं।
सुनहिं बिमुक्त बिरत अरु बिषई। लहहिं भगति गति संपति नई।
खगपति रामकथा मैं बरनी। स्व-मति-बिलास त्रास-दुख-हरनी।
बिरति बिबेक भगति दृढ़ करनी। मोह नदी कहँ सुंदर तरनी।
नित नव मंगल कोसलपुरी। हरषित रहहिं लोग सब पुरी।
नित नव प्रीति राम-पद-पंकज। सबके जिन्हहिं नमत सिव मुनि अज।
मंगन बहु प्रकार पहिराए। द्विजन्ह दान नाना बिधि पाए।
दो०—ब्रह्मानंदमगन कपि सब के प्रभुपद्प्रीति।
जात न जाने दिवस तिन्ह गए मास षट बीति ॥३४॥
चौ०-बिसरे गृह सपनेहुँ सुधि नाहीं। जिमि परद्रोह संत मन माहीं।
तब रघुपति सब सखा बोलाए। आइ सबन्हि सादर सिर नाए।
परम प्रीति समीप बैठारे। भगत सुखद मृदु बचन उचारे।
तुम्ह अति कीन्हि मोरि सेवकाई। मुख पर केहि बिधि करौं बड़ाई।
ता तें मोहि तुम्ह अतिप्रिय लागे। मम हित लागि भवन सुख त्यागे।
अनुज राज संपति बैदेही। देह गेह परिवार सनेही।
सब मम प्रिय नहिं तुम्हहिं समाना। मृषा न कहौं मोर यह बाना।
सब के प्रिय सेवक यह नीती। मोरें अधिक दास पर प्रीती।
दो०—अब गृह जाहु सखा सब भजेहु मोहि दृढ़ नेम।
सदा सर्बगत सर्बहित जानि करेहु अति प्रेम ॥३५॥
चौ०-सुनि प्रभुबचन मगन सब भए। को हम कहाँ बिसारि तन गए।

ते कहहु जानहु नाथ हम तव सगुन जस नित गावहीं ॥
करुनायतन प्रभु सद्गुनाकर देव यह बर माँगहीं।
मन बचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं ॥

दो०—सब के देखत देवन्ह बिनती कीन्हि उदार।
अंतरधान भए पुनि गए ब्रह्मआगार ॥२०॥
बैनतेय सुनु संभु तब आए जहँ रघुबीर।
बिनय करत गद्गद गिरा पूरित पुलक सरीर ॥२१॥

तोमरछंद—जय राम रमा रमनं समनं। भव-ताप-भयाकुल पाहि जनं ॥
अवधेस सुरेस रमेस बिभो। सरनागत माँगत पाहि प्रभो।
दस-सीस-बिनासन बीस भुजा। कृत दूरि महा-महि-भूरि-रुजा ॥
रजनी-चर-बृंद-पतंग रहे। सर-पावक-तेज प्रचंड दहे ॥
महि-मंडल-मंडन चारुतरं। धृत-सायक-चाप-निषंग-बरं ॥
मद मोह महा ममता रजनी। तमपुंज दिवाकर-तेज-अनी।
मनजात किरात निपात किये। मृग लोग कुभोग सरेन हिये।
हति नाथ अनाथन्हि पाहि हरे। बिषयावन पाँवर भूलि परे ॥
बहु रोग बियोगिन्ह लोग हए। भवदंघ्रिनिरादर के फल ए ॥
भवसिंधु अगाध परे नर ते। पद-पंकज-प्रेमु न जे करते ॥
अतिदीन मलीन दुखी नितहीं। जिन्ह के पदपंकज प्रीति नहीं।
अवलंब भवंत कथा जिन्ह के। प्रिय संत अनंत सदा तिन्ह के।
नहि राग न लोभ न मान मदा। तिन्ह के सम बैभव वा बिपदा।
एहि तें तव सेवक होत मुदा। मुनि त्यागत जोग भरोस सदा।
करि प्रेमु निरंतर नेमु लिये। पदपंकज सेवित सुद्ध हिये।
सम मानि निरादर आदरहीं। सब भाँति सुखी बिचरंति मही।
मुनि-मानस-पंकज-भृंग भजे। रघुबीर महा-रन-धीर अजे ॥
तव नाम जपामि नमामि हरी। भवरोग महा मद मान अरी ॥
गुनसील कृपापरमायतनं। प्रनमामि निरंतर श्रीरमनं ॥
रघुनंद निकंदय द्वंदघनं। महिपाल बिलोकय दीनजनं ॥

प्रभुरुख देखि विनय बहु भाखी। चलेउ हृदय पद-पंकज राखी।
अति आदर सब कपि पहुँचाए। भाइन्ह सहित राम फिरि आए*।
तब सुग्रीवँ चरन गहि नाना। भाँति विनय कीन्ही हनुमाना।
दिन दस करि रघु-पति-पद-सेवा। पुनि तव चरन देखिहौं देवा।
पुन्यपुंज तुम्ह पवनकुमारा। सेवहु जाइ कृपाआगारा।
अस कहि कपि सब चले तुरंता। अंगद कहै सुनहु हनुमंता।
दो०—कहेहु दंडवत प्रभु सन तुम्हहिं कहौं कर जोरि।
बार बार रघुनायकहिं सुरति करायेहु मोरि ॥४०॥
अस कहि चलेउ बालिसुत फिरि आयेउ हनुमंत।
तासु प्रीति प्रभु सन कही मगन भए भगवंत ॥४१॥
कुलिसहु चाहि कठोर अति कोमल कुसुमहु चाहि।
चित खगेस अस राम कर समुझि परै कहु काहि ॥४२॥
चौ०-पुनि कृपाल लियो बोलि निषादा। दीन्हे भूषन बसन प्रसादा।
जाहु भवन मम सुमिरन करेहू। मन क्रम बचन धर्म अनुसरेहू।
तुम्ह मम सखा भरतसम भ्राता। सदा रहेहु पुर आवत जाता।
बचन सुनत उपजा सुख भारी। परेउ चरन भरि लोचन बारी।
चरननलिन उर धरि गृह आवा। प्रभुसुभाउ परिजनन्हि सुनावा।
रघुपतिचरित देखि पुरबासी। पुनि पुनि कहहिं धन्य सुखरासी।
राम राज बैठे त्रैलोका। हरषित भए गए सब सोका।
बयरु न कर काहू सन कोई। रामप्रताप विषमता खोई।
दो०—बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेदपथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुख नहिं भय शोक न रोग ॥४३॥
चौ०-दैहिक दैविक भौतिक तापा। रामराज नहिं काहुहि ब्यापा।
सब नर करहिं परसपर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुतिरीती।
चारिहु चरन धरम जग माहीं। पूरि रहा सपनेहुँ अघ नाहीं।

* काशि०—भरत पुनि आए।

एकटक रहे जोरि कर आगे। सकहिं न कहि कछु अति अनुरागे।
परमप्रेमु तिन्ह कर प्रभु देखा। कहा बिबिध बिधि ग्यान बिसेखा।
प्रभु सनमुख कछु कहै न पारहिं। पुनि पुनि चरन सरोज निहारहिं।
तब प्रभु भूषन बसन मँगाए। नाना रंग अनूप सुहाए।
सुग्रीवँहि प्रथमहिं पहिराए। बसन भरत निज हाथ बनाए।
प्रभुप्रेरित लछिमन पहिराए। लंकापति रघुपति मन भाए।
अंगद बैठि रहा नहिं डोला। प्रीति देखि प्रभु ताहि न बोला।

दो०—जामवंत नीलादि सब पहिराए रघुनाथ।
हिय धरि रामरूप सब चले नाइ पद माथ॥३६॥
तब अँगद उठि नाइ सिरु सजल नयन कर जोरि।
अतिबिनीत बोलेउ बचन मनहुँ प्रेमरस बोरि॥३७॥

चौ०-सुनु सर्बग्य कृपा-सुख-सिंधो। दीन-दया-कर आरतबंधो।
मरती बार नाथ मोहि बाली। गयेउ तुम्हारेहिं कोछें घाली।
असरन-सरन बिरद संभारी। मोहि जनि तजहु भगत-हितकारी।
मोरें तुम्ह प्रभु गुरु पितु माता। जाउँ कहाँ तजि पद-जलजाता।
तुम्हइ बिचारि कहहु नरनाहा। प्रभु तजि भवन काजु मम काहा।
बालक ग्यान-बुद्धि-बल-हीना। राखहु सरन जानि जन दीना।
नीचि टहल गृह कै सब करिहौं। पद-पंकज बिलोकि भव तरिहौं।
अस कहि चरन परेउ प्रभु पाही। अब जनि नाथ कहहु गृह जाही।

दो०—अंगदबचन बिनीत सुनि रघुपति करुनासींव।
प्रभु उठाइ उर लायेउ सजल नयन राजीव॥३८॥
निज उरमाल बसन मनि बालितनय पहिराइ।
बिदा कीन्हि भगवान तब बहु प्रकार समुझाइ॥३६॥

चौ०-भरत-अनुज-सौमित्रि-समेता। पठवन चले भगत कृतचेता।
अंगदहृदय प्रेमु नहिं थोरा। फिरि फिरि चितव राम की ओरा।
बार बार कर दंडप्रनामा। मन अस रहन कहहिं मोहि रामा।
राम बिलोकनि बोलनि चलनी। सुमिरि सुमिरि सोचत हँसि मिलनी।

सरसिज-संकुल सकल तड़ागा। अति प्रसन्न दस-दिसा-बिभागा।

दो०—बिधु महि पूर मयूखन्हि रबि तप जेतनेहिं काज।
माँगे बारिद देहिं जल रामचंद्र के राज ॥४६॥

चौ०—कोटिन्ह बाजिमेध प्रभु कीन्हे। दान अनेक द्विजन्ह कहुँ दीन्हे।
श्रुति-पथ-पालक धरम-धुरंधर। गुनातीत अरु भोगपुरंदर।
पतिअनुकूल सदा रह सीता। सोभाखानि सुसील बिनीता।
जानति कृपा-सिंधु-प्रभुताई। सेवति चरनकमल मनु लाई।
जद्यपि गृह सेवक सेवकिनी। बिपुल सकल सेवाबिधि-गुनी।
जिन कर गृहपरिचरजा करई। राम-चंद्र-आयसु अनुसरई।
जेहि बिधि कृपासिंधु सुख मानई। सोइ कर श्री सेवाबिधि जानई।
कौसल्यादि सासु गृह माहीं। सेवइ सबन्हि मान मद नाहीं।
उमा-रमा-ब्रह्मादि-बंदिता। जगदंबा संततमनिंदिता।

दो०—जासु कृपाकटाच्छ सुर चाहत चितवन सोइ।
राम-पदारबिंद-रति करति सुभावहिं खोइ ॥४७॥

चौ०-सेवहिं सानुकूल सब भाई। राम-चरन-रति अति अधिकाई।
प्रभु-मुख-कमल बिलोकत रहहीं। कबहुँ कृपाल हमहिं कछु कहहीं।
रामु करहिं भ्रातन्ह पर प्रीती। नाना भाँति सिखावहिं नीती।
हरषित रहहिं नगर के लोगा। करहिं सकल सुरदुर्लभ भोगा।
अहनिसि बिधिहिं मनावत रहहीं। श्री-रघु-बीर-चरन-रति चहहीं।
दुइ सुत सुंदर सीता जाए। लव कुश बेद पुरानन्हि गाए।
दोउ बिजई बिनई गुनमंदिर। हरि-प्रति-बिंब मनहुँ अतिसुंदर।
दुइ दुइ सुत सब भ्रातन्ह केरे। भए रूप गुन सील घनेरे।

दो०—ग्यान-गिरा-गो-ऽतीत अज माया-मन-गुन-पार।
सोइ सच्चिदानंदघन कर नरचरित उदार ॥४८॥

चौ०-प्रातकाल सरजू करि मज्जन। बैठहिं सभा संग द्विज सज्जन।
बेद पुरान बसिष्ठ बखानहिं। सुनहिं रामु जद्यपि सब जानहिं।
अनुजन्ह संजुत भोजन करहीं। देखि सकल जननी सुख भरहीं।

राम-भगति-रत नर अरु नारी। सकल परम गति के अधिकारी।
अलप मृत्यु नहिं कवनिउँ पीरा। सब सुंदर सब बिरुज सरीरा।
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना। नहिं कोउ अबुध न लच्छनहीना।
सब निर्दंभ धर्मरत घृनी *। नर अरु नारि चतुर सब गुनी।
सब गुनग्य पंडित सब ग्यानी। सब कृतग्य नहिं कपट सयानी।

दो०—रामराज नभगेस सुनु सचराचर जग माहिं।
काल कर्म सुभाव गुन कृत दुख काहुहि नाहिं ॥४४॥

चौ०-भूमि सप्त सागर मेखला। एक भूप रघुपति कोसला।
भुवन अनेक रोम प्रति जासू। यह प्रभुता कछु बहुत न तासू।
सो महिमा समुझत प्रभु केरी। यह बरनत हीनता घनेरी।
सो महिमा खगेस जिन्ह जानी। फिरि येहि चरित तिन्हहुँ रति मानी।
सोउ जाने कर फल यह लीला। कहहिं महा मुनिबर दमसीला
रामराज कर सुख संपदा। बरनि न सकै फनीस सारदा
सब उदार सब परउपकारी। बिप्र-चरन-सेवक नरनारी
एक-नारि-ब्रत-रत सब झारी। ते मन बच क्रम पति-हित-कारी

दो०—दंड जतिन्ह कर भेद जहँ नर्त्तक नृत्यसमाज।
जितहु मनहिं अस सुनिअ जग रामचंद्र के राज ॥४५॥

चौ०-फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन। रहहिं एक सँग गज पंचानन।
खग मृग सहज बयरु बिसराई। सबन्हि परसपर प्रीति बढ़ाई।
कूजहिं खग मृग नाना बृंदा। अभय चरहिं बन करहिं अनंदा।
सीतल सुरभि पवन बह मंदा। गुंजत अलि लइ चलि मकरंदा।
लता बिटप माँगे मधु स्रवहीं। मनभावतो धेनु पय स्रवहीं।
ससिसंपन्न सदा रह धरनी। त्रेता भइ कृतजुग कै करनी
प्रगटी गिरिन्ह बिबिध मनिखानी। जगदातामा भूप जग जानी।
सरिता सकल बहहिं बर बारी। सीतल अमल स्वादु सुखकारी।
सागर निज मरजादा रहहीं। डारहिं रतन तटन्हि नर लहहीं।

* घृनी = करुणामय, दयालु।

नाना खग बालकन्हि जिआए। बोलत मधुर उड़ात सुहाए।
मोर हंस सारस पारावत। भवनन्हि पर सोभा अति पावत।
जहँ तहँ देखहिं निज परिछाहीं। बहु बिधि कूजहिं नृत्य कराहीं।
सुक सारिका पढ़ावहिं बालक। कहहु राम रघुपति जनपालक।
राजदुआर सकल बिधि चारू। बीथी चौहट रुचिर बजारू।
छंद—बाजार चारु न बनै बरनत बस्तु बिनु गथ पाइए।
जहँ भूप रमानिवास तहँ की संपदा किमि गाइए॥
बैठे बजाज सराफ बनिक अनेक मनहुँ कुबेर ते।
सब सुखी सब सच्चरित सुंदर नारि नर सिसु जरठ जे॥
दो०—उत्तर दिसि सरजू बहइ निर्मल जल गंभीर।
बाँधे घाट मनोहर स्वल्प पंक नहिं तीर॥५१॥
चौ०-दूरि फराक रुचिर सो घाटा। जहँ जल पिअहिं बाजि-गज-ठाटा।
पनिघट परम मनोहर नाना। तहाँ न पुरुष करहिं अस्नाना।
राजघाट सब बिधि सुंदर बर। मज्जहिं तहाँ बरन चारिउ नर।
तीर तीर देवन्ह के मंदिर। चहुँ दिसि जिन्ह के उपबन सुंदर।
कहुँ कहुँ सरिता तीर उदासी। बसहिं ग्यानरत मुनि संन्यासी।
तीर तीर तुलसिका सुहाई। बृंद बृंद बहु मुनिन्ह लगाई।
पुर सोभा कछु बरनि न जाई। बाहिर नगर परम रुचिराई।
देखत पुरी अखिल अघ भागा। बन उपबन बापिका तड़ागा।
छंद—बापी तड़ाग अनूप कूप मनोहरायत सोहहीं।
सोपान सुंदर नीर निर्मल देखि सुर मुनि मोहहीं॥
बहु रंग कंज अनेक खग कूजहिं मधुप गुंजारहीं।
आराम रम्य पिकादि-खग-रव जनु पथिक हँकारहीं॥
दो०—रमानाथ जहँ राजा सो पुर बरनि कि जाइ।
अनिमादिक-सुख-संपदा रहीं अवध सब छाइ॥ ५२॥
चौ०-जहँ तहँ नर रघुपति-गुन गावहिं। बैठि परसपर इहै सिखावहिं।
भजहु प्रनत-प्रति-पालक रामहिं। सोभा-सील-रूप-गुन-धामहिं।

भरत सत्रुहन दूनउ भाई। सहित पवनसुत उपवन जाई।
बूझहिं बैठि राम-गुन-गाहा। कह हनुमान सुमति अवगाहा।
सुनत बिमल गुन अति सुख पावहिं। बहुरि बहुरि करि बिनय कहावहिं।
सब के गृह गृह होहिं पुराना*। रामचरित पावन बिधि नाना।
नर अरु नारि राम-गुन-गानहिं। करहिं दिवस निसि जात न जानहिं।
दो०—अवध-पुरी-बासिन्ह कर सुख संपदा समाज।
सहस सेष नहिं कहि सकहिं जहँ नृप राम बिराज॥४९॥
चौ०-नारदादि सनकादि मुनीसा। दरसन लागि कोसलाधीसा।
दिन प्रति सकल अजोध्या आवहिं। देखि नगरु बिराग बिसरावहिं।
जातरूप-मनि-रचित अटारी। नाना रंग रुचिर गच ढारी।
पुर चहुँ पास कोट अति सुंदर। रचे कँगूरा रंग रंग बर।
नवग्रह निकर अनीक बनाई। जनु घेरी अमरावति आई।
महि बहु रंग रचित गच काँचा। जो बिलोकि मुनिबर मन नाचा।
धवल धाम ऊपर नभ चुंबत। कलस मनहुँ रबि-ससि-दुति निंदत।
बहु मनिरचित झरोखा भ्राजहिं। गृह गृह प्रति मनिदीप बिराजहिं।
छंद—मनिदीप राजहिं भवन भ्राजहिं देहरी बिद्रुम रची।
मनिखंभ भीति बिरंचि बिरची कनकमनि मरकत खची॥
सुंदर मनोहर मंदिरायत अजिर रुचिर फटिक रचे।
प्रतिद्वार द्वार कपाट पुरट बनाइ बहु बज्रन्हि खचे॥
दो०—चारु चित्रसाला रुचिर प्रति गृह लिखे बनाइ।
रामचरित जे निरख मुनि ते मन लेहिं चोराइ†॥५०॥
चौ०-सुमनबाटिका सबहिं लगाई। बिबिध भाँति करि जतन बनाई।
लता ललित बहु जाति सुहाईं। फूलहिं सदा बसंत कि नाईं।
गुंजत मधुकर मुखर मनोहर। मारुत त्रिबिध सदा बह सुंदर।

* काशि०—सब के गृह होहिं बेद पुराना।
† काशि०—चारु चित्रसाला गृह प्रति लिखे बनाइ।
रामचरित जे निरखत मुनि मन लेहिं चोराइ॥

रूप धरे जनु चारिउ बेदा। समदरसी मुनि बिगतबिभेदा।
आसा बसन ब्यसन यह तिन्हहीं। रघुपति-चरित होइ तहँ सुनहीं।
तहाँ रहे सनकादि भवानी। जहँ घटसंभव मुनिबर ग्यानी।
रामकथा मुनि बहु बिधि बरनी। ग्यान-जोनि*-पावक जिमि अरनी।
दो०—देखि राम मुनि आवत हरषि दंडवत कीन्ह।
स्वागत पूँछि पीतपट प्रभु बैठन कहँ दीन्ह ॥ ५५ ॥

चौ०-कीन्ह दंडवत तीनिउँ भाई। सहित पवनसुत सुख अधिकाई।
मुनि रघुपति-छबि अतुल बिलोकी। भए मगन मन सके न रोकी।
स्यामलगात सरोरुह-लोचन। सुंदरतामंदिर भवमोचन।
एकटक रहे निमेष न लावहिं। प्रभु कर जोरे सीस नवावहिं।
तिन्ह कै दसा देखि रघुबीरा। स्रवत नयन जल पुलक सरीरा।
कर गहि प्रभु मुनिबर बैठारे। परम मनोहर बचन उचारे।
आजु धन्य मैं सुनहु मुनीसा। तुम्हरे दरस जाहिं अघ खीसा।
बड़े भाग पाइअ सतसंगा। बिनहिं प्रयास होइ भवभंगा।
दो०—संतपंथ अपबर्ग कर कामी भव कर पंथ।
कहहिं संत कबि कोबिद स्रुति पुरान सदग्रंथ ॥ ५६ ॥

चौ०-सुनि प्रभुबचन हरषि मुनि चारी। पुलकित तनु अस्तुति अनुसारी।
जय भगवंत अनंत अनामय। अनघ अनेक एक करुनामय।
जय निर्गुन जय जय गुनसागर। सुखमंदिर सुंदर अति आगर।
जय इंदिरारमन जय भूधर। अनुपम अज अनादि सोभाकर।
ग्याननिधान अमान मानप्रद। पावन सुजस पुरान बेद बद।
तग्य कृतग्य अग्यताभंजन। नाम अनेक अनाम निरंजन।
सर्ब सर्बगत सर्बउरालय। बससि सदा हम कहँ परिपालय।
द्वंद बिपति भयफंद बिभंजय। हृदि बसि राम काममद गंजय।

---

* सदल०—जोग। हस्त०—जोति।

अलज-बिलोचन स्यामल गातहिं। पलक नयन इव सेवकत्रातहिं।
धृत-सर-रुचिर-चाप-तूनीरहिं। संत-कंज-बन-रवि रन-धीरहिं।
काल कराल व्याल खगराजहिं। नमत राम अकाम ममता जहिं*।
लोभ-मोह-मृग-जूथ-किरातहिं। मनसिज-करि-हरिजन-सुख-दातहिं*।
संसय-सोक-निबिड़-तम-भानुहिं। दनुज-गहन-घन-दहन-कृसानुहिं।
जनक-सुता-समेत रघुबीरहिं। कस न भजहु भंजन भवभीरहिं।
बहु-बासना-मसक-हिम-रासिहिं। सदा एकरस अज अविनासिहिं।
मुनिरंजन भंजन महिभारहिं। तुलसिदास के प्रभुहिं उदारहिं।
दो०—एहि बिधि नगर-नारि-नर करहिं राम-गुन-गान।
सानुकूल सब पर रहहिं संतत कृपानिधान ॥ ५३ ॥
चौ०-जब तें रामप्रताप खगेसा। उदित भयेउ अति प्रबल दिनेसा।
पूरि प्रकास रहेउ तिहुँ लोका। बहुतेन्ह सुख बहुतेन्ह मन सोका।
जिन्हहिं सोक ते कहौं बखानी। प्रथम अविद्यानिसा नसानी।
अघ उलूक जहँ तहाँ लुकाने। काम-क्रोध-कैरव सकुचाने।
बिबिध-कर्म-गुन-काल-सुभाऊ। ए चकोर सुख लहहिं न काऊ।
मत्सर मान मोह मद चोरा। इन्ह कर हुनर† न कवनिहुँ ओरा।
धरम तड़ाग ग्यान बिग्याना। ए पंकज बिकसे बिधि नाना।
सुख संतोष बिराग बिबेका। बिगत सोक ए कोक अनेका।
दो०—यह प्रतापरबि जा के उर जब करै प्रकास।
पछिले बाढ़हिं प्रथम जे कहे ते पावहिं नास ॥ ५४ ॥
चौ०-भ्रातन्ह सहित राम एक बारा। संग परमप्रिय पवनकुमारा।
सुंदर उपबन देखन गए। सब तरु कुसुमित पल्लव नए।
जानि समय सनकादिक आए। तेजपुंज गुनसील सुहाए।
ब्रह्मानंद सदा लयलीना। देखत बालक बहुकालीना।

---

* ये चौपाइयाँ काशि०—प्रति में नहीं है। † सटन०—इन्हहिं निबाह। हस्त०—इन्हकर रहनि।

श्रीमुख तुम्ह पुनि कीन्हि बड़ाई । तिन्ह पर प्रभुहिं प्रीति अधिकाई ।
सुना चहौं प्रभु तिन्ह कर लच्छन । कृपासिंधु गुन-ग्यान-बिचच्छन ।
संत असंत भेद बिलगाई । प्रनतपाल मोहि कहहु बुझाई ।
संतन्ह के लच्छन सुनु भ्राता । अगिनित श्रुति पुरान बिख्याता ।
संत असंतन्ह कै असि करनी । जिमि कुठार चंदन आचरनी ।
काटै परसु मलय सुनु भाई । निजगुन देइ सुगंध बसाई ।

दो०—ता तें सुरसीसन्ह चढ़त जगवल्लभ श्रीखंड ।
अनल दाहि पीटत घनहिं परसुबदन यह दंड ॥६०॥

चौ०-बिषय अलंपट सीलगुनाकर । परदुख दुख सुख सुख देखें पर ।
सम अभूतरिपु बिमद बिरागी । लोभामरष हरष भय त्यागी ।
कोमलचित दीनन्ह पर दाया । मन बच क्रम मम भगति अमाया ।
सबहिं मानप्रद आपु अमानी । भरत प्रानसम मम तें प्रानी ।
बिगतकाम मम नामपरायन । सांति बिरति बिनती मुदितायन ।
सीतलता सरलता मइत्री । द्विज-पद-प्रीति धरमजनयित्री ।
ये सब लच्छन बसहिं जासु उर । जानहु तात संत संतत फुर ।
सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं । परुष बचन कबहुँ नहिं बोलहिं ।

दो०—निंदा अस्तुति उभय सम ममता मम पदकंज ।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय गुनमंदिर सुखपुंज ॥६१॥

चौ०-सुनहु असंतन्ह केर सुभाऊ । भूलेहु संगति करिअ न काऊ ।
तिन्ह कर संग सदा दुखदाई । जिमि कपिलहि घालै हरहाई ।
खलन्ह हृदय अतिताप बिसेखी । जरहिं सदा परसंपति देखी ।
जहँ कहुँ निंदा सुनहिं पराई । हरषहिं मनहुँ परी निधि पाई ।
काम-क्रोध-मद - लोभ-परायन । निर्दय कपटी कुटिल मलायन ।
बयरु अकारन सब काहू सों । जो कर हित अनहित ताहू सों ।
झूठइ लेना झूठइ देना । झूठइ भोजन झूठ चबेना ।
बोलहिं मधुरबचन जिमि मोरा । खाहिं महा अहि हृदय कठोरा ।

दो०—परमानंद कृपायतन मन-परि-पूरन काम।
प्रेम भगति अनपायनी देहु हमहिं श्रीराम ॥५७॥

चौ०-देहु भगति रघुपति अतिपावनि। त्रिविध-ताप-भव-दाप-नसावनि।
प्रनत काम सुरधेनु कलपतरु। होइ प्रसन्न दीजै प्रभु यह बरु।
भव-बारिधि-कुंभज रघुनायक। सेवकसुलभ सकल-सुख-दायक।
मन-संभव-दारुन-दुख दारय। दीनबंधु समता बिस्तारय।
आस-त्रास-इरिषादि-निवारक। बिनय-बिबेक-बिरति-बिस्तारक।
भूप-मौलि-मनि मंडन धरनी। देहि भगति संसृति-सरि-तरनी।
मुनि-मन-मानस-हंस निरंतर। चरनकमल बंदित अज संकर।
रघु-कुल-केतु सेतु स्रुतिरच्छक। काल-कर्म-सुभाव-गुन-भच्छक।
तारन तरन हरन सब दूषन। तुलसिदास प्रभु त्रि-भुवन-भूषन।

दो०—बार बार अस्तुति करि प्रेमसहित सिरुनाइ।
ब्रह्मभवन सनकादि गे अतिअभीष्ट बर पाइ ॥५८॥

चौ०-सनकादिक बिधिलोक सिधाए। भ्रातन्ह रामचरन सिर नाए।
पूँछत प्रभुहिं सकल सकुचाहीं। चितवहिं सब मारुतसुत पाहीं।
सुनी चहहिं प्रभुमुख कै बानी। जो सुनि होइ सकल-भ्रम-हानी।
अंतरजामी प्रभु सब जाना। बूझत कहहु काह हनुमाना।
जोरि पानि कह तब हनुमंता। सुनहु दीनदयाल भगवंता।
नाथ भरत कछु पूँछन चहहीं। प्रस्न करत मन सकुचत अहहीं।
तुम्ह जानहु कपि मोर सुभाऊ। भरतहिं मोहि न कछू दुराऊ*।
सुनि प्रभुबचन भरत गहे चरना। सुनहु नाथ प्रनतारतिहरना।

दो०—नाथ न मोहि सँदेह कछु सपनेहुँ सोक न मोह।
केवल कृपा तुम्हारिही कृपा-नंद-संदोह ॥५९॥

चौ०-करौं कृपानिधि एक ढिठाई। मैं सेवक तुम्ह जन-सुख-दाई।
संतन कै महिमा रघुराई। बहु बिधि बेद पुरानन्हि गाई।

---

* काशि०—भरतहिं मोहि कछु अंतर काऊ।

सुनि बिरंचि अतिसय सुख मानहिं। पुनि पुनि तात करहु गुनगानहिं।
सनकादिक नारदहिं सराहहिं। जद्यपि ब्रह्मनिरत मुनि आहहिं।
सुनि गुनगान समाधि बिसारी। सादर सुनहिं परम अधिकारी।

दो०—जीवनमुक्त ब्रह्मपर चरित सुनहिं तजि ध्यान।
जे हरि कथा न करहिं रति तिन्ह के हिय पाषान ॥६५॥

चौ०-एक बार रघुनाथ बोलाए। गुरु द्विज पुरबासी सब आए।
बैठे सदसि अनुज मुनि सज्जन। बोले बचन भगत भय-भंजन।
सुनहु सकल पुरजन मम बानी। कहौं न कछु ममता उर आनी।
नहि अनीति नहिं कछु प्रभुताई। सुनहु करहु जौ तुम्हहिं सुहाई।
सोइ सेवक प्रियतम मम सोई। मम अनुसासन मानै जोई।
जौं अनीति कछु भाषौं भाई। तौ मोहि बरजहु भय बिसराई।
बड़े भाग मानुषतनु पावा। सुरदुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा
साधनधाम मोच्छ कर द्वारा। पाइ न जेहि परलोक सँवारा।

दो०—सो परत्र दुख पावै सिरु धुनि धुनि पछिताइ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि मिथ्या दोष लगाइ ॥६६॥

चौ०-एहि तन कर फल बिषय न भाई। स्वरगउ स्वल्प अंत दुखदाई।
नरतनु पाइ बिषय मन देहीं। पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं।
ताहि कबहुँ भल कहै न कोई। गुंजा ग्रहै परसमनि खोई।
आकर चारि लच्छ चौरासी। जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी।
फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म सुभाव गुन घेरा।
कबहुँक करि करुना नरदेही। देत ईस बिनु हेतु सनेही।
नरतनु भवबारिधि कहुँ बेरो। सनमुख मरुत अनुग्रह मेरो।
करनधार सदगुरु दृढ़ नावा। दुर्लभ साज सुलभ करि पावा।

दो०—जो न तरै भवसागर नर समाज अस पाइ।
सो कृत निंदक मंदमति आतम-हन-गति-जाइ ॥ ६७ ॥

चौ०–जौं परलोक इहाँ सुख चहहू। सुनि मम बचन हृदय दृढ़ गहहू।
सुलभ सुखद मारग यह भाई। भगति मोरि पुरान श्रुति गाई।

दो०—परद्रोही पर-दार-रत परधन परअपवाद।
ते नर पाँवर पापमय देह धरे मनुजाद ॥६२॥
चौ०-लोभइ ओढन लोभइ डासन। सिस्नोदरपर जम-पुर-त्रासन।
काहू के जौं सुनहिं बड़ाई। स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई।
जब काहू कै देखहिं बिपती। सुखी भए मानहुँ जगनृपति।
स्वारथरत परिवारबिरोधी। लंपट काम लोभ अति क्रोधी।
मातु पिता गुरु बिप्र न मानहिं। आपु गए अरु घालहिं आनहिं।
करहिं मोहबस द्रोह परावा। संत संग हरिकथा न भावा।
अवगुन-सिंधु मंदमति कामी। वेदविदूषक पर-धन-स्वामी।
बिप्रद्रोह सुरद्रोह बिसेषा। दंभ कपट जिय धरे सुवेषा।
दो०—ऐसे अधम मनुज खल कृतजुग त्रेता नाहिं।
द्वापर कछुक बृंद बहु होइहहिं कलिजुग माहिं ॥ ६३ ॥
चौ०-परहित सरिस धर्म नहिं भाई। परपीड़ा सम नहिं अधमाई।
निरनय सकल पुरान बेद कर। कहेउँ तात जानहिं कोविद नर।
नर सरीर धरि जे परपीरा। करहिं ते सहहिं महा-भव-भीरा।
करहिं मोहबस नर अघ नाना। स्वारथरत परलोक नसाना।
कालरूप तिन्ह कहँ मैं भ्राता। सुभ अरु असुभ करम-फल-दाता।
अस बिचारि जे परम सयाने। भजहिं मोहि संसृति दुख जाने।
त्यागहिं कर्म सुभा-सुभ-दायक। भजहिं मोहि सुर-नर-मुनि-नायक।
संत असंतन्ह के गुन भाखे। ते न परहिं भव जिन्ह लखि राखे।
दो०—सुनहु तात मायाकृत गुन अरु दोष अनेक।
गुन यह उभय न देखिअहिं देखिअ सो अबिबेक ॥६४॥
चौ०—श्री-मुख-बचन सुनत सब भाई। हरषे प्रेमु न हृदय समाई।
करहिं बिनय अति बारहिं बारा। हनूमान हिय हरष अपारा।
पुनि रघुपति निज मंदिर गए। एहि बिधि चरित करत नित नए।
बार बार नारदमुनि आवहिं। चरित पुनीत राम के गावहिं।
नित नव चरित देखि मुनि जाहीं। ब्रह्मलोक सब कथा कहाहीं।

दो०—उमा अवधवासी नर नारि कृतारथ रूप।
ब्रह्म सच्चिदानंद घन रघुनायक जहँ भूप ॥ ७० ॥

चौ०-एक बार बसिष्ठ मुनि आए। जहाँ रामु सुखधाम सुहाए।
अति आदर रघुनायक कीन्हा। पद पखारि चरनोदक लीन्हा।
राम सुनहु मुनि कह कर जोरी। कृपासिंधु बिनती कछु मोरी।
देखि देखि आचरन तुम्हारा। होत मोह मम हृदय अपारा।
महिमा अमित बेद नहिं जाना। मैं केहि भाँति कहौं भगवाना।
उपरोहिती कर्म अति मंदा। बेद पुरान सुमृति कर निंदा।
जब न लेउँ मैं तब बिधि मोही। कहा लाभ आगे सुत तोही।
परमातमा ब्रह्म नररूपा। होइहि रघु-कुल-भूषन भूपा।

दो०—तब मैं हृदय बिचारा जोग जग्य ब्रत दान।
जा कहुँ करिय सो पाइहौं धर्म न एहि सम आन ॥ ७१ ॥

चौ०-जप तप नियम जोग निज धर्मा। श्रुतिसंभव नाना सुभ कर्मा।
ग्यान दया दम तीरथ मज्जन। जहँ लगि धरम कहत श्रुति सज्जन।
आगम निगम पुरान अनेका। पढ़े सुने कर फल प्रभु एका।
तव पद-पंकज प्रीति निरंतर। सब साधन कर यह फल सुंदर।
छूटै मल कि मलहि के धोएँ। घृत कि पाव कोउ बारि बिलोएँ।
प्रेम भगति जल बिनु रघुराई। अभि-अंतर-मल कबहुँ न जाई।
सोइ सर्बग्य तग्य सोइ पंडित। सोइ गुनगृह बिग्यान अखंडित।
दच्छ सकल-लच्छन-जुत सोई। जा के पद-सरोज-रति होई।

दो०—नाथ एक बर माँगौ राम कृपा करि देहु।
जनम जनम प्रभु-पद-कमल कबहुँ घटै जनि नेहु ॥७२॥

चौ०-अस कहि मुनि बसिष्ठ गृह आए। कृपासिंधु के मन अति भाए।
हनूमान भरतादिक भ्राता। संग लिये सेवक-सुख-दाता।
पुनि कृपाल पुर बाहर गए। गज रथ तुरग मँगावत भए।
देखि कृपा करि सकल सराहे। दिए उचित जिन्ह जिन्ह जेइ चाहे।
हरन सकल श्रम प्रभु श्रम पाई। गए जहाँ सीतल अँवराई।

ग्यान अगम प्रत्यूह अनेका । साधन कठिन न मन कहुँ टेका ।
करत कष्ट बहु पावै कोऊ । भगतिहीन मोहि प्रिय नहिं सोऊ ।
भगति सुतंत्र सकल-सुख-खानी । बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी ।
पुन्यपुंज बिनु मिलहिं न संता । सतसंगति संसृति कर अंता ।
पुन्य एक जग महुँ नहिं दूजा । मन क्रम बचन बिप्र-पद-पूजा ।
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा । जो तजि कपट करै द्विजसेवा ।

दो०—औरउ एक गुपुत मत सबहिं कहहुँ कर जोरि ।
संकरभजन बिना नर भगति न पावै मोरि ॥ ६८ ॥

चौ०-कहहु भगति पथ कवन प्रयासा । जोग न मख जप तप उपवासा ।
सरल सुभाव न मन कुटिलाई । जथालाभ संतोष सदाई ।
मोर दास कहाइ नर आसा । करै त कहहु कहा बिस्वासा ।
बहुत कहौं का कथा बढ़ाई । एहि आचरन बस्य मैं भाई ।
बयरु न बिग्रह आस न त्रासा । सुखमय ताहि सदा सब आसा ।
अनारंभ अनिकेत अमानी । अनघ अरोष दच्छ बिग्यानी ।
प्रीति सदा सज्जन संसर्गा । तृनसम बिषय स्वर्ग अपबर्गा ।
भगति पच्छ हठ नहिं सठताई । दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई ।

दो०—मम गुनग्राम नाम रत गत-ममता-मद-मोह ।
ता कर सुख सोइ जानै परानंदसंदोह ॥ ६९ ॥

चौ०-सुनत सुधासम बचन राम के । गहे सबन्हि पद कृपाधाम के ।
जननि जनक गुरु बंधु हमारे । कृपानिधान प्रान ते प्यारे ।
तनु धनु धाम राम हितकारी । सब बिधि तुम्ह प्रनतारतिहारी ।
अस सिख तुम्ह बिनु देइ न कोऊ । मातु पिता स्वारथरत ओऊ ।
हेतु-रहित जग जुग उपकारी । तुम्ह तुम्हार सेवक असुरारी ।
स्वारथमीत सकल जग माहीं । सपनेहुँ प्रभु परमारथ नाहीं ।
सब के बचन प्रेम रससाने । सुनि रघुनाथ हृदय हरषाने ।
निज गृह गए सुआयसु पाई । बरनत प्रभु बतकही* सुहाई ।

* सदल०—प्रभु की गिरा ।

दो०—तुम्हरी कृपा कृपायतन अब कृतकृत्य न मोह।
जानेउँ रामप्रताप प्रभु चिदानंदसंदोह ॥७५॥
नाथ तवानन ससि स्रवत कथा सुधा रघुबीर।
स्रवनपुटन्हि मन पान करि नहिं अघात मतिधीर ॥७६॥

चौ०-रामचरित जे सुनत अघाहीं। रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं।
जीवनमुक्त महामुनि जेऊ। हरिगुन सुनहिं निरंतर तेऊ।
भवसागर चह पार जो पावा। रामकथा ता कहँ दृढ़ नावा।
बिषइन्ह कहँ पुनि हरि-गुन-ग्रामा। श्रवनसुखद अरु मनअभिरामा।
श्रवनवंत अस को जग माहीं। जाहि न रघु-पति-चरित सुहाहीं।
ते जड़ जीव निजातमक-घाती। जिन्हहिं न रघु-पति-कथा सुहाती।
हरि-चरित्र-मानस तुम्ह गावा। सुनि मैं नाथ अमित सुख पावा।
तुम्ह जो कही यह कथा सुहाई। कागभुसुंडि गरुड़ प्रति गाई।

दो०—बिरति ग्यान बिग्यान दृढ़ रामचरित अति नेह।
बायसतन रघु-पति-भगति मोहि परम संदेह ॥७७॥

चौ०-नरसहस्र महँ सुनहु पुरारी। कोउ एक होइ धर्म-ब्रत-धारी।
धर्मसील कोटिक महँ कोई। बिषयबिमुख बिरागरत होई।
कोटि-बिरक्त-मध्य श्रुति कहई। सम्यक ग्यान सकृत कोउ लहई।
ग्यानवंत कोटिक महँ कोऊ। जीवनमुक सकृत जग सोऊ।
तिन्ह सहस्र महुँ सब सुखखानी। दुर्लभ ब्रह्मलीन बिग्यानी।
धर्मसील बिरक्त अरु ग्यानी। जीवनमुक्त ब्रह्मपर प्रानी।
सब तें सो दुर्लभ सुरराया। राम-भगति-रत गत-मद-माया।
सो हरिभगति काग किमि पाई। बिस्वनाथ मोहि कहहु बुझाई।

दो०—रामपरायन ग्यानरत गुनागार मतिधीर।
नाथ कहहु केहि कारन पायेउ काकसरीर ॥७८॥

चौ०-यह प्रभु चरित पवित्र सुहावा। कहहु कृपाल काक कहँ पावा।
तुम्ह केहि भाँति सुना मदनारी। कहहु मोहि अति कौतुक भारी।
गरुड़ महाग्यानी गुनरासी। हरिसेवक अति निकट निवासी।

भरत दीन्ह निज बसन डसाई। बैठे प्रभु सेवहिं सब भाई।
मारुतसुत तब मारुत करई। पुलक बपुष लोचन जल भरई।
हनूमान समान बड़ भागी। नहिं कोउ राम-चरन-अनुरागी।
गिरिजा जासु प्रीति सेवकाई। बार बार प्रभु निज मुख गाई।

दो०—तेहि अवसर मुनि नारद आए करतल बीन।
गावन लागे राम-कल-कीरति सदा नवीन ॥७३॥

चौ०-मामवलोकय पंकज-लोचन। कृपा विलोकनि सोकविमोचन।
नील-तामरस-स्याम कामअरि। हृदय-कंज-मकरंद-मधुप हरि।
जातुधान – बरूथ – बल – भंजन। मुनि–सज्जन-रंजन अघगंजन
भूसुर ससि * नव बृंद बलाहक। अ-सरन-सरन दीन-जन-गाहक
भुजबल विपुल भार महि खंडित। खर-दूषन-विराध-बध – पंडित
रावनारि • सुखरूप भूपबर। जय दसरथ-कुल-कुमुद-सुधाकर
सुजसु पुरानविदित निगमागम। गावत सुर-मुनि-संत-समागम
कारुनीक ब्यलीक-मद-खंडन। सब विधि कुसल कोसलामंडन
कलि-मल-मथन-नाम ममताहन। तुलसि-दास-प्रभु पाहि प्रनतजन

दो०—प्रेमसहित मुनि नारद बरनि राम-गुन-ग्राम।
सोभासिंधु हृदय धरि गए जहाँ बिधिधाम ॥७४॥

चौ०-गिरिजा सुनहु बिसद यह कथा। मैं सब कही मोरि मति जथा
रामचरित सत कोटि अपारा। श्रुति सारदा न बरनै पारा।
रामु अनंत अनंतगुनानी। जनम कर्म अनंत नामानी।
जलसीकर महिरज गनि जाहीं। रघु पति-चरित न बरनि सिराहीं।
विमल कथा हरि-पद-दायनी। भगति होइ सुनि अनपायनी।
उमा कहेउँ सब कथा सुहाई। जो भुसुंडि खगपतिहिं सुनाई।
कछुक रामगुन कहेउँ बखानी। अब का कहौं सो कहहु भवानी।
सुनि सुभकथा उमा हरषानी। बोलीं अति बिनीत मृदुबानी।
धन्य धन्य मैं धन्य पुरारी। सुनेउँ रामगुन भव-भय-हारी।

* ससि = शस्य = धान्य।

रामचरित विचित्र विधि नाना। प्रेम सहित कर सादर गाना।
सुनहिं सकल मति बिमल मराला। बसहिं निरंतर जो तेहि ताला।
जब मैं जाइ सो कौतुक देखा। उर उपजा आनंद बिसेखा।

दो०—तब कछु काल मरालतनु धरि तहँ कीन्ह निवास।
सादर सुनि रघुपति-गुन पुनि आयेउँ कैलास॥ ८१॥

चौ०-गिरिजा कहेउँ सो सब इतिहासा। मैं जेहि समय गयेउँ खग पासा।
अब सो कथा सुनहु जेहि हेतू। गयेउ काग पहिं खग-कुल-केतू।
जब रघुनाथ कीन्ह रनक्रीड़ा। समुझत चरित होत मोहि ब्रीड़ा।
इंद्रजीत कर आपु बँधायो। तब नारद मुनि गरुड़ पठायो।
बंधन काटि गयेउ उरगादा। उपजा हृदय प्रचंड-बिखादा।
प्रभुबंधन समुझत बहु भाँती। करत बिचार उरगआराती।
ब्यापक ब्रह्म बिरज बागीसा। माया - मोह - पार परमीसा।
सो अवतार सुनेउँ जग माहीं। देखेउँ सो प्रभाव कछु नाहीं।

दो०—भवबंधन तें छूटहिं नर जप जा कर नाम।
खर्ब निसाचर बाँधेउ नागपास सोइ राम॥८२॥

चौ०-नाना भाँति मनहिं समुझावा। प्रगट न ग्यान हृदय भ्रम छावा।
खेदखिन्न मन तर्क बढ़ाई। भयेउ मोहबस तुम्हरिहि नाईं।
ब्याकुल गयेउ देवरिषि पाहीं। कहेसि जो संसय निज मन माँहीं।
सुनि नारदहिं लागि अति दाया। सुनु खग प्रबल राम कै माया।
जो ग्यानिन्ह कर चित अपहरई। बरिआईं बिमोह मन करई।
जेहि बहु बार नचावा मोही। सोइ ब्यापी बिहंगपति तोही।
महामोह उपजा उर तोरें। मिटिहि न बेगि कहे खग मोरें।
चतुरानन पहिं जाहु खगेसा। सोइ करेहु जो देहिं निदेसा।

दो०—अस कहि चले देवरिषि करत राम-गुन-गान।
हरि-माया-बल बरनत पुनि पुनि परम सुजान॥ ८३॥

चौ०-तब खगपति बिरंचि पहिं गयेऊ। निज संदेह सुनावत भयेऊ।
सुनि बिरंचि रामहिं सिरु नावा। समुझि प्रताप प्रेम उर छावा।

तेहि केहि हेतु काग सन जाई। सुनी कथा मुनिनिकर बिहाई।
कहहु कवन विधि भा संबादा। दोउ हरिभगत काग उरगादा।
गौरिगिरा सुनि सरल सुहाई। बोले सिव सादर सुख पाई।
धन्य सती पावनि मति तोरी। रघु-पति-चरन प्रीति नहिं थोरी।
सुनहु परम पुनीत इतिहासा। जो सुनि सकल-सोक-भ्रम-नासा।
उपजै रामचरन बिस्वासा। भवनिधि तर नर बिनहिं प्रयासा।

दो०—ऐसइ प्रस्न बिहंगपति कीन्ह काग सन जाइ।
सो सब सादर कहिहौं सुनहु उमा मन लाइ ॥७९॥

चौ०-मैं जिमि कथा सुनि भवमोचनि। सोप्रसंगसुनु सुमुखिसुलोचनि॥
प्रथम दच्छगृह तव अवतारा। सती नाम तव रहा तुम्हारा।
दच्छजग्य जब भा अपमाना। तुम्ह अति क्रोध तजे तब प्राना।
मम अनुचरन्ह कीन्ह मखभंगा। जानहु तुम्ह सो सकल प्रसंगा।
तब अति सोच भयेउ मन मोरें। दुखी भयेउँ बियोग प्रिय तोरें।
सुंदर बन गिरि सरित तड़ागा। कौतुक देखत फिरेउँ बिरागा।
गिरि सुमेरु उत्तर दिसि दूरी। नील सैल एक सुंदर भूरी।
तासु कनकमय सिखर सुहाए। चारि चारु मोरें मन भाए।
तिन्ह पर एक एक बिटप बिसाला। बट पीपर पाकरी रसाला।
सैलोपरि सर सुंदर सोहा। मनिसोपान देखि मन मोहा।

दो०—सीतल अमल मधुर जल जलज बिपुल बहुरंग।
कूजत कलरव हंसगन गुंजत मंजुल भृंग ॥८०॥

चौ०-तेहि गिरि रुचिर बसै खग सोई। तासु नास कलपांत न होई।
मायाकृत गुन दोष अनेका। मोह मनोज आदि अविवेका।
रहे ब्यापि समस्त जग माहीं। तेहि गिरि निकट कबहुँ नहिं जाहीं।
तहँ बसि हरिहि भजै जिमि कागा। सो सुनु उमा सहित अनुरागा।
पीपर तरु तर ध्यान जो धरई। जाप जग्य पाकरि तर करई।
आमछाहँ कर मानस पूजा। तजि हरिभजनु काजु नहिं दूजा।
बर तर कह हरि—कथा-प्रसंगा। आवहिं सुनहिं अनेक बिहंगा।

प्रभुमाया बलवंत भवानी। जाहि न मोह कवन अस ग्यानी।

दो०—ग्यानी भगत सिरोमनि त्रि-भुवन-पति कर जान।
ताहि मोह माया नर पावँर करहिं गुमान ॥८६॥
सिव बिरंचि कहँ मोहै को है बपुरा आन।
अस जिय जानि भजहिं मुनि मायापति भगवान ॥८७॥

चौ०-गयेउ गरुड़ जहँ बसै भुसुंडी। मति अकुंठ हरिभगति अखंडी।
देखि सैल प्रसन्न मन भयेऊ। माया मोह सोच सब गयेऊ।
करि तड़ाग मज्जनु जलपाना। बट-तर गयेउ हृदय हरषाना।
वृद्ध वृद्ध बिहँग तहँ आए। सुनै राम के चरित सुहाए।
कथाअरंभ करै सोइ चाहा। तेही समय गयेउ खगनाहा।
आवत देखि सकल खगराजा। हरषेउ बायस सहित समाजा।
अति आदर खगपति कर कीन्हा। स्वागत पूँछि सुआसन दीन्हा।
करि पूजा समेत अनुरागा। मधुर बचन तब बोलेउ कागा।

दो०—नाथ कृतारथ भयेउँ मैं तव दरसन खगराज।
आयसु देहु सो करौं अब प्रभु आयेहु केहि काज ॥८८॥
सदा कृतारथ रूप तुम्ह कह मृदुबचन खगेस।
जेहि कै अस्तुति सादर निज मुख कीन्हि महेस ॥८९॥

चौ०-सुनहु तात जेहि कारन* आयेउँ। सो सब भयेउ दरस तव पायेउँ।
देखि परम पावन तव आश्रम। गयेउ मोह संसय नाना भ्रम।
अब श्री-राम-कथा अति पावनि। सदा सुखद दुख-पुंज-नसावनि।
सादर तात सुनावहु मोही। बार बार बिनवौं प्रभु तोही।
सुनत गरुड़ कै गिरा बिनीता। सरल सुप्रेम सुखद सुपुनीता।
भयेउ तासु मन परम उछाहा। लाग कहै रघु-पति-गुन-गाहा।
प्रथमहिं अति अनुराग भवानी। राम-चरित-सर कहेसि बखानी।
पुनि नारद कर मोह अपारा। कहेसि बहुरि रावन अवतारा।
प्रभु-अवतार-कथा पुनि गाई। तब सिसुचरित कहेसि मन लाई।

* काशि०—कारन।

मन महुँ करै विचार विधाता। मायावस कवि कोविद ग्याता।
हरिमाया कर अमित प्रभावा। विपुल बार जेहि मोहि नचावा।
अग-जग-मय सब मम उपराजा। नहिं आचरज मोह खगराजा।
तब बोले विधि गिरा सुहाई। जान महेस रामप्रभुताई।
वैनतेय संकर पहिं जाहू। तात अनत पूछेहु जनि काहू।
तहँ होइहि तव संसयहानी। चलेउ विहंग सुनत विधिबानी।

दो०—परमातुर विहंगपति आयेउ तब मो पास।
जात रहेउँ कुबेरगृह रहिहु उमा कैलास॥८४॥

चौ०-तेहि मम पद सादर सिरु नावा। पुनि आपन संदेह सुनावा।
सुनि ता करि विनीत मृदुबानी। प्रेम सहित मैं कहेउँ भवानी।
मिलेउ गरुड़ मारग महँ मोही। कवन भाँति समुझावौं तोही।
तबहिं होइ सब संसय भंगा। जब बहु काल करिअ सतसंगा।
सुनिअ तहाँ हरिकथा सुहाई। नाना भाँति मुनिन्ह जो गाई।
जेहि महुँ आदि मध्य अवसाना। प्रभु प्रतिपाद्य रामु भगवाना।
नित हरिकथा होति जहँ भाई। पठवौं तहाँ, सुनहु तुम्ह जाई।
जाइहि सुनत सकल संदेहा। रामचरन होइहि अतिनेहा।

दो०—बिनु सतसंग न हरिकथा तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गए बिनु रामपद होइ न दृढ़ अनुराग॥८५॥

चौ०-मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा। किए जोग जप ग्यान बिरागा।
उत्तर दिसि सुंदर गिरि नीला। तहँ रह कागभुसुंडि सुसीला।
राम-भगति-पथ परम प्रवीना। ग्यानी गुनगृह बहुकालीना।
रामकथा सो कहै निरंतर। सादर सुनहिं बिबिधि बिहंग बर।
जाइ सुनहु तहँ हरिगुन भूरी। होइहि मोहजनित दुख दूरी।
मैं जब तेहि सब कहा बुझाई। चलेउ हरषि मम पद सिरु नाई।
ता तें उमा न मैं समुझावा। रघुपति कृपा मरमु मैं पावा।
होइहि कीन्ह कबहुँ अभिमाना। सो खोवै चह कृपानिधाना।
कछु तेहि तें पुनि मैं नहिं राखा। समुझै खग खग ही कै भाखा।

लंका कपि प्रवेस जिमि कीन्हा। पुनि सीतहि धीरजु जिमि दीन्हा।
बन उजारि रावनहिं प्रबोधी। पुर दहि नाँघेउ बहुरि पयोधी।
आए कपि सब जहँ रघुराई। बैदेही कै कुसल सुनाई।
सेनसमेत जथा रघुबीरा। उतरे जाइ बारि-निधि-तीरा।
मिला बिभीषनु जेहि बिधि आई। सागर-निग्रह-कथा सुनाई।

दो०—सेतु बाँधि कपिसेन जिमि उतरी सागरपार।
गयेउ बसीठी बीरबर जेहि बिधि बालिकुमार॥६४॥
निसि-चर-कीस-लराई बरनेसि बिबिध प्रकार।
कुंभकरन घननाद कर बल-पौरुष-संहार॥६५॥

चौ०-निसि-चर-निकर-मरन बिधि नाना। रघुपति-रावन-समर बखाना।
रावन-बध मंदोदरी-सोका। राज बिभीषन देव असोका।
सीता रघुपति-मिलन बहोरी। सुरन्ह कीन्हि अस्तुति कर जोरी।
पुनि पुष्पक चढ़ि कपिन्ह समेता। अवध चले प्रभु कृपानिकेता।
जेहि बिधि राम नगर निज आए। बायस बिसद चरित सब गाए।
कहेसि बहोरि रामअभिषेका। पुरबरनन नृपनीति अनेका।
कथा समस्त भुसुंडि बखानी। जो मैं तुम्ह सन कही भवानी।
सुनि सब रामकथा खगनाहा। कहत बचन मन परम उछाहा।

दो०—गयेउ मोर संदेह सुनेउँ सकल रघु-पति-चरित।
भयेउ राम-पद-नेह तव प्रसाद बायसतिलक॥६६॥
मोहि भयेउ अति मोह प्रभुबंधन रन महुँ निरखि।
चिदानंद-संदोह रामु बिकल कारन कवन॥६७॥

चौ०-देखि चरित अति नर अनुसारी। भयेउ हृदय मम संसय भारी।
सोइ भ्रम अब हित करि मैं जाना। कीन्ह अनुग्रह कृपानिधाना।
जो अतिआतप ब्याकुल होई। तरुछाया सुख जानै सोई।
जौं नहिं होत मोह अति मोही। मिलतेउँ तात कवन बिधि तोही।
सुनतेउँ किमि हरिकथा सुहाई। अतिबिचित्र बहु बिधि तुम्ह गाई।
निगमागम पुरान मत एहा। कहहिं सिद्ध मुनि नहिं संदेहा।

दो०—बालचरित कहि विविध विधि मन महँ परम उछाह।
रिपिआगमनु कहेसि पुनि श्री-रघु-बीर-विवाह ॥६०॥
चौ०-बहुरि राम-अभिषेक-प्रसंगा। पुनि नृपबचन राज-रस-भंगा।
पुरबासिन्ह कर बिरह बिषादा। कहेसि राम-लछिमन-संवादा।
बिपिनगवनु केवटअनुरागा। सुरसरि उतरि निवास प्रयागा।
बालमीकि-प्रभु-मिलन बखाना। चित्रकूट जिमि बस भगवाना।
सचिवागवनु नगर नृपमरना। भरतागवनु प्रेम बहु बरना।
करि नृपक्रिया संग पुरबासी। भरतु गए जहँ प्रभु सुखरासी।
पुनि रघुपति बहु विधि समुझाए। लइ पादुका अवधपुर आए।
भरत रहनि सुर-पति-सुत-करनी। प्रभु अरु अत्रि भेंट पुनि बरनी।
दो०—कहि बिराध-बध जेहि विधि देह तजी सरभंग।
बरनि सुतीछन-प्रीति पुनि प्रभु-अगस्ति-सतसंग ॥६१॥
चौ०-कहि दंडक-बन-पावनताई। गीध-मइत्री पुनि तेहि गाई।
पुनि प्रभु पंचवटी कृत बासा। भंजी सकल मुनिन्ह कै त्रासा।
पुनि लछिमन उपदेस अनूपा। सूपनखा जिमि कीन्हि कुरूपा।
खर-दूषन-बध बहुरि बखाना। जिमि सब मरमु दसानन जाना।
दसकंधर — मारीच — बतकही। जेहि विधि भई सो सब तेहि कही।
पुनि माया-सीता कर हरना। श्री-रघु-बीर-बिरह कछु बरना।
पुनि प्रभु गीधक्रिया जिमि कीन्ही। बधि कबंध सबरिहि गति दीन्ही।
बहुरि बिरह बरनत रघुबीरा। जेहि विधि गए सरोबरतीरा।
दो०—प्रभु-नारद-संवाद कहि मारुति-मिलन-प्रसंग।
पुनि सुग्रीवँमिताई बालिप्रान कर भंग ॥६२॥
कपिहि तिलक करि प्रभुकृत सैल प्रबरषन बास।
बरनत बरषा सरद कर रामरोष कपित्रास ॥६३॥
चौ०-जेहि विधि कपिपति कीस पठाए। सीताखोजन सकल सिधाए।
बिबरप्रवेस कीन्ह जेहि भाँती। कपिन्ह बहोरि मिला संपाती।
सुनि सब कथा समीरकुमारा। नाँघत भयेउ पयोधि अपारा।

दो०—ब्यापि रहेउ संसार महुँ मायाकटक प्रचंड।
सेनापति कामादि भट दंभ कपट पाखंड ॥१०२॥
सो दासी रघुबीर कै समुझे मिथ्या सोपि।
छूट न रामकृपा बिनु नाथ कहौं पद रोपि ॥१०३॥
चौ०-जो माया सब जगहि नचावा। जासु चरित लखि काहु न पावा।
सोइ प्रभु भ्रुबिलास खगराजा। नाच नटी इव सहित समाजा।
सोइ सच्चिदानंदघन रामा। अज बिग्यानरूप बलधामा।
ब्यापक ब्याप्य अखंड अनंता। अखिल अमोघसक्ति भगवंता।
अगुन अदभ्र गिरागोतीता। सबदरसी अनवद्य अजीता।
निर्मल निराकार निर्मोहा। नित्य निरंजन सुखसंदोहा।
प्रकृतिपार प्रभु सब उर बासी। ब्रह्म निरीह बिरज अबिनासी।
इहाँ मोह कर कारन नाहीं। रबि सनमुख तम कबहुँ कि जाहीं।
दो०—भगत हेतु भगवान प्रभु राम धरेउ तनु भूप।
किए चरित पावन परम प्राकृत-नर-अनुरूप ॥१०४॥
जथा अनेक वेष धरि नृत्य करै नट कोइ।
सोइ सोइ भाव देखावै आपुन होइ न सोइ ॥१०५॥
चौ०-असि रघु-पति-लीला उरगारी। दनुजबिमोहनि जन-सुख-कारी।
जे मतिमलिन बिषयबस कामी। प्रभु पर मोह धरहिं इमि स्वामी।
नयनदोष जा कहुँ जब होई। पीतबरन ससि कहुँ कह सोई।
जब जेहि दिसिभ्रम होइ खगेसा। सो कह पच्छिम उयेउ दिनेसा।
नौकारूढ़ चलत जग देखा। अचल मोहबस आपुहि लेखा।
बालक भ्रमहिं न भ्रमहिं गृहादी। कहहिं परसपर मिथ्याबादी।
हरि बिषैक अस मोह बिहंगा। सपनेहुँ नहिं अग्यान-प्रसंगा।
मायाबस मतिमंद अभागी। हृदय जवनिका बहु बिधि लागी।
ते सठ हठबस संसय करहीं। निज अग्यान राम पर धरहीं।
दो०—काम-क्रोध-मद-लोभ-रत गृहासक्त, दुखरूप।
ते किमि जानहिं रघुपतिहि मूढ़ परे तमकूप ॥१०६॥

संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेही। चितवहिं रामु कृपा करि जेही।
रामकृपा तव दरसन भयेऊ। तव प्रसाद मम संसय गयेऊ।

दो०—सुनि बिहंगपति बानी सहित बिनय अनुराग।
पुलक गात लोचन सजल मन हरषेउ अति काग ॥९८॥
स्रोता सुमति सुसील सुचि कथा रसिक हरिदास।
पाइ उमा अतिगोप्य मति सज्जन करहिं प्रकास ॥९९॥

चौ०-बोलेउ कागभुसुंडि बहोरी। नभगनाथ पर प्रीति न थोरी।
सब बिधि नाथ पूज्य तुम्ह मेरे। कृपापात्र रघुनायक केरे।
तुम्हहिं न संसय मोह न माया। मो पर नाथ कीन्ह तुम्ह दाया।
पठै मोहमिस खगपति तोही। रघुपति दीन्हि बड़ाई मोही।
तुम्ह निज मोह कहा खगसाईं। सो नहिं कछु आचरज गोसाईं।
नारद भव बिरंचि सनकादी। जे मुनिनायक आतमबादी।
मोह न अंध कीन्ह केहि केही। को जग काम नचाव न जेही।
तृष्णा केहि न कीन्ह बौराहा। केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा।

दो०—ग्यानी तापस सूर कबि कोबिद गुनआगार।
केहि कै लोभ बिडंबना कीन्हि न एहि संसार ॥१००॥
श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि।
मृगलोचनि-लोचन-सर* को अस लाग न जाहि ॥१०१॥

चौ०-गुनकृत सन्यपात नहिं केही। कोउ न मान मद तजेउ निबेही।
जोबनज्वर केहि नहिं बलकावा। ममता केहि कर जसु न नसावा।
मच्छर काहि कलंक न लावा। काहि न सोक-समीर डोलावा।
चिंतासाँपिनि काहि न खाया। को जग जाहि न ब्यापी माया।
कीट मनोरथ दारु सरीरा। जेहि न लाग घुन को अस धीरा।
सुत बित लोक ईषना तीनी। केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी।
यह सब माया कर परिवारा †। प्रबल अमित को बरनै पार।
सिव चतुरानन जाहि डेराहीं। अपर जीव केहि लेखे माहीं।

* सरज०, हस्त०—मृगनयनी के नयन-सर। † काशि०—परिचारा।

बरनि न जाइ रुचिर अँगनाई। जहँ खेलहिं नित चारिउ भाई।
बालबिनोद करत रघुराई। बिचरत अजिर जननि-सुख-दाई।
मरकत मृदुल कलेवर स्यामा। अंग अंग प्रति छबि बहु कामा।
नव-राजीव-अरुन मृदु चरना। पदज रुचिर नख ससि-दुति-हरना।
ललित अंक कुलिसादिक चारी। नूपुर चारु मधुर-रव-कारी।
चारु पुरट-मनि-रचित बनाई। कटि किंकिनि कल मुखर सुहाई।
दो०—रेखा त्रय सुंदर उदर नाभि रुचिर गंभीर।
उर आयत भ्राजत बिबिध बालबिभूषन बीर ॥११२॥
चौ०-अरुन पानि नख करज मनोहर। बाहु बिसाल बिभूषन सुंदर।
कंध बालकेहरि दर ग्रीवाँ। चारु चिबुक आनन छबिसींवाँ।
कलबल बचन अधर अरुनारे। दुइ दुइ दसन बिसद बर बारे।
ललित कपोल मनोहर नासा। सकल सुखद ससि-कर-सम हाँसा।
नील-कंज-लोचन भवमोचन। भ्राजत भाल तिलक गोरोचन।
बिकट भृकुटि सम श्रवन सुहाए। कुंचित कच मेचक छबि छाए।
पीत झीनि झिगुली तन सोही। किलकनि चितवनि भावति मोही।
रूपरासि नृप-अजिर-बिहारी। नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी।
मोसन करहिं बिबिध बिधि क्रीड़ा। बरनत चरित होति मोहि व्रीड़ा।
किलकत मोहि धरन जब धावहिं। चलौं भागि तब पूप देखावहिं।
दो०—आवत निकट हँसहिं प्रभु भाजत रुदन कराहिं।
जाउँ समीप गहन पद फिरि फिरि चितै पराहिं ॥११३॥
प्राकृत सिसु इव लीला देखि भयेउ मोहि मोह।
कवन चरित्र करत प्रभु चिदानंदसंदोह ॥११४॥
चौ०-एतना मन आनत खगराया। रघु-पति प्रेरित ब्यापी माया।
सो माया न दुखद मोहि काहीं। आन जीव इव संसृति नाहीं।
नाथ इहाँ कछु कारन आना। सुनहु सो सावधान हरिजाना।
ग्यान अखंड एक सीतावर। मायाबस्य जीव सचराचर।
जौं सब के रह ग्यान एकरस। ईस्वर जीवहिं भेद कहहु कस।

निर्गुनरूप सुलभ अति सगुन न जानहिं कोइ ।
सुगम अगम नाना चरित सुनि मुनिमन भ्रम होइ ॥१०७॥
चौ०-सुनु खगेस रघु-पति-प्रभुताई । कहौं जथामति कथा सुहाई ।
जेहि विधि मोह भयेउ प्रभु मोही । सो सब कथा सुनावौं तोही ।
राम-कृपा-भाजन तुम्ह ताता । हरि-गुन-प्रीति मोहि सुखदाता ।
तातें नहिं कछु तुम्हहिं दुरावौं । परम रहस्य मनोहर गावौं ।
सुनहु राम कर सहज सुभाऊ । जन अभिमान न राखहिं काऊ ।
संसृतमूल सूलप्रद नाना । सकल-सोक-दायक अभिमाना ।
ता तें करहिं कृपानिधि दूरी । सेवक पर ममता अति भूरी ।
जिमि सिसुतन व्रन होइ गोसाईं । मातु चिराव कठिन की नाईं ।
दो०—जदपि प्रथम दुख पावै रोवै बाल अधीर ।
व्याधि-नास-हित जननी गनत न सो सिसुपीर ॥१०८॥
तिमि रघुपति निज दास कर हरहिं मान हित लागि ।
तुलसिदास ऐसे प्रभुहिं कस न भजसि भ्रम त्यागि ॥१०९॥
चौ०-रामकृपा आपनि जड़ताई । कहौं खगेस सुनहु मन लाई ।
जब जब राम मनुजतनु धरहीं । भक्तहेतु लीला बहु करहीं ।
तब तब अवधपुरी मैं जाऊँ । बालचरित बिलोकि हरषाऊँ ।
जनममहोत्सव देखौं जाई । बरष पाँच तहँ रहौं लोभाई ।
इष्टदेव मम बालक रामा । सोभा बपुष कोटि-सत-कामा ।
निज-प्रभु-बदन निहारि निहारी । लोचन सुफल करौं उरगारी ।
लघु बायसबपु धरि हरिसंगा । देखौं बालचरित बहुरंगा ।
दो०—लरिकाईं जहँ जहँ फिरहिं तहँ तहँ संग उड़ाउँ ।
जूठनि परै अजिर महँ सोइ उठाइ करि खाउँ ॥११०॥
एक बार अतिसय सब चरित किए रघुबीर ।
सुमिरत प्रभुलीला सोइ पुलकित भयेउ सरीर ॥१११॥
चौ०-कहै भुसुंडि सुनहु खगनायक । रामचरित सेवक-सुख-दायक ।
नृपमंदिर सुंदर सब भाँती । खचित कनक मनि नाना जाती ।

दो०—जो नहिं देखा नहिं सुना जो मनहूँ न समाइ।
सो सब अद्भुत देखेउँ बरनि कवनि बिधि जाइ ॥११९॥
एक एक ब्रह्मांड महँ रहेउँ बरष सत एक।
एहि बिधि देखत फिरेउँ मैं अंडकटाह अनेक ॥१२०॥
चौ०-लोक लोक प्रति भिन्न बिधाता। भिन्न बिष्णु सिव मनु दिसित्राता।
नर गंधर्ब भूत बैताला। किन्नर निसिचर पसु खग ब्याला।
देव-दनुज-गन नाना जाती। सकल जीव तहँ आनहिं भाँती।
महि सरि सागर सर गिरि नाना। सब प्रपंच तहँ आनहि आना।
अंडकोस प्रति प्रति निज रूपा। देखेउँ जिनिस अनेक अनूपा।
अवधपुरी प्रति भुवन निहारी। सरजू भिन्न भिन्न नर नारी।
दसरथ कौसल्या सुनु ताता। बिबिध रूप भरतादिक भ्राता।
प्रतिब्रह्मांड रामअवतारा। देखेउँ बालबिनोद उदारा।
दो०—भिन्न भिन्न मैं दीख सब अति बिचित्र हरिजान।
अगनित भुवन फिरेउँ प्रभु रामु न देखेउँ आन ॥१२१॥
सोइ सिसुपन सोइ सोभा सोइ कृपाल रघुबीर।
भुवन भुवन देखत फिरेउँ प्रेरित मोह समीर ॥१२२॥
चौ०-भ्रमत मोहि ब्रह्मांड अनेका। बीते मनहुँ कलपसत एका।
फिरत फिरत निज आश्रम आयेउँ। तहँ पुनि रहि कछु काल गवाँयेउँ।
निज-प्रभु-जनम अवध सुनि पायेउँ। निर्भर प्रेम हरषि उठि धायेउँ।
देखेउँ जनममहोत्सव जाई। जेहि बिधि प्रथम कहा मैं गाई।
रामउदर देखेउँ जग नाना। देखत बनै न जाइ बखाना।
तहँ पुनि देखेउँ राम सुजाना। मायापति कृपाल भगवाना।
करौं बिचार बहोरि बहोरी। मोह कलिल* ब्यापित मति मोरी।
उभय घरी महँ मैं सब देखा। भयेउँ भ्रमित मन मोह बिसेखा।
दो०—देखि कृपाल बिकल मोहि बिहँसे तब रघुबीर।
बिहँसतही मुख बाहेर आयेउँ सुनु मतिधीर ॥१२३॥

*कलिल = विकार।

मायाबस्य जीव अभिमानी। ईसबस्य माया गुनखानी।
परबस जीव स्वबस भगवंता। जीव अनेक एक श्रीकंता।
मुधा भेद जद्यपि कृत माया। बिनु हरि जाइ न कोटि उपाया।

दो०—रामचंद्र के भजन बिनु जो चह पद निर्बान।
ग्यानवंत अपि सो नर पसु बिनु पूछ बिखान ॥११५॥
राकापति षोडस उअहिं तारा-गन-समुदाइ।
सकल गिरिन्ह दव लाइअ बिनु रबि राति न जाइ ॥११६॥

चौ०-ऐसेहि बिनु हरिभजन खगेसा। मिटै न जीवन्ह केर कलेसा।
हरि सेवकहिं न ब्याप अबिद्या। प्रभुप्रेरित ब्यापै तेहि बिद्या।
ता तें नास न होइ दास कर। भेद भगति बाढ़ै बिहंगवर।
भ्रम तें चकित राम मोहि देखा। बिहँसे सो सुनु चरित बिसेखा।
तेहि कौतुक कर मरमु न काहू। जाना अनुज न मातुपिताहू।
जानुपानि धाए मोहि धरना। स्यामलगात अरुन-कर-चरना।
तब मैं भागि चलेउँ उरगारी। राम गहन कहँ भुजा पसारी।
जिमि जिमि दूरि उड़ाउँ अकासा। तहँ हरिभुज देखौं निज पासा।

दो०—ब्रह्मलोक लगि गयौं मैं चितयौं पाछ उड़ात।
जुग अंगुल कर बीच सब रामभुजहिं मोहि तात ॥११७॥
सप्तावरन भेद करि जहाँ लगे गति मोरि।
गयेउँ तहाँ प्रभु भुज निरखि ब्याकुल भयेउँ बहोरि ॥११८॥

चौ०-मूँदेउँ नयन त्रसित जब भयेऊँ। पुनि चितवत कोसलपुर गयेऊँ।
मोहि बिलोकि राम मुसुकाहीं। बिहँसत तुरत गयेउँ मुख माहीं।
उदर माँझ सुनु अंडज-राया। देखेउँ बहु ब्रह्मांडनिकाया।
अति बिचित्र तहँ लोक अनेका। रचना अधिक एक तें एका।
कोटिन्ह चतुरानन गौरीसा। अगनित उड़गन रबि रजनीसा।
अगनित लोकपाल जम काला। अगनित भूधर भूमि बिसाला।
सागर सरि सर बिपिन अपारा। नाना भाँति सृष्टिबिस्तारा।
सुर मुनि सिद्ध नाग नर किन्नर। चारि प्रकार जीव सचराचर।

सुनु वायस तैं सहज सयाना। काहे न माँगसि अस बरदाना।
सब सुखखानि भगति तैं माँगी। नहिं जग कोउ तोहि सम बड़भागी।
जो मुनि कोटि जतन नहिं लहहीं। जे जप-जोग अनल तन दहहीं।
रीझेउँ देखि तोरि चतुराई। माँगेहु भगति मोहि अति भाई।
सुनु बिहंग प्रसाद अब मोरे। सब सुभ गुन बसिहहिं उर तोरे।
भगति ग्यान बिग्यान बिरागा। जोग चरित्र रहस्य-बिभागा।
जानब तैं सबही कर भेदा। मम प्रसाद नहिं साधन खेदा।

दो०—मायासंभव भरम सब अब न ब्यापिहहिं तोहि।
जानेसु ब्रह्म अनादि अज अगुन गुनाकर मोहि ॥१२९॥
मोहि भगतप्रिय संतत अस बिचारि सुनु काग।
काय बचन मन मम पद करेसु अचल अनुराग ॥१३०॥

चौ०-अब सुनु परम बिमल मम बानी। सत्य सुगम निगमादि बखानी।
निज सिद्धांत सुनावौं तोही। सुनि मन धरु सब तजि भजु मोही।
मम मायासंभव परिवारा। जीव चराचर बिबिध प्रकारा।
सब मम प्रिय सब मम उपजाए। सब तें अधिक मनुज मोहि भाए।
तिन्ह महँ द्विज द्विज महँ श्रुतिधारी। तिन्ह महँ निगम-धर्म-अनुसारी।
तिन्ह महँ प्रिय बिरक्त पुनि ग्यानी। ग्यानिहुँ तें अतिप्रिय बिग्यानी।
तिन्ह तें पुनि मोहि प्रिय निज दासा। जेहि गति मोरि न *दूसरि आसा।
पुनि पुनि सत्य कहौं तोहि पाहीं। मोहि सेवकसम प्रिय कोउ नाहीं।
भगतिहीन बिरंचि किन होई। सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोई†।
भगतिवंत अति नीचउ प्रानी। मोहि प्रानप्रिय असि मम बानी।

दो०—सुचि सुसील सेवक सुमति प्रिय कहु काहि न लाग।
श्रुति पुरान कह नीति असि सावधान सुनु काग ॥१३१॥

चौ०-एक पिता के बिपुल कुमारा। होहिं पृथक गुन सील अचारा।
कोउ पंडित कोउ तापस ग्याता। कोउ धनवंत सूर कोउ दाता।
कोउ सर्बग्य धर्मरत कोई। सब पर पितहि प्रीति सम होई।

* काशि०—भगति मोरि नहिं। † सटल०—सब जीवन महँ अप्रिय सोई।

सोइ लरिकाई मो सन करन लगे पुनि राम।
कोटि भाँति समुझावौं मन न लहै विश्राम ॥१२४॥

चौ०-देखि चरित यह सो प्रभुताई। समुझत देहदसा बिसराई।
धरनि परेउँ मुख आव न बाता। त्राहि त्राहि आरत-जन-त्राता।
प्रेमाकुल प्रभु मोहि बिलोकी। निज-माया-प्रभुता तब रोकी।
कर सरोज प्रभु मम सिर धरेऊ। दीनदयाल सकल दुख हरेऊ।
कीन्ह राम मोहि बि-गत-बिमोहा। सेवकसुखद कृपासंदोहा।
प्रभुता प्रथम बिचारि बिचारी। मन महँ होइ हरष अति भारी।
भक्तबछलता प्रभु कै देखी। उपजी मम उर प्रीति बिसेखी।
सजल नयन पुलकित कर जोरी। कीन्हेउँ बहु बिधि बिनय बहोरी।

दो०—सुनि सप्रेम मम बानी देखि दीन निज दास।
बचन सुखद गंभीर मृदु बोले रमानिवास ॥१२५॥
कागभुसुंडी माँगु बर अति प्रसन्न मोहि जानि।
अनिमादिक सिधि अपर ऋधि मोच्छ सकल सुखखानि ॥१२६॥

चौ०-ग्यान बिवेक बिरति बिग्याना। मुनिदुर्लभ गुन जे जग जाना।
आजु देउँ सब संसय नाहीं। माँगु जो तोहि भाव मन माहीं।
सुनि प्रभुबचन अधिक अनुरागेउँ। मन अनुमान करन तब लागेउँ।
प्रभु कह देन सकल सुख सही। भगति आपनी देन न कही।
भगतिहीन गुन सब सुख कैसे। लवन बिना बहु ब्यंजन जैसे।
भजनहीन सुख कवने काजा। अस बिचारि बोलेउँ खगराजा।
जौं प्रभु होइ प्रसन्न बर देहू। मो पर करहु कृपा अरु नेहू।
मन भावत बर माँगौं स्वामी। तुम्ह उदार उर-अंतर-जामी।

दो०—अबिरल भगति बिसुद्ध तब श्रुति पुरान जो गाव।
जेहि खोजत जोगीस मुनि प्रभुप्रसाद कोउ पाव ॥१२७॥
भगत-कलप-तरु प्रनतहित कृपासिंधु सुखधाम।
सोइ निज भगति मोहि प्रभु देहु दया करि राम ॥१२८॥

चौ०-एवमस्तु कहि रघु-कुल-नायक। बोले बचन परम-सुख-दायक।

राम कृपा बिनु सुनु खगराई। जानि न जाइ रामप्रभुताई।
जाने बिनु न होइ परतीती। बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती।
प्रीति बिना नहिं भगति दृढ़ाई। जिमि खगपति जल कै चिकनाई।
सो०—बिनु गुरु होइ कि ग्यान ग्यान कि होइ बिराग बिनु।
गावहिं बेद पुरान सुख कि लहहिं हरिभगति बिनु ॥१३६॥
को बिस्राम कि पाव तात सहज संतोष बिनु।
चले कि जल बिनु नाव कोटि जतन पचि पचि मरै ॥१३७॥
चौ०-बिनु संतोष न काम नसाहीं। काम अछत सुख सपनेहुँ नाहीं।
रामभजन बिनु मिटहि कि कामा। थलबिहीन तरु कबहुँ कि जामा।
बिनु बिग्यान कि समता आवै। को अवकास कि नभ बिनु पावै।
श्रद्धा बिना धरमु नहिं होई। बिनु महि गंध कि पावै कोई।
बिनु तप तेज कि कर बिस्तारा। जल बिनु रस कि होइ संसारा।
सील कि मिल बिनु बुधसेवकाई। जिमि बिनु तेज न रूपगुसाईं।
निज सुख बिनु मन होइ कि थीरा। परस कि होइ बिहीन समीरा।
कवनिउ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा। बिनु हरिभजन न भव-भय-नासा।
दो०—बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहिं न राम।
रामकृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लह बिश्राम * ॥१३८॥
सो०—अस बिचारि मतिधीर तजि कुतर्क संसय सकल।
भजहु राम रघुबीर करुनाकर सुंदर सुखद ॥१३९॥
चौ०-निज-मति-सरिस नाथ मैं गाया। प्रभु-प्रताप-महिमा खगराया।
कहेउँ न कछु करि जुगुति बिसेखी। यह सब मैं निज नयननि्ह देखी।
महिमा नाम रूप गुनगाथा। सकल अमित अनंत रघुनाथा।
निज निज मति मुनि हरिगुन गावहिं। निगम सेष सिव पार न पावहिं।
तुम्हहि आदि खग मसकप्रजंता। नभ उड़ाहिं नहिं पावहिं अंता।
तिमि रघु-पति-महिमा अवगाहा। तात कबहुँ कोउ पाव कि थाहा।

---

* हस्त०—मन लहहि बिश्राम। सदल० मन कि लहै बिश्राम।

कोउ पितुभगत बचन मन कर्मा। सपनेहु जान न दूसर धर्मा।
सो सुत प्रिय पितु प्रान समाना। जद्यपि सो सब भाँति अयाना*।
एहि बिधि जीव चराचर जेते। त्रिजग देव नर असुर समेते।
अखिल बिस्व यह मम उपजाया। सब पर मोहि बराबरि दाया।
तिन्ह महँ जो परिहरि मद माया। भजै मोहि मन बच अरु काया।

दो०—पुरुष नपुंसक नारि नर जीव चराचर कोइ।
भगति भाव भजि कपट तजि मोहि परम प्रिय सोइ॥१३२॥

सो०—सत्य कहौं खग तोहि सुचि सेवक मम प्रानप्रिय।
अस बिचारि भजु मोहि परिहरि आस भरोस सब॥१३३॥

चौ०-कबहुँ काल नहिं ब्यापिहि तोही। सुमिरि स्वरूप निरंतर मोही।
प्रभुबचनामृत सुनि न अघाऊँ। तन पुलकित मन अति हरषाऊँ।
सो सुख जानै मन अरु काना। नहिं रसना पहिं जाइ बखाना।
प्रभु-सोभा-सुख जानहिं नयना। कहि किमि सकहिं तिन्हहिं नहिं बयना।
बहु बिधि मोहि प्रबोधि सुख देई। लगे करन सिसुकौतुक तेई।
सजल नयन कछु मुख करि रूखा। चितै मातु लागी अति भूखा।
देखि मातु आतुर उठि धाई। कहि मृदु बचन लिये उर लाई।
गोद राखि कराव पयपाना। रघुपति-चरित ललित कर गाना।

सो०—जेहि सुख लागि पुरारि असुभ-बेष-कृत सिव सुखद।
अवधपुरी नरनारि तेहि सुख महँ संतत मगन॥१३४॥
सोई सुख लवलेस जिन्ह बारक सपनेहु लहेउ।
तेहि नहिं गनहिं खगेस ब्रह्मसुखहिं सज्जन सुमति॥१३५॥

चौ०-मैं पुनि अवध रहेउँ कछु काला। देखेउँ बालबिनोद रसाला।
रामप्रसाद भगति बर पायेउँ। प्रभुपद बंदि निजाश्रम आयेउँ।
तब तें मोहि न ब्यापी माया। जब तें रघुनायक अपनाया।
यह सब गुप्त चरित मैं गावा। हरिमाया जिमि मोहि नचावा।
निज अनुभव अब कहौं खगेसा। बिनु हरिभजन न जाहिं कलेसा।

* काशि०—सयाना।

गुरु बिनु भवनिधि तरै न कोई। जौं बिरंचि संकर सम होई।
संसय सर्प ग्रसेउ मोहि ताता। दुखद लहरि कुतर्क बहु ब्राता।
तव सरूप गारुड़ि रघुनायक। मोहि जिआयेउ जन-सुख-दायक।
तव प्रसाद मम मोह समाना। रामरहस्य अनूपम जाना।
दो०—ताहि प्रसंसि बिबिध बिधि सीस नाइ कर जोरि।
बचन बिनीत सप्रेम मृदु बोलेउ गरुड़ बहोरि॥१४४॥
प्रभु अपने अबिबेक तें पूँछौं स्वामी तोहि।
कृपासिंधु सादर कहहु जानि दास निज मोहि॥१४५॥
चौ०-तुम्ह सर्बग्य तग्य तमपारा। सुमति सुसील सरलआचारा।
ग्यान-बिरत - बिग्यान - निवासा। रघुनायक के तुम्ह प्रिय दासा।
कारन कवन देह यह पाई। तात सकल मोहि कहौ बुझाई।
राम-चरित-सर सुंदर स्वामी। पायेउ कहाँ कहहु नभगामी।
नाथ सुना मैं अस सिव पाहीं। महा प्रलयहु नास तव नाहीं।
मृषा बचन नहिं ईस्वर कहई। सो मोरे मन संसय अहई।
अग जग जीव नाग नर देवा। नाथ सकल जग कालकलेवा।
अंडकटाह अमित लयकारी। काल सदा दुरतिक्रम भारी।
सो०—तुम्हहिं न ब्यापत काल अति कराल कारन कवन।
मोहि सो कहहु कृपाल ग्यानप्रभाउ कि जोगबल॥१४६॥
दो०—प्रभु तव आस्रम आयेउँ मोर मोह भ्रम भाग।
कारन कवन सो नाथ सब कहहु सहित अनुराग॥१४७॥
चौ०-गरुड़गिरा सुनि हरषेउ कागा। बोलेउ उमा सहित अनुरागा।
धन्य धन्य तव मति उरगारी। प्रस्न तुम्हार मोहि अति प्यारी।
सुनि तव प्रस्न सप्रेम सुहाई। बहुत जनम की सुधि मोहि आई।
अब निज कथा कहौं मैं गाई। तात सुनहु सादर मन लाई।
जप तप ब्रत मख सम दम नाना। बिरति बिबेक जोग बिग्याना।
सब कर फल रघु-पति पद प्रेमा। तेहि बिनु कोउ न पावै छेमा।
एहि तन रामभगति मैं पाई। ता तें मोहि ममता अधिकाई।

राम काम-सत-कोटि-सुभग-तन । दुर्गा-कोटि-अमित अरिमर्दन ।
सक्र-कोटि-सत-सरिस बिलासा । नभ-सत-कोटि-अमित अवकासा ।
दो०—मरुत-कोटि-सत-बिपुल बल रबि-सत-कोटि प्रकास ।
ससि-सत-कोटि सो सीतल समन सकल-भव-त्रास ॥१४०॥
काल-कोटि-सत-सरिस अति दुस्तर दुर्ग दुरंत ।
धूम-केतु - सत - कोटि - सम दुराधर्ष भगवंत ॥१४१॥
चौ०-प्रभु अगाध सत-कोटि-पताला । समन-कोटि-सत-सरिस कराला ।
तीरथ-अमित-कोटि-सम पावन । नाम अखिल-अघ-पुंज-नसावन ।
हिम-गिरि-कोटि अचल रघुबीरा । सिंधु-कोटि-सत-सम गंभीरा ।
काम-धेनु-सत - कोटि - समाना । सकल-काम-दायक भगवाना ।
सारद-कोटि-अमित चतुराई । बिधि-सत-कोटि सृष्टिनिपुनाई ।
बिष्णु-कोटि-सत पालनकरता । रुद्र-कोटि-सत-सम संहरता ।
धनद-कोटि-सत-सम धनवाना । माया कोटि प्रपंचनिधाना ।
भारधरन सत - कोटि - अहीसा । निरवधि निरुपम प्रभु जगदीसा ।
छं०—निरुपम न उपमा आन रामसमान निगमागम कहे ॥
जिमि कोटि-सत-खद्योत-सम रबि कहत अति लघुता लहे ॥
एहि भाँति निज निज मति बिलास मुनीस हरिहिं बखानहीं ॥
प्रभु भावगाहक अतिकृपाल सप्रेम सुनि सुख मानहीं ॥
दो०—राम अमित-गुन-सागर थाह कि पावै कोइ ।
संतन्ह सन जस कछु सुनेउँ तुम्हहिं सुनायेउँ सोइ ॥१४२॥
सो०—भाववस्य भगवान सुखनिधान करुनाभवन ।
तजि ममता मद मान भजिय सदा सीतारमन* ॥१४३॥
चौ०-सुनि भुसुंडि के बचन सुहाए । हरषित खगपति पंख फुलाए ।
नयननीर मन अति हरषाना । श्री-रघु-बर प्रताप उर आना ।
पाछिल मोह समुझि पछिताना । ब्रह्म अनादि मनुज करि जाना ।
पुनि पुनि कागचरन सिर नावा । जानि रामसम प्रेम बढ़ावा ।

२ काशि०—सीतापतिहिं ।

दो०—कलिमल ग्रसे धर्म सब गुप्त भए सदग्रंथ।
दंभिन्ह निज मति कल्पि करि प्रगट किए बहु पंथ ॥१५२॥
भए लोग सब मोहबस लोभ ग्रसे सुभ कर्म।
सुनु हरिजान ग्याननिधि कहौं कछुक कलिधर्म ॥१५३॥

चौ०-बरन धरम नहिं आस्रम चारी। श्रुति-बिरोध-रत सब नरनारी।
द्विज स्रुतिबंचक* भूप प्रजासन। कोउ नहिं मान निगम-अनुसासन।
मारग सोइ जा कहुँ जोइ भावा। पंडित सो जो गाल बजावा।
मिथ्यारंभ दंभरत जोई। ता कहँ संत कहहिं सब कोई।
सोइ सयान जो पर-धन-हारी। जो कर दंभ सो बड़ आचारी।
जो कह झूठ मसखरी जाना। कलिजुग सोइ गुनवंत बखाना।
निराचार जो श्रुतिपथ त्यागी। कलिजुग सोइ ग्यानी बैरागी।
जा के नख अरु जटा बिसाला। सोइ तापस प्रसिद्ध कलिकाला।

दो०—असुभ बेष भूषन धरे भच्छाभच्छ जे खाहिं।
तेइ जोगी† तेइ सिद्ध नर पूज्य ते कलिजुग माहिं ॥१५४॥

सो०—जे अपकारी चार तिन्ह कर गौरव मान्य बहु।
मन क्रम बचन लबार ते बकता कलिकाल महँ ॥१५५॥

चौ०-नारिबिबस नर सकल गोसाईं। नाचहिं नटमरकट की नाईं।
सूद्र द्विजन्ह उपदेसहिं ग्याना। मेलि जनेऊ लेहिं कुदाना।
सब नर काम-लोभ-रत क्रोधी। बेद-बिप्र-गुरु-संत-बिरोधी।
गुनमंदिर सुंदर पति त्यागी। भजहिं नारि परपुरुष अभागी।
सौभागिनी बिभूषनहीना। बिधवन्ह के सिंगार नबीना।
गुरुसिष बधिर अंध कर लेखा। एक न सुनहिं एक नहिं देखा।
हरै सिष्यधन सोक न हरई। सो गुरु घोर नरक महँ परई।
मातु पिता बालकन्ह बोलावहिं। उदर भरै सोइ धर्म‡ सिखावहिं।

दो०—ब्रह्मग्यान बिनु नारि नर कहहिं न दूसरि बात।
कौड़ी लागि लोभबस करहिं बिप्र-गुर-घात ॥१५६॥

* काशि०—बेचक। † काशि०—तापस। ‡ काशि०—ज्ञान।

जेहि तें कछु निजस्वारथ होई। तेहि पर ममता कर सब कोई।

सो०—पन्नगारि असि नीति श्रुतिसंमत सज्जन कहहिं।
अति नीचहु सन प्रीति करिअ जानि निज-परम-हित ॥१४८॥
पाट कीट तें होइ तेहि तें पाटंबर रुचिर।
कृमि पाले सब कोइ परम अपावन प्रानसम ॥१४९॥

चौ०-स्वारथ साँच जीव कहुँ एहा। मन-क्रम-बचन रामपद नेहा।
सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा। जो तनु पाइ भजिअ रघुबीरा।
रामबिमुख लहि बिधिसम देही। कबि कोबिद न प्रसंसहिं तेही।
रामभगति एहि तन उर जामी। ता तें मोहि परमप्रिय स्वामी।
तजौं न तनु निज इच्छा मरना। तनु बिनु बेद भजन नहिं बरना॥
प्रथम मोह मोहि बहुत बिगोवा। रामबिमुख सुख कबहुँ न सोवा।
नाना जनम करम पुनि नाना। किए जोग जप मख तप दाना।
कवन जोनि जनमेउँ जहँ नाहीं। मैं खगेस भ्रमि भ्रमि जग माहीं।
देखेउँ सब करि करम गुसाईं। सुखी न भयेउँ अबहिं की नाईं।
सुधि मोहि नाथ जनम बहु केरी। सिवप्रसाद मति मोह न घेरी।

दो०—प्रथम जनम के चरित अब कहौं सुनहु बिहगेस।
सुनि प्रभु-पद-रति उपजै जातें मिटहिं कलेस ॥१५०॥
पूरब कलप एक प्रभु जुग कलिजुग मलमूल।
नर अरु नारि अधर्म-रत सकल निगम प्रतिकूल ॥१५१॥

चौ०-तेहि कलियुग कोसलपुर जाई। जनमत भयौं सूद्रतनु पाई।
सिवसेवक मन क्रम अरु बानी। आन देव निंदक अभिमानी।
धन—मदमत्त परम बाचाला। उग्रबुद्धि उर दंभ बिसाला।
जदपि रहेउँ रघु-पति-रजधानी। तदपि न कछु महिमा तब जानी।
अब जाना मैं अवध-प्रभावा। निगमागम पुरान अस गावा।
कवनेहु जनम अवध बस जोई। रामपरायन सो पर होई।
अवध-प्रभाव जानि तब प्रानी। जब उर बसहिं राम धनुपानी।
सो कलिकाल कठिन उरगारी। पापपरायन सब नरनारी।

कलि बारहिं बार दुकाल परै। बिनु अन्न दुखी सब लोग मरै॥

दो०—सुनु खगेस कलि कपट हठ दंभ द्वेष पाखंड।
मान मोह मारादि सब* ब्यापि रहे ब्रह्मंड॥१६०॥
तामस धर्म करहिं सब जप तप मख ब्रत दान।
देव न बरषहिं धरनि पर बयें न जामहिं धान॥१६१॥

तोटक—अबला कच भूषन भूरि छुधा। धनहीन दुखी ममता बहुधा।
सुख चाहहिं मूढ़ न धर्मरता। मति थोरि कठोरि न कोमलता॥
नर पीड़ित रोग न भोग कहीं। अभिमान बिरोध अकारनहीं।
लघु जीवन संवत पंचदसा। कलपांत न नास गुमान असा॥
कलिकाल बिहाल किए मनुजा। नहिं मानत कोउ अनुजा तनुजा।
नहिं दोष बिचार न सीतलता। सब जाति कुजाति भए मँगता॥
इरषा परुषाच्छर लोलुपता। भरि पूरि रही समता बिगता।
सब लोग बियोग बिसोक हए। बरनाश्रम-धर्म-बिचार गए॥
दम दान दया नहिं जानपनी। जड़ता परबंचनताति-घनी।
तनपोषक नारि नरा सगरे। परनिंदक ते जग मों बगरे॥

दो०—सुनु ब्यालारि कराल कलि मल अवगुन आगार।
गुनउ बहुत कलिजुग कर बिनु प्रयास निस्तार॥१६२॥
कृत त्रेता द्वापर समय पूजा मख अरु जोग।
जो गति होइ सो कलि बिषे नाम तें पावहिं लोग॥१६३॥

चौ०—कृतजुग सब जोगी बिग्यानी। करि हरिध्यान तरहिं भव प्रानी।
त्रेता बिबिध जग्य नर करहीं। प्रभुहिं समर्पि कर्म भव तरहीं।
द्वापर करि रघु-पति-पद-पूजा। नर भव तरहिं उपाउ न दूजा।
कलिजुग केवल हरि-गुन-गाहा। गावत नर पावहिं भवथाहा।
कलिजुग जोग न जग्य न ग्याना। एक अधार राम-गुन-गाना।
सब भरोस तजि जो भज रामहिं। प्रेमसमेत गाव गुनग्रामहिं।

---

* इस्त०—मान मोह मारादि मद। सद्व०—काम क्रोध लोभादि मद।

बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन हम तुम्ह तें कछु घाटि।
जानै ब्रह्म सो बिप्रबर आँखि देखावहिं डाँटि ॥ १५७ ॥

चौ०—परतिय लंपट कपट सयाने। मोह द्रोह ममता लपटाने।
तेइ अभेदवादी ग्यानी नर। देखेउँ मैं चरित्र कलिजुग कर।
आप गए अरु औरनि घालहिं। जो कहुँ सतमारग प्रतिपालहिं।
कल्प कल्प भरि एक एक नरका। परहिं जे दूखहिं श्रुति करि तरका।
जे बरनाधम तेलि कुम्हारा। स्वपच किरात कोल कलवारा।
नारि मुई घर संपति नासी। मूँड़ मुड़ाइ होहिं संन्यासी।
ते बिप्रन्ह सन आपु * पुजावहिं। उभय लोक निज हाथ नसावहिं।
बिप्र निरच्छर लोलुप कामी। निराचार सठ बृपलीस्वामी।
सूद्र करहिं जप तप ब्रत दाना। बैठि बरासन कहहिं पुराना।
सब नर कल्पित करहिं अचारा। जाइ न बरनि अनीति अपारा।

दो०—भए बरनसंकर सकल भिन्न सेतु सब लोग।
करहिं पाप दुख पावहिं भय रुज सोक बियोग ॥१५८॥
श्रुतिसंमत हरि-भक्त-पथ संजुत बिरति बिबेक।
तेहि न चलहिं नर मोहबस कल्पहिं पंथ अनेक ॥१५९॥

तोमरछंद—बहु दाम सँवारहिं धाम जती। बिषया रह लीन नहीं बिरती† ॥
तपसी धनवंत दरिद्र गृही। कलिकौतुक तात न जात कही ॥
कुलवंत निकारहिं नारि सती। गृह आनहिं चेरि निबेरि गती ॥
सुत मानहिं मातु पिता तब लौं। अबला नहिं डीठ परी जब लौं ॥
ससुरारि पियारि लगी जब तें। रिपुरूप कुटुंब भए तब तें ॥
नृप पापपरायन धर्म नहीं। करि दंड बिडंब प्रजा नितहीं ॥
धनवंत कुलीन मलीन अपी। द्विजचिह्न जनेउ उघार तपी ॥
नहिं मान पुरानन्ह बेदहिं जो। हरिसेवक संत सही कलि सो ॥
कबिबृंद उदार दुनी न सुनी। गुन-दूषन-ब्रात न कोपि गुनी ॥

* सदल०—पाँव। † काशि०—बिषया हरि लीन रही बिरती।

जपौं मंत्र सिवमंदिर जाई। हृदय दंभ अहमिति अधिकाई।
दो०—मैं खल मलसंकुल मति नीच जाति बस मोह।
हरिजन द्विज देखे जरौं करौं बिष्णु कर द्रोह ॥१६८॥
सो०—गुरु नित मोहि प्रबोध दुखित देखि आचरन मम।
मोहि उपजै अतिक्रोध दंभिहि नीति कि भावई ॥१६९॥
चौ०-एक बार गुर लीन्ह बोलाई। मोहि नीति बहु भाँति सिखाई।
सिवसेवा कै सुत फल सोई। अ-बिरल-भगति रामपद होई।
रामहि भजहिं तात सिव धाता। नर पावँर कै केतिक बाता।
जासु चरन अज सिव अनुरागी। तासु द्रोह सुख चहसि अभागी।
हर कहँ हरिसेवक गुर कहेऊ। सुनि खगनाथ हृदय मम दहेऊ।
अधम जाति मैं बिद्या पाएँ। भयेउँ जथा अहि दूध पिआएँ।
मानी कुटिल कुभाग्य कुजाती। गुरु कर द्रोह करौं दिन राती।
अतिदयाल गुर स्वल्प न क्रोधा। पुनि पुनि मोहि सिखाव सुबोधा।
जेहि तें नीच बड़ाई पावा। सो प्रथमहिं हठि ताहि नसावा।
धूम अनलसंभव सुनु भाई। तेहि बुझाव घनपदवी पाई।
रज मग परी निरादर रहई। सब कर पगप्रहार नित सहई।
मरुत उड़ाइ प्रथम तेहि भरई। नृपकिरीट पुनि नयनन्ह परई।
सुनु खग खगपति समुझि प्रसंगा। बुध नहिं करहिं अधम कर संगा।
कवि कोविद गावहिं असि नीती। खल सन कलह न भल नहिं प्रीती*।
उदासीन नित रहिय गोसाईं। खल परिहरिय स्वान की नाईं।
मैं खल हृदय कपट कुटिलाई। गुर हित कहहिं न मोहि सुहाई।
दो०—एक बार हरिमंदिर जपत रहेउँ सिवनाम।
गुरु आयेउ अभिमान तें उठि नहिं कीन्ह प्रनाम ॥१७०॥
गुरु दयाल नहिं कछु कहेउ उर न रोष लवलेस।
अतिअघ गुरुअपमानता सहि नहिं सके महेस ॥१७१॥

---

* काशि०—खल सँग कलह नहीं भल प्रीती।

सोइ भव तर कछु संसय नाहीं। नामप्रताप प्रगट कलि माहीं।
कलि कर एक पुनीत प्रतापा। मानस पुन्य होइ नहिं पापा।

दो०—कलि-जुग-सम जुग आन नहिं जो नर कर बिस्वास।
गाइ राम-गुन-गन बिमल भव तर बिनहिं प्रयास॥१६४॥
प्रगट चारि पद धर्म के कलि महँ एक प्रधान।
जेन केन बिधि दीन्हे दान करै कल्यान॥१६५॥

चौ०-कृतजुग होहिं धर्म सब केरे। हृदय राम माया के प्रेरे।
सिद्ध सत्व समता बिग्याना। कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना।
सत्व बहुत रज कछु रति कर्मा। सब बिधि सुख त्रेता कर धर्मा।
बहु रज सत्व स्वल्प कछु तामस। द्वापर धर्म हरष भय मानस।
तामस बहुत रजोगुन थोरा। कलिसुभाउ बिरोध चहुँ ओरा।
बुध जुगधर्म जानि मन माहीं। तजि अधर्म-रति धर्म कराहीं।
कालधर्म * नहिं ब्यापहिं तेही। रघु-पति-चरन-प्रीति-रति जेही।
नटकृत कपट बिकट खगराया। नटसेवकहिं न ब्यापै माया।

दो०—हरि-माया-कृत दोष गुन बिनु हरिभजन न जाहिं।
भजिय राम सब काम तजि अस बिचारि मन माहिं॥१६६॥
तेहि कलिकाल बरष बहु बसेउँ अवध बिहँगेस।
परेउ दुकाल बिपतिबस तब मैं गयेउँ बिदेस॥१६७॥

चौ०-गयेउँ उजेनी सुनु उरगारी। दीन मलीन दरिद्र दुखारी।
गए काल कछु संपति पाई। तहँ पुनि करौं संभुसेवकाई।
बिप्र एक बैदिक सिवपूजा। करै सदा तेहि काज न दूजा।
परमसाधु परमारथबिंदक। संभुउपासक नहिं हरिनिंदक।
तेहि सेवौं मैं कपटसमेता। द्विज दयाल अति नीतिनिकेता।
बाहिज नम्र देखि मोहि साईं। बिप्र पढ़ाव पुत्र की नाईं।
संभुमंत्र मोहि द्विजवर दीन्हा। सुभउपदेस बिबिध बिधि कीन्हा।

---

* काशि०—कालकर्म। सटी०—कलि अधर्म।

जराजन्मदुःखौघतातप्यमानम् । प्रभो पाहि आपन्नमामीश शम्भो ॥

श्लोक—रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोपये।
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति ॥

दो०—सुनि बिनती सर्वग्य सिव देखि बिप्रअनुराग।
मंदिर नभबानी भई द्विज बर अब बर माँगु ॥१७४॥
जौं प्रसन्न प्रभु मो पर नाथ दीन पर नेहु।
निज पद-पद्म-भगति दृढ़ पुनि दूसर बर देहु ॥१७५॥
तव मायावस जीव जड़ संतत फिरहिं भुलान।
तेहि पर क्रोध न करिअ प्रभु कृपासिंधु भगवान ॥१७६॥
संकर दीनदयाल अब एहि पर होहु कृपाल।
साप अनुग्रह होइ जेहि नाथ थोरही काल ॥१७७॥

चौ०-एहि कर होई परमकल्याना। सोइ करहु अब कृपानिधाना।
बिप्रगिरा सुनि पर-हित-सानी। एवमस्तु तव भइ नभबानी।
जदपि कीन्ह यह दारुन पापा। मैं पुनि दीन्ह क्रोध करि सापा।
तदपि तुम्हार साधुता देखी। करिहौं एहि पर कृपा बिसेखी।
छमासील जे परउपकारी। ते द्विज मोहि प्रिय जथा खरारी।
मोर साप द्विज ब्यर्थ न जाइहि। जनम सहस्र अवसि यह पाइहि।
जनमत मरत दुसह दुख होई। एहि स्वलपउ नहिं ब्यापिहि सोई।
कवनेहु जनम मिटिहि नहिं ग्याना। सुनहि सूद्र मम बचन प्रमाना।
रघु-पति-पुरी जनम तव भयेऊ। पुनि तैं मम सेवा मनु दयेऊ।
पुरीप्रभाव अनुग्रह मोरें। रामभगति उपजिहि उर तोरें।
सुनु मम बचन सत्य अति भाई। हरितोषन ब्रत द्विजसेवकाई।
अब जनि करिहि बिप्रअपमाना। जानेसु संत अनंतसमाना।
इंद्रकुलिस मम सूल बिसाला। कालदंड हरिचक्र कराला।
जो इन्ह कर मारा नहिं मरई। बिप्र-द्रोह-पावक सो जरई।
अस बिबेक राखेहु मन माहीं। तुम्ह कहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं।
औरउ एक आसिषा मोरी। अ-प्रति-हत गति होइहि तोरी।

चौ०-मंदिर माँझ भई नभवानी। रे हतभाग्य अग्य अभिमानी
जद्यपि तव गुरु के नहिं क्रोधा। अतिकृपाल उर सम्यक बोधा
तदपि साप सठ देइहौं तोही। नीतिविरोध सुहाइ न मोही
जौं नहिं दंड करौं खल तोरा। भ्रष्ट होइ श्रुतिमारग मोरा।
जे सठ गुर सन इरषा करहीं। रौरव नरक कोटिजुग परहीं।
त्रिजग जोनि पुनि धरहिं सरीरा। अयुत जनम भरि पावहिं पीरा।
बैठि रहेसि अजगर इव पापी। सर्प होहि खल मल मति ब्यापी।
महा-बिटप-कोटर महँ जाई। रहु अधमाधम अधगति पाई।
दो०—हाहाकार कीन्ह गुर दारुन सुनि सिवश्राप।
कंपित मोहि बिलोकि अति उर उपजा परिताप ॥१७२॥
करि दंडवत सप्रेम द्विज सिव सनमुख कर जोरि।
बिनय करत गदगद गिरा समुझि घोरगति मोरि ॥१७३॥
नमामीशमीशान निर्वाणरूपम्। विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपम् ॥
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहम्। चिदाकाशमाकाशवासंभजेऽहम् ॥
निराकारमोंकारमूलं तुरीयम्। गिराज्ञानगोतीतमीशं गिरीशम् ॥
करालं महाकालकालं कृपालम्। गुणागारसंसारपारं नतोऽहम् ॥
तुषाराद्रिसंकाशगौरं गभीरम्। मनोभूतकोटिप्रभाश्रीशरीरम् ॥
स्फुरन्मौलिकल्लोलिनी चारु गंगा। लसद्भाल बालेंदु कंठे भुजंगा ॥
चलत्कुंडलं शुभ्रनेत्रं विशालम्। प्रसन्नाननं नीलकंठं दयालम् ॥
मृगाधीशचर्म्माम्बरं मुंडमालम्। प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि ॥
प्रचंडं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशम्। अखंडं अजं भानुकोटिप्रकाशम् ॥
त्रयः शूलनिर्मूलनं शूलपाणिम्। भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यम् ॥
कलातीतकल्याण कल्पांतकारी। सदा सज्जनानंददाता पुरारी ॥
चिदानंदसंदोहमोहापहारी। प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी ॥
न यावद् उमानाथपादारविंदम्। भजन्तीह लोके परे वा नराणाम् ॥
न तावत्सुखं शान्तिसन्तापनाशम्। प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासम् ॥
न जानामि योगं जपं नैव पूजाम्। नतोऽहं सदा सर्वदा शम्भु तुभ्यम् ॥

मेरुसिखर बटछाया मुनि लोमस आसीन।
देखि चरन सिरु नायौं बचन कहेउँ अतिदीन ॥१८३॥
सुनि मम बचन बिनीत मृदु मुनि कृपाल खगराज।
मोहि सादर पूँछत भए द्विज आयेउ केहि काज ॥१८४॥
तब मैं कहा कृपानिधि तुम्ह सर्बग्य सुजान।
सगुन ब्रह्म आराधना मोहि कहहु भगवान ॥१८५॥

चौ०-तब मुनीस रघु-पति-गुन-गाथा। कहेउ कछुक सादर खगनाथा।
ब्रह्मग्यान-रति मुनि बिग्यानी। मोहि परम अधिकारी जानी।
लागे करन ब्रह्मउपदेसा। अज अद्वैत अगुन हृदयेसा।
अकल अनीह अनाम अरूपा। अनुभवगम्य अखंड अनूपा।
मनगोतीत अमल अबिनासी। निर्बिकार निरवधि सुखरासी।
सो तैं ताहि तोहि नहिं भेदा। बारि बीचि इव गावहिं बेदा।
बिबिध भाँति मुनि मोहि समुझावा। निर्गुन मत मम हृदय न आवा।
पुनि मैं कहेउँ नाइ पद सीसा। सगुन उपासन कहहु मुनीसा।
राम-भगति-जल मम मन मीना। किमि बिलगाइ मुनीस प्रबीना।
सो उपदेस करहु करि दाया। निज नयनन देखौं रघुराया।
भरि लोचन बिलोकि अवधेसा। तब सुनिहौं निर्गुन उपदेसा।
मुनि पुनि कहि हरिकथा अनूपा। खंडि सगुनमत निर्गुनरूपा।
तब मैं निर्गुनमति करि दूरी। सगुन निरूपेउँ करि हठ भूरी।
उत्तर प्रतिउत्तर मैं कीन्हा। मुनितन भए क्रोध के चीन्हा।
सुनु प्रभु बहुत अवग्या किएँ। उपज क्रोध ग्यानिहु के हिएँ।
अति संघरषन करै जो कोई। अनल प्रगट चंदन तें होई।

दो०—बारंबार सकोप मुनि करै निरूपन ग्यान।
मैं अपने मन बैठि तब करौं बिबिध अनुमान ॥१८६॥
द्वैत बुद्धि बिनु क्रोध किमि द्वैत कि बिनु अग्यान।
मायाबस परिछिन्न जड़ जीव कि ईससमान ॥ १८७ ॥

चौ०-कबहुँ कि दुख सब कर हित ताके। तेहि कि दरिद्र परसमनि जा के

दो०—सुनि सिववचन हरषि गुरु एवमस्तु इति भाखि।
मोहि प्रबोधि गयेउ गृह संभुचरन उर राखि॥१७८॥
प्रेरित काल बिंधिगिरि जाइ भयेउँ मैं ब्याल।
पुनि प्रयास बिनु सो तनु तजेउँ गए कछु काल॥१७९॥
जोइ तन धरौं तजौं पुनि अनायास हरिजान।
जिमि नूतन पट पहिरै नर परिहरै पुरान॥१८०॥
सिव राखी श्रुतिनीति अरु मैं नहिं पाव कलेस।
एहि बिधि धरेउँ बिबिध तनु ग्यान न गयेउ खगेस॥१८१॥

चौ०-त्रिजग देव नर जो तनु धरऊँ। तहँ तहँ रामभजन अनुसरऊँ।
एक सूल मोहि बिसर न काऊ। गुरु कर कोमल सील सुभाऊ।
धरमदेह मैं द्विज कै पाई। सुरदुर्लभ पुरान श्रुति गाई।
खेलौं तहां बालकन्ह मीला। करौं सकल * रघुनायक लीला।
प्रौढ़ भए मोहि पिता पढ़ावा। समुझौं सुनौं गुनौं नहिं भावा।
मन तें सकल बासना भागी। केवल रामचरन लय लागी।
कहु खगेस अस कवन अभागी। खरी सेव सुरधेनुहि त्यागी।
प्रेममगन मोहि कछु न सुहाई। हारेउ पिता पढ़ाइ पढ़ाई।
भए कालबस जब पितु माता। मैं बन गयेउँ भजन जनत्राता।
जहँ जहँ बिपिन मुनीस्वर पावौं। आस्रम जाइ जाइ सिरु नावौं।
बूझौं तिन्हहिं राम-गुन-गाहा। कहहिं सुनौं हरषित खगनाहा।
सुनत फिरौं हरिगुन अनुबादा। अ-ब्याहत-गति संभुप्रसादा।
छूटी त्रिबिधि ईषना गाढ़ी। एक लालसा उर अति बाढ़ी।
राम-चरन-बारिज जब देखौं। तब निज जनम सुफल करि लेखौं।
जेहि पूँछौं सोइ मुनि अस कहई। ईश्वर सर्ब-भूत-मय अहई।
निर्गुन मत नहिं मोहि सुहाई। सगुन ब्रह्मरति उर अधिकाई।

दो०—गुरु के बचन सुरति करि रामचरन मन लाग †।
रघु-पति-जस गावत फिरौं छुन छुन नव अनुराग॥१८२॥

* काशि—सदा। † काशि०—रामचरित अनुराग।

सुंदर सुखद मोहि अति भावा। जो प्रथमहिं मैं तुम्हहिं सुनावा॥
मुनि मोहि कछुक काल तहँ राखा। राम-चरित-मानस सब भाखा॥
सादर मोहि यह कथा सुनाई। पुनि बोले मुनि गिरा सुहाई॥
रामचरित सर गुप्त सुहावा। संभुप्रसाद तात मैं पावा॥
तोहि निज भगत राम कर जानी। ता तें मैं सब कहेउँ बखानी॥
राम भगति जिन्ह के उर नाहीं। कबहुँ न तात कहिअ तिन्ह पाहीं॥
मुनि मोहि विविध भाँति समुझावा। मैं सप्रेम मुनिपद सिरु नावा॥
निज-कर-कमल परसि मम सीसा। हरषित आसिष दीन्ह मुनीसा॥
रामभगति अबिरल उर तोरे। बसहु सदा प्रसाद अब मोरे॥

दो०—सदा रामप्रिय होहु तुम्ह सुभ-गुन-भवन अमान।
कामरूप इच्छामरन ग्यान-बिराग-निधान॥ १९०॥
जेहि आश्रम तुम्ह बसब पुनि सुमिरत श्रीभगवंत।
ब्यापिहि तहँ न अविद्या जोजन एक प्रजंत॥ १९१॥

चौ० काल कर्म गुनदोष सुभाऊ। कछु दुख तुम्हहिं न ब्यापिहि काऊ॥
रामरहस्य ललित विधि नाना। गुप्त प्रगट इतिहास पुराना॥
बिनु श्रम तुम्ह जानब सब सोऊ। नित नव नेह रामपद होऊ॥
जो इच्छा करिहहु मन माहीं। हरिप्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं॥
सुनि मुनिआसिष सुनु मतिधीरा। ब्रह्मगिरा भइ गगन गँभीरा॥
एवमस्तु तब बच मुनि ग्यानी। यह मम भगत करम मन बानी॥
सुनि नभगिरा हरष मोहि भयेऊ। प्रेम मगन सब संसय गयेऊ॥
करि विनती मुनिआयसु पाई। पदसरोज पुनि पुनि सिरु नाई॥
हरष सहित एहि आश्रम आयेउँ। प्रभुप्रसाद दुर्लभ बर पायेउँ॥
इहाँ बसत मोहि सुनु खगईसा। बीते कलप सात अरु बीसा॥
करौं सदा रघु-पति-गुन-गाना। सादर सुनहिं बिहंग सुजाना॥
जब जब अवधपुरी रघुबीरा। धरहिं भगतहित मनुज-सरीरा॥
तब तब जाइ रामपुर रहऊँ। सिसुलीला बिलोकि सुख लहऊँ॥
पुनि उर राखि राम सिसुरूपा। निज आश्रम आवौं खगरूपा॥

परद्रोही कि होइ निसंका। कामी पुनि कि रहै अकलंका
बंस कि रह द्विज अनहित कीन्हे। कर्म कि होहिं स्वरूपहिं चीन्हे
काहु सुमति कि खल संग जामी। सुभ गति पाव कि पर-त्रिय-गामी
भव कि परहिं परमातमबिंदक। सुखी कि होहिं कबहुँ परनिंदक।
राज कि रहै नीति बिनु जाने। अघ की रहै हरिचरित बखाने।
पावन जस कि पुन्य बिनु होई। बिनु अघ अजस कि पावै कोई।
लाभ कि कछु हरि-भगति-समाना। जेहि गावहिं श्रुति संत पुराना।
हानि कि जग एहि सम कछु भाई। भजिय न रामहिं नरतनु पाई।
अघ कि बिना तामस*कछु आना। धर्म कि दयासरिस हरिजाना।
एहि बिधि अमित जुगुति मन गुनेऊँ। मुनि उपदेस न सादर सुनेऊँ।
पुनि पुनि स-गुन-पच्छ मैं रोपा। तब मुनि बोले बचन सकोपा।
मूढ़ परम सिख देउँ न मानसि। उत्तर प्रतिउत्तर बहु आनसि।
सत्यबचन बिश्वास न करही। बायस इव सबही तें डरही।
सठ स्वपच्छ तब हृदय बिसाला। सपदि होहु पच्छी चंडाला।
लीन्ह साप मैं सीस चढ़ाई। नहिं कछु भय न दीनता आई।

दो०—तुरत भयेउँ मैं काग तब पुनि मुनिपद सिरु नाइ।
सुमिरि राम रघु-बंस-मनि हरषित चलेउँ उड़ाइ॥ १८८॥
उमा जे राम-चरन-रत बि-गत-काम-मद-क्रोध।
निज-प्रभुमय देखहिं जगत केहि सन करहिं बिरोध॥१८६॥

चौ०-सुनु खगेस नहिं कछु रिषि दूसन। उरप्रेरक रघु-बंस-बिभूषन।
कृपासिंधु मुनि मति करि भोरी। लीन्ही प्रेमपरीछा मोरी।
मन बच क्रम मोहिं निज जन जाना। मुनि मति पुनि फेरी भगवाना।
रिषि मम सहनसीलता देखी। राम-चरन-बिश्वास बिसेखी।
अतिबिसमय पुनि पुनि पछिताई। सादर मुनि मोहिं लीन्ह बोलाई।
मम परितोष बिबिध बिधि कीन्हा। हरषित राममंत्र मोहिं दीन्हा।
बालकरूप राम कर ध्याना। कहेउ मोहिं मुनि कृपानिधाना।

* दूषन०—पिसुनता सम।

मोह न नारि नारि के रूपा। पन्नगारि यह रीति अनूपा।
माया भगति सुनहु प्रभु दोऊ। नारिवर्ग जानहिं सब कोऊ
पुनि रघुबीरहिं भगति पियारी। माया खलु नर्त्तकी बिचारी।
भगतहिं सानुकूल रघुराया। ता तें तेहि डरपति अति माया।
रामभगति निरुपम निरुपाधी। बसै जासु उर सदा अबाधी।
तेहि बिलोकि माया सकुचाई। करि न सकै कछु निज प्रभुताई।
अस बिचारि जे मुनि बिग्यानी। जाँचहिं भगति सकल-सुख-खानी।

दो०—यह रहस्य रघुनाथ कर बेगि न जानै कोइ।
जाने तें रघु-पति-कृपा सपनेहुँ मोह न होइ॥ १९६॥
औरौ ग्यान भगति कर भेद सुनहु सुप्रवीन।
जो सुनि होइ रामपद प्रीति सदा अबिछीन॥ १९७॥

चौ०-सुनहु तात यह अकथ कहानी। समुझत बनै न जाइ बखानी।
ईस्वरअंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी।
सो मायाबस भयेउ गोसाईं। बँधेउ कीर मरकट की नाईं।
जड़ चेतनहिं ग्रंथि परि गई। जद्दपि मृषा छूटत कठिनई।
तब तें जीव भयेउ संसारी। छूट न ग्रंथि न होइ सुखारी।
श्रुति पुरान बहु कहेउ उपाई। छूट न अधिक अधिक अरुझाई।
जीवहृदय तम मोह बिसेखी। ग्रंथि छूटि किमि परै न देखी।
अस संजोग ईस जब करई। तबहु कदाचित सो निरुवरई।
सात्विक श्रद्धा धेनु लवाई। जौं हरिकृपा हृदय बसि आई।
जप तप ब्रत जम नियम अपारा। जे श्रुति कह सुभ धर्म अचारा।
तेइ तृन हरित चरै जब गाई। भाव बच्छ सिसु धेनु पेन्हाई।
नोइ निवृत्ति पात्र बिसासा। निर्मल मन अहीर निज दासा।
परम-धरम-मय पय दुहि भाई। अवटै अनल अकाम बनाई।
तोष मरुत तब छमा जुड़ावै। धृतिसम जावनु देइ जमावै।
मुदिता मथै बिचार मथानी। दम अधार रजु सत्य सुबानी।
तब मथि काढ़ि लेइ नवनीता। बिमल बिराग सुपरम पुनीता।

कथा सकल मैं तुम्हहिं सुनाई। कागदेह जेहि कारन पाई।
कहेउँ तात सब प्रस्न तुम्हारी। राम-भगति-महिमा अति भारी।
दो०—ता तें यह तन मोहि प्रिय भयेउ राम-पद-नेह।
निज-प्रभु-दरसन पायेउँ गयेउ सकल संदेह ॥१६२॥
भगति पच्छ हठ करि रहेउँ दीन्हि महा-रिषि साप।
मुनिदुर्लभ बर पायेउँ देखहु भजनप्रताप ॥१६३॥
चौ०-जे असि भगति जानि परिहरहीं। केवल ग्यानहेतु श्रम करहीं।
ते जड़ कामधेनु गृह त्यागी। खोजत आक फिरहिं पय लागी।
सुनु खगेस हरिभगति बिहाई। जे सुख चाहहिं आन उपाई।
ते सठ महा सिंधु बिनु तरनी। पैरि पार चाहहिं जड़करनी।
सुनि भुसुंडि के बचन भवानी। बोलेउ गरुड़ हरषि मृदुबानी।
तव प्रसाद प्रभु मम उर माहीं। संसय-सोक-मोह-भ्रम नाहीं।
सुनेउँ पुनीत राम-गुन-ग्रामा। तुम्हरी कृपा लहेउँ बिश्रामा।
एक बात प्रभु पूँछौं तोही। कहौ बुझाइ कृपानिधि मोही।
कहहिं संत मुनि बेद पुराना। नहिं कछु दुर्लभ ग्यान समाना।
सोइ मुनि तुम्ह सन कहेउ गोसाईं। नहिं आदरेहु भगति की नाईं।
ग्यानहिं भगतिहिं अंतर केता। सकल कहौ प्रभु कृपानिकेता।
सुनि उरगारिबचन सुख माना। सादर बोलेउ काग सुजाना।
भगतिहिं ग्यानहिं नहिं कछु भेदा। उभय हरहिं भवसंभव खेदा।
नाथ मुनीस कहहिं कछु अंतर। सावधान सोउ सुनु बिहंगवर।
ग्यान बिराग जोग बिग्याना। ए सब पुरुष सुनहु हरिजाना।
पुरुष प्रताप प्रबल सब भाँती। अबला अबल सहज जड़ जाती।
दो०—पुरुष त्यागि सक नारिहि जो बिरक्त मतिधीर।
न तु कामी जो बिषयबस बिमुख जो पद रघुबीर ॥१६४॥
सो०—सो सुनि ग्याननिधान मृगनयनी बिधुमुख निरखि।
बिकल होहिं हरिजान नारि बिस्व माया प्रगट ॥१६५॥
चौ०-इहाँ न पच्छपात कछु राखौं। बेद-पुरान-संत-मत भाखौं।

कहत कठिन समुझत कठिन साधन कठिन विवेक।
होइ घुनाच्छर न्याय जौं पुनि प्रत्यूह अनेक ॥ २०३ ॥

चौ०-ग्यानपंथ कृपान कै धारा। परत खगेस होइ नहिं बारा।
जौं निरविघन पंथ निरबहई। सो कैवल्य परमपद लहई।
अतिदुर्लभ कैवल्य परम पद। संत पुरान निगम आगम बद।
राम भजत सोइ मुक्ति गोसाईं। अनइच्छित आवै बरिआईं।
जिमि थल बिनु जल रहि न सकाई। कोटि भाँति कोउ करै उपाई।
तथा मोच्छसुख सुनु खगराई। रहि न सकै हरिभगति बिहाई।
अस बिचारि हरिभगत सयाने। मुक्ति निरादर भगति लोभाने।
भगति करत बिनु जतन प्रयासा। संसृतिमूल अविद्या नासा।
भोजन करिय तृप्ति हित लागी। जिमि सो असन पचवै जठरागी।
असि हरिभगति सुगम सुखदाई। को अस मूढ़ न जाहि सुहाई।

दो०—सेवक सेब्य भाव बिनु भव न तरिअ उरगारि।
भजहु राम-पद-पंक-ज अस सिद्धांत बिचारि ॥२०४॥
जो चेतन कहँ जड़ करै जड़हि करै चैतन्य।
अस समरथ रघुनाथहि भजहिं जीव ते धन्य ॥२०५॥

चौ०-कहेउँ ग्यान सिद्धांत बुझाई। सुनहु भगतिमनि कै प्रभुताई।
रामभगति चिंतामनि सुंदर। बसै गरुड़ जा के उरअंतर।
परमप्रकास रूप दिन राती। नहिं कछु चहिअ दिया घृत बाती।
मोह दरिद्र निकट नहिं आवा। लोभ बात नहिं ताहि बुझावा।
अचल अविद्या तम मिटि जाई। हारहिं सकल-सलभ-समुदाई।
खल कामादि निकट नहिं जाहीं। बसै भगति जा के उर माहीं।
गरल सुधा सम अरि हित होई। तेहि मनि बिनु सुख पाव न कोई।
ब्यापहिं मानस रोग न भारी। जिन्ह के बस सब जीव दुखारी।
राम-भगति-मनि उर बस जा के। दुख-लव-लेस न सपनेहुँ ता के।
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं।
सो मनि जदपि प्रगट जग अहई। रामकृपा बिनु नहिं कोउ लहई।

दो०—जोग अगिनि करि प्रगट तब कर्म सुभासुभ लाइ।
बुद्धि सिरावइ ग्यान घृत ममता मल जरि जाइ ॥१९८॥
तब बिग्यानरूपिनी बुद्धि बिसद घृत पाइ।
चित्त दिया भरि धरै दृढ़ समता दियटि बनाइ ॥१९९॥
तीनि अवस्था तीनि गुन तेहि कपास तें काढ़ि।
तूल तुरीय सँवारि पुनि बाती करै सुगाढ़ि ॥२००॥
सो०—एहि बिधि लेसै दीप तेजरासि बिग्यानमय।
जातहिं जासु समीप जरहिं मदादिक सलभ सब ॥ २०१ ॥
चौ०-सोहमस्मि इति वृत्ति अखंडा। दीपसिखा सोइ परम प्रचंडा।
आतम-अनुभव-सुख सुप्रकासा। तब भवमूल भेदभ्रम* नासा।
प्रबल अविद्या कर परिवारा। मोह आदि तम मिटै अपारा।
तब सोइ बुद्धि पाइ उँजिआरा। उरगृह बैठि ग्रंथि निरुआरा।
छोरन ग्रंथि पाव जौं सोई। तौ यह जीव कृतारथ होई।
छोरत ग्रंथि जानि खगराया। बिघन अनेक करै तब माया।
रिद्धि सिद्धि प्रेरै बहु भाई। बुद्धिहि लोभ देखावहिं आई।
कल बल छल करि जाय समीपा। अंचल बात बुझावहिं दीपा।
होइ बुद्धि जो परम सयाने। तिन्ह तनु चितव न अनहित जाने।
जौं तेहि बिघन बुद्धि नहिं बाधी। तौ बहोरि सुर करहिं उपाधी।
इंद्री द्वार झरोखा नाना। तहँ तहँ सुर बैठे करि थाना।
आवत देखहिं बिषय बयारी। ते हठि देहिं कपाट उघारी।
जब सो प्रभंजन उरगृह जाई। तबहिं दीप बिग्यान बुझाई।
ग्रंथि न छूटि मिटा सो प्रकासा। बुद्धि बिकल भइ बिषय-बतासा।
इंद्रिन्ह सुरन्ह न ग्यान सुहाई। बिषयभोग पर प्रीति सदाई।
बिषय समीर बुद्धि कृत भोरी। तेहि बिधि दीप को बार † बहोरी।
दो०—तब फिरि जीव बिबिध बिधि पावै संसृतिक्लेस।
हरिमाया अतिदुस्तर तरि न जाइ बिहँगेस ॥ २०२ ॥

* काशि०—भेद। † काशि०—करै।

भूरज-तरु-सम संत कृपाला। परहित नित सह बिपति बिसाला।
सन इव खल परबंधन करई। खाल कढ़ाइ बिपति सहि मरई।
खल बिनु स्वारथ परअपकारी। अहि मूषक इव सुनु उरगारी।
परसंपदा बिनासि नसाहीं। जिमि ससि हति हिम उपल बिलाहीं।
दुष्टहृदय जग आरत-हेतू। जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू।
संतउदय संतत सुखकारी। बिस्वसुखद जिमि इंदु तमारी।
परमधरम श्रुतिबिदित अहींसा। पर-निंदा-सम अघ न गिरीसा।
हरि—गुरु-निंदक दादुर होई। जनम सहस्र पाव तन सोई।
द्विजनिंदक बहु नरक भोग करि। जग जनमै बायससरीर धरि।
सुर-श्रुति-निंदक जे अभिमानी। रौरव नरक परहिं ते प्रानी।
होहिं उलूक संत—निंदा-रत। मोहनिसा प्रिय ग्यान भानु मत।
सब कै निंदा जे जड़ करहीं। ते चमगादुर होइ अवतरहीं।
सुनहु तात अब मानसरोगा। जेहि तें दुख पावहिं सब लोगा।
मोह सकल ब्याधिन कर मूला। तेहि तें पुनि उपजै बहु सूला।
काम बात कफ लोभ अपारा। क्रोध पित्त नित छाती जारा।
प्रीति करहिं जौं तीनिउ भाई। उपजै सन्निपात दुखदाई।
बिषय मनोरथ दुर्गम नाना। ते सब सूल नाम को जाना।
ममता दादु कंडु इरषाई। हरष बिषाद गरह बहुताई।
परसुख देखि जरनि सोइ छई। कुष्ट दुष्टता मन कुटिलई।
अहंकार अतिदुखद डवँरुआ। दंभ कपट मद मान नहरुआ।
तृस्ना उदरबृद्धि अतिभारी। त्रिबिध ईषना तरुन तिजारी।
जुगबिधि ज्वर मत्सर अबिबेका। कहँ लगि कहौं कुरोग अनेका।

दो०—एक ब्याधिबस नर मरहिं ए असाध्य बहु ब्याधि।
पीड़हिं संतत जीव कहँ सो किमि लहै समाधि ॥ २०८ ॥
नेम धर्म आचार तप ग्यान जग्य जप दान।
भेषज पुनि कोटिक नहीं रोग जाहिं हरिजान ॥ २०९ ॥

चौ०-एहि बिधि सकल जीव जड़ रोगी। सोक हरष भय प्रीति बियोगी।

सुगम उपाइ पाइबे केरे। नर हतभाग्य देहिं भटभेरे।
पावन पर्वत बेद पुराना। रामकथा रुचिराकर नाना।
मर्मी सज्जन सुमति कुदारी। ग्यान बिराग नयन उरगारी।
भावसहित खोजै जो प्रानी। पाव भगतिमनि सब सुखखानी।
मोरे मन प्रभु अस बिस्वासा। राम तें अधिक राम कर दासा।
राम सिंधु घन सज्जन धीरा। चंदन तरु हरि संत समीरा।
सब कर फल हरिभगति सुहाई। सो बिनु संत न काहू पाई।
अस बिचारि जोइ कर सतसंगा। रामभगति तेहि सुलभ बिहंगा।

दो०—ब्रह्म पयोनिधि मंदर ग्यान संत सुर आहि।
कथा सुधा मथि काढ़े भगति मधुरता जाहि ॥२०६॥
बिरति चर्म असि ग्यान मद लोभ मोह रिपु मारि।
जय पाइअ सो हरिभगति देखु खगेस बिचारि ॥२०७॥

चौ०-पुनि सप्रेम बोलेउ खगराऊ। जो कृपाल मोहि ऊपर भाऊ।
नाथ मोहि निज सेवक जानी। सप्त प्रश्न मम कहहु बखानी।
प्रथमहिं कहहु नाथ मतिधीरा। सब तें दुर्लभ कवन सरीरा।
बड़ दुख कवन कवन सुख भारी। सोउ संछेपहि कहहु बिचारी।
संत असंत मरम तुम्ह जानहु। तिन्ह कर सहज सुभाव बखानहु।
कवन पुन्य श्रुतिबिदित बिसाला। कहहु कवन अघ परम कृपाला।
मानसरोग कहहु समुझाई। तुम्ह सर्बग्य कृपा अधिकाई।
तात सुनहु सादर अति प्रीती। मैं संछेप कहौं यह नीती।
नर-तन-सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर जाँचत जेही।
नरक-सर्ग-अपबर्ग-निसेनी। ग्यान-बिराग-भगति-सुख-देनी।
सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर। होहिं बिषयरत मंद मंदतर।
काँच किरिच बदले जिमि लेहीं। कर तें डारि परसमनि देहीं।
नहिं दरिद्रसम दुख जग माहीं। संत-मिलन-सम-सुख कहुँ नाहीं।
परउपकार बचन मन काया। संत सहज सुभाउ खगराया।
संत सहहिं दुख परहित लागी। पर-दुख-हेतु असंत अभागी।

तुम्ह बिग्यानरूप नहिं मोहा। नाथ कीन्ह मो पर अति छोहा।
पूँछेहु रामकथा अति पावनि। सुक-सनकादि-संभु-मन-भावनि।
सतसंगति दुर्लभ संसारा। निमिष दंड भरि एकौ बारा।
देखु गरुड़ निज हृदय बिचारी। मैं रघु-बीर-भजन-अधिकारी।
सकुनाधम सब भाँति अपावन। प्रभु मोहि कीन्ह बिदित जगपावन।

दो०—आजु धन्य मैं धन्य अति जद्यपि सब बिधि हीन।
निज जन जानि राम मोहि संतसमागम दीन्ह ॥२१२॥
नाथ जथामति भाषेउँ राखेउँ नहिं कछु गोइ।
चरितसिंधु रघुबीर के थाह कि पावै कोइ ॥२१३॥

चौ०-सुमिरि राम के गुनगन नाना। पुनि पुनि हरष भुसुंडि सुजाना।
महिमा निगम नेति करि गाई। अतुलित बल प्रताप प्रभुताई।
सिव-अज-पूज्य-चरन रघुराई। मो पर कृपा परम मृदुलाई।
अस सुभाव कहुँ सुनौं न देखौं। केहि खगेस रघुपति सम लेखौं।
साधक सिद्ध बिमुक्त उदासी। कबि कोबिद कृतग्य संन्यासी।
जोगी सूर सुतापस ग्यानी। धर्मनिरत पंडित बिग्यानी।
तरहिं न बिनु सेये मम स्वामी। राम नमामि नमामि नमामी।
सरन गए मो से अघरासी। होहिं सुद्ध नमामि अबिनासी।

दो०—जासु नाम भवभेषज हरन ताप-त्रय-सूल।
सो कृपालु मोहि तोहि पर सदा रहहु अनुकूल ॥२१४॥
सुनि भुसुंडि के बचन सुभ देखि रामपद-नेह।
बोलेउ प्रेमसहित गिरा गरुड़ बिगत-संदेह ॥२१५॥

चौ०-मैं कृतकृत्य भयेउँ तव बानी। सुनि रघुबीर-भगति-रस-सानी।
रामचरन नूतन रति भई। मायाजनित बिपति सब गई।
मोहजलधि बोहित तुम्ह भयेऊ। मो कहँ नाथ बिबिध सुख दयेऊ।
मो पर होइ न प्रतिउपकारा। बंदौं तव पद बारहिं बारा।
पूरनकाम रामअनुरागी। तुम्ह सम तात न कोउ बड़भागी।
संत बिटप सरिता गिरि धरनी। परहित हेतु सबन्हि कै करनी।

मानसरोग कछुक मैं गाए। होहिं सब के, लखि बिरलइ पाए।
जाने तें छीजहिं कछु पापी। नास न पावहिं जनपरितापी।
विषय कुपथ्य पाइ अंकुरे। मुनिहु हृदय का नर बापुरे।
रामकृपा नासहिं सब रोगा। जो एहि भाँति बनै संजोगा।
सदगुरु बैदबचन बिस्वासा। संजम यह न विषय कै आसा।
रघु-पति-भगति सजीवनमूरी। अनूपान श्रद्धा अति रूरी।
एहि बिधि भलेहि सो रोग नसाहीं। नाहिं त जतन कोटि नहिं जाहीं।
जानिअ तब मन बिरुज गोसाई। जब उर बल बिराग अधिकाई।
सुमति छुधा बाढ़ै नित नई। विषय आस दुर्बलता गई।
बिमल ग्यानजल जब सो नहाई। तब रह रामभगति उर छाई।
सिव अज सुक सनकादिक नारद। जे मुनि ब्रह्म-बिचार-बिसारद।
सब कर मत खगनायक एहा। करिअ राम-पद-पंकज-नेहा।
श्रुति पुरान सब ग्रंथ कहाहीं। रघु-पति-भगति बिना सुख नाहीं।
कमठपीठि जामहिं बरु बारा। बंध्यासुत बरु काहुहि मारा।
फूलहिं नभ बरु बहु बिधि फूला। जीव न लह सुख हरि-प्रति-कूला।
तृषा जाइ बरु मृग-जल-पाना। बरु जामहिं सससीस बिखाना।
अंधकार बरु ससिहि नसावै। राम-बिमुख न जीव सुख पावै।
हिम तें अनल प्रगट बरु होई। बिमुख राम सुख पाव न कोई।

दो०—बारि मथे घृत होइ बरु सिकता तें बरु तेल।
बिनु हरिभजन न भव तरहिं यह सिद्धांत अपेल॥ २१०॥
मसकहि करै बिरंचि प्रभु अजहि मसक तें हीन।
अस बिचारि तजि संसय रामहिं भजहिं प्रबीन॥ २११॥

नगस्वरूपिणी—बिनिश्चितं वदामि ते न अन्यथा वचांसि मे।
हरिं नरा भजन्ति येऽतिदुस्तरं तरन्ति ते॥

चौ०-कहेउँ नाथ हरिचरित अनूपा। ब्यास समास स्व-मति-अनुरूपा।
श्रुति सिद्धांत इहै उरगारी। राम भजिअ सब काम बिसारी।
प्रभु रघुपति तजि सेइअ काही। मो से सठ पर ममता जाही।

धन्य घरी सोइ जब सतसंगा । धन्य जनम द्विज भगति अभंगा ।

दो०—सो कुल धन्य उमा सुनु जगतपूज्य सुपुनीत ।
श्री-रघु-बीर-परायन जेहि नर उपज बिनीत ॥२२९॥

चौ०-मति-अनुरूप-कथा मैं भाखी । जद्यपि प्रथम गुप्त करि राखी ।
तव मन प्रीति देखि अधिकाई । तब मैं रघु-पति-कथा सुनाई ।
यह न कहीजे सठ हठसीलहि । जो मन लाइ न सुन हरिलीलहि ।
कहिअ न लोभहि क्रोधहि कामिहि । जो न भजै स-चराचर-स्वामिहि ।
द्विजद्रोहिहि न सुनाइअ कवहूँ । सुर-पति-सरिस होइ नृप तवहूँ ।
रामकथा के ते अधिकारी । जिन्ह के सतसंगति अति प्यारी ।
गुरु-पद-प्रीति नीतिरत जेई । द्विजसेवक अधिकारी तेई ।
ता कहँ यह विसेप सुखदाई । जाहि प्रानप्रिय श्री-रघु-राई ।

दो०—राम-चरन-रति जो चहै अथवा पद निर्वान ।
भावसहित सो यह कथा करै स्रवनपुट पान ॥२३०॥

चौ०-रामकथा गिरिजा मैं वरनी । कलि-मल-हरन मनो-मल-हरनी ।
संसृतिरोग सजीवन मूरी । रामकथा गावहिं श्रुति भूरी ।
एहि महँ रुचिर सप्त सोपाना । रघु-पति-भगति केर पंथाना ।
अति हरि कृपा जासु पर होई । पाउँ देहि एहि मारग सोई ।
मन-कामना-सिद्धि नर पावा । जो यह कथा कपट तजि गावा ।
कहहिं सुनहिं अनुमोदन करहीं । ते भवनिधि गोपद इव तरहीं ।
सुनि सुभ कथा हृदय अति भाई । गिरिजा बोली गिरा सुहाई ।
नाथकृपा मम गत संदेहा । रामचरन उपजेउ नव नेहा ।

दो०—मैं कृतकृत्य भइउँ अब तव प्रसाद विस्वेस ।
राम भगति दृढ़ ऊपजी बीते सकल कलेस ॥२३१॥

चौ०-यह सुभ संभु-उमा-संवादा । सुखसंपादन* समन विषादा ।

---

* सटल०—सुखद सदा अरु ।

संतहृदय नवनीत - समाना। कहा कविन्ह पै कहै न जाना।
निजपरिताप द्रवै नवनीता। परदुख द्रवहिं सुसंत पुनीता।
जीवन जनम सुफल मम भयेऊ। तव प्रसाद संसय सब गयेऊ।
जानेहु सदा मोहि निज किंकर। पुनि पुनि उमा कहै बिहँगवर।

दो०—तासु चरन सिर नाइ करि प्रेमसहित मतिधीर।
गयेउ गरुड़ बैकुंठ तब हृदय राखि रघुबीर ॥२२६॥
गिरिजा संत-समागम-सम न लाभ कछु आन।
बिनु हरि कृपा न होइ सो गावहिं बेद पुरान * ॥२२७॥

चौ०–कहेउँ परम पुनीत इतिहासा। सुनत श्रवन छूटहिं भवपासा।
प्रनत - कलप - तरु करुनापुंजा। उपजै प्रीति राम - पद - कंजा।
मन बच कर्म जनित अघ जाई। सुनहिं जे कथा श्रवन मन लाई।
तीर्थाटन साधनसमुदाई। जोग बिराग ग्याननिपुनाई।
नाना कर्म धर्म व्रत दाना। संजम दम जप तप मख नाना।
भूतदया द्विज - गुरु - सेवकाई। विद्या बिनय बिबेक बड़ाई।
जहँ लगि साधन बेद बखानी। सब कर फल हरिभगति भवानी।
सो रघुनाथ-भगति श्रुति गाई। रामकृपा काहू एक पाई।

दो०—मुनिदुर्लभ हरिभगति नर पावहिं बिनहिं प्रयास।
जे यह कथा निरंतर सुनहिं मानि बिस्वास ॥२२८॥

चौ०–सोइ सर्बग्य सोई गुनग्याता। सोइ महिमंडित पंडित दाता।
धर्मपरायन सोइ कुलत्राता। रामचरन जा कर मन राता।
नीतिनिपुन सोइ परमसयाना। श्रुतिसिद्धांत नीक तेहि जाना।
सो कबि कोविद सो रनधीरा। जो छल छाँड़ि भजै रघुबीरा।
धन्य सुदेस जहाँ सुरसरी। धन्य नारि पतिव्रत अनुसरी।
धन्य सो भूप नीति जो करई। धन्य सो द्विज निजधर्म न टरई।
सो धन धन्य प्रथम गति जा की। धन्य पुन्यरत मति सोइ पाकी।

---

* काशी की प्रति में यह दोहा नहीं है।

मत्वा तद्रघुनाथनामनिरतं स्वान्तस्तमःशान्तये
भाषाबन्धमिदं चकार तुलसीदासस्तथा मानसम्॥ १॥
पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं
मायामोहमलापहं सुविमलं प्रेमाम्बुपूरं शुभम्।
श्रीमद्रामचरित्रमानसमिदं भक्त्यावगाहन्ति ये
ते संसारपतङ्गघोरकिरणैर्दह्यन्ति नो मानवाः॥ २॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने
अविरलहरिभक्तिसम्पादनो नाम
सप्तमःसोपानः समाप्तः।

* शुभमस्तु, मङ्गलमस्तु *



भवभंजन गंजन संदेहा । जनरंजन सज्जनप्रिय एहा ।
रामउपासक जे जग माहीं । एहि सम प्रिय तिनके कछु नाहीं ।
रघु-पति-कृपा जथामति गावा । मैं यह पावन चरित सुहावा ।
एहि कलिकाल न साधन दूजा । जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा ।
रामहिं सुमिरिश्र गाइश्र रामहिं । संतत सुनिश्र राम-गुन-ग्रामहिं ।
जासु पतितपावन बड़ बाना । गावहिं कवि श्रुति संत पुराना ।
ताहि भजहिं मन तजि कुटिलाई । राम भजे गति के नहिं पाई ।

छंद—पाई न केहि गति पतितपावन राम भजि सुनु सठ मना ॥
गनिका अजामिल व्याध गीध गजादि खल तारे घना ॥
आभीर जवन किरात खस स्वपचादि अति अघरूप जे ॥
कहि नाम बारक तेऽपि पावन होहिं राम नमामि ते ॥
रघु-बंस-भूषन-चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं ॥
कलिमल मनोमल धोइ बिनु श्रम रामधाम सिधावहीं ॥
सत पंच चौपाई मनोहर जानि जो नर उर धरहिं ॥
दारुन अबिद्या पंच जनित बिकार श्री-रघु-बर हरहिं ॥
सुंदर सुजान कृपानिधान अनाथ पर कर प्रीति जो ॥
सो एक राम अ-काम-हित निर्बानप्रद सम आन को ॥
जा की कृपा-लव-लेस तें मतिमंद तुलसीदासहूँ ॥
पायेउ परम बिश्राम राम समान प्रभु नाहीं कहूँ ॥

दो०—मो सम दीन न दीनहित तुम्ह समान रघुबीर ।
अस बिचारि रघु-बंस-मनि हरहु बिषम-भव-भीर ॥२३२॥
कामिहि नारि पिआरि जिमि लोभहि प्रिअ जिमि दाम ।
तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिअ लागहु मोहि राम *॥२३३॥

श्लोक—यत्पूर्वं प्रभुणा कृतं सुकविना श्रीशम्भुना दुर्गमं
श्रीमद्रामपदाब्जभक्तिमनिशं प्राप्तोतु रामायणम् ।

---

* सदल०—ऐसे होइ के लागहु तुलसी के मन राम ।

कथा-भाग



अगस्त्य—ऋग्वेद में लिखा है कि इनके पिता मित्रावरुण जी ने आकाश-मार्ग से जाती हुई तथा शृंगार किए हुए उर्वशी नामक अप्सरा को देखा और काम-पीड़ित हो वीर्यपात किया जिससे अगस्त्य ऋषि का जन्म हुआ। सायणाचार्य ने अपने भाष्य में लिखा है कि इनकी उत्पत्ति एक घट में हुई। इसी से इन्हें मैत्रावरुणि, और्वशेय, कुंभसंभव, घटोद्भव और कुंभज कहते हैं। जब विंध्य पर्वत ने बढ़कर सूर्य का मार्ग रोक लिया तब देवताओं की प्रार्थना पर ये उसके पास गए। उसने गुरु को आते देखकर प्रणाम किया। तब इन्होंने उससे कहा कि 'जब तक मैं न लौटूं तुम इसी प्रकार पड़े रहो'। इस कारण इनका नाम अगस्त्य पड़ा। वृत्रासुर-वध के अनंतर असुरगण देवताओं के डर से समुद्र में छिप गए और रात्रि को निकल कर वे ऋषियों को कष्ट देने लगे। इससे यज्ञ कर्म रुक गया। तब देवताओं ने अगस्त्य जी से समुद्र पान करने के लिए प्रार्थना की। इनके समुद्र पान करने पर देवताओं ने कालकेय असुरों को मार डाला। इस कारण इनका नाम समुद्रचुलुक तथा पीताब्धि हुआ।

एक समय अगस्त्य जी ने महादेव जी से अपना जन्म वृत्तांत वर्णन कर कहा था कि ऐसे नीच स्थान से उत्पन्न होने पर भी सत्संग तथा हरिकीर्तन से उनकी मेरी बुद्धि सन्मार्ग की ओर लगी थी।

अंध तापस—अयोध्या के पास ही एक अंधा तपस्वी अपने स्त्री और पुत्र के साथ रहता था। एक दिन वह पुत्र जल लाने को तट पर गया। जल भरने के शब्द को सुन कर पास ही मृगया-रत महाराज दशरथ ने उसे जल पीते हुए हाथी के भ्रम से शब्दवेधी वाण चलाकर मार डाला। अंध मुनि इस शोक से अग्नि में जल कर मर गया और राजा दशरथ को शाप देता गया कि 'तुम्हें भी पुत्र-शोक में प्राण त्यागना पड़ेगा।'

कद्रू—कश्यप ऋषि की दो स्त्रियाँ कद्रू और विनता नाम की थीं। पहली के संतान सर्प और दूसरी के गरुड़ थे। एक समय दोनों में प्रश्न उठा कि सूर्य के घोड़ों का कौन रंग है। विनता ने श्वेत और कद्रू ने काला कहा तथा यह निश्चय हुआ कि जो हारे वह दूसरे की दासी हो। विनता ने अपनी संतान सर्पों को पहले ही भेजा जो घोड़ों में लिपट रहे जिससे वे काले दिखलाई पड़े। विनता ने दासी भाव स्वीकार कर लिया।

कश्यप—ये ब्रह्मा के पौत्र और मरीचि के पुत्र थे। प्रजापति होने ये पर अपनी स्त्री अदिति के साथ तपस्या करने चले गए। इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान ने इनसे वर माँगने को कहा। इन दोनों ने प्रार्थना की कि आप हमारे पुत्र हों। त्रेता में ये दोनों महाराज दशरथ और कौशल्या हुए।

कैकेयी—देवासुर संग्राम में महाराज दशरथ को इंद्र ने सहायतार्थ बुलाया था। युद्ध में रथ के पहिए के धुरे की कील टूट कर निकल गई। कैकेयी ने जो साथ थीं उस छिद्र में अपना हाथ डालकर उसे सँभाला। युद्ध के बाद राजा दशरथ ने यह देख कर प्रसन्न हो वर माँगने को कहा जिस पर कैकेयी ने दोनों वर उनके पास धरोहर रख दिए कि समय पर माँग लूँगी।

अजामिल—इस नाम का एक आचारभ्रष्ट और कुकर्मी ब्राह्मण था जिसने अपने एक पुत्र का नाम नारायण रखा था। जब मृत्यु का समय निकट आया और यमराज के विकट दूत इसका प्राण खींचने आए तब यह उन्हें देख कर घबराया। अपने प्रिय पुत्र नारायण को उसने अंतिम समय में जोर से पुकारा। मृत्युकष्ट में पड़कर पुत्रस्नेह से भी ईश्वर का नाम मुँह से निकल जाने के कारण भगवान के पार्षद वहाँ पहुँच गए और उसे अंत में वैकुंठ प्राप्त हुआ।

अदिति—देखिए "कश्यप"।

अहिल्या—यह महर्षि गौतम की स्त्री और वृद्धाश्व की पुत्री थीं। यह अत्यंत रूपवती थीं। एक बार मुनि के गंगा स्नान को चले जाने पर इंद्र उन्हीं का रूप धारण कर आश्रम में चला गया। थोड़ी देर के अनंतर जब वह बाहर निकल रहा था उसी समय ऋषि लौट कर आ गए और योगबल से कुल वृत्तांत से अवगत होकर उन्होंने इंद्र को शाप दिया कि 'तू सहस्र-भग हो जा'। फिर अहिल्या को भी शाप दिया कि 'तू पत्थर हो जा और त्रेता में श्रीरामचंद्र जी के पैरों को धूलि पाने पर तेरा उद्धार होगा।'

इंद्र—त्रैलोक्य के राज्य पाने के मद से एक बार इंद्र ने गुरु बृहस्पति को सभा में आते किसी प्रकार का सत्कार नहीं किया। गुरु यह देख कर लौट गए तथा अदृश्य हो गए। दैत्यों ने घर की फूट का समाचार सुन कर चढ़ाई की और देवता परास्त होकर भाग निकले। इंद्र देवताओं सहित ब्रह्मा जी की शरण गया और उनके आज्ञानुसार उसने विश्वरूप ऋषि को गुरु बना कर उनकी सहायता से दैत्यों पर विजय प्राप्त की।

गज—क्षीरसागर के बीच में त्रिकूटाचल पर्वत है जिस पर एक बहुत बड़ा सरोवर है। उसी सरोवर पर एक मत्त गज हथिनियों के साथ आकर जलक्रीड़ा करने लगा। इसी समय एक भारी मगर ने आकर हाथी का पैर पकड़ा। अब दोनों में एक सहस्र वर्ष तक युद्ध होता रहा। अंत में गजेंद्र निरुत्साह होकर ईश्वर की स्तुति करने लगा। विष्णु भगवान ने तुरंत पहुँच कर गजेंद्र की रक्षा की। ये गज और ग्राह शाप से मुक्त हो गए और ग्राह जो हूहा नामक गंधर्व था अपने लोक को चला गया तथा गज जो पूर्व जन्म में इंद्रद्युम्न नामक राजा था विष्णु भगवान का पार्षद हो गया।

गणिका—जीवंती नामक एक नवयौवना स्त्री पति की मृत्यु पर व्यभिचारिणी हो गई और वेश्यावृत्ति से कालक्षेप करने लगी। उसने एक सुग्गा पाला था जिसे रामनाम पढ़ाती थी। इस पावन नामोच्चारण से उसकी मुक्ति हो गई।

गरुड़—एक समय भुसुंडि मोह से बालक रामचंद्र के हाथ से पूरी का टुकड़ा छीन कर भाग गए। भगवान ने गरुड़ का स्मरण किया, जिनसे और भुसुंडि से घोर युद्ध हुआ। अंत में परास्त होकर भुसुंडि राम जी की शरण आए तब रक्षा हुई। गरुड़ जी को उसी समय से अहंकार हुआ था।

गालव—विश्वामित्र जी के शिष्य थे। विद्या समाप्त होने पर इन्होंने गुरु से दक्षिणा माँगने का हठ किया। गुरु ने आठ सौ श्यामकर्ण घोड़े माँगे। यह राजा ययाति के पास माँगने गए जिसने अपनी पुत्री माधवी देकर कहा कि जो इससे एक पुत्र उत्पन्न करे उससे दो सौ श्यामकर्ण घोड़े लीजिए। गालव इसे क्रम से राजा हर्यश्व, दिवोदास और उशीनर के पास ले गए और दो दो सौ घोड़े लेकर उन्हें एक एक पुत्र

तपस्विनी—विश्वकर्मा की हेमा नामक कन्या ने नृत्य से महादेव जी को तुष्ट करके दिव्य स्थान प्राप्त किया जहाँ वह दिव्य नामक गंधर्व की कन्या स्वयंप्रभा के साथ रहती थी। जब वह ब्रह्मलोक जाने लगी तब स्वयंप्रभा से कहती गई कि 'त्रेता में जब रामदूत यहाँ आवेंगे तब उनका सत्कार कर तुम रामजी का जाकर दर्शन करना। तब तुम परम पद पाओगी।'

त्रिशंकु—सूर्यवंशी राजा त्रिशंकु ने सशरीर स्वर्ग जाने की इच्छा से गुरु वशिष्ठ से यज्ञ कराने की प्रार्थना की, पर उनके स्वीकार न करने पर वे वशिष्ठ के पुत्रों के पास गए। उन लोगों की बात भी जब राजा ने न मानी तब उन लोगों शाप दिया कि चांडाल हो जाओ। चांडाल होकर वह विश्वामित्र के पास पहुँचे और अपनी इच्छा प्रकट की। मुनि ने यज्ञ आरंभ किया पर जब देवता अपना भाग लेने न आए तब क्रोधित हो वे अपनी तपस्या के बल त्रिशंकु को सशरीर स्वर्ग भेजने लगे। इंद्र ने उधर से इन्हें मर्त्यलोक को लौटाया। तब त्रिशंकु उलटे होकर चिल्लाए। विश्वामित्र ने उन्हें वहीं रोक कर दक्षिण की ओर सप्तर्षियों और नक्षत्रों की रचना आरंभ की। देवता भयभीत होकर विश्वामित्र के पास आए और प्रार्थना करने लगे। तब विश्वामित्र ने कहा कि मैंने त्रिशंकु को सशरीर स्वर्ग पहुँचाने की प्रतिज्ञा की है, अतः अब ये यहीं के यहीं रहेंगे और इनके बनाए सप्तर्षि तथा नक्षत्र आदि भी रहेंगे और ध्रुव रहेंगे। देवताओं ने भी यह स्वीकार कर लिया और ये उलटे अब तक लटके हुए हैं।

दधीचि—यह बड़े तपस्वी थे। वृत्रासुर के मारने [illegible] देवताओं ने [illegible] इनसे [illegible]

तीर्थ में जा तप किया। पहले ब्रह्माजी को प्रसन्न कर गंगाजल और पुत्र माँगा और फिर महादेव जी को प्रसन्न कर आकाश से गिरती हुई गंगा को धारण करने के लिए उन्हें बाध्य किया। गंगा बड़े वेग से गिरी पर शिव जी की जटा में ही लुप्त हो गई। तब फिर तप कर भगीरथ ने शिव जी से गंगाजल माँगा। इसपर गंगाजी का प्रादुर्भाव हुआ और भगीरथ के पितरगण स्वर्ग को सिधारे।

चित्रकेतु—शूरसेन देश का राजा था जिसे एक करोड़ रानियाँ थीं। कोई पुत्र न होने से यह चिंतित था। एक दिन अंगिरा ऋषि आए जिनसे राजा ने अपनी इच्छा कही। मुनि ने यज्ञ करा कर पटरानी को चरु खिलाया। जब पुत्र हुआ तब राजा का प्रेम पुत्र और उसकी माता पर अधिक हो गया जिससे अन्य सपत्नियाँ उससे द्वेष करने लगीं। अंत में उन्होंने पुत्र को विष दे दिया। मृत पुत्र को देख कर राजा अत्यंत शोक करने लगा तब उसी समय अंगिरा ऋषि और नारद जी वहाँ आए और उन्होंने अनेक प्रकार से ज्ञानोपदेश किया। राजा राज्य छोड़ कर ऋषियों के बताए मंत्रों के जप से विद्याधर हो गया। पार्वती जी के शाप से यही वृत्रासुर हुआ था।

चंद्रमा—चंद्रमा ने जब दिग्विजय कर राजसूय यज्ञ किया तब उसने घमंड से अपने गुरु बृहस्पति की स्त्री छीन ली। चंद्रमा ने दैत्यों की सहायता से देवताओं से युद्ध ठाना और कई बार माँगने पर भी बृहस्पति को उनकी स्त्री तारा नहीं लौटाई। अंत में ब्रह्माजी ने मध्यस्थ होकर तारा को बृहस्पतिजी को दिला दिया और तत्काल हुए पुत्र को चंद्रमा का गर्भजात होने से उसे दिलाया। यही पुत्र बुध नामक ग्रह हुआ।

वहाँ उन्होंने इतनी देर की कि पारण का समय जाने लगा। तब राजा ने केवल जल पीकर पारण किया क्योंकि यह भोजन में गिना भी जाता हैं और नहीं भी। दुर्वासा आकर जब सब वृत्तांत से अवगत हुए तब उन्होंनें क्रोधित हो राजा के नाश करने के लिए कृत्या प्रगट की। भगवान के सुदर्शन चक्र ने जो अंबरीष का शरीररक्षक था अपने तेज से कृत्या को भस्म कर दिया और वह दुर्वासा की ओर झपटा। दुर्वासा ब्रह्मा, शिव और विष्णु सब के पास गए पर कहीं रक्षा न पाने पर अंत में राजा ही को शरण आए। राजा ने चक्र की स्तुति कर उसे शांत किया और ऋषि हरिभक्तों की प्रशंसा करते हुए चले गए।

ध्रुव—स्वयंभू मनु के पुत्र राजा उत्तानपाद के दो स्त्रियाँ—सुनीति और सुरुचि थीं। सुनीति से ध्रुव और सुरुचि से उत्तम उत्पन्न हुए। राजा का सुरुचि पर अधिक प्रेम था। एक दिन राजा उत्तम को गोद में लिए बैठे थे। इसी बीच में ध्रुव खेलते हुए वहाँ आ पहुँचे और राजा की गोद में बैठ गए। इस पर उनकी विमाता सुरुचि ने उन्हें अवज्ञा के साथ वहाँ से उठा दिया। ध्रुव इस अपमान को सह न सके और घर से निकलकर तप करने चले गए। विष्णु भगवान उनकी भक्ति से बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने उन्हें वर दिया कि 'तुम सब लोकों और ग्रहों नक्षत्रों के ऊपर उनके आधार-स्वरूप होकर अचल भाव से स्थित रहोगे और जिस स्थान पर तुम रहोगे वह ध्रुवलोक कहलावेगा।' इसके अनंतर ध्रुव ने घर आकर पिता से राज्य प्राप्त किया और छत्तीस हजार वर्ष राज्य करके ध्रुवलोक को चले गए।

नल-नील—समुद्र के तटवासी ऋषियों के शालिग्राम की मूर्तियों को जब वे ध्यानस्थ होते थे तब ये नल-नील समुद्र में फेंक

और इनके शरीर की हड्डी माँगी। तब दधीचि जी ने परोपकारार्थ शरीर छोड़ दिया। उनकी अस्थि से विश्वकर्मा ने वज्र बनाया। इसी अस्त्र से वृत्रासुर मारा गया।

दंडक—इक्ष्वाकु के पुत्र दंडक विंध्याचल और नीलगिरि के मध्यस्थ प्रांत के राजा थे। ये शुक्राचार्य के शिष्य थे जिनकी बड़ी पुत्री अरजा का इन्होंने कौमार्यभंग किया था। मुनि ने क्रोध से शाप दिया कि 'इंद्र सौ योजन पर्यंत पत्थर बरसा कर इनका राज्य नष्ट करदे।' इस शाप से वह प्रांत निर्जन हो गया और राजा के नाम पर दंडकारण्य कहलाया।

दुंदुभि—इस नाम का एक राक्षस था जिसे बालि ने मार कर ऋष्यमूक पर्वत पर फेंक दिया था। इस पर्वत पर मतंग-ऋषि का आश्रम था जिन्होंने रक्त देखकर शाप दिया था कि यदि बालि इस पर्वत पर आवेगा तो उसका मस्तक फट जायगा और वह मर जायगा। इसी कारण बालि उस पर्वत पर नहीं जाता था।

दुर्वासा—यह अत्रि मुनि के पुत्र थे और इन्होंने और्व मुनि की पुत्री कंदली से सौ अपराध क्षमा करने की प्रतिज्ञा कर विवाह किया था। इसके १०१ अपराध करने पर ऋषि ने शाप देकर इसे भस्म कर दिया। और्व मुनि ने शोकातुर हो शाप दिया कि तुम्हारा दर्प चूर्ण होगा। इसके अनंतर यह अयोध्या के सूर्यवंशीय राजा अंबरीष के यहाँ गए जो बड़े हरिभक्त वैष्णव थे। रामायण में इन्हें प्रशुश्रुक और महाभारत, भागवत तथा हरिवंश में नाभाग का पुत्र लिखा है। इन्होंने एकादशी का व्रत किया था। इस व्रत के सब कृत्य समाप्त करने पर यह पारण की तैयारी में थे कि अतिथि स्वरूप दुर्वासा वहाँ आ पहुँचे। मुनि निमंत्रण लेकर स्नान करने चले गए।

वृक्ष के नीचे बैठ गए। मुनियों द्वारा सुने हुए उपदेशों के अनुसार वे ईश्वर का ध्यान करने लगे। भक्तिपूर्वक ध्यान करने से इनके हृदय में भगवान का प्राकट्य हुआ जिससे वे उस अपूर्व दर्शन में मग्न हो गए। उस दर्शन के लिए इन्होंने फिर अनेक प्रयत्न किए पर दर्शन नहीं हुआ। काल पाकर जब उनका शरीरपात हुआ तब ब्रह्मा जी के प्राण के साथ साथ इनकी आत्मा का भी प्रादुर्भाव हुआ। सृष्टि की रचना के आरंभ में मरीचि आदि मुनियों के साथ ये भी प्रकट हुए। हरिकीर्त्तन के कारण यह इस अवस्था को पहुँच कर भगवान के पार्षद् और इच्छाचारी हो गए।

विष्णुपुराण में लिखा है कि ब्रह्मा जी,ने अपने सब पुत्रों को प्रजा सृष्टि करने में लगाया पर नारद जी ने कुछ बाधा की, इस पर उन्होंने उन्हें शाप दिया कि 'तुम सदा सब लोकों में घूमते फिरोगे, एक स्थान पर स्थिर होकर न रहोगे।'

पुराणों से नारद जी भारी हरिभक्त सिद्ध होते हैं जो सर्वदा वीणा बजाकर भगवान का गुणगान किया करते हैं। इनका स्वभाव कलहप्रिय कहा गया है।

इन्होंने दक्ष प्रजापति के हर्यश्व नामक पुत्रों को जो पिता के आज्ञानुसार सृष्टिरचना में लगे थे ज्ञानमार्ग दिखला कर प्रजा की सृष्टि के मार्ग से हटा दिया। दक्ष यह समाचार सुनकर बड़े दुखित हुए। ब्रह्मा के कहने पर दक्ष ने फिर एक सहस्र पुत्र उत्पन्न किए। उन शवलाश्व नामक पुत्रों को भी नारद जी ने वही ज्ञान सिखलाया जिससे उन्होंने भी अपने भाइयों का अनुसरण किया। दक्ष यह सुनकर बड़े क्रोधित हुए और नारद जी से मिलकर उन्हें शाप दिया कि 'दो घड़ी से कहीं अधिक ठहरोगे तो तुम्हारे शिर में पीड़ा होगी।'

दिया करते थे। यह देखकर उन ऋषियों ने शाप दिया कि तुम लोगों का छुआ हुआ पत्थर जल में न डूबेगा।

नहुष—वृत्रासुर को मारने से ब्रह्म हत्या लगने के कारण जब इंद्र मानस सरोवर में जा छिपा तब इंद्रासन को खाली देख कर वृहस्पति ने राजा नहुष को इंद्रपद दिया। यह अयोध्या नरेश इक्ष्वाकुवंशी अंबरीष के पुत्र और ययाति के पिता थे। ये इंद्राणी पर मोहित हुए औरउन्होंने उसे अपने पास बुलाना चाहा। बृहस्पति की सम्मति से इंद्राणी ने कहला भेजा कि 'सप्तर्षि द्वारा उठाई हुई पालकी पर आओ तब हम तुम्हारे साथ चलें।' नहुष ने वैसा ही किया पर जल्दी के कारण वे ऋषियों से कहने लगा 'सर्प, सर्प' (जल्दी चलो)। इस पर अगस्त्य मुनि ने शाप दिया कि 'सर्प हो जा'। यह स्वर्गभ्रष्ट हो सर्प हुए और राजा युधिष्ठिर द्वारा मुक्त हुए।

नारद—इन देवर्षि के बारे में अनेक पुराणों में अनेक कथाएँ हैं पर श्रीमद्भागवत में भगवान व्यास को संबोधित कर स्वयं नारद जी ने जो अपना वृत्तांत कहा है वह इस प्रकार है कि वे वेदज्ञ ब्राह्मणों की किसी दासी के पुत्र थे। वे उन्हीं तपस्वियों की सेवा में रहने लगे तथा उनका एक बार जूठन खाकर पाप निवृत्त हो गए। ऋषियों द्वारा कही हुई अनेक कथाओं को सुनकर उनकी भक्ति भावना दृढ़ हो गई। जब यह पाँच वर्ष के थे तभी इनकी माता सर्प के काटने से मर गई। तब सांसारिक स्नेहबंधन से मुक्त होकर हरिकीर्त्तन करते हुए वे उत्तर दिशा की ओर चले गए। बहुत से देश, वन लांघते हुए एक घोर निर्जन वन में भूख प्यास से पीड़ित होने के कारण पास ही की एक नदी के तट पर ये गए और स्नान तथा जलपान कर पीपल के एक

प्रह्लाद—दैत्यराज हिरण्यकशिपु का पुत्र था। जब दैत्यराज तप को गया तब देवताओं ने दैत्यों पर चढ़ाई कर उन्हें भगा दिया। प्रह्लाद की माता को इंद्र ले जा रहा था पर नारद जी के उपदेश से उसे उनके आश्रम में छोड़ गया। यहीं गर्भ में प्रह्लाद जी हरिकथा सुनते थे जिससे वे बचपन ही से बड़े भगवद्भक्त हो गए। हिरण्यकशिपु ने इन्हें भगवद्भक्ति से विचलित करने तथा नामस्मरण करने में बाधा डालने के लिये अनेक प्रयत्न किए और बहुत कष्ट पहुँचाए पर वह इन्हें विचलित न कर सका। अंत को भगवान ने नृसिंह रूप धारण कर प्रह्लाद की रक्षा की और हिरण्यकशिपु को मार डाला।

बलि—यह दैत्यराज प्रह्लाद के पौत्र और बड़े धर्मात्मा थे। जब इन्होंने देवताओं को परास्त कर स्वर्ग पर अधिकार कर लिया तब देवातओं की माता अदिति ने व्रत कर भगवान को प्रसन्न किया। विष्णु भगवान ने उन्हीं के गर्भ से वामन अवतार लिया। इनके यज्ञोपवीत के समय बलि ने सौ अश्वमेध यज्ञ करना आरंभ कर दिया था, इससे ये यज्ञ-मंडप में पधारे। बलि ने इनके तेज को देखकर स्वयं इनका स्वागत किया और अर्चन पूजन के अनंतर इच्छानुसार वर माँगने के लिये कहा। वामन जी के तीन पैर पृथ्वी माँगने तथा शुक्राचार्य के मना करने पर भी बलि ने जल लेकर तीन पैर भूमि दान कर दी। भगवान ने विराट् रूप धारण कर दो पैर में संसार नाप लिया तथा एक के बदले में बलि ने अपना शरीर दिया। वामन जी ने कृपा करके उसे सुतल लोक का राज्य देकर वहाँ विदा किया और स्वर्ग देवताओं को दिला दिया।

वेनु—ध्रुव के वंश में राजा अंग हुए जो बड़े धर्मात्मा थे। इनका पुत्र

नारदवचन—एक समय जानकी जी पार्वती पूजन को जा रही थीं कि मार्ग में नारद जी से भेंट हो गई। सीता जी के प्रणाम करने पर मुनि ने आशीर्वाद दिया कि 'इसी बाग में तुम पहले अपने पति को देखेगी और यहीं जिसे देखकर तुम्हारा मन आकर्षित हो उसे ही अपना पति जानना।

परशुराम—जमदग्नि ऋषि को रेणुका स्त्री से पाँच पुत्र हुए—समन्वान्, सुषेण, वसु, विश्वावसु और परशुराम। एक दिन रेणुका गंगातट पर जल लाने गई और वहाँ राजा चित्ररथ को स्त्री सहित जलक्रीड़ा करते देखकर काम-पीड़ित हो देर कर लौटी। ऋषि ने यह देखकर कुपित हो प्रत्येक पुत्र को मातृहत्या करने की आज्ञा दी। अन्य पुत्रों से स्नेहवश यह कृत्य न हो सका तब परशुराम ने आज्ञापालन किया। पिता ने प्रसन्न हो वर माँगने को कहा तब उन्होंने माता के लिये जीवन और अपने लिए परमायु और अजेयता माँग ली। एक दिन कार्तवीर्य सहस्रार्जुन जमदग्नि के आश्रम पर आया और उसे नष्ट कर तथा होम धेनु के बछुवे को लेकर चला गया। परशुराम ने जब यह सुना तब कार्तवीर्य के पीछे पहुँच उसकी सहस्र भुजाओं को काट डाला। कार्तवीर्य के मनुष्यों ने एक दिन इनके पिता को मारकर उसका बदला लिया। परशुराम जी ने जमदग्नि को मरा हुआ देखकर पहले विलाप किया और फिर संपूर्ण क्षत्रियों के नाश की प्रतिज्ञा की। परशुराम जी ने संपूर्ण पृथ्वी के क्षत्रियों का नाश करके अश्वमेध यज्ञ किया और विजित पृथ्वी कश्यप को दान दे दी। कश्यप ने बचे बचाए क्षत्रियों के रक्षार्थ परशुराम जी से कहा कि 'यह पृथ्वी हमारी हो चुकी अब तुम दक्षिण समुद्र की ओर चले जाओ।'

जल माँगने लगा। राजा ने यह जल भी उसे दे दिया। अंत में भगवान ने प्रसन्न होकर उन्हें मोक्ष दिया।

राम-नाम का प्रभाव—(१) एक समय ब्रह्मा जी ने देवताओं से पूछा कि तुम लोगों में पहले पूजनीय कौन है। इस पर सब देवता आपस में झगड़ने लगे। तब ब्रह्मा जी ने कहा कि जो पृथ्वी की परिक्रमा करके सब से पहलेहमारे पास लौट आयेगा उसे प्रथम स्थान मिलेगा। अन्य देवताओं के वाहनों के साथ गणेश जी के बोझ से दबे हुए उनके वाहन मूसे का दौड़ना असंभव था, इस लिये वे बड़े खिन्न हुए। उसी समय नारद जी के आजाने तथा उनकी सम्मति के अनुसार गणेश जी पृथ्वी पर रामनाम लिखकर और उसी की परिक्रमा कर ब्रह्मा जी के पास चले गए। ब्रह्मा जी ने नाम के प्रभाव का समझकर इन्हें प्रथम पूज्य-पद दिया। (२) एक समय महादेव जी ने पार्वती जी से अपने साथ भोजन करने के लिए कहा। पार्वती जी ने कहा कि मुझे सहस्रनाम का पाठ करना है, इस लिए मैं पीछे से प्रसाद ले लूँगी। महादेव जी ने उन्हें रामनाम लेकर भोजन करने को कहा। एक बार नाम लेने से सहस्रनाम का फल होता है। (३) समुद्रमंथन के समय हलाहल विष के प्रगट होने से जब संसार पीड़ित हुआ तब देवतादि शिवजी की शरण में गए। शरणागतवत्सल महादेव जी ने हरि नाम स्मरण कर उस विष का पान कर लिया। उनके हृदय में भगवान का वास था इस लिए उन्होंने विष को कंठ में ही धारण किया। (४) देखिए 'वाल्मीकि'। (५) देखिये 'नारद'।

रावण-पराजय—(१) रावण सहस्रार्जुन से युद्ध करने गया था।

येनु था जो बड़ा अधर्मी था और प्रजा को दुःख देता था। राजा अंग दुखी होकर वन में चले गए तब ब्राह्मणों ने राज्यासन खाली देखकर येनु का राज्यभिषेक कर दिया। अब यह अधिक उत्पात करने लगा और जब प्रजा को अति कष्ट हुआ तब उन्हीं ब्राह्मणों ने उसे क्रोध करके जला दिया। इसी के पुत्र ईश्वर के अवतार राजा पृथु हुए।

ययाति—चंद्रवंशी राजा नहुष के पुत्र थे। इनकी पहली स्त्री दैत्य-गुरु शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी और दूसरी दैत्यराज वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा थी। पहली से यदु तथा तुर्वसु और दूसरी से द्रुह्यु, अनु और पुरु नामक पुत्र हुए। शुक्राचार्य के शाप से जब ययाति जराग्रस्त हुए तब उन्हों ने अपने पुत्रों में से पुरू को, उसके स्वीकार करने पर अपनी जरा देकर उसका यौवन ले लिया। कुछ दिन यौवन का सुख भोगकर उन्होंने उसे पुरु को लौटा दिया और उसे ही राज्य देकर वे आप वन में चले गए। वहाँ शरीर त्याग कर स्वर्ग गए और कुछ दिनों बाद स्वर्गभ्रष्ट होकर अपने दौहित्रों के यज्ञ-मडप में गिरे। वनवासिनी और तपस्विनी कन्या माधवी तथा दौहित्रों के पुण्यफल से इन्होंने पुनः स्वर्गारोहण किया।

रंतिदेव—यह राजा बड़ा दानी था। एक समय सब दे डालने के अनंतर उसे अड़तालीस दिन तक जल पीने को भी नहीं मिला। उँचासवें दिन कुछ प्रबंध हो जाने पर वे भोजन का समान कर रहे थे कि क्रम से एक ब्राह्मण, शूद्र तथा एक अतिथि एक कुत्ते को लिये आ पहुँचे और भोजन का कुल सामान इन्हीं लोगों के अतिथ्य में समाप्त हो गया। केवल जल बचा हुआ था जिसे पीने के लिये इन्होंने हाथ उठाया ही था कि एक चांडाल आ गया और पीने के लिये

इसके कपट को खोल दिया। भगवान ने चक्र से उसका सिर काट दिया पर अमृत पीने के कारण उसके सिर और कबंध अमर हो गए। ब्रह्मा जी ने इन दोनों को राहु और केतु नामक देकर अष्टम और नवम ग्रह बना दिया। ये उसी वैर के कारण अमावस और पूर्णिमा में पर्वों पर सूर्य और चंद्र को ग्रहण करते हैं।

वाल्मीकि—यह अयोध्याधिपति महाराज रामचंद्र के समसामयिक रामायण के प्रसिद्ध प्रणेता तथा आदि कवि थे। इनका आश्रम अयोध्या और मथुरा के बीच में था। यद्यपि इनका जन्म द्विज कुल में था पर ये किरातों के साथ रहते थे और उन्हीं का आचरण कर लूट मार से अपना तथा अपने परिवार का भरण पोषण करते थे। जिस वन में वे रहते थे उसी में एक दिन सप्तर्षियों का आगमन हुआ— उन्हें लूटने के लिए वे उनपर झपटे, पर मुनियों ने उन्हें देखकर कहा कि 'रे द्विजाधम, क्या आता है ? तब उन्होंने उत्तर दिया कि 'हमारे बहुत से पुत्र और स्त्री भूखे हैं इसलिए हम कुछ अपहरण करने को आए हैं।' मुनियों ने कहा कि पहले तू जाकर एक एक से पूछ कि तेरे किए हुए पाप में भी ये भाग लेंगे या नहीं। उन्होंने जाकर प्रत्येक से यही प्रश्न किया पर किसी ने पाप का भागी होना स्वीकार नहीं किया। तब ये संसार से विरक्त होकर ऋषियों के पास आए और उनसे उपदेश लिया। यह पहले राम शब्द का उच्चारण नहीं कर सके, तब ऋषियों ने उस शब्द का उलटा 'मरा' जपने का उपदेश दिया। यह ध्यानस्थ हो वही शब्द जपने लगे और बहुत समय बीतने पर इनके शरीर के ऊपर वल्मीक जम गया। सहस्र युग व्यतीत होने पर सप्तर्षि लौटे और इन्हें वल्मीक

उसने इसे पकड़ कर बाँध रखा था और पुलस्त्य ऋषि के कहने पर छोड़ दिया था।

(२) यह किष्किंधा में वानरराज बालि से भी युद्ध करने गया था उसने इसे काँख में दबा लिया और चारों समुद्रों पर घूमके लौटने पर छोड़ दिया।

(३) कुवेर को विजय कर जब रावण उसके पुष्पक विमान पर चढ़ कर कैलास की ओर चला तब विमान रुक गया। नंदीश्वर के मना करने पर उनके मर्कट वदन पर रावण हँसा, तब नंदीश्वर ने शाप दिया कि बंदर तेरे कुल का नाश करेंगे। रावण ने क्रोधित होकर अपनी भुजाएँ पर्वत में घुसाकर उसे उठा लिया। तब शिव जी ने अँगूठे से पर्वत को दबा दिया जिससे रावणकी भुजाएँ दबकर मरमरा उठीं। इस कष्ट से उसने ऐसा भयंकर नाद किया कि संसार काँप उठा। फिर उसने शिवजी की सामवेद से स्तुति कर उन्हें प्रसन्न किया। शिवजी ने उसे छोड़कर रावण पदवी दी और चंद्रहास नामक खड्ग दिया।

राहु—समुद्रमंथन के समय जब धन्वंतरि वैद्य अमृतकलश लेकर निकले तब दैत्यों ने उसे छीन लिया। देवता विष्णु भगवान की शरण गए। तब वे मोहनी स्वरूप धारण कर रंग स्थल में आए। दैत्य उन्हें देखकर ऐसे काममोहित हो गए कि उन्होंने उस घट को उन्हें सौंप दिया। स्त्री स्वरूप भगवान ने देवताओं और दैत्यों को पंक्तिभेद कर बैठाया और देवताओं ही को अमृत पिलाना आरंभ किया। जब वे देवताओं को अमृत पिलाते हुए दैत्यों की पंक्ति के पास आए तब राहु नामक दैत्य यह देखकर कि अमृतघट खाली हो रहा है देवता का रूप धारण कर उनकी पंक्ति में मिल बैठा। जब भगवान ने उसे अमृत दिया तब चंद्र और सूर्य ने

ले श्मशान पर गई। अपने स्त्री पुत्र को पहचान कर भी राजा हरिश्चंद्र ने बिना कर लिए जलाने देना जब नहीं स्वीकार किया तब रानी ने अपनी साड़ी फाड़ कर कर देना चाहा। इस पर भगवान वहाँ आकर उन लोगों को अपने लोक में ले गए।

हिरण्यकशिपु—देखिए "प्रह्लाद"।



से निकलने को कहा। वल्मीक में से निकलने के कारण इनका नाम वाल्मीकि प्रसिद्ध हुआ। रामायण में यह कथा इन्होंने स्वयं रामचंद्र जी से कही थी।

शिवि—काशिराज शिवि के वानवे यज्ञ कर चुकने पर इंद्र अग्नि को कबूतर बनाकर और स्वयं बाज बनकर यज्ञशाला में पहुँचा। कबूतर राजा की गोद में छिप गया। बाज के इस कथन पर कि यदि मेरा आहार न मिलेगा तो मैं मर जाऊँगा राजा ने अपने शरीर से काट कर माँस देना चाहा। कबूतर के तौल भर माँस माँगने पर तुला मँगाई गई और सारे शरीर का माँस काटने पर भी जब तौल पूरा न हुआ तब राजा ने गला काटने की इच्छा की। वैसे ही भगवान ने प्रगट होकर उन्हें मुक्ति दी।

शबरी—इसके गुरु ने मरते समय कहा था कि तू अभी कुटी में रह। कुछ दिन बाद यहाँ राम लक्ष्मण आवेंगे तब उनका दर्शन कर परमधाम को जाना।

सहस्राबाहु—यह हैहयवंशी कार्तवीर्य सहस्रार्जुन महिष्मती पुरी का राजा था। जमदग्नि ऋषि का आश्रम नष्ट करने के कारण उनके पुत्र परशुराम जी द्वारा मारा गया। देखिए 'परशुराम'

हरिश्चंद्र—अयोध्यानरेश हरिश्चंद्र प्रसिद्ध दानी और धर्मात्मा हो गए हैं। इंद्र ने द्वेष से विश्वामित्र को इनकी परीक्षा के लिए उभाड़ा। वे स्वप्न में इनसे सारी पृथ्वी दान लेकर सवेरे दक्षिणा लेने पहुँचे। दक्षिणा चुकाने के लिये पृथ्वी से न्यारी काशी में महाराज हरिश्चंद्र सकुटुंब आए और अपनी स्त्री को ब्राह्मण के हाथ वेंच आधी दक्षिणा चुकाई। राजा ने अपने को डोम के हाथ बेचकर कुल दक्षिणा दे दी। इनके पुत्र के मरने पर इनकी स्त्री शव को